जय स्तम्भ, चित्तौड

शहीद स्मारक जलियाँवाला बाग

हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास

नागपुर विश्वविद्यालय द्वारा पी एच डी की उपाधि के लिए
स्वीकृत शोध प्रबंध

डा० क्रान्तिकुमार शर्मा
राज्य शिक्षा संस्थान म० प्र० भोपाल

प्रकाशक

नवयुग प्रकाशन
१३७, मालवीय नगर, भोपाल म० प्र०

Hindi Sahitya Me Rashtriya Kavya Ka Vikas

By Dr K K Sharma

प्रकाशक नवयुग प्रकाशन
१३७ मालवीय नगर भोपाल म० प्र०

वितरक प्राग्रेसिव बुक डिपो
दिल्ली मोतिया पार्क भोपाल

संस्करण प्रथम, मई १९७०

मुद्रक चन्द्रा प्रिन्टर्स भोपाल

मूल्य बीस रुपया

प्रस्तावना

मैंने जहां-तहां से इस समूची पुस्तक को सुना। मेरे विचार से राष्ट्रीयता उस पौध का नाम है जो पराधीन देश मे ही नही पनपता। वह स्वाधीन देश म भी उतना ही या उससे अधिक हरियाता है। जिस समय सन् १९१४ का प्रथम युद्ध प्रारम्भ हुआ था, उस समय इग्लड के एक महाकवि ने लिखा था—वे शायद उस समय इग्लड के 'पोएट लारियेट' भी थे, कि –

Oh ! Careless Awake !
Oh ! Peacemaker fight

मेरे विचार से राष्ट्रीय कविता के तीन स्वरूप मालूम होते हैं। एक तो वह स्वरूप कि राष्ट्र म घटी घटनाओ पर उत्तेजित होकर कभी कुछ लिख दे। दूसरे वह स्वरूप जो राष्ट्र का सचालन करने के लिये कभी कुछ लिखने के लिए बाध्य हो और उसकी कविताओ के कारण राष्ट्र म चेतनी फले और उसका तीसरा स्वरूप वह है कि वह सारे राष्ट्र की कविता एक जगह परेड सी करत एकत्रित हो। जो कविता सबसे ऊची उठकर बोल सके वह उस देश की राष्ट्रीय कविता मानी जानी चाहिये। पहली परिभाषा के उदाहरण मे बहुत से कवि आ जाते हैं। दूसरी कविता के उदाहरण में ठाकुर रवीन्द्रनाथ को उपस्थित किया जा सकता है और तीसरे प्रकार के उदाहरण म कविकुलगुरू कालिदास उपस्थित हो सकते हैं। कौन कह सकता है कि इन कवियो की कविता राष्ट्रीय नही है-वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व नही करती। इसी लिये राष्ट्र को उकसाने वाली तथा माधुर्य और एकता का प्रतिनिधित्व करने वाली कविता', को राष्ट्रीय नाम ही दिया जा सकता है अन्यथा और कौन सा नाम दिया जा सकता है ? इन ग्रन्थ म लेखक महाशय ने पिछले दो प्रकार की कविता का विशद वर्णन किया और मैं उनके प्रयत्न की सराहना करता हू।

इस देश मे सृष्टि के अन्य देशो की तरह जिनकी सीमा बधी हुई है विविधता तो है विभिन्नता नही है। विदेशी शासना में विविधता को विभिन्नता मानकर अपने युग के शासको को प्रसन्न करने का प्रयत्न किया गया है। विदेशी शासक यह कब सह सकते थे कि हमारे देश मे एकता स्थापित हो और सब लोग मिल जुलकर रहें। दूसरे उस परिस्थिति से जो लोग अत्यन्त असन्तुष्ट थ उन्होंने न दो रूप लिये। कुछ ने पिस्तौलें उठाई कुछ ने गीत लिखना प्रारम्भ किय। असहयोग आन्दोलन उस समय

तक देश मे बढा नही था। जब असहयोग आदोलन आया और उसने थोडे समय म स्वराज्य दने की बात कही तो कितने लोगा ने पिस्तौल छोड दी और विद्रोह के द्वारा उस दिन की प्रतीक्षा करने लगे जब इस देश म इसी देश का राज्य होगा। इस तरह के लोगा ने व्यक्ति वस्तु और स्थान तीना को खोज-खोज कर देखा। जहा ज्वाला जलाने की आवश्यकता हुई वहा ज्वाला जलाई और जहा ठडा पानी डालने की आवश्यकता हुई वहा ठडा पानी डाला।

एसे समय कुछ व लोग भी आगे बढ़ जो अपने देश मे स्वतत्रता तो चाहते थे किन्तु एक तरह स अपने मालिक की मर्जी सभालते थे और दूसरी तरफ किसी प्रकार का खतरा उठाने को तयार नही थे। उन्हे भय था कि उनकी रचना से सरकार नाराज न हो जाय लोग उपेक्षा न कर बठें, अन्नदाता अन्न देना न बन्द कर दे।

टेरेन्स मेक्सुनी आयरलण्ड म ब्रिटिश शासन के खिलाफ विरोध कर रहे थे। उनकी राय थी कि स्वतत्रता का आयरिश आदोलन उन लोगो के द्वारा समाप्त हो जाएगा जो स्वतत्रता के गुण तो गाते हैं किन्तु अपने पेट और बच्चो का राष्ट्र की अपेक्षा अधिक ध्यान रखते हैं अत ऐसे लोगों को आयरिश आन्दोलन से अलग रखना चाहिये। मेरा विचार लोगा की इस लाचारी की ओर न हो सो नही है किन्तु सचमुच म तो हम उसी देश की सवा करनी है जिस देश का घटक नर या नारी जसा भी है किसी की ओर उगुली निर्देश या किसी का तिरस्कार करने का हम क्या अधिकार। अत हम विविधता को विभिन्नता न बनने दें। हम यू कह कि राष्ट्रीय आन्दोलन करते समय कुछ लोग हमारे साथ थे और कुछ विपक्ष म। जब विपक्ष के लोग घटते चले गय तब लड़ाको की तरह हमने अपने देश म स्वराज्य पा लिया। यह स्वराज्य उन लोगा स बना हुआ है और उन्ही लोगा पर अवलम्बित है जिन्ह हम निष्कारण या सकारण भला बुरा कहते हैं।

विचारा की गति को तो मशीन ने बाधा और आचारा की गति को हमारे तीर्थों ने बाधा। मशीन म गायक गुजरात का, वादक महाराष्ट्र और बगाल का और तन्त्रयन्त्र काश्मीर या कन्याकुमारी, कही का हो वे मस्तक डुलाने और डुलवाते रहते हैं। इसी प्रकार जो लोग कन्याकुमारी की अलकनन्दा का जल धनुष्कोटि के शिव पर जाकर चढ़ाते हैं उनकी रेल या पदल यात्रा म निकलने वाली देशभक्ति को हम कसे भूल सकते हैं। हम यह कस भूलें कि बगाल के मन पुरी का रथयात्रा म ही शामिल नहीं होत। व तो सुदूर दक्षिण पश्चिम और उत्तर की तीर्थ यात्रा भी करते हैं। कौन नहीं जानता कि राधा तत्व का विशद वर्णन जितना बगाली साधकों के ग्रन्थों

मे मिलता है उतना कहा मिलगा ? अत मूर्ति और चित्र जिस तरह व्याप्त है और मूर्तिया ऋतुओ को बरदाश्त करन के कारण अपन निर्विकार भाव से–विश्व की पूजा की वस्तु बनी हैं उसी तरह सगीत और नृत्य समस्त राष्ट्र मे व्याप्त है । वह तो साहित्य ही बेचारा है जो बहुत लगडा है, किन्तु मूर्तियाँ, चित्र, सगीत, नत्य यह सब तो साहित्य की रचनाओ पर अवलबित रहता है । इतना साहित्य प्राणवान और मूर्तिवान हो जाता है । उसका बोलता वैभव अबोले उपकरण मे व्यक्त कर कई गुना होकर फूलने फलने लगता है । यदि राष्ट्रीय धारा को हम मूर्तिया, चित्रो, सगीत, नृत्यो और साहित्या मे भरा हुआ पाते हैं तो व अगुलिया धन्य हैं कठ गौरवशाली हैं, हाव भाव क्रियाशील हैं जिन्होने इन वस्तुओ को जन्म दिया है । यू राष्ट्रीयता का पौधा नया नही है । हमन अपने प्राचीन ग्रन्थो मे सस्कृत साहित्य म गाया है ।

हम यह क्यो भूलते या भूल जात हैं कि हमने सौंदय की परिभाषा साहित्य से नही, नाटको से पाई है इसलिए हम सौदय की परिभाषा का बोध भरतमुनि से मानते हैं । इसी प्रकार राष्ट्रीयता की परिभाषा का मूल भी हमारा वदिक तत्व और मानवीय तत्व है । अत इस ग्रन्थ का दायरा केवल वही वृत नही है जो हमने अपनी मनोदशा से बना लिया है किन्तु वह सीमा भी है जिससे हम मान या न मान वह विश्व भर की सीमा रही है और रहगी । यह परिवतन केवल हमारे देश या हमारे समय मे ही है सो बात नही, यह परिवतन तो सारे विश्व म सब परिस्थितियो म हुए । अत इस ग्रन्थ का दायरा बहुत विस्तत है ।

इस पुस्तक मे जिन भावो को व्यक्त किया गया है, उन भावो का सम्मान करता हू तथा चाहता हू कि इसी तरह सब अपने देश की राष्ट्रीयता का सम्मान करते रहे । वे ऊहापोह और सघर्षों के युगो को भूलने या भूला डालने का प्रयास न करें । वह सुख अनन्त नही है जो दुखो से वेष्टित नही है । गोस्वामी तुलसीदास ने साहसता को–रामचरितमानस जसे ग्रन्थ का प्रारम्भ भगवान शकर की साध्वी पत्नी के मरण से किया । सघष से मुह मोडना हमारी पीढी या पीढियो का काम नही ह– चाहे उन सघर्षो म कुछ भी भागना और झेलना पडे । सच तो यह ह कि भारतीय स्वतन्त्रता हम जिन अगुलियो या मस्तको के चुकाने पर प्राप्त हुई ह उन्ह कभी भूल नही, कभी धोखा न दें । जिस दिन हम उन्हें भूल जाएगे, हमारी उपलब्धियां कलकित हो जाएगी । अत यह भूल हमारी पीढिया न करने पाए ऐसी प्रभु स प्राथना करते हुए इस पुस्तक तथा लेखक की सराहना करत हुए मैं यह पक्तिया समाप्त कर रहा हू ।

खडवा
गणेश चतुर्थी, १६६१

—(स्व०) माखनलाल चतुर्वेदी

सम्मतियां

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपने 'हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास' विषय पर एक शोधग्रन्थ की रचना की है और अब उसका प्रकाशन हो रहा है। आपका प्रयत्न सफल हो—इसके लिए मैं अपनी शुभ कामनाएं प्रेषित करता हूं। मुझे आशा है कि इस ग्रन्थ के प्रकाशन से सभी पाठकों को लाभ पहुंचेगा और हिन्दी साहित्य के प्रति सबकी अभिरुचि बढ़ेगी।

—भक्त दर्शन
शिक्षा राज्य मंत्री
भारत सरकार नई दिल्ली।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि डा. क्रान्तिकुमार शर्मा की थीसिस 'हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास' शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रही है। मैं प्रकाशनोत्सव की सफलता के लिए अपनी शुभ कामना भेजता हूं।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'
भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार
गृहमंत्रालय।

डा. क्रान्तिकुमार का शोधप्रबन्ध मेरे निरीक्षण में तैयार हुआ है। इसमें राष्ट्रीय कविता के विकास पर गंभीरता से विवेचन किया गया है। हिन्दी साहित्य की आधुनिक कविता मुख्यतः दो रूपों में प्रवाहित होती रही है—एक प्रवाह वह था जिसमें राष्ट्र की पराधीनता के प्रति क्षोभ और विद्रोह व्यक्त होता था दूसरा प्रवाह वह था जिसमें राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना उदबुद्ध हो रही थी। राष्ट्र के जागरण में हिन्दी की राष्ट्रीय कविताओं ने हिन्दी भाषी क्षेत्रों में ही नहीं अहिन्दी

भाषी नेता म भी महा‍न योगदान दिया है। महात्मा गाधी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप म प्रचलित कर उस अपन स्वाधीनता आंदोलन का एक अग बना लिया था। अत हिन्दी की राष्ट्रीय कविता सचमुच राष्ट्रीय थी।

डा क्रांतिकुमार न बड परिश्रम स राष्ट्रीय कविताओ क इतिहास की गोज परक व्याख्या की है। आशा है राष्ट्र क स्वाधीनता सग्राम को बल देने वाली कविताओ क महत्व को पाठक अनुभव करेंगे और लखक भी उनकी विवेचना के लिए साधुवाद लगें।

डा विनयमोहन शर्मा
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय
कुरुक्षेत्र।

बडी प्रसन्नता हुई विशेषकर यह जानकर कि आपका शोधप्रबन्ध 'हिन्दी साहित्य म राष्ट्रीय काव्य का विकास' पर नागपुर विश्वविद्यालय द्वारा पी एच डी उपाधि प्रदान की गई है। जिस प्रकार आपने इस प्रबन्ध म वदिक काल स लकर वीरगाथा काल तक का राष्ट्रीय भावना क स्वरूप का निरूपण किया है तथा आधुनिक काल म स्वतन्त्रता प्राप्ति तक राष्ट्रप्रेम क विकास का भी समुचित विवचन किया है। उसस यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि शोधप्रबन्ध म हिन्दी साहित्य की राष्ट्रीय काव्यधारा का समग्र आकलन उपलब्ध हो सकगा। ऐसा परिपुष्ट शोधप्रबन्ध आजकल बहुत कम देखन म आता है। मैं आपके इस निष्ठापूर्ण कृति क लिए आपको धन्यवाद दता हू और आशा करता हूँ कि भविष्य म आपकी लखनी स और भी गम्भीर विचारपूर्ण समालोचना ग्रन्थ का सजन हो सकेगा।

डा शिवमगलसिंह सुमन
उपकुलपति, विक्रम विश्वविद्यालय
उज्जन म प्र

सस्कृत साहित्य में अभिव्यक्त राष्ट्रीयता का भावना का इस शोधग्रथ मे विश्लेषण किया गया है तथा विभिन्न कालो के सामाजिक परिप्रेक्ष म इसके नए अर्थ स्पष्ट हुए हैं।

मुस्लिम और अग्रेजी आक्रमण क समय भारत म राष्ट्रीय भावना तथा हिन्दी काव्य साहित्य पर उसके प्रभाव का विशद चित्रण किया गया है। तथ्यो और उनक विशिष्ट अर्थो का आलोचनात्मक विश्लेषण और अपने निणय प्रस्तुत करने मे शोधकर्ता ने क्षमता का परिचय दिया है।

डा दशरथ ओझा
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
हिन्दू कालेज, दिल्ली।

लखक ने हिन्दी साहित्य के व्यापक क्षेत्र से अपन शोधग्रन्थ क लिए आवश्यक सामग्री का सकलन करने म अपनी बौद्धिक क्षमता और सामग्री को उपयुक्त रूप म प्रस्तुत करन क कौशल का परिचय दिया है। ज्ञान तथा हिन्दी साहित्य के विकास म इस शोधग्रन्थ का बडा उपयोगी और महत्वपूर्ण योगदान है।

डा बल्देवप्रसाद मिश्र
एम ए डी लिट

हिन्दी साहित्य की शोध परम्परा के क्षेत्र मे डा क्रांतिकुमार शर्मा का शोध प्रबन्ध हिन्दी साहित्य मे राष्ट्रीय काव्य का विकास एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी साहित्य का राष्ट्रीय दृष्टि से अनुशीलन एक युगीन आवश्यकता थी।

देश के आकाश म राष्ट्रीय भावना की वाष्प राशि युगो से सचित होती रहती है और अनुकूल अवसर आने पर वह बरस जाती है। भारत का सास्कृतिक वाङमय इस सत्य का प्रमाण है। अतीत म वेदो की विविध वदनाओ से काव्य म जो राष्ट्रचिन्तन की भावधारा आरम्भ हुई वह आज भी हिन्दी क्षेत्रो के तटो को छूती हुई निरन्तर वर्तमान से अनागत की ओर प्रवाहित हो रही है। वीरगाथा

भाषी क्षेत्रों में भी महान योगदान दिया है। महात्मा गांधी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचलित कर उसे अपने स्वाधीनता आंदोलन का एक अंग बना लिया था। अतः हिन्दी की राष्ट्रीय कविता सचमुच राष्ट्रीय थी।

डा. क्रांतिकुमार ने बड़े परिश्रम से राष्ट्रीय कविताओं के इतिहास की शोधपरक व्याख्या की है। आशा है राष्ट्र के स्वाधीनता संग्राम को बल देने वाली कविताओं के महत्व को पाठक अनुभव करेंगे और लेखक को उसकी विवेचना के लिए साधुवाद देंगे।

डा. विनयमोहन शर्मा
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय
कुरुक्षेत्र।

बड़ी प्रसन्नता हुई विशेषकर यह जानकर कि आपका शोधप्रबन्ध 'हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य के विकास' पर नागपुर विश्वविद्यालय द्वारा पी. एच. डी. उपाधि प्रदान की गई है। जिस प्रकार आपने इस प्रबन्ध में वैदिक काल से लेकर वीरगाथा काल तक की राष्ट्रीय भावना के स्वरूप का निरूपण किया है तथा आधुनिक काल में स्वतन्त्रता प्राप्ति तक राष्ट्रप्रेम के विकास का भी समुचित विवेचन किया है। उससे यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि शोधप्रबन्ध में हिन्दी साहित्य की राष्ट्रीय काव्यधारा का समग्र आकलन उपलब्ध हो सकेगा। ऐसा परिपुष्ट शोधप्रबन्ध आजकल बहुत कम देखने में आता है। मैं आपके इस निष्ठापूर्ण कृति के लिए आपको धन्यवाद देता हूं और आशा करता हूं कि भविष्य में आपकी लेखनी से और भी गंभीर विचारपूर्ण समीक्षा ग्रन्थ का सृजन हो सकेगा।

डा. शिवमंगलसिंह सुमन
उपकुलपति विक्रम विश्वविद्यालय
उज्जैन म. प्र.

संस्कृत साहित्य में अभिव्यक्त राष्ट्रीयता का गवेषणा का इस शोधग्रन्थ में विश्लेषण किया गया है तथा विभिन्न कालों के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में इसके नए अर्थ स्पष्ट हुए हैं।

मुस्लिम और अंग्रेजी आक्रमण के समय भारत में राष्ट्रीय भावना तथा हिन्दी काव्य साहित्य पर उसके प्रभाव का विशद चित्रण किया गया है। तथ्यों और उनके विशिष्ट अर्थों का आलोचनात्मक विश्लेषण और अपने निर्णय प्रस्तुत करने में शोधकर्ता ने क्षमता का परिचय दिया है।

डा दशरथ ओझा
हिन्दी विभागाध्यक्ष
हिन्दू कालेज, दिल्ली।

लेखक ने हिन्दी साहित्य के व्यापक क्षेत्र से अपने शोधग्रन्थ के लिए आवश्यक सामग्री का संकलन करने में अपनी बौद्धिक क्षमता और सामग्री को उपयुक्त रूप में प्रस्तुत करने के कौशल का परिचय दिया है। ज्ञान तथा हिन्दी साहित्य के विकास में इस शोधग्रन्थ का बड़ा उपयोगी और महत्वपूर्ण योगदान है।

डा बल्देवप्रसाद मिश्र
एम ए डी लिट

हिन्दी साहित्य की शोध परम्परा के क्षेत्र में डा क्रांतिकुमार शर्मा का शोध प्रबंध हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी साहित्य का राष्ट्रीय दृष्टि से अनुशीलन एक युगीन आवश्यकता थी।

देश के आकाश में राष्ट्रीय भावना की वाष्प राशि युगों से संचित होती रहती है और अनुकूल अवसर आने पर वह बरस जाती है। भारत का सांस्कृतिक वाङ्गमय इस सत्य का प्रमाण है। अतीत में वेदों की विविध वंदनाओं से काव्य में जो राष्ट्रचिंतन की भावधारा आरम्भ हुई वह आज भी हिन्दी क्षेत्रों के तटों को छूती हुई निरन्तर वर्तमान से अनागत की ओर प्रवाहित हो रही है। वीरगाथा

भूमिका

प्रस्तुत प्रब ध म राष्ट्रीय भावना के विकास का उद्देश्य ही रखा गया, इस लिए इसमे किसी विशेष कवि या पुस्तक का सपूर्ण अध्ययन अभीष्ट नहीं रहा। इसके अतिरिक्त प्रत्यक युग की काव्य धारा मे केवल राष्टीय भावना का ही विवेचन किया गया है। इस प्रब ध का अध्ययन काल भी बहुत व्यापक हो गया है। चारणकाल स आधुनिक कान ६५० वष के लगभग है आजकल की प्रवत्ति कम अवधि रखकर अध्ययन करन की आर अधिक ह किन्तु राष्ट्रीय भावना के क्रमिक विकास का अध्ययन करने के लिए इतना समय उचित प्रतीत हुआ। वास्तव मे भारते दु युग स स्वतत्रता प्राप्ति तक हिन्दी काव्य जगत म राष्ट्रीय भावना पल्लवित और पुष्पित हुई ह, इसके पूव वीरगाथा काल से रीतिकाल तक इसका प्रवाह क्षीण ही रहा ह।

समाज की स्मृति बहुत ही सामयिक और अस्थायी होती ह। समाज कुछ वर्षो म ही महत्वपूण घटनाआ को विस्मृत कर देता ह और केवल वतमान को ही सब कुछ समझता ह। भारतीय स्वाधीनता-सग्राम म अपन प्राणा का उत्सग करन वाले अनेक राष्ट्रप्रेमी व्यक्तियो को हम भुला चुके हैं। हिन्दी साहित्य के अनेक साहित्यकार तथा कवि प्राचीनकाल से ही अपन युग की राष्ट्रीय भावना की सफल अभिव्यक्ति करते आए हैं किन्तु उनकी अनकों रचनाए लुप्तप्राय हैं। देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् यह आवश्यक था कि युगा से चली आई हिन्दी साहित्य की राष्ट्रीय भावना का क्रम-बद्ध अध्ययन किया जाता। गत वर्षों मे हिन्दी वीर काव्य एव राष्ट्रीय काव्य पर कुछ काय अवश्य हुआ ह।

हिन्दी साहित्य म वीर काव्य पर डा० टीकमसिह तोमर का प्रबध प्रकाशित हुआ ह जिसम सवत १६०० स १८०० ई तक के साहित्य का अध्ययन किया गया। डा उदयनारायण तिवारी ने वीर काव्य पुस्तक म बहुत से वीर रस सबधी पदा का सग्रह कर आलोचनात्मक अध्ययन किया है। डा० सुधीन्द्र ने 'हिन्दी काव्य म युगान्तर प्रबन्ध म राष्ट्रीय साहित्य का सुन्दर विवेचना किया। प्रयाग विश्वविद्यालय से शैलकुमारी गुप्ता का राष्ट्रीय काव्य सबन्धी प्रबन्ध स्वीकृत हुआ किन्तु इसमे अध्ययन काल १८०० ई तक ही सीमित रखा गया है। हिन्दी साहित्य मे राष्ट्रीय भावना भारतेन्दु युग से प्रारभ होकर वतमान काल म सन् १९४७ तक चरम सीमा को पहुची। हिन्दी साहित्य म राष्ट्रीय भावना के विकास पर विद्वाना द्वारा कुछ

स्फुट लेख अवश्य लिखे गए है तथा डा केसरीनारायण शुक्ल ने आधुनिक काव्यधारा' मे देशभक्ति की कविता पर प्रकाश डाला है। डा श्रीकृष्णलाल तथा डा भोलानाथ तिवारी के प्रब ध म भी राष्ट्रीय का यधारा का कुछ विवेचन किया गया है किन्तु हिन्दी साहित्य के आदि काल से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति तक राष्ट्रीय भावना का अध्ययन अभी तक नही किया गया है। अस्तु प्रस्तुत प्रबन्ध म इसी उद्देश्य को लेकर राष्ट्रीय काव्य का अध्ययन किया गया है। इसम प्रत्येक युग की राजनीतिक एव सामाजिक पृष्ठभूमि भी दी गई है जिसका प्रभाव उस युग के साहित्य पर पडा है। प्रमुख राष्ट्रीय कवियो की रचनाओ मे देशप्रेम की भावना का निरूपण कर उसके विकास पर प्रकाश डाला गया है।

वर्तमान काल की राजनीतिक तथा ऐतिहासिक परिस्थिति का चित्रण कर साहित्यिक प्रतिक्रिया का निरूपण भी किया गया है। वर्तमान काल म राष्ट्रीय भावना अपने तीव्रतम स्वरूप म रही तथा देश म व्याप्त असहयोग आदोलन, सन् १९४२ की क्राति आदि अनेको अवसरो पर देश की जनता ने मातृभूमि की मुक्ति के लिए अपने प्राणो का उत्सर्ग किया। इस युग के अनेको कवियो की रचनाओ मे विद्रोह का तीव्र स्वर सुनाइ पडा। इस प्रबन्ध म ऐसे कवियो को छोड दिया गया है जिनका स्वर राष्ट्रवादी न होकर व्यक्तिवादी है और केवल प्रमुख कवियो को रखने का प्रयत्न किया गया है। माधव शुक्ल माखनलाल चतुर्वेदी सुभद्राकुमारी दिनकर नवीन सोहनलाल द्विवेदी तथा सुधीन्द्र आदि कवियो की वाणी म सच्चे राष्ट्रप्रेम की हुकार सुनाई देती है। समाज मे व्याप्त दुख पीडन तथा कुरीतियो का मार्मिक वर्णन कर विदेशी शासको के प्रति उपेक्षा का भाव इस युग के कवियो की वाणी मे स्पष्ट रहा है। इस अध्याय मे स्वतत्रता के पूर्व सन १९४७ तक की प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवियो की रचनाओ का आलोचनात्मक अध्ययन कर अनन्तकाल से बहती हुई राष्ट्रीय भावना का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। विभिन्न कालो म कवियो की ओजमयी वाणी ने स्वाधीनता सग्राम म साहसपूर्वक जुटे रहने की प्रेरणा दी और जनमानस म विदेशी शासन को इस धरती से दूर करने की भावनाए भरी। जिसके फलस्वरूप सन १९४७ मे युगो युगो से दासता की श्रृखला म बद्ध भारतमाता मुक्त हुई और जनता ने स्वराज्य प्राप्त किया। स्वतन्त्रता के बाद तो राष्ट्रीय भावना का स्वरूप ही बदल गया। परिशिष्ट म सन १९४८ से लेकर १९७० तक हिन्दी साहित्य म राष्ट्रीय भावना की प्रवृति का निरूपण किया गया है। चीन तथा पाकिस्तान के युद्ध के समय जनमानस को जाग्रत करने वाले गीतो की रचनाए हुई, उनमे राष्ट्रीय भावना को नया स्वर दिया। उसके बाद पुन सास्कृतिक उन्नयन अहिंसा और विश्वशान्ति की भावना मुखरित हुई

जिसमे दिनकर, नवीन, माखनलाल चतुर्वेदी, सोहनलाल द्विवदी, सुमन वरागी आदि कवि प्रमुख रह। नई कविता की अतमुखी और गहन अनुभूति एव व्यग्यपूण प्रवृति का विश्लपण मुक्तिबोध, सर्वेश्वरदयाल, अनेय रघुवीर सहाय, भवानी मिश्र आदि कवियो द्वारा हुआ, इसका सक्षिप्त विवेचन भी दिया गया है।

इस प्रबन्ध मे अनेको पुस्तको तथा पत्रिकाओ से एसे उद्धरण लिए गए हैं जिनम राष्ट्रीय भावना मिली है। हरिश्चन्द्र मैगजीन प्रबोधिनी, सरस्वती, माधुरी, चाद, काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका प्रताप हिन्दुस्तान धमयुग आदि अनक पत्र-पत्रिकाओ म प्रकाशित सामग्री का उपयोग किया गया है। कही कही किसी कवि को दो युगो म रखना पडा है। श्रीधर पाठक, माखनलाल चतुर्वेदी सुभद्राकुमारी चौहान आदि का उल्लेख दो युगो म किया गया है। प्रत्येक अध्याय के अन्त म उपसहार दिया गया है जिसम उस युग की काव्यधारा के सबध मे आलोचना की गई है।

इस प्रबध को सुन्दर रूप देने मे श्रद्धेय डा विनयमोहन शर्मा का माग दशन उल्लेखनीय है जिन्होन समय समय पर अपने विचारो से इसे व्यवस्थित बनाने की प्रेरणा दी। इसके अतिरिक्त काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के अधिकारियो का भी कृतज्ञ हू जिन्होने अपने यहा अध्ययन की सुविधा प्रदान की थी। डा० रामकुमार वर्मा डा० उदयनारायण तिवारी, डा धीरेन्द्र वर्मा, डा दशरथ ओझा आचाय हजारी प्रसाद द्विवेदी जी आदि अनक विद्वानो तथा मित्रो के आवश्यक सुझावो तथा विचारो से इसम आवश्यक परिवतन एव सशोधन किए गए हैं। इसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हू।

इस ग्रन्थ की प्रस्तावना श्रद्धेय प माखनलाल चतुर्वेदी न लिखी। उन्होने कई बार इस ग्रन्थ के प्रकाशन के सबध म उत्सुकता प्रकट की किन्तु कुछ कारणवश उनके जीवित रहते इसकी प्रकाशन व्यवस्था नही हो सकी जिसका दुख मुझे बना रहेगा।

—क्रान्तिकुमार शर्मा

विषय-सूची

अध्याय — पृष्ठ

विषय-सूची

ााय | | पृष्ठ

राज्य तथा राष्ट्र की उत्पत्ति

भारत के प्राचीन इतिहास म राजनाति का महत्वपूर्ण स्थान रहा है किन्तु इम शास्त्र का दडनीति, राजधम शास्त्र नयशास्त्र, नातिशास्त्र, अथशास्त्र आदि विविध नामो द्वारा प्रयोग हुआ है। अग्रेजी मे इस शास्त्र के लिए 'पोलिटिक्स या पोलिटिकल साइंस' का प्रयोग किया जाता है जो ग्रीक भाषा क 'पोलिस' शब्द म बना है जिसका अथ है राज्य या नगर। प्राचीन ग्रीक के राज्य छोटे छोटे होते थे-प्रत्यक नगर ही एक स्वतत्र राज्य था।

आचाय चाणक्य के अनुसार 'राजनीति शास्त्र वह शास्त्र है जो मनुष्यो वाली पृथ्वी क लाभ और पालन क उपायो पर विचार करे।

राज्य की उत्पत्ति पर विचार करने मे पूव उसके लक्षणो की विवेचना करना आवश्यक है। मनुष्यो के अन्य समुदायो के समान राज्य भी एक समुदाय है। इसके भी निश्चित उद्देश्य व प्रयोजन है तथा इनकी पूर्ति के लिए साधन (सरकार) म परिवतन होता रहता है। अरस्तु के अनुसार, राज्य एक ऐसा समुदाय है जो अन्य सब समुदायो की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट है और अन्य सब समुदाय उसके अन्तगत होत है। इसलिए राज्य का उद्देश्य सर्वाधिक हित सम्पादित करना है। आधुनिक विचारको ने राज्य क लक्षण बतात हुए चार मुख्य तत्वो का प्रतिपादन किया है—

(१) जनता (२) प्रदेश (३) शासन (४) प्रभुता

किसी एम समुदाय को राज्य नही कहा जा सकता जिसम ये चार बातें न हो। ब्लशली हालेंड, बर्गेस आदि अनेक विद्वानो ने राज्य के इन्ही चार उपादानो की व्याख्या की है।

(१) जनता— जनता राज्य का प्रधान तत्व है। जनता के स्वरूप पर राज्य का स्वरूप निभर है। राज्य की उन्नति के लिए जनता का योग्य गुणी, परिश्रमी तथा बहुसख्यक होना भी उपयोगी है। राज्य म जनता की सख्या क सबध मे विद्वानो के विभिन्न मत रहे हैं। राज्य का वही आकार उचित है जिसम कि वह

आत्मनिर्भर रह सके, तथा ठीक प्रकार से शासित हो सके। प्लेटो ने राज्य के नागरिकों की संख्या पांच हजार तथा अरस्तू ने अधिक से अधिक दस हजार निर्धारित की है। प्राचीन यूनान में बहुत से छोटे-छोटे नगर राज्य थे जहां लोकतन्त्रीय शासन था तथा सभी नागरिक लोकसभा में एकत्रित होकर राज्य संबंधी विषयों पर विचार विनिमय करते थे। वर्तमान समय में निर्वाचन प्रणाली से केवल प्रतिनिधि ही लोक सभा में एकत्रित होते हैं। आज जनसंख्या की दृष्टि से बड़े और छोटे राज्य सभी प्रकार के राज्य हैं— चीन, भारत, अमरिका रूस आदि जहां जनसंख्या बहुत है तथा मोनाको, लुक्सम्बुर्ग आदि जहां जनसंख्या बहुत ही कम है। किसी भी राज्य की भूमि और जनसंख्या में एक ऐसा संबंध अवश्य होना चाहिए जिससे कि राज्य की भूमि अपनी जनसंख्या का पालन करने के लिए समर्थ हो।

(२) भूमि-राज्य के लिए जनता के साथ एक निश्चित भूमि का होना भी अनिवार्य है। मनुष्यों का एक समुदाय जब तक किसी भूमि पर स्थायी रूप से नहीं बस जाता तब तक वह राज्य का रूप नहीं प्राप्त कर सकता। राज्य के सब निवासियों में एकता व एकानुभूति के लिए भूमि के प्रति ममत्व की भावना बहुत सहायक है। राज्य की भूमि का राज्य के स्वरूप पर बहुत प्रभाव पड़ता है। ब्रिटेन तथा जापान राज्य समुद्र से घिरे हुए हैं इसीलिए इन्हें नौ शक्ति को उन्नत करने में सहायता मिली। जिस प्रकार भूमि की प्राकृतिक परिस्थिति का राज्य पर प्रभाव पड़ता है उसी प्रकार भूमि की जलवायु उपजशक्ति व समृद्धि का भी राज्य पर प्रभाव पड़ता है। प्लेटो तथा अरस्तू के मत से राज्य की भूमि न बहुत बड़ी हो और न बहुत छोटी। लोकतन्त्र शासन छोटे आकार के राज्यों में अधिक सम्भव है किन्तु आजकल राज्यों के आकार बड़े होते हैं और जहां छोटे-छोटे राज्य होते हैं वहां मिलकर एक संघ बना लिया जाता है जिसमें वे अपनी विशेषताओं को कायम रखते हुए सबमें एकानुभूति की भावना का विकास करते हैं।

(३) शासन किसी निश्चित भूमिखण्ड पर स्थायी रूप से बसा हुआ जनसमुदाय तब तक राज्य नहीं बनता जब तक वह राजनीतिक दृष्टि से संगठित न हो। राज्य की अपनी सरकार अवश्य होनी चाहिए। जनसमुदाय की सामूहिक इच्छा की अभिव्यक्ति और कार्य में परिणति सरकार द्वारा ही होती है। प्राचीन भारत में इसी सरकार को दण्ड नाम दिया गया। जब दण्ड नहीं था तब अराजकता की दशा थी तथा सर्वत्र मात्स्य न्याय छाया हुआ था। जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है वैसे ही प्रबल व शक्तिशाली मनुष्य निर्बल को लूट लेते थे-मनुष्यों का आर्थिक जीवन, सुख व समृद्धि सब खतरे में था। दण्ड के प्रादुर्भाव ने इस अवस्था का अन्त किया। सरकार का रूप चाहे कैसा भी हो यह आवश्यक है कि उसके पास

इतनी शक्ति हो कि वह अपने आदेशों का राज्य की जनता द्वारा पालन करा सके और बाहरी तथा आभ्यन्तरिक शत्रुओं से अपने राज्य की भली भांति रक्षा कर सके।

(४) प्रभुता–कोई भी जनसमुदाय अन्य सब बातों के होने के साथ तभी राज्य होगा जब वह 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न' हो। न केवल बाह्य शक्ति के नियन्त्रण से ही राज्य को मुक्त होना चाहिए अपितु अपने आन्तरिक क्षेत्र में भी उसकी सत्ता सर्वोपरि होनी चाहिए।

भारत के प्राचीन राज शास्त्रियों ने राज्य के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए सप्तांग राज्य की कल्पना की थी। राज्य एक जीवित शरीर माना गया जिसके सात अंग हैं स्वामी, अमात्य जनपद, दुर्ग, कोष दण्ड, मित्र। शुक्रनीति के अनुसार राज्य रूपी शरीर की आँखें अमात्य हैं, मित्र कान है, कोष मुख है, दण्ड मन है, राष्ट्र हाथ पैर हैं। राज्य के अंगों को आचार्य चाणक्य ने प्रकृति नाम से कहा है और उसने भी स्वामी आदि सात प्रकृतियों का उल्लेख किया है। प्राचीन भारत के राज्य छोटे-छोटे ही थे तथा इनकी भूमि को दो भागों में विभक्त किया जा सकता था। राज्य की राजधानी को पुर (दुर्ग) कहते थे जिसमें राज्य के शासक व्यवसायी ब्राह्मण शिल्पी आदि का निवास होता था। दूसरा जनपद जिसमें कृषक तथा अन्य काम करने वाले निवास करते थे। शासन की शक्ति प्रधानतया राजा के हाथ में होती थी जो अमात्यों व परिषदों की सहायता से राजकार्य करता था। कोष और दण्ड राज्य की प्रमुख शक्तियाँ थी।

राज्य की उत्पत्ति

राज्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्राचीन भारत में विभिन्न मत कहे गए हैं–

(१) **देवताओं में राज्य की उत्पत्ति**—वेद तथा धर्म की हानि के पश्चात् सुरगण बहुत ही चिंतित हुए और ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने धर्म अर्थ काम, मोक्ष, पर विस्तार से सुर मानव प्राणियों को ज्ञान दिया। दण्ड की सहायता से यह ज्ञान सारे संसार की रक्षा करेगा और उसे दण्डनीति के नाम से तीनों लोकों में माना जाएगा। उसके पश्चात् देवता विष्णु के पास पहुंचे और कहा कि नश्वर जगत में से किसी को बताइए जो सबके ऊपर नियन्त्रण कर सके। विष्णु ने अपनी योग शक्ति से विरज नामक सन्तान को उत्पन्न किया। किन्तु विरज ने लोगों पर राज्य न करके तप साधना में रुचि दिखाई तथा उसके पुत्र तथा पौत्र ने भी त्याग और तपस्या में चित्त लगाया। उसका प्रपौत्र समस्त प्राणियों का रक्षक बना तथा वह स्वभाव से बहुत ही सरल और सुन्दर था। उसका प्रपौत्र वेन हुआ जो क्रोध, ईर्ष्या के कारण

समस्त प्राणियों को दुख देने लगा और अन्त में ऋषियों ने उसे मार डाला। वेन के सीधे हाथ से पृथु की उत्पत्ति हुई। राजा पृथु ने देवताओं और ऋषियों से पूछा कि मैं क्या करूँ। ऋषियों ने कहा कि 'हमेशा वही काम करो जिसमें न्याय हो। प्रत्येक प्राणी को एक ही दृष्टि से देखो। मोह क्रोध सुख, दुख, मान-अपमान छोड़ हमेशा सत्य पर ही स्थिर रहो और जो इस मार्ग से भ्रष्ट हो उसे अपने हाथ से ही दण्ड दो। शपथ खाओ कि मन कर्म विचार से वेदों में दर्शाए गए धर्म का ही पालन कराओगे और जातियों में वर्ण सकर न होने दोगे। तुम दण्ड की सहायता से व्यवस्था बनाए रखो।' राजा पृथु की यह शपथ बहुत ही महत्वपूर्ण है।

(२) मनु—(कौटिल्य) अनाचार अव्यवस्था और पतन से दुखी होकर लोगों ने मनु-वैवस्वत को अपना राजा चुना और अन्न का ⅙ भाग तथा अन्य सामग्री का ⅒ भाग राज कोष में देना स्वीकार किया। इस धन से राजा उनकी सुरक्षा और उन्नति के लिए उत्तरदायी हुआ तथा उनके पापों का भी भागी बना। कौटिल्य ने राजा को शक्ति व बल से ही राज्य करने को नहीं कहा बल्कि प्रेम से प्रजा का पालन करने को भी कहा।

३—बौद्ध साहित्य में वर्णित महासम्मत का सिद्धान्त—बौद्ध ग्रन्थ दीघानिकाय में महासम्मत का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। उसमें कहा है कि पहले यह संसार नष्ट होने के उपरान्त पुनः प्रकट हुआ। यहाँ मानसिक प्राणी तथा सूक्ष्म जीव ही बसते थे जो आत्म प्रकाशमान थे सब हवा में ही विचरण करते थे तथा स्त्री पुरुष का कोई भेद नहीं था।

उसके पश्चात पृथ्वी जल में फैल गई और उसमें कुछ गंध और स्वाद भी आने लगा। कुछ लोभी प्राणियों ने उसका आस्वादन किया और रेंगते हुए जल से पृथ्वी पर आने लगे तथा उनमें आत्म प्रकाशित होने का गुण नष्ट होने लगा। उसके पश्चात् सूर्य, चन्द्र नक्षत्र दिन रात मास पक्ष ऋतु आदि हुए तथा प्राणी बहुत समय तक पृथ्वी पर जीवित रहने लगे।

दुर्गुण रूप के प्रति मोह तथा अभिमान के आने से पृथ्वी के स्वाद का गुण नष्ट होने लगा। मिट्टी के उत्पन्न से रंग गंध और स्वाद आने लगा। मिट्टी का यह गुण भी जब नष्ट होने लगा तब धान व लतादि की उत्पत्ति हुई और उसके समाप्त होने पर प्रकृति पुरुष का भेद स्पष्ट हुआ व लोगों ने मेंड़ों की सीमा बाँधी और बँटवारा किया। तब कुछ लालची पुरुषों ने एक दूसरे के खेत चुराए और लाभ उठाया दंड देने पर यह कार्य बंद हुआ—चोरी आई तथा सजा दण्ड आदि प्रारम्भ हुए। इससे सारे प्राणी त्रस्त हुए और वे उसके पास गए जो सबसे सुंदर लोकप्रिय

आक्पक था आर कहा— हे मत्पुरुप ! आइए उन पर क्रोध कीजिए जिन पर क्रुद्ध हाना चाहिए जो दण्डनीय हो उसे दण्ड दीजिए और जिन्हें बाहर निकालना हो उसे निकालिए और हम आपको अपने अन्न का कुछ अश देंगे । इसे महासम्मत कहा गया क्योंकि वह सब लोगो द्वारा चुना गया था ।

राज्य की उत्पत्ति के सबध म प्राचीन भारतीय साहित्य म उपलब्ध कथाओ के आधार पर तीन तथ्यों का स्पष्टीकरण होता है । पहला यह कि राज्य की उत्पत्ति देवताओ म हुई और दूसरे यह कि जनता ने किसी एक लोकप्रिय सुदर सत्पुरुष के पास जाकर सविदा (Contract) किया तथा अपनी रक्षा और उन्नति के लिए अपने अन्न का कुछ अश कर के रूप म देना स्वीकार किया । राजनीति शास्त्र के विचारको ने राज्य की उत्पत्ति के सबधो म चार सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं–

(१) शक्ति सिद्धान्त

(२) दवी अधिकार सिद्धान्त

(३) सविदा सिद्धान्त

(४) ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त

राज्य की उत्पत्ति का विचार करते हुए हम किसी विशिष्ट दश के राज्य की विवेचना नही करेंगे । यद्यपि इन चार सिद्धान्तो का काफी पिष्टपेषण हुआ है और ये पुराने पड गए हैं पर फिर भी उनका महत्व है ।

(१) शक्ति सिद्धान्त–राज्य की उत्पत्ति शक्ति के कारण हुई । छोटे जन [कबील] जब किसी प्रदेश मे रहकर अपना राज्य जमा लेते थे तब उनमे पारस्परिक सघर्ष होता था तथा शक्तिशाली जनपद अन्य निबल जनों को जीत कर अपने अधीन कर लेता था । सिकदर, चन्द्रगुप्त आदि ने अपने जो विशाल साम्राज्य बनाए उनका मूल यह शक्ति ही थी । आधुनिक समय के विचारको–अराजकतावादी व्यक्तिवादी समाजवादी आदि ने भी अपने मत की पुष्टि के लिए शक्ति सिद्धान्त का आश्रय लिया । हमारे यहा भी प्राचीन विचारको ने 'वीर भोग्या वसुन्धरा' कहकर वीरों के पराक्रम से पृथ्वी का सुख भोगने की बात कही है । किन्तु जहा राज्य शक्ति का विकास व प्रयोग करता है वहाँ साथ ही उन परिस्थितियो को भी उत्पन्न करता है जो मानव स्वतन्त्रता और मानव अधिकारो के लिए आवश्यक है ।

(२) दवी अधिकार सिद्धान्त–राज्य की उत्पत्ति ईश्वर द्वारा हुई राजा ईश्वर का प्रतिनिधि ही है तथा देवरूप होता है । ईश्वर ही सृष्टि के प्रारम्भ म

मनुष्यों को ज्ञान देता है तथा राज्यों की उत्पत्ति भी ईश्वर द्वारा ही हुई है। प्राचीन रोम तथा भारत में राजा को देवता माना जाता था तथा उसकी पूजा की जाती थी। ईसाई मत में भी राजा को पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि माना है।

वर्तमान युग में राजा का अस्तित्व, क्षीण ही सा हो गया है। मनुष्य राजा को दैवी शक्ति सम्पन्न नहीं मानते। समाज में नियन्त्रण व्यवस्था और मर्यादा स्थापित करने के लिए जिस आज्ञापालन और कानून के प्रति निष्ठा की आवश्यकता है उसे उत्पन्न करने के लिए दैवी अधिकार के सिद्धान्त ने बड़ी सहायता की थी। भारत में भी मध्ययुग में दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा कहकर जनमानस में उनको मानना व राजाओं ने मुगल सम्राटों के सामने अपना सिर झुकाया और इस प्रकार सुव्यवस्थित शासन का प्रादुर्भाव हुआ। इस सिद्धान्त द्वारा राज्य संस्था के प्रति आदर व सम्मान का भाव उत्पन्न होता है।

(३) सामाजिक संविदा सिद्धान्त– इस सिद्धान्त का उल्लेख भारत के प्राचीन ग्रन्थों में समय के नाम से किया गया है। इस मत के अनुसार मानव इतिहास को दो भागों में बांटा जा सकता है। एक समय वह था जब राज्य संस्था प्रारंभ नहीं हुई थी और उसके अभाव में ही मनुष्य अपना जीवन व्यतीत करते थे। इस आराजक दशा को कुछ विद्वानों ने बड़ा भयंकर बताया और कुछ ने इसे आदर्श भी माना है। उसके बाद मनुष्यों ने राज्य संस्था की आवश्यकता अनुभव की और उन्होंने मिलकर आपस में एक संविदा तैयार की जिसके फलस्वरूप राज्य की स्थापना हुई। समाज के सम्मुख आत्मसमर्पण कर देने के बदले में मनुष्य को संपूर्ण समाज का संरक्षण प्राप्त होता है और वह उन अधिकारों को प्राप्त करता है जिनकी रक्षा का वह समाज से दावा कर सकता है। अनेक विचारक इस संविदा को एक ऐतिहासिक तथ्य मानते हैं और कुछ इसे कल्पित समझते हैं।

महाभारत के शान्तिपर्व में समयवाद या संविदा सिद्धान्त का बड़े विशद रूप में वर्णन मिलता है। किसी प्रकार की राज्य संस्था न होने के कारण मनुष्यों में अराजक दशा थी। उन्होंने आपस में एक स्थान पर एकत्र होकर संविदा किया और ब्रह्मा के पास पहुंचे। ब्रह्मा ने मनुष्यों को मनु के पास जाने के लिए कहा। मनु ने *कहा कि राज्य का कार्य कठिन है तथा मनुष्यों पर शासन करना तो और भी कठिन* है क्योंकि वे मिथ्याचारी होते हैं। मनुष्यों ने उन्हें आश्वासन दिया अपराधी को दंड देने का अधिकार दिया तथा आय का दसवां भाग देना भी स्वीकार किया।

जैन–बौद्ध साहित्य तथा महाभारत के ही एक अन्य प्रकरण में अराजक दशा को उत्कृष्ट व आदर्श माना गया है। उस समय किसी वस्तु की कमी नहीं थी।

अत लोगों में वस्तु का संग्रह करने की प्रवृत्ति नहीं उत्पन्न हुई। धीरे धीरे पदार्थों की कमी होने लगी। "द्रव्य" की दशा आ जाने से लोग वस्तुओं पर वैयक्तिक स्वामित्व करने लगे तथा लोभ और मोह से काम क्रोध, मद और दर्प की उत्पत्ति हुई। अन्त में मनुष्यों में राज्य संस्था द्वारा मर्यादा और नियंत्रण की स्थापना की भावना उत्पन्न हुई।

पाश्चात्य विचारकों में हाब्स लाक रूसो आदि ने संविदा सिद्धांत पर विशद विवेचन करते हुए राष्ट्र की उत्पत्ति के पूर्व की सन्तोषजनक स्थिति का वर्णन किया है। वास्तव में संविदा सिद्धांत पर बड़ा मतमतान्तर पाया जाता है जिसकी विशद व्याख्या करना इस प्रबन्ध में संभव नहीं है।

(४) ऐतिहासिक व विकासवादी सिद्धान्त—राज्य की उत्पत्ति के संबंध में इस समय जो विद्वान सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं उसे ऐतिहासिक सिद्धान्त कहा जा सकता है। उनके विचार में राज्य में कोई ऐसी घटना नहीं है जो निश्चित समय पर घटित हुई था। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसकी यह प्रवृत्ति है कि वह समुदाय बनाकर रहे। मनुष्यों की यही सामाजिक प्रवृत्ति धीरे धीरे विकसित होती हुई राज्य के रूप में बदल गई। मनुष्य पहले परिवार में रहा फिर कुल और जन में संगठित हो गया और एक स्थान पर स्थायी रूप से रहने के कारण जनपद या राज्य की उत्पत्ति हुई। राज्य की स्थापना या उत्पत्ति धीरे धीरे हुई।

कुछ विद्वानों ने पितृसत्तात्मक तथा मातृसत्तात्मक सिद्धांतों को मानकर राज्य की उत्पत्ति के सम्बंध में विभिन्न मत रखे हैं। पितृसत्तात्मक सिद्धान्तानुसार राज्य संस्था का प्रादुर्भाव पितृसत्तात्मक कुलों द्वारा हुआ—मनुष्य का प्रथम समुदाय परिवार या कुटुम्ब था तथा राज्य संस्था में शासन का विकास भी परिवार के ढंग में ही हुआ। जिस प्रकार परिवार में पिता का शासन होता है उसी प्रकार कुल में वृद्ध का और जनपद में राजा का शासन स्थापित हुआ।

उन्नीसवीं सदी में मानव इतिहास सम्बन्धी अनुसंधान कार्यों से कुछ विद्वानों ने यह सिद्ध किया कि प्रारम्भ के मानव समुदाय मातृसत्तात्मक थे। विवाह की प्रथा के पूर्व एक ऐसा समय था जब मनुष्य विवाह के बंधन में परिवार का निर्माण नहीं करता था। मनुष्य एक ऐसे समुदाय में रहता था जहाँ स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध सामाजिक होता था तथा माता द्वारा ही संतान का परिचय मिलता था। बाद में धीरे धीरे मातृसत्तात्मक परिवारों से पितृसत्तात्मक परिवारों का प्रादुर्भाव हुआ।

समाज शास्त्र के विद्वानों ने दोनों ही मतों की पुष्टि के प्रमाण प्रस्तुत किए हैं

जिनसे यह स्पष्ट है कि मनुष्य की सामुदायिक प्रवृत्ति राज्य की उत्पत्ति के पहले भी विद्यमान थी तथा इसी प्रवृत्ति के विकास के कारण राज्य की उत्पत्ति हुई।

राष्ट्र व राज्य की उत्पत्ति मे सहायक तत्व

मनुष्य का समुदाय म रहन की प्रवृत्ति क विकास म अन्य कुछ और भी बातें ऐसी थी जिनकी सहायता से राज्य का उदभव हुआ।

(अ) सजातता (Kinship) मानव समाज के प्रारम्भिक समुदायो म एक यह भी भावना थी कि उसके सभी व्यक्ति सजात'– भाई बहन हैं। एक टोली के सब लोग अपने को सजात समझते थे। इस भावना स मनुष्यो को एक दूसरे के समीप लाने म तथा उन्हें एक समुदाय मे सगठित करने म बहुत सहायता दी। प्रारम्भिक राज्यो म रक्त की एकता व शुद्धता की भावना विद्यमान थी। प्राचीन भारत के लिच्छवि मालव, यौधेय आदि जनपदो म सजात होने की भावना थी जिसके कारण एकानुभूति होती थी और एक सुदृढ सगठन मे रहने की प्रेरणा मिलती थी।

(ब) धर्म की एकता— धर्म की एकता के कारण मनुष्यो मे एकानुभूति उत्पन्न हुई। प्रारम्भिक धर्म के दो महत्वपूर्ण अग थे— पितरो तथा देवी देवताओ की पूजा। समुदाय म पूर्वजो के साहस, प्रताप और पराक्रम की गाथा तथा पितरो की पूजा की भावना प्राचीन जनसमुदाय मे मिलती है। मनुष्यो के प्रारम्भिक देवता प्राकृतिक शक्तियो के मूर्तरूप थे जसे–सूर्य अग्नि जल आदि की विभिन्न रूपो म पूजा होती थी। जिन लोगो के देवी देवता एक थे उनम एकानुभूति थी और दूसरे लोगो के प्रति घृणा और विद्वेष की भावना रही। प्राचीन आर्य अन्य लोगो को 'दस्यु अनार्य' समझते थे इसी प्रकार मुसलमान व ईसाई दूसरे धर्म के लोगो को काफिर व 'पगन समझते थे। धर्म ने राज्यो के विकास म उसे दवी व लोकोत्तर रूप देकर सहायता की तथा राजा का साक्षात् देवता माना। धर्म ने मनुष्यो की व्यवस्था नियन्त्रण रखने की प्रेरणा दी।

(स) आर्थिक जीवन–पहले मनुष्य शिकार द्वारा अपना जीवन निर्वाह करता था। टोली बनाकर सहयोग द्वारा शिकार करने म सुगमता होती थी। जो पशु उनके शिकार होते थे उनके विभाजन के कुछ नियम थे। आर्थिक जीवन का इस विवशता के कारण मानव समाज एक प्रकार के सगठन म रहने के लिए प्रेरित होना था। बाद में पशु पालन स व्यक्तिगत सम्पत्ति की भावना आई और कुछ चोरी अपराध आदि की नई समस्याए उपस्थित होती गई। ज्यो ज्यो मनुष्य आर्थिक क्षेत्र म उन्नति करता गया–खेती भवन निर्माण, विविध वस्तुओ के विनिमय द्वारा नियमो का पालन

होने लगा। आर्थिक जीवन का क्रमिक विकास राज्यों की उन्नति में बहुत सहायक हुआ।

(द) युद्ध—प्रारम्भिक कबीले एवं कुल में जो मनुष्य रहते थे वे शान्तिमय जीवन व्यतीत नहीं करते थे। शिकारी टोली जिस प्रदेश में घूमती फिरती थी उसमें दूसरे को घुमने नहीं देती थी। इसी प्रकार पशुपालक तथा खेती करने वाले लोग सतर्क रहते थे। युद्ध की इस आवश्यकता ने कुलो व कबीलो में एक योग्य और बलवान नेता का चुनाव करने की प्रेरणा दी जो युद्ध के समय ही नहीं शान्ति के समय भी लोगों का नेतृत्व कर सके। सब लोग उसके आदेशों के पालन के लिए प्रस्तुत थे और इस प्रकार शासक और प्रजा की भावना बढ़ी और राज्यों की उत्पत्ति में सहायता मिली।

(य) राजनीतिक चेतना—मनुष्य में धर्म, आर्थिक जीवन व युद्ध की आवश्यकताओं के साथ ही अपनी रक्षा तथा हित के लिए संगठन व्यवस्था और नियन्त्रण की जो आवश्यकता पड जाती थी वह शान्ति के समय भी विद्यमान रहती थी। इससे मनुष्य धीरे धीरे उस राजनीतिक चेतना को प्राप्त करने लगा जो राज्यसंस्था का मूल आधार था।

इस प्रकार सामुदायिक जीवन व्यतीत करने की प्रवृत्ति के कारण मनुष्य समूहों में रहने लगे और सजातता धर्म आदि ने इन समूहों को सुसंगठित होने में सहायता दी। राजनैतिक चेतना के कारण ये प्रारम्भिक समुदाय सुसंगठित राज्य संस्था के रूप में परिवर्तित होना शुरू हो गए।

राष्ट्रीय राज्य तथा राष्ट्रीयता

सामन्त पद्धति के समय यूरोप में सैकड़ो महाराजा, राजा और सामन्त छोटे छोटे प्रदेशों में शासन करते थे। उनमें पारस्परिक संघर्ष और युद्ध होते रहते थे पर धीरे धीरे उनके बीच कुछ शक्तिशाली राजाओं का विकास भी प्रारम्भ हुआ जिन्होंने बहुत से सामन्तों को अपने अधीन कर अपना एकतन्त्र शासन स्थापित किया। अन्य छोटे-छोटे सामन्त अपने झगड़ों को निपटाने के लिए शक्तिशाली राजा से न्याय की माँग करते तथा उसके दरबार में रहना गौरव समझने लगे। सामन्त पद्धति के ह्रास से शक्तिशाली केन्द्रीय शासन में आकर राज्यों ने बहुत उन्नति की उसके निवासियों में राष्ट्रीयता की अनुभूति विकसित होने लगी। ये राष्ट्र धर्म, भाषा रीति रिवाज ऐतिहासिक परम्परा और संस्कृति आदि की एकता के कारण देशवासियों में एकानुभूति उत्पन्न करते हैं।

पश्चिम म राष्टीय भावना का उद्भव १८ वी शताब्दि के अन्त म ही हुआ और अब उसन एक व्यापक रूप धारण किया । पूर्वी देशो तथा एशिया मे यह भावना धार वाग बीसवी सदी म ही दृष्टिगोचर हुई । राष्ट्रीयता की भावना राजनीति म हा नही क्रमा साहित्य, सगीत आदि सजनात्मक अभिव्यक्तिया म भी विकसित होनी गई तथा विभिन्न देशो म अपनी प्राचीन सस्कृति लोककलाओ क प्रोत्साहन की भावना राष्ट्र गौरव समझी जाने लगी । इसक फलस्वरूप नये नये उत्सव राष्ट्रीय पताकाए राष्ट्रगीत एव स्मारक आदि द्वारा देश म राष्ट्रीय भावना बढती गई ।*

राष्ट्रीयता एक आध्यात्मिक भावना है जो एक ही भूभाग म रहने वालो म पदा होना है । राष्ट्रीयता मन की वह स्थिति है जिससे राष्ट्र के प्रति व्यक्ति की परम निष्ठा का पता लगता है । यह परस्पर बधुत्व का भाव है जो राष्ट्र की गौरवान्वित करन म सहायक होता है । सामान्य भाषा व्यवहार धर्म आदि के सयोग स राष्ट्रीयता का भावना विकसित होती है । पश्चिम म राष्ट्रीयता का अर्थ उस एक सार्वलौकिक उन्नत भावना क प्रति भक्ति तथा स्थिरता है जो भूतकाल के गौरव व निराशा की अपेक्षा स्वतत्रता समानता का भावना से युक्त व्यापक भविष्य की ओर उन्मुख होना है ।† मनिन न राष्ट्रीयता का राजनीति समाज सस्कृति और एतिहासिक तथ्य का समष्टिगत अभिव्यक्ति माना है ।

राष्ट्रीयता का अर्थ भावना म है जो मनोवैज्ञानिक है । यहा भावना परिस्थितिया का सहारा पाकर स्पष्टतर होती जाती है । राष्ट्रीयता क लिए देशभक्ति का होना आवश्यक है । यह व्यक्ति म नवीन गौरव व आत्म सम्मान की भावना का सचार करना है । अपने देश क प्रति विशिष्ट आत्मीयता व गौरव की भावना स युक्त व्यक्तिया का समुदाय ही राष्ट्र है । सच्चा देश प्रेम वही होता है जब व्यक्ति राष्ट्र का रक्षा क लिए अपन समस्त स्वार्थों व हितो का बलिदान कर अपन प्राणो का उत्सर्ग करता है । जन्मभूमि तथा पूर्वज परम्पराओ क प्रति यह अनुराग इतिहास म मिलता है ।

राष्ट्रीयता क आधार भिन्न हो सकत हैं – उदाहरणार्थ भाषा धर्म प्राकृतिक स्थितिया सस्कृति जाति स्वर्ण साहित्यिक परम्पराए आदि । किन्तु किसी एक को ही राष्ट्र का अग नही माना जा सकता ।

---

* एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका—नेशनलिज्म । खड १६ पृष्ठ १२०

† बा आजर—नेशनलिज्म स्ट्रक्चर एण्ड प्राबलम्स—पृष्ठ २५

राष्ट्रीय काव्य के विभिन्न स्वरूप

राष्ट्र शब्द बहुत ही व्यापक अर्थ रखता है इसमें भूभाग पर निवास करने वाली समस्त जनता की भावनाओं और विचारों की प्रतीक संस्कृति और सभ्यता आदि सम्मिलित होती है। किसी देश की सभी इकाइयों की समष्टि ही राष्ट्र का वास्तविक स्वरूप है किन्तु राष्ट्र के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए कुछ व्यापक तथा अनिवार्य तत्व भी हैं जिनमें धर्म, संस्कृति, भाषा, जनता, राजनीतिक विचार आदि प्रमुख हैं। राष्ट्र का प्राकृतिक स्वरूप भी महत्वपूर्ण होता है। इन्हीं सभी विचारों को ध्यान में रखकर राष्ट्रीयता का सम्यक्, स्वस्थ तथा पूर्ण विकास सम्भव हो सकता है। कभी कभी किसी युग विशेष में कोई तत्व प्रधान तथा प्रभावशाली हो जाता है तथा राष्ट्रीयता के बाह्य स्वरूप तथा उसकी अभिव्यक्ति में अन्तर आ जाता है। यही कारण है कि राष्ट्रीयता का स्वरूप सदा एक सा नहीं रहता।

राष्ट्रीय काव्य की व्यापकता और विविधता को देखते हुए यह सम्भव नहीं है कि उसका वर्गीकरण किया जा सके। इसका कारण यह है कि राष्ट्र के प्रति राष्ट्रप्रेमियों के भाव सीमित और वर्गीकृत नहीं होते हैं। इसीलिए राष्ट्रीय काव्य की धारा को हम कहीं से काट नहीं सकते। वह अविभाज्य है। जिस प्रकार जगन्नियन्ता प्रभु की अर्चना, वंदना तथा भक्तों का आत्म निवेदन एवं भक्ति का स्वरूप एक सा नहीं होता उसी प्रकार राष्ट्र प्रेमी अलग अलग अनुभूतियां प्राप्त करता है। भक्ति की भावना एक होने पर जैसे भक्तगण प्रभु की विभिन्न लीलाएं और रूपों तथा सुखमय तादात्म्य के क्षणों का अलग अलग वर्णन करते हैं उसी प्रकार राष्ट्र प्रेमी भी कई प्रकारों की कल्पना करते रहते हैं।

राष्ट्र जाति, धर्म और भाषा की एकता का नाम मात्र नहीं है वह भावना की एकता का प्रतीक है। यही भावना समय समय पर संकुचित और विस्तृत होती रही है। कभी कभी व्यक्ति अपने निवास ग्राम व प्रांत को ही इतना चाहने लगता है कि वही राष्ट्र जान पड़ता है। वास्तव में राष्ट्र की भावना शाश्वत सीमा नहीं रखती वह भूभाग में बसने वालों की सामूहिक इच्छा का परिणाम ही अधिक होती है।

आचार्य विनयमोहन शर्मा के अनुसार राष्ट्र से सम्बन्ध रखने वाले तत्व राष्ट्रीय तत्व कहलाते हैं।* राष्ट्रीय तत्व के सरूप और अरूप दो मुख्य भेद हुए—

---

* हिन्दी की आधुनिक राष्ट्रीय कविता—डा० विनयमोहन शर्मा

। अवंतिका–जनवरी १६५४। पृष्ठ २५६ ५८
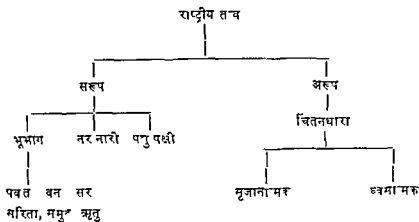
जब कभी व्यक्ति राष्टवादी बनता है तब राष्ट के समस्त तत्वा स प्रेम करता है। वतमान को ही नहीं अतीत को भी प्रेम और श्रद्धा की दृष्टि म रखता है। राष्ट्र क सरूप तत्व म तीन मुख्य विभेद किए जा सकते हैं। प्रथम द्वारा भूभाग क प्रति अनुराग तथा श्रद्धा का भाव व्यक्त किया जाता है। देश के प्रेम का प्रबल आधार यही है कि वहा के रहने वाले उस भूमि का पूरा परिचय प्राप्त करें। आर्यों क साहित्य म भूमि वदना तथा मातभूमि की स्तुति सम्बन्धी उद्गार कई स्थाना म पाए गए हैं। इस पथ्वी को विश्वरूपा तथा अनत सौंदय की खान कहा है तथा इसम फलन फूलन वाल प्रत्यक जन का कतव्य बताया है कि वह उसक सौंदय स्थला की पूरी पहचान कर। इसक पवत वन धरती सर समुद्र ऋतु पुष्प आदि सभी का सौंदय दखें। मात भूमि का दिव्य रूप अनेक राष्ट्रीय वगो का स्रात है। दश म फले हुए तीथ स्थान पुण्य क्षत्र प्रकृति क विशाल आगन म ही स्थित हैं। अमरनाथ बद्री नाथ कदारनाथ प्रयाग काशी आयाध्या आदि तीथ प्रकृति की मनामुग्धकारिणी छटा स परिपूण हैं। धम न राष्ट्र क सरूप तत्व का आलम्बन अधिक लिया है। भारत भूमि पर रहन वाली आर्यों की सतान प्रारम्भ स ही धर्माभिभूत रहा है। भारत क दाशनिक विचारा ज्ञान उपासना भक्ति और कम क दृष्टिकाण आदि हमार प्राचीन साहित्य की निधियाँ हैं जिनम समस्त राष्ट्रीय जन को चतना मिलता रहती है। गगा राष्ट्रीय ऐक्य का पावन पताका है और उसक तट पर हमारी संस्कृति फली फूली है। नग दवता और वन देवता की कल्पना भी प्रकृति की आराधना का रूप है। नदियों, पवतों और जगलों स भरे हुए विशाल दश म भूमि क साथ आत्मीयता प्राप्त करन क लिए सबसे सुन्दर और स्थायी युक्ति हमार यहाँ तीथ निमाण क रूप में

माय हुए। जनता को सांस्कृतिक आन्दोलन में सम्मिलित करने के लिए तीर्थ यात्रा बड़ी सहायक हुई है। तीर्थ यात्रा से धार्मिक भावों के बल के साथ भौगोलिकता की चेतना भी बढ़ती है। प्राकृतिक सौन्दर्य का परिचय, शिल्प स्थापत्य कला आदि का ज्ञान भी सहज ही इससे प्राप्त होता है। आज भी तीर्थ राष्ट्रीय जीवन की महत्वपूर्ण प्रेरणा है जो प्रतिवर्ष धर्म के द्वारा दर्शन के लिए जनता का आह्वान करते हैं। इससे जनता में ऐक्य की भावना को भी बल मिलता है क्योंकि तीर्थ-यात्रा के धरातल पर जनता की दृष्टि में सारा देश एक होता है। मन की उस उच्च तथा पवित्र भूमिका में प्रत्येक व्यक्ति दूरी से ऊपर उठकर देखता है तथा हिमालय से गंगोत्री का जल, समुद्र के सुदूर किनारे पर स्थित सेतुबन्ध रामेश्वरम में शिव पर चढ़ाने जाता है।

राष्ट्र के स्वरूप तत्वों में दूसरा तत्व यहां के नर-नारी के जीवन का चित्रण है। जब राष्ट्र की प्रकृति से यहां के जन का इतना लगाव और प्यार रहा है तो उसमें रहने वाली जनता के प्रति भी स्नेहमय उद्गार राष्ट्रीयता का अंग बन जाता है। राष्ट्र में रहने वाले जन-मन की जीवन चर्या, सुख-दुख रीति रिवाज, मनोरंजन ज्ञान कला साहित्य संस्कृति आदि सभी उपकरणों के प्रति भावना की अभिव्यक्ति को भी भुलाया नहीं जा सकता है। हमारे यहां साहित्य को समाज का दर्पण कहा है। राष्ट्र में रहने वाले जन समुदाय के जीवन का चित्रण भी राष्ट्र की निधि ही होगी। हमारे पूर्वजों की जीवन गाथा भी हमें नित्य प्रेरणा देती है और उनके चरण चिह्नों पर चलकर हम राष्ट्र को उन्नत और गौरवमय बना सकते हैं। हमारे देश के संत ऋषि द्रष्टा साहित्यकार कवि मूर्तिकार आदि सभी की साधना का वर्णन राष्ट्रीय तत्व में सम्मिलित हो जाता है।

पृथ्वी पर बसने वाले पशु-पक्षी भी राष्ट्रीय मनोभावों के अंग हैं। देश में गायों को नन्हें सहस्रों पीढ़ियों को घी दूध से सींचती आई हैं। गाय में तैंतीस करोड़ देवताओं का वास कहा है तथा इसके दूध को अमृत बताया गया है। गाय को वैतरिणी की नौका भी माना है जो लोगों को भवसागर के पार उतारने में समर्थ है। संस्कृत साहित्य में गौ भक्ति सम्बन्धी उद्गार बिखरे पड़े हैं तथा इसे देवता और माँ का रूप माना है। अभी भी प्रत्येक भारतीय के मन में गाय के प्रति श्रद्धा और सहानुभूति की भावना व्याप्त है तथा गौ पालन एवं गोदान को सर्व श्रेष्ठ धर्म माना गया है। पशुओं में गजराज वृषभ, सिंह आदि को विभिन्न देवी देवताओं का पवित्र वाहन तथा पूज्य माना है। हमारे यहां नागदेवता की उपासना भी होती है तथा शेषनाग के फन पर ही सारी पृथ्वी स्थित है यह सर्व साधारण में माना जाता है। ह[illegible] मातृभूमि के पार्थिव रूप को सुन्दर बनाते हैं तथा मोर गरुड़ और उलूक, नीलकंठ आदि के प्रति भी अच्छी भावनाएं प्रकट की जाती हैं। अर्थात देश की

प्रकृति नर नारी तथा पशु पक्षी आदि सभी सन्य तत्वा के साथ हमारा सबध जुडा हुआ है।

जब राष्ट्र पराधीन हाना है तब राष्ट्र के अन्य तत्वा के प्रति प्रम सघन हो जाना है। इसम विदेशी शासक के प्रत्यक काय और कठार अनुशासन एव आना का उल्लघन तथा विरक्ति का भाव जाग्रत होता है। शासन तथा शासक के प्रति क्रोध तथा प्रतिकार एव उसे हटाकर फेंकने की भावना अधिक उभरता है। इस अन्य चिन्तन धारा म दो प्रवाह चलते हैं—

१ अतीत का चिंतन परीक्षण तथा नवीनीकरण।
२ अराष्ट्रीय परिस्थितिया को नष्ट करन की प्रवृत्ति।

अतीत के गौरव का चित्रण करके तथा उसके वभव और उन्नति का यशो गान गाकर भी जन मानस को सतोष मिलता है। कभा प्राचीन युग की रीति-नीति का परीक्षण कर उसे समयानुकूल बनाना तथा वतमान समय म मूल्याकन करना भी राष्ट्रीयता का अग होता है।

इसके अतिरिक्त दूसरा प्रवाह ध्वसात्मक भी है जिसम देश म होन वाले प्रत्यक अत्याचार विदेशी सत्ता का कठार शासन आदि सबका विरोध किया जाना है।

राष्ट्रीयता सदा एक रूप म गृहीत नही होता उसका स्वरूप परिवर्तित होता रहता है। राष्ट्रीयता के इस परिवतन का प्रभाव काव्य साहित्य पर पडना स्वाभाविक है। काव्य राष्ट्रीयता के दायरे स आग नही जा सकता।

राष्ट्रीय काव्य के भेद

जब राष्ट्र पर कोई विपत्ति आती है उस समय राष्ट्रीय भावनाए और अधिक मुखरित हो उठती हैं। राष्ट्र के जिस अग पर सकट उपस्थित होता है तत्सबधी भावनाओं का प्रभाव अधिक फल जाता है। कभी कभी इसके विपरीत भी बात हो जाती है जब किसी भावना का दमन अत्यधिक होता है तो उसका प्रभाव भी क्षीण हो जाता है। भारतवर्ष म जब जब राजनीतिक सकट रहा जनता म भी चेतना वतमान रहा — बाद में यह विकृत हो गई। देश के जमीदार राजा महाराजाओं म कुछ समय तक राजनीतिक चेतना शेष रही किन्तु जब वे पूरी तरह कुचल दिए गये तो जनता की राजनीतिक भावनाए भी मन्द पड गई। किन्तु इसकी प्रतिक्रिया भी हुई जो धार्मिक और सास्कृतिक चेतना के रूप में जनता के मन में नई आशा का सचार करने लगी। जनता की राष्ट्रीय जागृति के रूढ़िवादी हो जाने का कारण पूर्ण रीति से राजनीतिक परतत्रता ही है।

राष्ट की चतना किसी भी युग में पूणत समाप्त नही हा जाती यदि एसा हा ता रा ट्र का मरण ही समझना चाहिए और उसम पुन प्राणा का सचार हाना कठिन है। भारत म एसा कभी नहीं हुआ। भक्तिकाल म भी जनता की राजनतिक भावनाए भीतर ही भीतर सुलग रही थी और कहीं कहीं उसकी चिगारी भी दिखाई दती थी। जनता की भावनाओ के सच्चे प्रतिनिधि तुलसीदास ने भी निराश जनता को धर्म का अवलम्ब दकर उसम आशा का सचार किया। सकट क समय राष्टीय भावनाए एक साथ मिलकर विपत्ति को दूर करने की प्रेरणा दता हैं। एस समय राष्ट्रीय काव्य की विशेष महत्ता है। जिस समय राष्ट पर सकट नहीं रहता उस समय राष्ट्रीय भावनाओ म ज्वार नहीं आता — वह शात सागर की भ ति अगाध और गभीर होती है। वह भावना समाप्त नहीं हाती वरन् उसकी अभिव्यक्ति सृजनात्मक तथा अतीत गौरव गरिमा वणन की ओर रहती है। एस काल का राष्ट्रीय का य आनन्द गाना एव राष्ट्रीय वभव का चित्रण करन म अधिक मग्न रहता है। राष्ट्रीय काव्य द दो अ य भेद इस प्रकार हो सकन हैं।*

१ सकटग्रस्त काल मे राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति और प्रेरणा

२ स्वतत्र निर्माणामुख राष्ट्रीयता की झलक

राष्टीय काव्य मे अधिकतर राष्ट्रीयता के विविध भाव बहुत ही स्पष्ट रूप मे प्रकट हात हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि सकटकाल म जनता की समस्त भावनाए राष्टीयता क रग म रग जाती है और परिणाम स्वरूप कोई भा क्षत्र एसा नही बचता है जिसम राष्ट्रीय भावनाए प्रस्फुटित न हो उठती हो। एसे समय का काव्य अनक आलम्बना क माध्यम स राष्ट्रीयता की अभि यक्ति करता है। इस प्रकार की परिस्थिति म किसी दश का राष्टीय काव्य राष्टीय भावनाआ स ओतप्रोत हो जाता है। हि दी साहित्य का सारा सृजन राष्ट्रीय सकट के समय ही हुआ है। इसीलिए उसम राष्टाय काव्य की एक लम्बी और गौरवमय परम्परा विकसित हुई है।

राष्ट्रीयता की भावना का अथ आज के युग म कुछ भिन्न है। पहल राष्ट्र-भक्ति देश भक्ति का ही पर्याय थी कि तु पाश्चा य विचार प्रणाली के प्रभाव के कारण राष्ट्रीयता को देशभक्ति स प्रथक माना जाने लगा है। आज यह ता स्वीकार किया जाता है कि दशभक्ति राष्ट्रीयता का आधार है कि तु इसके साथ यह भी विचार है कि देशभक्ति ही राष्ट्रीयता नही है। राष्ट्रीयता देशभक्ति स कहीं अधिक व्यापक और विशाल है। किन्तु इस प्रकार की धारणा दृष्टिकोण के भेद से हा बनी है। वस्तुत देश भक्ति और राष्टीयता म कोई अन्तर नहा है। यदि अन्तर है भा ता उसा प्रकार

* श्री व्रजभूषण पाडेय–अजता । जुलाइ १९५६

का है जैसा ज्ञान और भक्ति म। वास्तव म दोनो पूरक हैं और इनका का सम्बन्ध अन्यो याश्रय है। जसे देशभक्ति के बिना राष्ट्रीयता की कल्पना नहीं हो सकती उसी प्रकार राष्ट्रीयता के बिना भी देशभक्ति अधूरी है। देशभक्ति भक्ति होने के कारण रागात्मक होती है और राष्ट्रीयता म भावपक्ष उतना तीव्र नहीं होता जितना इससे सम्बन्धित चिन्तन और विचार म। राष्ट्रीयता के जिस अंग म रागात्मकता दिखलाई देती है उसे देशभक्ति म अनुप्राणित समझना चाहिए। राष्ट्रीयता देश भक्ति के आधार पर ही निर्मित होती है और इसका सम्पूर्ण विकास देश भक्ति के अन्दर ही सम्पन्न होता है। इसलिए यह कहना कि देशभक्त राष्ट्रवादी नहीं हो सकता असत्य है। जो देशभक्त हैं वे अवश्य ही राष्ट्रवादी हैं क्योंकि यदि देश के प्रति सच्ची भक्ति है तो देश म सन्निहित सभी तत्वों के प्रति श्रद्धा और भक्ति होगी। राष्ट्रीयता का समस्त ताना बाना देशभक्ति की सीमा म रहता है।

किसी भी देश की राष्ट्रीय भावना तभी पूरी मानी जा सकती है जब वहाँ वीरो का उदय हो जो देश के लिए अपने प्राणो का उत्सर्ग करने को तयार हो और यह मर मिटने का तथा बलिदान का सकल्प उत्कट अनुराग की उपस्थिति म ही सभव है। कैसा भी उच्च विवेक एव विचार क्यो न हो जब तक उसम अनुराग न हो वह प्रेरणा नही दे सकता। देश के लिए मर मिटने की भावना जिस उत्कट अनुराग द्वारा बनती है वहा भक्ति है। राष्ट्रीयता का जन्म देश भक्ति के आधार पर होता ह और उसका पूर्ण विकास भी देशभक्ति के रूप म प्रतिफलित होता है। राष्ट्र के कण कण के प्रति अहेतुक अनुराग देशभक्ति है।

राष्ट्रीय काव्य के विभिन्न प्रकारो को वर्गीकृत करन म भी एक कठिनाई है क्योंकि इसकी व्यापकता और विविधता को देखत हुए उनके बाह्य रूप अनेकों हैं। प्रभु के भक्तो की भाति देश प्रेमी भी राष्ट्र की आराधना व चिन्तन विभिन्न रूपो म करत हैं और उनकी अभिव्यक्ति भी एक सी नहीं होती। यही कारण है कि राष्ट्रीय काव्य म कई प्रकारो की कल्पना होती है। सामान्यत विद्वानो ने राष्ट्र प्रेम की अनुभूतियो को दो मुख्य भागो म विभाजित किया ह—

१ सांस्कृतिक तत्व सम्बन्धी अनुभूति

२ भौतिक तत्व सम्बन्धी अनुभूति

भारतीय राष्ट्रीय काव्य का झुकाव सास्कृतिक धारा की ओर विशेषतया रहा है क्योंकि यह देश संस्कृति प्रधान है। यहा की भावनाए संस्कृति और धर्म का जितना महत्व देती हैं उतना सम्भवत और किसी को नहीं। यहा की राष्ट्रीयता कभी कभी धर्म के साथ एकाकार हो गई और जनमानस के मूल म अच्छी तरह

नए प्राण फूक । इस पक्ष क द्वारा भूली हुई, खोई हुई शक्ति का स्मरण कराकर राष्ट्रीय युद्ध की तयारी के लिए प्रेरित किया जाता है । जनता म सगठन लाकर उमक शक्ति को जाग रखन का काम इसके द्वारा बडी सफलता स होता है । सन १८५७ की क्रांति म इस अग का विशेष स्थान रहा है तथा अत्याचारी शासन को उखाड फेंकने की बलवती भावना को उद्वेलित कर रण क्षेत्र म जूझने के लिए प्रेरित किया । राष्ट्रीय युद्ध को बल देने के लिए एस साहित्य गीत तथा भावनाओ का निर्माण हुआ जिसके फलस्वरूप लाखो वीर पुरुषों के लिए मृत्यु वरदान हो गई तथा शृखलाए-बेडिया, फूलो के हार बन गई ।

कुछ विद्वानो का मत है कि राष्ट्रीय प्रेम सम्बन्धी साहित्य, राजनीतिक आन्दोलना की सामयिक उत्तेजना के समय ही प्रिय लगता है और उनके मद पडत ही या समझौतावादी पथ पर आत ही इस साहित्य की उपयोगिता व हृदयग्राह्यता समाप्त हो जाती है । इसलिए आज जो अच्छे लेखक राष्ट्रीय आदोलन को प्रतिबिम्बित करने वाली रचनाए-राष्ट्र गीत लिखते हैं वे बजाय तुकब दी के अतिरिक्त कुछ भी नही कर पाते । साहित्य और कला मे राष्ट्रीय शब्द का इतना सकुचित अर्थ ग्रहण करना उचित नही । राष्ट्रीय साहित्य राजनीतिक रचनाओ का ही नाम है ? यह विद्रोह का साहित्य है जो केवल परतन्त्र देश म पदा हो सकता है ? जो देश स्वतन्त्र है क्या वहाँ राष्ट्रीय साहित्य सभव नहीं है ? आजादी के लिए सघर्ष करने वाले गुलाम देशो म भी राष्ट्रीय साहित्य की धारा ही प्रबल नही रहती है । या ऐसे कवि ही राष्ट्रीय हैं अन्य नही ? *

अतर्राष्ट्रीय विचारधारा और विश्व बधुत्व की भावनाओ के समर्थक आलोचक कुछ समय पूर्व से देश प्रेम की भावना को भी सदेह की दृष्टि स देखने लग हैं । इनके मतानुसार राष्ट्रीय साहित्य अतर्राष्ट्रीय साहित्य का विरोधी है । वास्तव म दोनो विरोधी नही और न राष्ट्रीय साहित्य राष्ट्रवादी साहित्य का पर्याय ही है । राष्ट्रीयता का अर्थ बहुत ही व्यापक और उदार भावनाओ स परिपूर्ण है । यूरोप म राष्ट्रीयता का विचार मध्ययुग के बाद म सांस्कृतिक नव जागरण के प्रारभ से उत्पन्न हुआ-तब तक जातीय आधार पर राष्ट्रों का निर्माण नहीं हुआ था । सामन्तवाद के बाद राष्ट्रीय साहित्य व कला जन साधारण की भाषा लोक वार्ता, लोक साहित्य पौराणिक आख्याना-जन श्रुतियो म गुम्फित जातीय पुरावृत्त म प्रयुक्त साहित्य तक सीमित रही । यह राष्ट्र के लोगो मे समान रूप म प्रचलित रही है । इसलिए जब तक राष्ट्रीय एकता की भावना का उदय नहा हुआ था तब तक राष्ट्रीय कला

* श्री शिवदानसिंह चौहान—राष्ट्रीय साहित्य के निर्माण की समस्या—
आलोचना (इतिहास विशेषांक) जनवरी ५३ पृष्ठ २

व साहित्य का विकास नही हुआ। मध्यकाल मे उसके विकास की सभावनाओ के चिह्न लोक साहित्य, लोककला के माध्यम से पनपते रहे।

हमारे देश म भी देशप्रेम व राष्ट्रीय एकसूत्रता की भावना म ययुग के अत तथा सास्कृतिक पुनर्निर्माण के प्रारम्भ म आई। विदेशी आक्रमणकारियो के दमन क पश्चात् देश की विभिन्न जातियो म जातीय चेतना आई तथा राष्ट्रीय एकता की भावना व राष्ट्रीय साहित्य का प्रादुर्भाव हुआ। नृत्य सगीत क विभिन्न राष्ट्रीय रूप लोक-वार्ता लोककथा का आधार लेकर विकसित हुए तथा एक सास्कृतिक जागरण दिखाई दने लगा। हर देश की कला और साहित्य म राष्ट्रीय आन्दोलन का सूत्रपात एव विकास तभी होता है जब जन साधारण अपनी भाषा चारित्रिक गुणो के साथ उसमे प्रविष्ट होता है तथा उसक इतिहास की स्मृतिया उसकी अपनी भाषा के माध्यम से व्यक्त होने लगती हैं।

राष्ट्रीयता की भावना के सरूप और अरूप तत्वो के आधार पर राष्ट्रीय काव्य म पाई जान वाली भावनाओ का निम्नप्रकार स विभाजन किया जा सकता है–

१ जन्मभूमि क प्रति प्रेम
२ स्वर्णिम अतीत का चित्रण
३ प्रकृति प्रेम
४ विदेशी शासन की निंदा
५ जातीयता के उदगार
६ वतमान दशा पर क्षोभ
७ सामाजिक सुधार—भविष्य निर्माण
८ वीर पुरुषो—नेताओ की स्तुति
९ पीडित जनता कृषको का चित्रण
१० भाषा-प्रेम

राष्ट्रीय भावना म राष्ट्र-वदना, मातृभूमि तथा जन्मभूमि क प्रेम का महत्वपूण स्थान है। जब तक मातृभूमि क प्रति अगाध प्रेम तथा उसे परतत्र न होने दने की भावना देशवासियो म नही जाग्रत होगा तब तक उन्ह राष्ट्र प्रेमी नही कहा जा सकता।

स्वर्णिम अतीत के स्मरण से देश के खोए हुए गौरव को पुन प्राप्त करने की प्रेरणा मिलती है। अतीत क वणन स वतमान की तुलना करके देश को उसके अनुरूप बनाने की भावना बढती है। इसी प्रकार देश म फले हुए प्रकृति-सौदय के चित्रण द्वारा प्रेम जाग्रत किया जाता है। देश की वसुधा विशाल हिम-मण्डित

पर्वतमालाएँ, कल-कल निनाद करते झरने, नदी तथा सुन्दर फूलों से लदे हुए सुरभित कुंज आदि के चित्रण द्वारा देश का परिचय देकर उसके प्रति अनुराग उत्पन्न किया जाता है।

राजनीतिक चेतना के आने पर विदेशी शासन के अत्याचारों की प्रतिक्रिया होती है। राष्ट्र भक्त के हृदय में विदेशियों के प्रति उपेक्षा और घृणा की भावना बढ़ती है और अपने देश से उन्हें निकाल देने के लिए अपने प्राणों का बलिदान करने में हिचकिचाहट नहीं होती। अपनी जाति धर्म संस्कृति तथा भाषा की उपेक्षा तथा अनादर उसे असह्य हो जाता है। देश के गौरव तथा जाति धर्म आदि की उन्नति के लिए वह सर्वस्व त्याग करने के लिए तत्पर हो जाता है।

देश की वर्तमान हीनावस्था आर्थिक दुर्दशा तथा समाज में फैली हुई कुरीतियों को देखकर स्वाभिमानी देशभक्त का हृदय विकल हो जाता है। अतीत काल के सुख और समृद्धि से परिपूर्ण देश के इस प्रकार के पतन को देखकर उसका मन क्षुब्ध हो जाता है और वह नई क्रान्ति और सुधार करने के लिए विद्रोह करने लगता है। वह अपने देश में किसी का हस्तक्षेप और शोषण नहीं चलने देता है। वह राष्ट्र की सेवा में तत्पर वीर नेताओं की प्रशस्ति कर जनता में नव प्रेरणा भरता है तथा राष्ट्र की रक्षा व स्वतन्त्रता के लिए त्याग और बलिदान की ओर सबको अभिमुख करता है। राष्ट्र के प्रतीकों में ध्वज राजकीय चिह्न तथा अन्य स्मारकों के प्रति श्रद्धा कुसुम अर्पित करता है।

इस प्रकार काव्य में सुन्दर सरस प्रयाण गीत एवं राष्ट्र गीतों के सृजन द्वारा देश के प्रति प्रेम प्रकट किया जाता है। इन सब साधनों से राष्ट्र को स्वतन्त्र करके दासता की श्रृंखला को नष्ट करने की भावना जाग्रत होती है।

●●

प्राचीन भारत मे राष्ट्रीयता का विकास

राष्ट्र शब्द बहुत ही व्यापक है। देश की विभिन्न इकाइयों की समष्टि ही राष्ट्र का वास्तविक रूप है। इसमें धर्म संस्कृति भाषा जनता तथा राजनीतिक विचार धारा आदि प्रमुख हैं। इन्ही विचारों को ध्यान में रखकर राष्ट्रीयता का सम्यक और पूर्ण विकास हो सकता है। कभी धर्म का सरंक्षण ही देश की राष्ट्रीयता हो जाती है तो कभी राजनीति एवं सामाजिक सुरक्षा ही राष्ट्रीयता के प्राण हो जाते हैं। इसी प्रकार राष्ट्रीयता का स्वरूप परिवर्तित होता रहा और इसका प्रभाव हमारे देश के साहित्य कला और जीवन पर भी पड़ता रहा है।

आधुनिक राष्ट्रीय भावना अनादि काल से प्रवाहित होती हुई एक विशेष धारा है। विश्व के प्राचीनतम साहित्य में राष्ट्र या देश के प्रति सुन्दर उद्गारों की अभिव्यक्ति सर्वदा हुई है। ऋग्वेद संसार का सबसे पुराना ग्रन्थ माना जाता है। इसमे कई स्थलों पर राष्ट्रप्रेम सम्बन्धी उदात्त भावनाए मिलती हैं। प्रकृति के वैभव ने प्राचीन समय से ही यहा की सभ्यता तथा संस्कृति को प्रभावित किया है। विभिन्न भाषाओं बोलियों वेशभूषा राज्य सीमाओ के होने पर भी यह देश एकता से बधा हुआ है।

प्राचीन भारतीय साहित्य मे व्याप्त राष्ट्रीयता के अध्ययन का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। इसका एक साथ वर्णन कर सकना असम्भव है। इसीलिए अध्ययन की सुगमता के लिए प्राचीन समय को निम्नलिखित खण्डों में बांटा गया है। एक काल का प्रभाव दूसरे काल के साहित्य पर पड़ा है और कहीं कहीं बहुत सी समानताएं भी दिखाई देती हैं परन्तु इसी विभाजन को आधार मानकर अध्ययन करना समीचीन होगा—

(१) वैदिक तथा ब्राह्मण काल (२) रामायण तथा महाभारत काल
(३) जैन तथा बौद्ध काल (४) मौर्य काल (५) गुप्त काल
(६) गुप्तोत्तर काल

१ वैदिक तथा ब्राह्मण काल

ऋग्वैदिक काल में आर्यों ने अध्यात्म जगत में ही नहीं वरन् सामाजिक राजनीतिक व आर्थिक विचार प्रणाली में भी उन्नति प्राप्त की

थी। हमारी जाति व दश का सर्वांगीण विकास आर्यों की प्रेरणा और मार्गदर्शन का ही फल है। हमारी राष्ट्रीय भावना का उद्गम प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध है। आर्यों के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व ने हमारे राष्ट्रीय जीवन को एक सूत्र में बांधा है।

वदिक और संस्कृत साहित्य में राष्ट्र शब्द का प्रयोग बहुलता से किया गया है। यह शब्द एक सुनिश्चित अर्थ और भावना का प्रतीक हो चुका है। प्रत्येक आर्य अपने देश का सुयोग्य नेता बनने की कामना करता था—

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिता ।*

अर्थात् हम अपने देश में सावधान होकर पुरोहित (अगुआ) बनें। आर्यों की एक मात्र यही कामना थी—

आ राष्ट्रे राजन्य शूर इषव्यो ति व्याधी महारथो जायतां ।†

अर्थात हमारे राष्ट्र में क्षत्रिय वीर, धनुर्धारी लक्ष्यवेधी और महारथी हों। अथर्ववेद में राष्ट्र के धन धान्य दुग्धादि से सवर्धन प्राप्त करने की कामना की गई है

अभिवर्धताम पयसाभि राष्ट्रेण वर्धताम ।

(अथर्व० ६।७८।२)

मनुष्य दुग्धादि पदार्थों से बढ़े राज से बढ़े।

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति ।‡

राष्ट्र को शासित करने वाले राजा के लिए भी ब्रह्मचर्य और तपस्या के आचरण का विधान है।

साम्राज्य स्वराज्य राज्य महाराज्य आदि शब्द वैदिक साहित्य में प्रयुक्त हुए हैं किन्तु राष्ट्र शब्द सबसे महत्वपूर्ण है। राष्ट्र का आशय उस विशेष भूखंड से है जहाँ के निवासी एक संस्कृति के सूत्र से आबद्ध हैं। जहां की जनता एक संविधान से अनुशासित है और जहां के निवासियों में तद्देशीय प्राचीन पुरुषों साहित्यों और कलाओं के प्रति श्रद्धा स्नेह और सहानुभूति के भाव विद्यमान हैं। इससे स्पष्ट है कि आर्यों की राष्ट्रीय भावना अत्यन्त पुष्ट और विकसित थी। राष्ट्र शब्द में आर्यों की समस्त भावना के साथ देश राज्य, जाति व संस्कृति की स्मृति सभी कुछ सम्मिलित है। राष्ट्र शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ऋग्वेद में किया गया है जिसमें राजा त्रसदस्यु के दोनों राष्ट्रों में राज्य होने का उल्लेख हुआ है।

---

* यजुर्वेद पूर्व अध्याय ९।२३

† यजुर्वेद उत्तर अध्याय २८।२२

‡ अथर्ववेद ५।१।७

मम द्विता राष्ट्रं क्षत्रियस्य विश्वायोर्विश्वे अमृता यथा न, ।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रे ॥ *

वरुण को राष्ट्र का राजा तथा पृथ्वी को माता पुकारा गया है और उससे राष्ट्र को शक्ति व तेज प्रदान करने की प्रार्थना की गई है—

सा नो भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे ।
सा नो भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः । †

अग्नि पुराण में भी राष्ट्र को राज्य के सब तत्वों से अधिक महत्वपूर्ण माना है।

राष्ट्रमानन्दं वर राष्ट्रं साधनं पालयेत सदा । ‡

स्वराज्य का अर्थ निरंकुशता स्वच्छन्दता नहीं है। जब मानव विराट ध्येय से अनुप्राणित होकर अपनी इन्द्रियों और ऐषणाओं पर अंकुश रखता हुआ प्रयत्नशील होता है तब स्वराज्य का अभ्युदय होता है। जब इस प्रकार के चेतन नीतिमान, आध्यात्मिक, मानव राजकीय कार्य का सम्यक संचालन करते हैं तब सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में स्वराज्य का दर्शन होता है—

स्वादोरित्था विषूवतो मध्वः पिबन्ति गौर्य
या इन्द्रेण सयावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभसे वस्वीरनु स्वराज्यम । §

स्वराज्य की अवस्था के लिए शान्ति सतोष श्रम के पालन की आवश्यकता है।

आधुनिक राष्ट्रीय भावना उस अनादिकाल से प्रवाहित होती हुई एक विशेष धारा है किन्तु उस समय राष्ट्रीयता की आधुनिक भावना सुस्पष्ट नहीं थी। प्राचीन भारत में राष्ट्र की सीमाएं स्थायी नहीं थीं इसलिए आधुनिक स्वरूप की उत्पत्ति नहीं हो सकी। प्राचीन समय में राष्ट्र को देश, विश तथा जनपद का पर्याय माना जाता था किन्तु विभिन्न अर्थों में इन्हें प्रयुक्त किया गया है। सभी प्रकार की राष्ट्रीय आकांक्षा का मूल आधार अपने देश में मातृभावना की प्रतिष्ठापना ही अधिक रही है। इस की प्रत्येक जाति अपनी धरती के प्रति स्वाभावत कृतज्ञता प्रकट करती है। इस देश में मातृभूमि भावना का आरोप जितना स्वाभाविक तथा मनोवैज्ञानिक है उतना विश्व भावना का नहीं। 'राष्ट्रीय भावना से सम्बन्धित देश भक्ति मातृभक्ति आदि के मन्त्र हमारे प्राचीन साहित्य में स्पष्ट रूप से प्राप्य हैं जो बाद में राष्ट्रीय भावना में परिणत हो गये।' ☐ हमारे यहां वैदिककाल में ही पृथ्वी व मानव

---

* ऋग्वेद ४।४२।१ † अथर्ववेद १२।१।४० ‡ अग्निपुराण २३८।२।

§ डा० विश्वनाथप्रसाद वर्मा— । लेख । वैदिक राजनीति शास्त्र का दार्शनिक विवेचन । साहित्य—जुलाई १८५६ पृष्ठ ६ ।

☐ डा० कमलकुमारी गुप्ता—हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय भावना ।

का पारस्परिक सम्बन्ध माना तथा पुत्र के पुनीत प्रेम के रूप में स्थापित किया गया और उसको इसी रूप में श्रद्धा प्रेम तथा भक्ति के द्वारा निरूपित किया गया। भूमि की रक्षा व उन्नति के लिए कटिबद्ध होना हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है। भूमि का समस्त पार्थिव वस्तुओं के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए राष्ट्र कल्याण की भावना अनिवार्य है। जन और पृथ्वी का यह पारस्परिक सहयोग ही भारतीय संस्कृति का प्राण है।

इस में मातृभूमि की भावना का रूप हम ऋग्वेद के (मन्त्र) में मिलता है जहां मातृभूमि की सेवा करने का स्पष्ट आदेश दिया गया है। अथर्ववेद के १२ वें काण्ड के पृथ्वी सूक्त में ६३ मन्त्र हैं जिनमें मातृभूमि की महिमा का गान किया गया है। कई स्थलों पर गौ धेनु आदि नामों से भी उसे सम्बोधित किया गया है।

सहस्र धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती।'

(धेनु के समान होकर हमारे लिए धन की सहस्र धारा का वर्षण करे)।

माता भूमि पुत्रो अहं पृथिव्याः पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु। *

(हे भूमि! तुम हम सबकी माता हो और हम तुम्हारे पुत्र हैं जीवनदाता पर्जन्य हम सबकी रक्षा करें।)

धरती और मेघ को माता-पिता के रूप में देखना कितना सुन्दर और स्वाभाविक है। ऋषियों ने पृथ्वी के अधिभौतिक और अधिदैविक दोनों रूपों के दर्शन किये हैं- हिंसक पशुओं से रक्षा की प्रार्थना की गई है तथा अपनी दीर्घायु को जननी के चरणों में समर्पित करने की तथा आत्म बलिदान की भावना व्यक्त की है। हमारे मन्त्रद्रष्टा ऋषियों के श्रद्धावनत मस्तक मातृभूमि को सदा प्रणाम करते रहते हैं।

दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।
तथा तस्य हिरण्य वक्षसः पृथिव्या अकरं नमः॥

वेदों में व्याप्त इन भूमि वंदनाओं में भारतभूमि का स्वर्ग मोक्ष दाता का कारण कहा गया है। यह वास्तव में राष्ट्रीयता के भारतीय दृष्टिकोण की व्याख्या है। मातृभूमि की सच्ची वंदना ही हमारे राष्ट्रीय उद्बोधन का नया मन्त्र है -

नमो मात्रे पृथिव्यै

नहि माता पुत्रं हिनस्ति न पुत्रो मातरम्।

पृथ्वी सूक्त का प्रत्येक मन्त्र देशभक्ति से ओत-प्रोत है इस आर्यों का राष्ट्रीय

---

* अथर्व वेद १२।१।१२

गान कहा जा सकता है। मातभूमि व देश की भक्ति के रूप म राष्ट्र वदना ही उनका मुख्य ध्यय रहा है। मात भूमि की मगल कामना के लिए आय सदा सजग और प्रयत्नशील रह हैं—

यस्या गायन्ति नृत्यन्ति भूम्यामू मत्या व्यलवा
युध्यन्ते यस्यामाक्रदो यस्या वदति दुदुभि ।
सा नो भूमि प्र णुदता सपत्नान सपत्न मा पथिवी कृणोतु ।†

अर्थात जिस भूमि पर विनाशी मनुष्य नाचत गाते हैं जिस पर युद्ध करत हैं, नगाडा पीटत हैं उससे हमारे शत्रु को मार भगावें और हम निष्कटक करें।

मातभूमि की रक्षा म तत्पर आय जन महान कष्टो को सहष स्वीकार करत थे और शत्रु से उसे आक्रान्त नही होन देत थे। अथववेद मे एक स्थान पर कहा गया है—

यदवदामि मधुमत्तद्वदामि यदीक्षे तद वनन्ति मा ।
त्विषीमानस्मि जूतिमानवायान हन्मि दोधन ।‡

अर्थात अपनी मातभूमि के लिए जो मैं कहता हू वह उसकी भलाई की बात है जो दखता हू वह उसकी सहायता के लिए है। मैं ज्योतिपूर्ण तजस्वी और बुद्धि सम्पन होकर मातभूमि का दोहन करने वाले शत्रुओ का विनाश करता हू।

वदिक साहित्य के इन मत्रो से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय चेतना का स्रोत मातभूमि का हृदय है। यहाँ की जनता का भूमि के साथ अभिन्न सबध माता-पुत्र का पुनीत सबध है। मात भक्त हृदय म मातभूमि और राष्ट्र की अनन्य शक्तियां उत्पन्न होती हैं।

उपसप मातर भूमिम्—मातभूमि की सवा कर। मातभूमि की सवा का व्रत जन-जन के जीवन म समाया हुआ था। आर्यो न स्वराज्य म रहत हुए सदा प्रयत्न-प्रयत्नशील बने रहने की कामना की—

यतमहि स्वराज्ये §

वैदिक काल की राष्ट्रीय भावना की सबसे प्रमुख विशषता उसका कुटुम्ब भाव है। सपूर्ण देश और यहाँ तक कि सपूर्ण विश्व एक विशाल कुटुम्ब है—वसुधव

---

† अथववद १२।१।४१ ‡ अथववेद १२।१।५८
§ ऋग्वेद—५।५।६

कुटुम्बकम की भावना आगे चलकर पल्लवित होती गई। इसमें एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखने की कामना सर्वत्र प्रकट की गई—

> मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ‡

ऋग्वेद के संज्ञानसूक्त का भाव भी इसी प्रकार है—

> संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जायताम् ।
> देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ।। *

अर्थात् हम सबकी गति एक ही प्रकार की हो, हम साथ एक साथ चलें एक प्रकार की वाणी बोलें हम सबके मन में एक ही प्रकार के भाव उत्पन्न हों ।

सरस अपने जैसी भावना रखते हुए आर्यजन धरती माता को स्वतन्त्र कर जन मन की उन्नति और रक्षा का भार अपने ऊपर समझते थे—

> अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम् ।
> अभीषाडस्मि विश्वाषाडाशामाशां विषासहि ।। §

अर्थात् मैं अपनी मातृभूमि के लिए और उसका दुख विमोचन करने के लिए सब प्रकार के कष्ट सहने के लिए तैयार हूँ। वे कष्ट जिस ओर से आए जिस समय आए मुझे इसकी परवाह नहीं।

वैदिक युग का राजनीतिक जीवन—आर्य जब भारत में आए तब सभ्यता के क्षेत्र में वे काफी उन्नत थे। ऋग्वैदिक कालीन भारत में राजनीतिक एकता का भी पूरे वेग से विकास हो रहा था। ऋग्वेद में दाशराज्ञ (७।३३।२८) दस राजाओं के युद्ध का वर्णन मिलता है जो भरतों के राजा सुदास से हुआ था। यह संघर्ष उत्तर पश्चिम में बसे हुए पूर्वकालीन जन ब्रह्मावर्त के उत्तरकालीन आर्यों के बीच राज्याधिकार के लिए हुआ था। इसमें उस समय की सभी जातियों ने भाग लिया था। इस युद्ध में विजयी सुदास ऋग्वेदकालीन भारत के सर्वोपरि सम्राट बन गए थे।

विभिन्न आर्य जनों में प्रभुत्व के लिए संघर्ष उस राजनीतिक विकास का अंग था जिसके द्वारा ऋग्वेद कालीन भारत बड़े राजनीतिक समूहों में संगठित होकर एक सार्वभौम शासन में आ रहा था। उस राजनीतिक विकास का उतना ही महत्वपूर्ण

---

‡ ऋग्वेद—३६।१८   * ऋग्वेद—१०।१९।१

§ अथर्ववेद—१२।१।५८

परिणाम यह हुआ कि आय लोग आदि निवासी अनाय लोगो पर पूण रूप मे विजय प्राप्त कर सके। आय अनार्यों का यह सघष सास्कृतिक भी था और राजनीतिक भी।

ऋग्वेद युगीन लोगो की राजनीतिक तथा सामाजिक व्यवस्था का आधार पित सत्तात्मक परिवार था। गृहपति का वीर और उदार होना आवश्यक था। आर्यों का कौटुम्बिक जीवन काफी सुसगठित था। यही शासन का न्यूनतम आधार था। राज नीतिक अवस्था के कई भाग थे—

(१) कुटुम्ब (२) ग्राम (३) विश (४) जन (५) राष्ट्र

कुटुम्ब—का नेता गृहपति होता था और इनका स्वरूप काफी सुसगठित था। कुटुम्ब बहुधा बडे बड भी होते थे।

ग्राम—अनेक कुटुम्बो के समुदाय को 'ग्राम' कहा जाता था और उसके अधि कारी को ग्रामणी' कहते थे। ग्रामणी का पद बहुत ऊचा था। इनकी नियुक्ति किस प्रकार होती थी इस पर प्रकाश नहीं पडता है।

विश—विश कोई वग विशेष था। विश का प्रधान विशपति' होता था।

जन—कई विश मिलकर जन बनते थे। जन का प्रधान 'गोप' कहलाता था। प्राय राजा ही जन का प्रधान अर्थात गोप होता था।

राष्ट्र—देश के लिए राष्ट्र शब्द का प्रयोग किया गया है।

जन तथा जनपद का भी वदिक काल म महत्व था। जन शब्द वास्तव म प्रजा मात्र के लिए प्रयुक्त होता था जिसका शासक राजा होता था। उसके वशानुक्रम अधिकार होने पर भी प्रजा का अकुश था। प्रजा-कल्याण सबधी प्रतिज्ञाओ का पालन न करने पर प्रजा को उसे पदच्युत करने का अधिकार था। ऋग्वेद म भी कहा गया है कि राज्य सत्ता को सुदृढ और स्थिर बनाए रखने के लिए प्रजा की स्वीकृति अनि वाय है।

वेदो म समिति व सभा को प्रजापति की दुहिता कहा गया है तथा प्रायना की गई है कि ये दोनो राजा की रक्षा म हमेशा लगे रहे—

सभा च मा समितिश्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ सविदाने। †

राजा का निवाचन प्रजा राज्य राष्ट्र कल्याण आदि को लक्ष्य रखकर ही किया जाता था इसलिए वेदों म राजा को राष्ट्र का सौन्दय और राष्ट्र की शोभा बताया

---

† अथववेद — ७।१२

गया है । तुमम राज्य स्थिर रहे और उसका पतन न हो। आदि उद्गारों से नाग राजा को उपदेश दिया जाता था। 'राजा अपनी सन्तान की भांति प्रजा का पालन करे' यह भावना सर्वत्र व्याप्त थी। प्रजा का भी यह आकांक्षा रहती थी कि सुपथ पर पालन करने वाले राजा को देवतागण स्थिर और सुदृढ़ बनाए रखें। ऋग्वेद में ऐसी भावना का उल्लेख है कि वरुण राष्ट्र को अविचल करें बृहस्पति स्थिर करें इन्द्र सुदृढ़ करें तथा अग्निदेव राष्ट्र को निश्चल रूप से धारण करें।—

ध्रुव ते राजा वरुणो ध्रुव देवो बृहस्पति
ध्रुव त इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्र धारयता ध्रुवम । †

राजा और प्रजा दोनों ही राष्ट्र की उन्नति के निरन्तर प्रयासी बने रहने के लिए प्रयत्नशील रहते थे। राष्ट्र के अन्दर तथा बाहर के शत्रुओं को पराजित करने का महान कार्य पारस्परिक सहयोग से सम्पन्न होता था।

राज्याभिषेक के समय आर्य राजा से यही निवेदन करते थे कि वह राष्ट्र की रक्षा करे—

आ त्वाहार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलि ।
विशस्त्वा सर्वा वान्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत । ‡

हे राजन ! तुम्हे राष्ट्रपति बनाया गया है। तुम इस देश के प्रभु हो तथा तुम अचल स्थिर रहो। प्रजा तुम्हें चाहे। तुम्हारा राष्ट्र नष्ट न हो।

इसी अवसर पर राजा प्रतिज्ञा करता था कि इस उत्तरदायित्व को अंत तक निबाहेगा। प्रतिज्ञा के टूटने पर प्रजा का अधिकार था कि वह उसे पदच्युत कर सके। विश राजा को शासन कार्य के लिए वरण करती है जो जीवन भर अपने पद पर ध्रुव रहता है। राज्याभिषेक के अवसर पर जन के नेता एक पणमणि प्रदान करते थे जो राजत्व का चिह्न मानी जाती थी। सम्भवत यह पणमणि पलाश की एक शाखा होती थी।

आर्यों का सांस्कृतिक धार्मिक तथा कलात्मक जीवन के साथ साथ राजनीतिक जीवन भी विकसित हो गया था। राजा का चुनाव तथा उसका प्रजा तथा राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व आदि का स्पष्ट चित्र आर्यों के समक्ष था जो उनमें स्फूर्तिप्रद तथा गौरव पूर्ण भावनाओं का उन्मेष करता था। आर्य ऋषियों की दृष्टि में राज्य और प्रजा एक दूसरे के पूरक थे विरोधी नहीं। राष्ट्र मानवता के लिए साधन था साध्य नहीं।

---

† ऋग्वेद १०।१०।१७३-१ ‡ ऋग्वेद १०।१७३-१

'वद की "प्टि म राज्य राष्ट्र तथा राजा भिन्न वस्तु नही हैं वरन् य एकात्म हा गए हैं। गणतन्त्र राज्य की परिभाषा यही है कि राजा की सत्ता राज्य स भिन्न न हो।* यजुर्वेद म शरीर के अंगो क समान ही प्रजा को माना गया है—

पृष्ठीमें राष्ट्रमुदरमंसौ ग्रीवाश्च श्रोणी
ऊरू अरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि सर्वत †

वदिक युग म आय अनक वर्गो मे बँटे थे जिन्ह जन कहा जाता था। प्रत्येक जन का एक स्वामी होता था जिसे 'गोप' कहते थे। विशिष्ट गौरव प्राप्त करन वाल जन या वर्गों को वेदो मे बहुधा 'पचजना' कहा गया है। उदाहरणार्थ पुरु, तुवस, यद्र आदि। इन जनो द्वारा राजा सम्मानित होकर वरण किया जाता था। उसका प्रमुख कर्तव्य जाति तथा राज्य सीमा की रक्षा करना था। वह बाह्य शत्रु स युद्ध म जनता का नेतृत्व करता था। प्रचलित न्याय विधान के अनुसार वह शासन सचालन करता था। पुरोहित ग्रामीण तथा सनानी प्रमुख अधिकारी होते थे। पुरोहित सबसे प्रमुख और प्रभावशाली होता था जो राजा क पराक्रम का गुणगान ऋचाओ म किया करता था। उपहारो तथा दक्षिणाओ के बदल वह अपने स्वामी की सफलता और उन्नति क लिए ऋचाओ द्वारा देवताओं की स्तुति करता था।

जनो द्वारा वरण किए जाने पर राजा को अकेले ही स्वच्छापूर्वक राज्य करन की स्वतन्त्रता नही दी गई थी। वदिक युग मे समिति और सभा नामक संस्थाएं थीं जो राज्य काय म सहायता ही नही नियन्त्रण भी करती थी। राजा का ध्रुव बन रह कर पवन क समान अविचल रहने की कामना की गई—

इहैवधि माप च्योष्ठा पर्वत इवाविचाचलि ।
इन्द्रइवेह ध्रुवस्तिष्ठह राष्ट्रमुधारय ॥ ‡

तुम यही पवत क समान अविचल होकर रहो। राज्य से अलग नही होना। इन्द्र क समान निश्चल होकर यहा राष्ट्र को धारण करो। वदिक युग के जनपदो की जनसंख्या बढ़ने क पूर्व समिति म जन क सभी लोग एकत्रित होते थे। प्राचीन यूनान के नगर राज्यो म सभी लोग एकत्रित होकर अपने विचार रखते थे—जनसंख्या के बढ़ने पर अपने राज्य की लोक सभा म ही सम्मति देने का अधिकार था। वदिक युग मे आय जनपदो की समिति का यही रूप था उसमें संपूर्ण जनपद की विश एकत्र हो सकती थी वादविवाद कर सकती थी। वादविवाद म अपने प्रतिपक्षियो को हराने

* यजुर्वेद २० ८ † यजुर्वेद २०।८
‡ ऋग्वेद १०।१७३।२

के लिए वेदों में अनेक प्रार्थनाएं हैं। समितियों में विविध विषयों पर खुला वाद-विवाद होता था-राजनीति के अतिरिक्त आध्यात्मिक तथा गूढ़ विषयों पर भी वाद-विवाद होता था। वेदों में समिति और सभा को प्रजापति की दुहिता कहा गया है और यह प्रार्थना की गई है कि वे दोनों राजा की रक्षा में सदा तत्पर रहें। सभा और समिति दो भिन्न संस्थाएं थी-विशेष अन्तर ज्ञात नहीं हो सका। सम्भवतः सभा छोटी संस्था थी और उसके सदस्य बड़े लोग होते थे उनका प्रधान कार्य न्याय करना था। अथर्ववेद में सभा को नरिष्टा कहा गया है। यजुर्वेद में लोग एक साथ मिल कर जो बात कहें उसका दूसरे लोग उल्लंघन न करें क्योंकि बहुतों की बात का उल्लंघन नहीं किया जाता। अतः सभा को नरिष्टा कहते हैं। नरिष्टा का अर्थ अनुल्लंघनीय है। वस्तुतः सभा में जो तय हो जाय उसे अनुल्लंघनीय ही समझा जाता था।

अथर्ववेद में प्रार्थना की गई है- हे सभा! हम तेरे से भली भांति परिचित हैं। तेरा नाम नरिष्टा है। तेरे जो भी सभासद हैं वे मेरे साथ सवाचस (सम्मति रखने वाले) हों। यहां जो लोग बैठे हैं उन सबके तेज और ज्ञान को ग्रहण करता हूं-सबको अपने पीछे चलाता हूं। हे इन्द्र! मुझे इस प्रयत्न में सफल बनाओ। तुम सबका मन मेरे पक्ष में हो। सभा के सदस्यों को सभासद् कहा जाता था-वेदों में उन्हें पितर भी कहा गया है बाद में वृद्ध शब्द भी उपयोग में आया है। इन सबसे यह निष्कर्ष निकलता है कि राज्य का प्रमुख स्वच्छन्द निरंकुश शासक नहीं होता था। उसकी शक्ति प्रजा के मन्तव्यों से परिचित थी तथा जनता की समिति तथा सभा नामक संस्थाएं उसके शासन पर अंकुश का काम करती थी। †

युद्धप्रथा-ऋग्वेद कालीन राजनैतिक व्यवस्था में युद्ध का एक विशेष स्थान है। आर्यगण न केवल आदिवासियों से ही युद्ध करते थे बल्कि कभी कभी आपस में भी या आत्म रक्षा और लूट के लिए भी युद्ध करते थे। युद्ध प्रारम्भिक आर्यों का विशेष गुण था। उस समय कोई नियमित सेना नहीं थी। राष्ट्र पर विपत्ति के समय जन साधारण ही सैनिक बनकर आत्म रक्षा के लिए तैयार होते थे। सेना में पैदल रथ तथा अश्व का अधिक महत्व था। रण की भयंकरता का वर्णन हमें दस राजाओं के युद्ध में प्राप्त होता है जिसमें कई प्रकार के शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किया गया था। युद्ध में पताकाओं का प्रयोग किया जाता था तथा युद्ध में संगठन के लिए ढोल तथा तुरही बजाकर उत्साह का वर्धन किया जाता था। आक्रमण के समय योद्धा घोष

---

† प्रो बी एन लूनिया - भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ४६

करते और दुन्दुभियाँ बजाते थे। आर्य अपने शत्रुओं से युद्ध करते समय तथा पूर्व देवताओं का आशीष प्राप्त करने के लिए स्तुति किया करते थे।

आर्य धनुबाण के प्रयोगक थे। यजुर्वेद के एक श्लोक में (२९।३९) कहा गया है कि धनुष से हम गौएं जीतें, युद्ध जीतें, तीक्ष्ण समर जीतें। धनुष शत्रु की कामनाएं कुचलता है। धनुष से हम सारी दिशाएं जीत जायें।

'यह तूणीर अनेक बाणों का पिता है–कितने ही बाण इसके पुत्र हैं। यह योद्धा के पृष्ठ देश में निबद्ध रहकर बाणों को प्रसव करता हुआ सारी सेना को जीत डालता है। (ऋग्वेद ६ मंडल ७५ सूक्त ५ मंत्र)

'बाण हमें परिवर्द्धित करो। हमारा सिर पाषाण की तरह करो।

'मंत्र द्वारा तेज किए गए और हिंसा परायण बाण तुम छोड़ जाकर गिरो और शत्रुओं पर गिर जाओ। किसी भी शत्रु को जीवित नहीं छोड़ना।

यह समस्त सूक्त युद्ध भूमि का वीर गान है। प्रत्येक मंत्र में योद्धा अपने शस्त्र से बात करता है और प्रेरणा पाता है। ये मंत्र आर्यों की समर भूमि का चित्र स्पष्ट करते हैं।†

वैदिक काल के अन्तिम समय में १६ प्रबल महाजनपदों की स्थापना हो गई थी तथा आर्यों का जीवन शान्तिमय हो चला था। छोटे-छोटे राज्यों की सीमाएं भी अब विस्तृत हो चली थीं। ऐतरेय ब्राह्मण में आठ प्रकार के शासन विधान उल्लिखित हैं (८।१३) साथ ही वहां के शासकों की पदवी तथा स्थान भी दिए गए हैं ‡

शासन विधान	पदवी	स्थान
साम्राज्य	सम्राट	पूर्व
भौज्य	भोज	दक्षिण
स्वाराज्य	स्वराट	पश्चिम
वैराज्य	विराट	उत्तर
राज्य	राट	कुरुपांचाल
महाराज्य	,	
आधिपत्य	(स्वावश्य)	
समन्तपर्यायी		

† पं० रामगोविंद त्रिवेदी–वैदिक साहित्य, पृष्ठ ३२३

‡ श्री शिवदत्त ज्ञानी एम ए–भारतीय संस्कृति (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १७२-३.

साम्राज्य—आज से भिन्न। अत्याचार तथा अन्याय को मिटाने के लिए दूसरों को आप अवश्य हराते थे। पराजय करके अपना विधान लागू करते थे। यह उनका साम्राज्य था। पराजित राज्य को लूटते न थे और न आग लगाते थे।

भौज्य—प्राकृतिक सीमा वाला। चारों तरफ से जल से घिरा रहा हो जिससे दूसरे आक्रमण न कर सकें। भारत भी भौज्य था। आर्य दूसरे देश को धन से नहीं धर्म से विजित करते थे।

स्वाराज्य—आत्म शुद्धि पर जोर। इसमें अधिकार तथा राज्यप्रसार की कामना नहीं था।

वैराज्य—इसमें राजा नहीं रहता। सारी जाति नियम बनाती तथा शासन करती थी। कोई पुरुष विशेष शासन भार नहीं सम्भालता था। राज्य-सीमा छोटी होती थी।

राज्य—राज्य का स्वरूप भी इसमें मिलता जुलता था किन्तु इसमें व्यक्ति विशेष शासन का सूत्र सभालता था।

पारमेष्ठ्य—परमेश्वर राज्य अर्थात् राम राज्य। सबको परमेश्वर की समान समझकर समान अधिकार दिए गए थे। यह एक आदर्श राज्य था इसमें दोष कम थे।

महाराज्य कई छोटे छोटे राज्य मिलकर महाराज्य कहलाता था। यह राज्य शक्तिशाली होता था। सभी राज्य मिलकर शासन चलाते थे सबको समान अधिकार था।

आधिपत्य—इसमें अधिपति ही सर्वेसर्वा होता था। राज्य कर्मचारियों की शक्ति प्रभावपूर्ण था पर यह नौकरशाही से भिन्न था।

समन्तपर्यायी—किसी बड़े शासक के आधीन माण्डलीक होते हैं किन्तु उनमें निरंकुशता नहीं थी। इसका स्वरूप मध्ययुग से भिन्न है। §

इनकी अन्य क्या विशेषताएं हैं यह तो ज्ञात नहीं है पर इनके प्रजातन्त्र और राजतन्त्र दो भेद अवश्य किए जा सकते हैं। इनमें भौज्य, स्वाराज्य वैराज्य आदि प्रजासत्तात्मक थे तथा साम्राज्य राज्य पारमेष्ठ्य, आधिपत्य आदि राजतन्त्रात्मक प्रतीत होते थे। विभिन्न राज्यों के सम्राटों तथा राजाओं द्वारा अपने शौर्य गुण प्रभुत्व तथा राज्य विस्तार के प्रतीक राजसूय अश्वमेध आदि यज्ञ इस समय राजाओं

---

§ प० रामगोविन्द त्रिवेदी—वैदिक साहित्य, (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ३२३

द्वारा सम्पन्न होने लगे थे। * वदिक काल के बहुत से राजाओ के अधिकारों, गौरव भावना आदि की महत्ता म वृद्धि हो चुकी थी और देश मे बडे-बड राज्यो का निर्माण होने लगा था। शतपथ व ऐतरेय ब्राह्मण ग्रथो मे ऐसे अनेक राजाओ का उल्लख है जिन्होंने अश्वमध यज्ञो का अनुष्ठान किया। गगा और यमुना नदी के विस्तृत भूमि खड म इन आर्यों न जातीय राज्य निर्माण किए। †

ब्राह्मण युग मे वदिक प्रणाली के अनुसार ही कुछ लोग राजकृत—राजा बनाने वाल होत थे जो उसे राजचिह्न के रूप म मणि (रत्न) प्रदान करते थे। इस समय राज्य की जनता के १२ रत्नी, प्रधान व्यक्ति थे। राज्याभिषेक के पूर्व इन सबको हवि प्रदान की जाती थी जो जनता द्वारा प्रदर्शित सम्मान की भावना का प्रतीक था। राजा को भी रत्निया के अन्तगत लिया गया है। रत्नी ये थे —

(१) सनानी (२) पुरोहित (३) राजन्य (४) राजमहिषी

‡ (५) सूत (६) ग्रामीण (७) क्षत्ता (८) सग्रहीता

‡‡ (९) भागदुघ ††(१०) अक्षवाप § (११) *गोविकर्ता* §§(१२) *पानागल*

राज्याभिषेक के समय राजा को प्रतिज्ञा करनी पडती थी कि यदि मैं किसी तरह स विद्रोह करू-अत्याचार करू तो मरा शुभ कम नष्ट हो जाय जिस मैं जन्म स मत्यु पयन्त करता हू। राजा के लिए यह आवश्यक था कि वह धति, व्रती और सत्य धर्मा हो तथा अभिषेक के समय की प्रतिज्ञाओ को न भूले। प्रतिज्ञा के बाद राजा की पीठ पर दण्ड से हल्का आघात किया जाता था जिससे यह इगित होता था कि राजा अपने को दण्ड–से ऊपर न समझे उसे भी दण्ड दिया जा सकता है।

बाद्य वेदाग व धर्म-सूत्रों म भी ब्राह्मण युग के राजा तथा शासन सबधी नियमो का उल्लेख है। राजा का प्रमुख कर्तव्य अपराधियो को दड दना बताया गया है। आपस्तम्ब धर्म सूत्र म भी कहा गया कि यदि राजा दडनीय अपराध के लिए दड नहीं देता तो उसे अपराधी समझना चाहिए।' गौतम धर्म-सूत्र के अनुसार जो

* डा० रमाशकर त्रिपाठी—प्राचीन भारत का इतिहास (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ८८

† प० रामकृष्ण का भारतीय शासन पद्धति (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ४

‡ सूत राज्यविषयक इतिवृत्त सकलन करने वाला।

‡‡ क्षता—राजकीय कुटुम्ब के प्रबन्धकर्ता।

†† भागदुघ—राज्य कर वसूल करने वाला अधिकारी।

§ गोविकर्ता—जगल विभाग का अधिकारी।

§§ पानागल—राजकीय सदेश पहुचाने वाला।

राजा न्यायपूर्वक दण्ड देकर अपना कर्तव्य पूरा नहीं करता उसे प्रायश्चित करना चाहिए। इन सूत्र ग्रन्थों के अनुसार कानून का स्रोत राजा नहीं है और न ही वह अपनी इच्छानुसार कानून बना सकता है। वैदिक युग की सभा और समितियां किसी अन्य रूप में इस समय भी विद्यमान था।

वैदिककाल में राष्ट्रीय भावना का स्वरूप विकसित हो रहा था। छोटे छोटे राज्यों के कारण पहले लोगों का प्रेम अपनी मातृभूमि व नगर राज्य तक ही केन्द्रित रहा। परन्तु वैदिक काल के समय में ही राष्ट्रीय भावना सीमित प्रदेश को छोड़ विस्तृत क्षेत्र की ओर उन्मुख होने लगी और एक प्रकार जातीय राष्ट्र का रूप लेने लगी थी। जनपदों की विविध श्रृंखला को एक सूत्र में बांधकर किसी महान राजनैतिक संगठन की स्थापना की भावना लोगों के मन में अनुप्राणित होने लगी थी।

रामायण तथा महाभारत काल

रामायण और महाभारत दो बड़े महाकाव्य हैं। दोनों भक्ति तथा वीर रस प्रधान काव्य है। इन दोनों महाकाव्यों का सृजन उन प्राचीन आख्यानों गाथाओं वीर प्रशस्तियों तथा वीरता की घटनाओं से संबंध रखता है जिन्हें चारण या भाट राज सभा में अथवा धार्मिक समारोहों में गाया करते थे। इन वीरता की गाथाओं के कुछ अवशिष्ट भाग हमारे इन महाकाव्यों में अभी सुरक्षित है। रामायण का काल ई० पूर्व सन ५०० (B C) के लगभग है और महाभारत भी इसी के आसपास लिखा गया माना जाता है। परन्तु इन महाकाव्यों में अपने समय के बहुत पूर्व के समय का वर्णन मिलता है।

रामायण आर्यों के दक्षिण भारत में प्रवेश करने के इतिहास का विवेचन करती है। संभवतः आर्यों की सभ्यता व संस्कृति का विस्तृत प्रभाव इसके पश्चात् ही दक्षिण में फैला। इस समय राजनैतिक क्षितिज पहले की अपेक्षा अधिक विस्तृत हो गया था और सार्वभौम साम्राज्य की धारणा निर्मित हो गई थी। राजा और प्रजा दोनों के समक्ष राष्ट्र कल्याण की भावना सर्वोपरि थी। धर्म के आवरण में राष्ट्र कल्याण की भावनाएं प्रस्फुटित हुई जिसमें संगठित शक्ति द्वारा राज्य राष्ट्र और विश्व हित के लिए जीवन का लक्ष्य रखा गया है। साधारण मनुष्य के लिए ये ग्रन्थ काव्य ही नहीं वरन् धर्म के मूल स्रोत सामाजिक आचार विचार के मेरुदंड और संस्कृति के प्राण रहे हैं। युगों युगों से ये आदर्श हमारे वैयक्तिक और राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण कर रहे हैं। रामराज्य आज तक आदर्श राज्य माना जाता है। मानव जीवन का ऐसा कोई पहलू नहीं जो रामायण तथा महाभारत में वर्णित न हो। ये ग्रन्थ राष्ट्रीय सम्पत्ति हो गए तथा जीवन को सुखमय व गौरवमय बनाने के साधन हो गए।

रामायण मे राजा का कर्तव्य कष्ट सहकर भी प्रजा का पालन करना बताया गया है। राजा अपनी प्रजा से बडे बडे मामलो म राय लेता था प्रजा की सुरक्षा का पूरा भार राजा पर ही था। अयोध्या काड (६७) मे कहा गया है कि जहाँ राजा नही है वहाँ न धर्म है न सुख है, न कुटुम्ब है। राजा ही सत्य है राजा ही नीति है राजा ही सबका भला कर सकता है।' रामायण म राज्य सचालन के लिए १८ राज्याधिकारियो का उल्लेख मिलता है—

मन्त्री पुरोहित, युवराज चमूपति द्वारपाल अन्तर्वेशिक कारागाराधिकारी द्रव्य सचयकृत प्रशास्ता नगराध्यक्ष कार्यनिर्माणभृत, धर्माध्यक्ष सभाध्यक्ष दण्डपाल दुर्गपाल राष्ट्रान्तपालक अटवीपालक आदि

रामायण काल म ज्ञात होता है कि आर्य सस्कृति की छाप उत्तर भारत में तो पड चुकी थी किन्तु दक्षिण भारत अछूता था। राम रावण का युद्ध सम्भवत आर्य सस्कृति का देश म फलाना हो। राजा दशरथ के राज्य में राष्टीयता मुख्य नहीं थी और राजनीतिक स्थिति भी डावाडोल सी थी। कोई ऐसा प्रबल राजा नही था जो सबको एक सूत्र म बाधता और महान राष्ट का रूप देता। साम्राज्यवाद। और कूटनीतिज्ञ रावण भारत क आर्य राजाओं की आपसी फूट और एकता की कमी को देख सभवत बहुत से अनार्यों का भडका कर आर्यो के तपोवनो म तोड फोड करने के लिए प्रेरित कर रहा था। राम की वीरता की चर्चा चारो ओर फल चुकी थी। राम सीता के विवाह से दो सभ्रान्त राजकुल स्नेह सूत्र म बध गए और इस प्रकार आर्य सगठन का श्रीगणेश तभी स हुआ। राम का उद्देश्य साम्राज्य विस्तार नहीं किन्तु सम्पूर्ण भारत म आर्यो की सभ्यता और सस्कृति का फलाना था। उन्होंने अनार्यों का सामना करने के लिए अनार्यों के कुछ नेताओ को—सुग्रीव अगद आदि का—अपने प्रेम बन्धन म बाधा।

वैदिक युग म आर्यों के जो छोटे-छोटे राज्य भारत मे हुए उनके क्षेत्र म अब वृद्धि हो गई। अनेक महत्वाकाक्षी राजाओ ने पडोस के लोगो को जीतकर या निर्बल राजाओ को अपने में मिलाकर विस्तृत राज्य प्राप्त कर लिए। इक्ष्वाकुवशी राजा रघु पौरव वशी भरत जसे राजाओं के राज्य सजात जन तक सीमित नही रहे। एस अनेक राज्य थे जिनमे कई जन थ। इस युग मे एक एक जन के भी कई राज्य थे। इनका क्षेत्र सीमित था इतिहासकारो ने इन्हें नगर राज्य (City States) नाम दिया। धार्मिक राजनीतिक जीवन-केन्द्र नगरी (पुर) होती थी जो प्राय राज्य के मध्य होती थी। पुर के चारों ओर का प्रदेश जनपद कहलाता था जिसमे आर्य जाति के कृषक, शूद्रो की सहायता से खेती करते थ। यह जनपद अनेक ग्रामो म विभक्त होते थे प्रत्येक ग्राम

सभा की भूमि सम्पूर्ण ग्राम की सम्पत्ति समझी जाती थी जिसे ग्राम सभा द्वारा कृषकों म बाँट दी जाती थी। राज्य का शासन केन्द्र म ही सीमित था। † महाभारत युद्ध म पाण्डवों के पक्ष म बहुत से राजा कुरुक्षेत्र म उपस्थित हुए जिनकी संख्या सौ क लगभग थी।

इन राज्यों म साम्राज्य विस्तार की प्रवृति विकसित हो गई थी। प्रतापी राजा चक्रवर्ती सार्वभौम बनने की इच्छा कर रहे थे पर य अन्य राज्यों को नष्ट करना अपनी मर्यादा क विपरीत समझते थ। उनका प्रयत्न केवल इतना था कि य राज्य उनकी अधीनता स्वीकार कर लें। अश्वमेध यज्ञ का आयोजन इसीलिए होता था किन्तु प्राच्य देश म नवीन साम्राज्यवाद का विकास हो रहा था। इस समय क राज्य मुख्यत राजतन्त्र और गणराज्य अथवा संघराज्य कहे जा सकते हैं। राजतन्त्र राज्यों म रामायणकाल के कोशल जनपद की शासन व्यवस्था इस प्रकार की बताई गई— दशरथ क वृद्ध हो जाने पर कोशल देश की परिषद की सभा बुलाई गई इसम ब्राह्मण बलमुख्य पौर और जनपद एकत्र हुए। दशरथ के प्रस्ताव को सुनकर सबने सहमति प्रकट की तथा घोष क द्वारा राजा क प्रस्ताव का अनुमोदन किया। ‡

कोशल जनपद म राजा के उत्तराधिकारी को स्वीकृत करना परिषद का काम था जिसम राज्य क प्रमुख जन सदस्य रूप स एकत्र होते थ उन्हें राजानः लोकसम्मता कहा गया है। वैदिक युग म राजा को सामान्य लोगों से श्रेष्ठ माना जाता था। परिषद क सदस्य भी राजा कहलाते थे। जनपद म विविध ग्रामों क ग्रामणीपुर सभा क सदस्य प्रमुख ब्राह्मणों, सेनानायकों क साथ मिलाकर परिषद बनती थी।

महाभारत काल म दिग्विजय राजनैतिक प्रभुता का प्रतीक था। पराजित देशों को वास्तव म विभिन्न राज्यों म ही नहीं मिलाया जाता था—पराजित राजा द्वारा प्रभुता को स्वीकृत कर लेना ही पर्याप्त माना जाता था। राजसूय अथवा अश्वमेध यज्ञ करके सम्राट की उपाधि ग्रहण की जाती थी तथा य नरेश द्वारा प्राप्त सम्मान शक्ति और गौरव क प्रतीक होते थ। अधीनस्थ राजा इन समारोहों म सामन्तों के समान उपस्थित होते और धन जन स अपने सम्राटों को युद्ध काल म सहायता और सहयोग देते थे। इस प्रकार सामन्तवाद न अपना प्रभाव इस समय स्थापित कर लिया था। राजा का सम्पूर्ण जीवन सिद्धान्तों की सीमा म बंधा हुआ था और प्रजा क पारस्परिक सहयोग म ही राष्ट्र का सुख शान्ति और कल्याण निहित था।

† डा सत्यकेतु विद्यालंकार भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास
‡ रामायण अयोध्याकाण्ड १।४८।४०

अय शास्त्रमिद पुण्य धमशास्त्रमिद परम ।
मोक्षशास्त्रमिद प्रोक्त व्यासेनामितबुद्धिना । †

वाल्मीकि की तरह सौति ने कहा कि राजा का सब प्रथम कतव्य लोक म शान्ति और व्यवस्था करना है । राजा अपने आचरण से रामराज्य बनाकर सतयुग ला सकता है विपरीत आचरण से अराजकता ला सकता है । ‡ महाभारत सच्चे अर्थों मे विश्व धम कोष है—प्राचीन गौरव गरिमा का गान करन वाला अपूव ग्रथ है । व्यास द्वारा लिखित भारत राष्ट्र की उपासना का गीत निम्न है—

अत्र ते कीतयिष्यामि वष भारत भारतम,
प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोवैवस्वतस्य च ।
पृथोस्तु मुचुकुन्दस्य शिवेरौशीनरस्य च
ऋषभस्य तथलस्य नगस्य नृपेतस्तथा ।
कुशिकस्य च दुधषगाधेश्चेव महात्मन
सोमकस्य च दुधषदिलीपस्य तथैव च ।
अन्येषाम च महाराज क्षत्रियाणा बलीयतमाम
सवेषामव राजेन्द्र प्रिय भारत भारतम ।

अथात हे भारत ! जब मैं तुम्हें भारत देश का यशोगान सुनाता हू । महादेश देवराज इन्द्र का भी प्रिय है । ववस्वत मनु पथु इक्ष्वाकु भारत को प्यार करते थे । ययाति अम्बरीक्ष मधाता नहुष मुचुकुन्द उशीनर पुत्र शिवि वृषभ एव नग, कुशिक, गाधि सामक दिलीप आदि बलशाली क्षत्रिय सम्राटा का परमप्रिय भारत था । राजन ! इस दिव्य देश का गौरव गान तुम्हें सुनाता हूँ ।

महाभारत म कुल १८ पव हैं । यद्यपि इसका मुख्य विषय कौरव पाण्डवा का महायुद्ध वणन है परन्तु उस प्राचीन भारतीय ज्ञान का विश्वकोष समझा जाता है । महाभारत का शान्ति पव भारतीय धर्म राजधमशास्त्र का ग्रथ है । सामाजिक जीवन का शृखला को उचित ढग से निर्धारित करने वाली प्रेरणा एव शक्तिया के अथ म राजधम शब्द का प्रयाग किया गया है । राजधम की इस महत्ता का विचार करत हुए भीष्म पितामह ने कहा हैं कि—अच्छे अच्छे सत्पुरुष राजधम का आचरण करते हैं प्रजा का शोषण करन म राष्ट्र की उन्नति नहीं होती—

---

† महाभारत—शान्ति पव । ६४ ।१३०।

‡ श्री सांवलिया वमा—विश्व धम दशन—पष्ठ ८३

सभा की भूमि सम्पूर्ण ग्राम की सम्पत्ति समझी जाती थी जिसे ग्राम सभा द्वारा कृषकों में बांट दी जाती थी। राज्य का शासन केन्द्र में ही सीमित था। † महाभारत युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में बहुत से राजा कुरुक्षेत्र में उपस्थित हुए जिनकी संख्या सौ के लगभग थी।

इन राज्यों में साम्राज्य विस्तार की प्रवृत्ति विकसित हो गई थी। प्रतापी राजा चक्रवर्ती सार्वभौम बनने की इच्छा कर रहे थे पर वे अन्य राज्यों को नष्ट करना अपनी मर्यादा के विपरीत समझते थे। उनका प्रयत्न केवल इतना था कि वे राज्य उनकी अधीनता स्वीकार कर लें। अश्वमेध यज्ञ का आयोजन इसीलिए होता था किन्तु प्राच्य देश में नवीन साम्राज्यवाद का विकास हो रहा था। इस समय के राज्य मुख्यतः राजतन्त्र और गणराज्य अथवा संघराज्य कहे जा सकते हैं। राजतन्त्र राज्यों में रामायणकाल के कोशल जनपद की शासन व्यवस्था इस प्रकार की बनाई गई—दशरथ के वृद्ध हो जाने पर कोशल देश की परिषद की सभा बुलाई गई इसमें ब्राह्मण बलमुख्य पौर और जनपद एकत्र हुए। दशरथ के प्रस्ताव को सुनकर सबने सहमति प्रकट की तथा घोष के द्वारा राजा के प्रस्ताव का अनुमोदन किया। ‡

कोशल जनपद में राजा के उत्तराधिकारी को स्वीकृत करना परिषद का काम था जिसमें राज्य के प्रमुख जन सदस्य रूप से एकत्र होते थे उन्हें राजान लोकसम्मता कहा गया है। वैदिक युग में राजा को सामान्य लोगों से श्रेष्ठ माना जाता था। परिषद के सदस्य भी राजा कहलाते थे। जनपद में विविध ग्रामों के ग्रामणी पुर सभा के सदस्य प्रमुख ब्राह्मणों, सेनानायकों के साथ मिलाकर परिषद बनती थी।

महाभारत काल में दिग्विजय राजनैतिक प्रभुता का प्रतीक था। पराजित देशों को वास्तव में विभिन्न राज्यों में हो नहीं मिलाया जाता था—पराजित राजा द्वारा प्रभुता को स्वीकृत कर लेना ही पर्याप्त माना जाता था। राजसूय अथवा अश्वमेध यज्ञ करके सम्राट की उपाधि ग्रहण की जाती थी तथा ये नरेश द्वारा प्राप्त सम्मान शक्ति और गौरव के प्रतीक होते थे। अधीनस्थ राजा इन समारोहों में सामन्तों के समान उपस्थित होते और धन-जन से अपने सम्राटों को युद्ध काल में सहायता और सहयोग देते थे। इस प्रकार सामन्तवाद ने अपना प्रभाव इस समय स्थापित कर लिया था। राजा का सम्पूर्ण जीवन सिद्धान्तों की सीमा में बंधा हुआ था और प्रजा के पारस्परिक सहयोग में ही राष्ट्र का सुख शान्ति और कल्याण निहित था।

---

† डा० सत्यकेतु विद्यालंकार भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास

‡ रामायण अयोध्याकाण्ड १।४८।५०

या राष्ट्रमनुगृह्णाति परिरक्षन वसुधी नृप
सजातमुपजीवन्मलमत मुमन्तफलम । †

इस काल म भी प्रजा व राष्ट्र की रक्षा का महत्वपूर्ण कार्य राजा का प्रमुख कर्तव्य माना जाता था। इस समय भी बहुत से छोटे-छोटे राज्य थे तथा उनकी राष्ट्र विषयक विचारधारा समस्त भारत में व्याप्त न होकर छोटे छोटे प्रदेशों तक ही सीमित थी। प्रत्येक राजा का जन मन की रक्षा का भार उसके राज्य तक ही पर्याप्त था। राजा प्रजा तथा राष्ट्र अलग नहीं वरन समन्वित रूप में थे। राजा प्रजा की रक्षा पुत्रवत् करता था तथा यही उसका सर्वोत्तम धर्म था। महाभारत में एक प्रतिज्ञा है जो सम्भवत राज्याभिषेक के पूर्व की जाती थी "मैं अपनी प्रजा को ब्रह्म मानकर उसका पालन करूंगा—जो आर्य धर्म के अनुकूल और दण्ड नीति द्वारा अभिमत है उसमें अगर होकर करता रहूंगा। मैं भी कभी स्वतन्त्र नहीं (स्वेच्छाचारी) होऊंगा।" इस प्रतिज्ञा के लेने के पूर्व ऋषि तथा विद्वान कोई न प्रिय है और न अप्रिय—तुम सब मनुष्यों के साथ एक समान व्यवहार करना है सबको एक दृष्टि से देखना है-तुम काम क्रोध लोभ मान का परित्याग करो। राज्य में जो कोई भी मनुष्य धर्म से च्युत न हो तुम शक्ति का प्रयोग कर निग्रह करो। ‡

परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप में राज्य प्रजा व राष्ट्रहित ही प्रमुख था। प्रजा की रक्षा करने से ही वह राजा कहलाता था।

स्वेषु धर्मेष्ववस्थाप्य प्रजा सर्वा महिपति
धर्मेण सर्वकृत्यानि शमनिष्ठानि कारयत
परिनिष्ठितकार्यस्तु नृपति परिपालनात
कुर्यादन्यनवा कुर्यात इन्द्रो राजन्य उच्यते। §

प्रतिज्ञा के उल्लंघन होने पर राजा को च्युत किया जा सकता था। धर्म के उल्लंघन पर ब्रह्मवादी ऋषियों ने मन्त्रपूत कुशाओं द्वारा राजा का घात किया। राजा स्वनामत्र के विरुद्ध प्रजा ने विद्रोह किया क्योंकि वह प्रजा का रंजन नहीं करता था—राजधर्म का पालन नहीं करता था—जनता का अधिकार था कि वे सामान्य दोष के कारण भी अपना राजा बनाने से अस्वीकार कर सकती थी।

इस समय सेना में जहां भृत (वेतन द्वारा भर्ती) सैनिक होते थे वहां अभृत

---

† महाभारत शान्ति पर्व। ५८।२२।२५

‡ महाभारत शान्तिपर्व।५६।१०३-१०६। § महाभारत शान्तिपर्व।६०।१६।२०।

भी होते थे। ये स्वयमवक के रूप म भर्ती हुए सनिक थे जो राष्ट्र पर आपत्ति के अवसर पर रणक्षेत्र म उपस्थित होते थे।

इस युग की राष्ट्रीय भावना भी प्रादेशिक था। धम और राजनीति के समन्वय से राष्ट्र कल्याण की भावना ओतप्रोत थी और यही उस समय की राष्ट्रीय भावना का सुन्दर स्वरूप था। राजा और प्रजा के सम्मिलित प्रयत्नो, सदभावनाओ और कर्तव्यों पर ही राष्ट्रीय भावना अवलम्बित थी। इस समय धम और राजनीति एक सिक्के के दो पहलू के रूप मे थे—धम भी समष्टि की उन्नति का प्रेरक था और यहाँ राष्ट्रीय भाव के प्रोत्साहन म महत्वपूण था। योगीराज कृष्ण को इस युग का कुशल राजनीतिज्ञ माना गया है जिनके अथक प्रयत्न व परिश्रम से देश की विविधता म एक अपूव एकता का स्वप्न पूण हुआ।

इस काल का राजा सवथा निरकुश और स्वच्छाचारी नही था। उसे अपने मन्त्रियो परामशदाताओ, जनता आदि के मत का सम्मान करना पडता था। राजा प्रजा का अनुरजन और रक्षण करता है और उसके कष्टों को दूर करता है। निरकुश और अत्याचारी राजा को सिंहासन से ही नही उतारा जाता वरन कभी-कभी पागल कुत्ते की भाँति ' वध भी कर दिया जाता था। राज्य का सचालन मन्त्रि परिषद की सहायता से होता था। राज्य की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जिसका मुखिया ग्रामणी कहलाता था।

इस युग म गणराज्य या प्रजातन्त्रराज्य भी थे जिसम जनता का विशेष सम्मान होता था। कभी अनेक गण मिलकर एक 'सघ' बना लेते थे। महाभारत के शान्ति पव म अधक वृष्णि-सघ का उल्लेख है।

इस काल म जाति प्रथा का भी विकास हुआ। ऋग्वेद काल के प्रारम्भिक वर्षों म जातीय युद्धों के अवसर पर प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति रणक्षेत्र म अपने जन के प्रमुख के साथ जाता था और शान्ति के समय कृषि काय करता था। परन्तु आर्यों के अनवरत युद्धों और राज्य सीमा के विस्तार के परिणामस्वरूप प्रशिक्षित और रण कुशल सनिकों को सन्नद्ध तयार रखना आवश्यक हो गया ताकि आपत्तिकाल म उनकी सवायें किसी भी क्षण ली जा सकें। श्रम के आधार पर इस प्रकार का विभाजन हुआ था किन्तु बाद म यह विभाजन कठोर होता गया। जाति प्रथा ने देश के राजनतिक इतिहास को प्रभावित किया। जाति की ईर्ष्या द्वेष तथा सघष ने समाज को इतने अधिक प्रतिद्वन्द्वी समुदायों म बाँटा कि व विदेशियो के आक्रमणों तथा राष्ट्रीय सकट के अवसर पर भी एकत्र होकर सगठित नही रह पाये। देश की

या राष्ट्रमनुगृह्णाति परिरक्षन् वसुधां नृप
सजातमुपजीवन्स लभते सुमहत्फलम् । †

इस काल में भी प्रजा व राष्ट्र की रक्षा का महत्वपूर्ण कार्य राजा का प्रमुख कर्तव्य माना जाता था। इस समय भी बहुत से छोटे-छोटे राज्य थे तथा उनकी राष्ट्र विषयक विचारधारा समस्त भारत में व्याप्त न होकर छोटे छोटे प्रदेशों तक ही सीमित थी। प्रत्येक राजा का जन मन की रक्षा का भार उसके क्षेत्र तक ही पर्याप्त था। राजा प्रजा तथा राष्ट्र अलग नहीं वरन समन्वित रूप में थे। राजा प्रजा की रक्षा पुत्रवत् करता था तथा यही उसका सर्वोत्तम धर्म था। महाभारत में एक प्रतिज्ञा है जो सम्भवतः राज्याभिषेक के पूर्व की जाती थी 'मैं अपनी प्रजा को ब्रह्म मानकर उसका पालन करूंगा--जो न्याय धर्म के अनुकूल और दण्ड नीति द्वारा अभिमत हैं उन्हें मैं अवश्य व्यवहार करता रहूंगा। मैं भी कभी स्वतन्त्र नहीं (स्वेच्छाचारी) होऊंगा। इस प्रतिज्ञा के लेने के पूर्व ऋषि तथा विद्वान कोई न प्रिय है और न अप्रिय--तुम्हें सब मनुष्यों के साथ एक समान व्यवहार करना है सबको एक दृष्टि से देखना है-तुम काम क्रोध लोभ मान का परित्याग करो। राज्य में जो कोई भी मनुष्य धर्म से च्युत न हो तुम शक्ति का प्रयोग कर निग्रह करो। ‡

परन्तु अथवा अपराध रूप में राज्य प्रजा व राष्ट्रहित ही प्रमुख था। प्रजा की रक्षा करने से ही वह राजा कहलाता था।

स्वेषु धर्मेष्ववस्थाप्य प्रजाः सर्वा महीपतिः
धर्मेण सर्वकृत्यानि शमनिष्ठानि कारयेत
परिनिष्ठितकार्यस्तु नृपतिः परिपालनात
कुर्यादि यन्सदा कुर्यात इन्द्रो राजेत्युच्यते । §

प्रतिज्ञा के उल्लंघन होने पर राजा को च्युत किया जा सकता था। धर्म के उल्लंघन पर ब्रह्मवादी ऋषियों ने मन्त्रपूत कुशाओं द्वारा राजा का घात किया। राजा खनीनेत्र के विरुद्ध प्रजा ने विद्रोह किया क्योंकि वह प्रजा का रंजन नहीं करता था--राजधर्म का पालन नहीं करता था—जनता का अधिकार था कि वे सामान्य दोष के कारण भी अपना राजा बनाने में अस्वीकार कर सकती थी।

इस समय सेना में जहां भृत (वेतन द्वारा भर्ती) सैनिक होते थे वहाँ अभृत

---

† महाभारत शान्ति पर्व । ५६।२२।२३

‡ महाभारत शान्तिपर्व ।५६।१०३-१०६। § महाभारत शान्तिपर्व ।६०।१६।२०।

भी होते थे। ये स्वयंसेवक के रूप में भर्ती हुए सैनिक थे जो राष्ट्र पर आपत्ति के अवसर पर रणक्षेत्र में उपस्थित होते थे।

इस युग की राष्ट्रीय भावना भी प्रारम्भिक थी। धर्म और राजनीति के समन्वय से राष्ट्र कल्याण की भावना ओतप्रोत थी और यही उस समय की राष्ट्रीय भावना का सुन्दर स्वरूप था। राजा और प्रजा के सम्मिलित प्रयत्न, सद्भावनाओं और कर्तव्यों पर ही राष्ट्रीय भावना अवलम्बित थी। इस समय धर्म और राजनीति एक सिक्के के दो पहलू के रूप में थे—धर्म भी समष्टि की उन्नति का प्रेरक था और यहां राष्ट्रीय भाव के प्रोत्साहन में महत्वपूर्ण था। योगीराज कृष्ण को इस युग का कुशल राजनीतिज्ञ माना गया है जिनके अथक प्रयत्न व परिश्रम से देश की विविधता में एक अपूर्व एकता का स्वप्न पूर्ण हुआ।

इस काल का राजा सर्वथा निरंकुश और स्वेच्छाचारी नहीं था। उसे अपने मन्त्रियों परामर्शदाताओं, जनता आदि के मत का सम्मान करना पड़ता था। राजा प्रजा का अनुरंजन और रक्षण करता है और उसके कष्टों को दूर करता है। निरंकुश और अत्याचारी राजा को सिंहासन से ही नहीं उतारा जाता वरन कभी-कभी 'पागल कुत्ते की भांति' वध भी कर दिया जाता था। राज्य का संचालन मन्त्रि-परिषद् की सहायता से होता था। राज्य की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जिसका मुखिया ग्रामणी कहलाता था।

इस युग में गणराज्य या प्रजातन्त्रराज्य भी थे जिसमें जनता का विशेष सम्मान होता था। कभी अनेक गण मिलकर एक "संघ" बना लेते थे। महाभारत के शान्ति पर्व में अंधक वृष्णि-संघ का उल्लेख है।

इस काल में जाति प्रथा का भी विकास हुआ। ऋग्वेद काल के प्रारम्भिक वर्षों में जातीय युद्धों के अवसर पर प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति रणक्षेत्र में अपने जन के प्रमुख के साथ जाता था और शान्ति के समय कृषि कार्य करता था। परन्तु आर्यों के अनवरत युद्धों और राज्य सीमा के विस्तार के परिणामस्वरूप प्रशिक्षित और रण-कुशल सैनिकों को सदैव तैयार रखना आवश्यक हो गया ताकि आपत्तिकाल में उनकी सेवायें किसी भी क्षण ली जा सकें। श्रम के आधार पर इस प्रकार का विभाजन हुआ था किन्तु बाद में यह विभाजन कठोर होता गया। जाति प्रथा ने देश के राजनैतिक इतिहास को प्रभावित किया। जाति की ईर्ष्या, द्वेष तथा संघर्ष ने समाज को इतने अधिक प्रतिद्वन्द्वी समुदायों में बांटा कि वे विदेशियों के आक्रमणों तथा राष्ट्रीय संकट के अवसर पर भी एकत्र होकर संगठित नहीं रह पाये। देश की

या राष्ट्रमनुगृह्णाति परिरक्षन वसुधी नृप
सजातमुपजाव सलभत सुमहत्फलम् । †

इस काल म भी प्रजा व राष्ट्र की र ा का महत्वपूण काय राजा का प्रमुख कर्तव्य माना जाता था। इस समय भी बहुत स छोटे-छोटे राज्य थ तथा उनकी राष्ट्र विषयक विचारधारा समस्त भारत म व्याप्त न होकर छोटे छोटे प्रदेशों तक ही सीमित थी। प्रत्येक राजा का जन मन की रक्षा का भार उसके क्षेत्र तक ही पर्याप्त था। राजा प्रजा तथा राष्ट्र अलग नहीं वरन् समन्वित रूप म थ। राजा प्रजा की रक्षा पुत्रवत् करता था तथा यही उसका सर्वोत्तम धम था। महाभारत म एक प्रतिज्ञा है जो सम्भवत राज्याभिषेक क पूर्व की जाती थी--'मैं अपनी प्रजा को ब्रह्म मानकर उसका पालन करूंगा--जो आय धम क अनुकूल और दण्ड नीति द्वारा अभिमत हैं उन्हें मैं आचार होकर करता रहूंगा। मैं भी कभी स्ववश न ो (स्वेच्छाचारी) होऊंगा। इस प्रतिज्ञा क लन के पूव ऋषि तथा विद्वान कोई न प्रिय है और न अप्रिय--तुम्हें सब मनुष्यों के साथ एक समान व्यवहार करना है सबको एक दृष्टि से देखना है-तुम काम क्रोध लोभ मान का परित्याग करो। राज्य म जो कोई भी मनुष्य धम स च्युत न हो तुम शक्ति का प्रयोग कर निग्रह करो। ‡

परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप म राज्य प्रजा व राष्ट्रहित ही प्रमुख था। प्रजा की रक्षा करने स ही वह राजा कहलाता था।

स्वेषु धर्मेष्ववस्थाप्य प्रजा सर्वा महिपति
धर्मेण सवकृत्यानि शमनिष्ठानि कारयत
परिनिष्ठितकार्यस्तु नृपति परिपालनात
कुर्यादन्यनवा कुर्यात इन्द्रो राजन्य उच्यत। §

प्रतिज्ञा क उल्लंघन होने पर राजा को च्युत किया जा सकता था। धम के उल्लंघन पर ब्रम्हवादी ऋषियों ने मन्त्रपूत कुशाओं द्वारा राजा का घात किया। राजा खनीनत्र क विरुद्ध प्रजा ने विद्रोह किया क्योंकि वह प्रजा का रंजन नहीं करता था--राजधम का पालन नहीं करता था--जनता का अधिकार था कि व सामान्य दोष के कारण भी अपना राजा बनाने से अस्वीकार कर सकती थी।

इस समय सेना म जहां भृत (वेतन द्वारा भर्ती) सनिक होत थे वहां अभृत

---

† महाभारत शान्ति पव । ५८।२२।२८

‡ महाभारत शान्तिपव ।५६।१०३-१०६। § महाभारत शान्तिपव ।६०य१६।२०।

भी होते थे। ये स्वयंसेवक के रूप में भर्ती हुए सैनिक थे जो राष्ट्र पर आपत्ति के अवसर पर रण क्षेत्र में उपस्थित होते थे।

इस युग की राष्ट्रीय भावना भी आदर्शात्मक थी। धर्म और राजनीति के समन्वय में राष्ट्र कल्याण की भावना ओतप्रोत थी और यही उस समय की राष्ट्रीय भावना का मूल स्वरूप था। राजा और प्रजा के सम्मिलित प्रयत्नों, सम्भावनाओं और कर्तव्यों पर ही राष्ट्रीय भावना अवलम्बित थी। इस समय धर्म और राजनीति एक सिक्के के दो पहलू के रूप में थे—धर्म भी समष्टि की उन्नति का प्रेरक था और यही राष्ट्रीय भाव के प्रोत्साहन में महत्वपूर्ण था। योगीराज कृष्ण को इस युग का कुशल राजनीतिज्ञ माना गया है जिनके अथक प्रयत्न व परिश्रम से देश की विविधता में एक अपूर्व एकता का स्वप्न पूर्ण हुआ।

इस काल का राजा सर्वथा निरंकुश और स्वेच्छाचारी नहीं था। उसे अपने मन्त्रियों, परामर्शदाताओं, जनता आदि के मत का सम्मान करना पड़ता था। राजा प्रजा का अनुरंजन और रक्षण करता है और उसके कष्टों को दूर करता है। निरंकुश और अत्याचारी राजा को सिंहासन से ही नहीं उतारा जाता वरन् कभी-कभी पागल कुत्ते की भांति वध भी कर दिया जाता था। राज्य का संचालन मन्त्रि-परिषद् की सहायता से होता था। राज्य की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जिसका मुखिया ग्रामणी कहलाता था।

इस युग में गणराज्य या प्रजातन्त्रराज्य भी थे जिसमें जनता का विशेष सम्मान होता था। कभी अनेक गण मिलकर एक 'संघ' बना लेते थे। महाभारत के शान्ति पर्व में अंधक वृष्णि-संघ का उल्लेख है।

इस काल में जाति प्रथा का भी विकास हुआ। ऋग्वेद काल के प्रारम्भिक वर्षों में जातीय युद्धों के अवसर पर प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति रणक्षेत्र में अपने जन के प्रमुख के साथ जाता था और शान्ति के समय कृषि कार्य करता था। परन्तु आर्यों के अनवरत युद्धों और राज्य सीमा के विस्तार के परिणामस्वरूप प्रशिक्षित और रण-कुशल सैनिकों को सदैव तैयार रखना आवश्यक हो गया ताकि आपत्तिकाल में उनकी सेवायें बिना भी क्षण लिए ली जा सकें। श्रम के आधार पर इस प्रकार का विभाजन हुआ था किन्तु बाद में यह विभाजन कठोर होता गया। जाति प्रथा ने देश के राजनैतिक इतिहास को प्रभावित किया। जाति की ईर्ष्या, द्वेष तथा संघर्ष ने समाज को इतने अधिक प्रतिद्वन्द्वी समुदायों में बाँटा कि वे विदेशियों के आक्रमणों तथा राष्ट्रीय संकट के अवसर पर भी एकत्र होकर संगठित नहीं रह पाये। देश की

या राष्ट्रमनुगृह्णाति परिरक्षन वसुधी नृप
सजानमुपजीव सलभत सुमहत्फलम् । †

इस काल में भी प्रजा व राष्ट्र की रक्षा का महत्वपूर्ण काम राजा का प्रमुख कर्तव्य माना जाता था। इस समय भी बहुत से छोटे-छोटे राज्य थे तथा उनकी राष्ट्र विषयक विचारधारा समस्त भारत में व्याप्त न होकर छोटे छोटे प्रदेशों तक ही सीमित थी। प्रत्येक राजा को जन मन की रक्षा का भार उसके क्षेत्र तक ही पर्याप्त था। राजा प्रजा तथा राष्ट्र अलग नहीं वरन् समन्वित रूप में थे। राजा प्रजा की रक्षा पुत्रवत् करता था तथा यही उसका सर्वोत्तम धर्म था। महाभारत में एक प्रतिज्ञा है जो प्रभवत राज्याभिषेक के पूर्व की जाती थी "मैं अपनी प्रजा को ब्रह्म मानकर उसका पालन करूंगा--जो न्याय धर्म के अनुकूल और दण्ड नीति द्वारा अभिमत है उसे मैं अंगीकार करता रहूंगा। मैं भी कभी स्वतन्त्र नहीं (स्वेच्छाचारी) होऊंगा।" इस प्रतिज्ञा के लेने के पूर्व ऋषि तथा विद्वान कोई न प्रिय है और न अप्रिय--तुम्हें सब मनुष्यों के साथ एक समान व्यवहार करना है सबको एक दृष्टि से देखना है तुम काम क्रोध लोभ मान का परित्याग करो। राज्य में जो कोई भी मनुष्य धर्म से च्युत न हो तुम शक्ति का प्रयोग कर निग्रह करो। ‡

पराक्ष अथवा अपराक्ष रूप में राज्य प्रजा व राष्ट्रहित ही प्रमुख था। प्रजा की रक्षा करने से ही वह राजा कहलाता था।

स्वेषु धर्मेष्ववस्थाप्य प्रजा सर्वा महिपति
धर्मेण सर्वकृत्यानि शमनिष्ठानि कारयेत
शरनिष्ठितकार्यस्तु नृपति परिपालनात
कुर्याल्लोकमनवा कुमार शब्दा राजेत्य उच्यते । §

प्रतिज्ञा के उल्लंघन होने पर राजा को च्युत किया जा सकता था। धर्म के उल्लंघन पर ब्रह्मवादी ऋषियों ने मन्त्रपूत कुशाओं द्वारा राजा का घात किया। राजा खनीनेत्र के विरुद्ध प्रजा ने विद्रोह किया क्योंकि वह प्रजा का रंजन नहीं करता था--राजधर्म का पालन नहीं करता था--जनता का अधिकार था कि वे सामान्य दोष के कारण भी अपना राजा बनाने से अस्वीकार कर सकती थी।

इस समय सेना में जहाँ भृत (वेतन द्वारा भर्ती) सैनिक होते थे वहाँ अभृत

---

† महाभारत शान्ति पर्व । ५८।२२।२८

‡ महाभारत शान्तिपर्व ।५८।१०३-१०८।   § महाभारत शान्तिपर्व ।६०।१६।२०।

भी होते थे। ये स्वयमवक के रूप मे भर्ती हुए सनिक थे जो राष्ट पर आपत्ति के अवसर पर रणक्षत्र म उपस्थित होते थे।

इस युग का राष्ट्रीय भावना भी प्रादेशिक था। धम और राजनीति के सम वय से राष्ट्र कल्याण का भावना ओतप्रोत थी और यही उस समय की राष्ट्रीय भावना का सुदर स्वरूप था। राजा और प्रजा के सम्मिलित प्रयत्नो सदभावनाओ और कतव्यो पर ही राष्ट्रीय भावना अवलम्बित थी। इस समय धम ओर राजनीति एक सिक्के क दो पहलू क रूप मे थे—धम भी समष्टि की उन्नति का प्रेरक था और यही राष्ट्रीय भाव क प्रोत्साहन म महत्वपूण था। योगीराज कृष्ण को इस युग का कुशल राजनीतिज्ञ माना गया है जिनके अथक प्रयत्न व परिश्रम से देश की विविधता म एक अपूव एकता का स्वप्न पूण हुआ।

इस काल का राजा सवथा निरकुश और स्वेच्छाचारी नही था। उसे अपने मन्त्रियो परामशदाताओ, जनता आदि के मत का सम्मान करना पडता था। राजा प्रजा का अनुरजन और रक्षण करता है और उसके कष्टों को दूर करता है। निरकुश और अत्याचारी राजा को सिंहासन से ही नही उतारा जाता वरन कभी-कभी पागल कुत्ते की भाति वध भी कर दिया जाता था। राज्य का सचालन मत्रि-परिषद की सहायता स होता था। राज्य की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जिसका मुखिया ग्रामणी' कहलाता था।

इस युग म गणराज्य या प्रजातन्त्रराज्य भी थे जिसमे जनता का विशेष सम्मान होता था। कभी अनक गण मिलकर एक 'सघ" बना लेते थे। महाभारत के शान्ति पव म अधक वृष्णि-सघ का उल्लख है।

इस काल म जाति प्रथा का भी विकास हुआ। ऋग्वद काल के प्रारम्भिक वर्षो म जातीय युद्धो क अवसर पर प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति रणक्षेत्र म अपने जन के प्रमुख क साथ जाता था और शान्ति के समय कृषि काय करता था। परतु आर्यो के अनवरत युद्धो और राज्य सीमा के विस्तार क परिणामस्वरूप प्रशिक्षित और रण कुशल सनिको को सदव तयार रखना आवश्यक हो गया ताकि आपत्तिकाल म उनकी सवायें किसी भी क्षण ली जा सकें। श्रम के आधार पर इस प्रकार का विभाजन हुआ था किन्तु बाद म यह विभाजन कठोर होता गया। जाति प्रथा ने देश के राजनतिक इतिहास को प्रभावित किया। जाति की ईर्ष्या, द्वेष तथा सघष ने समाज को इतने अधिक प्रतिद्वद्वी समुदायो म बाँटा कि वे विदेशियों के आक्रमणो तथा राष्ट्रीय सकट क अवसर पर भी एकत्र होकर सगठित नही रह पाय। देश की

रक्षा का भार क्षत्रियों पर ही होने के कारण साधारण जनता आक्रमण के समय चिंतातुर न रहती थी।

जैन तथा बौद्ध काल

प्रारम्भिक बौद्ध ग्रन्थों में हम राजनैतिक इतिहास की पृष्ठभूमि अधिक स्पष्ट रूप से ज्ञात होती है। इस समय १६ महाजनपद प्रमुख थे—अंग मगध काशी, कौशल, मल्ल कुरु पंचाल गंधार कम्भोज आदि। इसके अतिरिक्त कुछ गणराज्यों का उल्लेख भी है—

कपिलवस्तु के शाक्य अल्लकप्प के बुली केसपुत्त के कलाम थावा के मौर्य, कुशीनारा के मल्ल मिथिला के विदेह वैशाली के लिच्छवी तथा नाय।

कपिलवस्तु के शाक्यों में गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। ये नेपाल की सीमा पर हिमालय की तराई में रहते थे। इनका गणराज्य काफी उन्नत था तथा अनेक विशाल नगरों का निर्माण हुआ था इस गणराज्य में ८० हजार कुटुम्ब रहते थे जिनमें लगभग ५ लाख मनुष्य थे शाक्यों की मन्त्रणा सभा काफी विशाल थी—इसका प्रधान राजा कहलाता था। संथागार में ५०० सदस्यों की सभा होती थी तथा मत के एक न होने पर शलाकाओं द्वारा बहुमत लिया जाता था।

वैशाली के लिच्छिवी क्षत्रिय थे तथा इनका शासन बड़ा सुव्यवस्थित था। इस गणराज्य में ७७०७ राजा तथा अनेक उपराजा सेनापति तथा भाँडागारिक थे। लिच्छिवियों में मतैक्य सौहार्द, आदर, दृढ़ता की भावना के साथ राष्ट्रीय भावना भी प्रबल थी। महात्मा बुद्ध ने इनकी सहिष्णुता की काफी प्रशंसा की है।

प्रजातन्त्रात्मकता न केवल गणराज्यों के राजनैतिक संगठनों में थी वरन आर्थिक सामाजिक एवं धार्मिक संगठनों में भी प्रचलित थी। जनता का बहुमत वांछनीय तथा अधिकतया मान्य था। इन जनतन्त्रों का क्षेत्रफल बहुत ही कम था। बड़े और छोटे गणराज्यों की शासन व्यवस्था में भी कुछ भिन्नता थी। जैन तथा बौद्ध धर्म में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देता है। प्रत्येक राज्य के जनपद अपनी स्वतन्त्रता के मोह जाल में बंधा था तथा अपने को सार्वभौम राज्य का स्वरूप घोषित करना चाहता था इसलिये राष्ट्रीय भावना अधिक नहीं पनप पाती थी।

ये दोनों मत ब्राह्मण धर्म या वैदिक धर्म की प्रशाखाएं ही हैं जिन्होंने कुछ अवांछनीय धार्मिक विधियों एवं प्रथाओं का घोर विरोध किया और कुछ विशिष्ट बातों पर बल दिया। जैन और बौद्ध धर्म दोनों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप सुधारक

सम्प्रदाय के रूप म उत्पन्न हुआ—धम की सकुचित सीमाओ म कुछ विस्ता हुआ। उस समय जनता ब्राह्मणो का प्रभुता कमकाण्डो की निरथकता तथा नतिकता एव तपस्या के सिद्धात से ऊब चुकी थी। उनके लिए बाह्य आडम्बर पूरा रक्तिम यज्ञ तथा रहस्यवाद म ओतप्रोत उपनिषद समान रूप म जटिल एव दुर्बोध हो गए थ। वह सरल तथा सादे धम व आचार विचार के लिए तरस रही थी। इस आवश्यकता को जन तथा बौद्ध धम न पूरा किया। बौद्ध धम जन धम की अपक्षा अधिक क्रान्तिकारी था। बौद्ध धम ने वदिक धम द्वारा प्रचलित वण व्यवस्था के आचार-व्यवहार धम आदि की कटु आलोचना की तथा एक नया मार्ग भी जनता के सामने रखा। जन बौद्ध धम के अलावा भी कई अन्य आदोलन प्रारभ हुए किन्तु व बाद म चलकर इन्ही म ही विलीन हो गए। ईसा पूव छठी शताब्दी मे वैशाली कपिलवस्तु आदि राज्यो म गणराज्य थ और प्रजातान्त्रिक वातावरण व्याप्त था। इसस जन साधारण म स्वतत्रता की प्रवत्ति जाग्रत हुई जिसकी अभिव्यक्ति धार्मिक क्षेत्र म जन तथा बौद्ध धार्मिक आदोलनो के रूप मे प्रकट हुई। इन दोनो धर्मों न राष्ट्रहित क लिए तथा परम्परागत धार्मिक परिपाटियो को बदलने म सहयोग दिया तथा जनमत को एक स्वतन्त्र तथा व्यापक क्षेत्र दिया इससे जनमानस को नवीन जीवन और चेतना को मदद मिला।

इस समय म रचित ग्रथो म तथा व्यवहार म जन भाषा क प्रयोग म भी एकता को बल मिला तथा पाली भाषा की सादगी सरलता ने जन साधारण को प्रभावित किया। जाति-पाति के विभेद ने मनुष्य मात्र की समानता का प्रचार कर जन कल्याण तथा राजनीतिक एकता की भावना को विशेष रूप स प्रभावित किया। भारतीय इतिहास मे सवदा धम और समाज न प्रत्येक दशन व विचारप्रणाली को प्रभावित किया है। राजनीति का स्वतत्र अस्तित्व कभी नही रहा। इसी कारण राष्ट्रीय परिवतन तथा आदोलन सामाजिक शक्तियो के साथ मिलकर धम के क्षेत्र म ही आविर्भूत हुए। अत यह कहा जा सकता है कि इस युग का यह धार्मिक जाग्रति पूर्वावर्ती राष्ट्रीय भावना का ही एक अग रही जिसन राष्ट्र की सामाजिक व धार्मिक शक्तियो को जाग्रत किया।

इस समय मगध साम्राटो न अपन विजय अभियान म अनक जनपदो को जीता जिनम स बहुतो म गणतन्त्र शासन स्थापित था। वज्जिसघ, मल्ल शाक्य भग्ग मोरिया आदि जनपद गणराज्य थे तथा छोट छोटे राज्यो की अपक्षा अनक जातियो मे सम्मिलित विस्तृत राज्यों की स्थापना हुई। जाति का स्थान देश न लिया तथा जातीय सस्थाओ का स्थान, देशीय सस्थाओ तथा जनपदो न लिया था। बुद्ध न अपन सम्प्रदाय का नाम भिक्षुसघ रखा। उनके नियमों और काय विधि के अनुसार ही उस

रक्षा का भार क्षत्रिया पर ही होने के कारण साधारण जनता आक्रमण के समय चिन्तातुर न रहती थी।

जैन तथा बौद्ध काल

प्रारम्भिक बौद्ध ग्रन्थों में हम राजनैतिक इतिहास की पृष्ठभूमि अधिक स्पष्ट रूप से ज्ञात होती है। इस समय १६ महाजनपद प्रमुख थे—अंग मगध काशी कौशल, मल्ल कुरु पंचाल, गंधार कम्भोज आदि। इसके अतिरिक्त कुछ गणराज्यों का उल्लेख भी है—

कपिलवस्तु के शाक्य अल्लकप्प के बुली केसपुत्त के कलाम पावा के मल्ल कुशीनारा के मल्ल मिथिला के विदेह वैशाली के लिच्छिवी तथा नाय।

कपिलवस्तु के शाक्यों में गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। ये नेपाल की सीमा पर हिमालय की तराई में रहते थे। इनका गणराज्य काफी उन्नत था तथा अनेक विशाल नगरों का निर्माण हुआ था इस गणराज्य में ८० हजार कुटुम्ब रहते थे जिनमें लगभग ५ लाख मनुष्य थे शाक्यों की मंत्रणा सभा काफी विशद थी—इसका प्रधान राजा कहलाता था। सथागार में ५०० सदस्यों की सभा होती थी तथा मत के एक न होने पर शलाकाओं द्वारा बहुमत लिया जाता था।

वैशाली के लिच्छिवी क्षत्रिय थे तथा इनका शासन बड़ा सुव्यवस्थित था। इस गणराज्य में ७७०७ राजा तथा अनेक उपराजा सेनापति तथा भांडागारिक थे। लिच्छिवियों में मतैक्य सौहार्द्र, आदर, दृढ़ता की भावना के साथ राष्ट्रीय भावना भी प्रबल थी। महात्मा बुद्ध ने इनकी सहिष्णुता की काफी प्रशंसा की है।

प्रजातन्त्रतात्मकता न केवल गणराज्यों के राजनैतिक संगठनों में थी वरन आर्थिक सामाजिक एवं धार्मिक संगठनों में भी प्रचलित थी। जनता का बहुमत वांछनीय तथा अधिकतया मान्य था। इस काल के गणतन्त्रों का क्षेत्रफल बहुत ही कम था। बड़े और छोटे गणराज्यों की शासन व्यवस्था में भी कुछ भिन्नता थी। जैन तथा बौद्ध धर्म में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है। प्रत्येक राज्य व जनपद अपनी स्वतन्त्रता के मोह जाल में बंधा था तथा अपने को सार्वभौम राज्य का स्वरूप घोषित करना चाहता था इसलिये राष्ट्रीय भावना अधिक नहीं पनप पाती थी।

ये दोनों मत ब्राह्मण धर्म या वैदिक धर्म की प्रतिक्रियाएं हैं जिन्होंने कुछ अवांछनीय धार्मिक विधियों एवं प्रथाओं का घोर विरोध किया और कुछ विशिष्ट बातों पर बल दिया। जैन और बौद्ध धर्म दोनों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप साधारण

सम्प्रदाय के रूप मे उत्पन्न हुआ—धर्म की सकुचित सीमाओ मे कुछ विस्तार हुआ। उस समय जनता ब्राह्मणो का प्रभुता कर्मकाण्डो की निरर्थकता तथा नैतिकता एव तपस्या के सिद्धात से ऊब चुकी थी। उनके लिए बाह्य आडम्बर पूर्ण कृत्रिम यज्ञ तथा रहस्यवाद से ओतप्रोत उपनिषद समान रूप से जटिल एव दुर्बोध हो गए थे। वह सरल तथा सादे धर्म व आचार विचार के लिए तरस रही थी। इस आवश्यकता को जैन तथा बौद्ध धर्म ने पूरा किया। बौद्ध धर्म जैन धर्म से अपेक्षा अधिक क्रान्तिकारी था। बौद्ध धर्म ने वैदिक धर्म द्वारा प्रचलित वर्ण व्यवस्था के आचार-व्यवहार धर्म आदि की कटु आलोचना की तथा एक नया मार्ग भी जनता के सामने रखा। जैन बौद्ध धर्म के अलावा भी कई अन्य आदोलन प्रारम्भ हुए किन्तु वे बाद मे चलकर इन्ही मे ही विलीन हो गए। ईसा पूर्व छठी शताब्दी मे वैशाली कपिलवस्तु आदि राज्यो मे गणराज्य थे और प्रजातान्त्रिक वातावरण व्याप्त था। इसमे जन साधारण मे स्वतन्त्रता की प्रवृत्ति जाग्रत हुई जिसकी अभिव्यक्ति धार्मिक क्षेत्र मे जैन तथा बौद्ध धार्मिक आदोलनो के रूप मे प्रकट हुई। इन दोनो धर्मों ने राष्ट्रहित के लिए तथा परम्परागत धार्मिक परिपाटियो को बदलने मे सहयोग दिया तथा जनमत को एक स्वतन्त्र तथा व्यापक क्षेत्र दिया इससे जनमानस को नवीन जीवन और चेतना का सदेश मिला।

इस समय मे रचित ग्रथो मे तथा व्यवहार मे जन भाषा के प्रयोग से भी एकता को बल मिला तथा पाली भाषा की सादगी सरलता ने जन साधारण को प्रभावित किया। जाति-पाति के विभेद ने मनुष्य मात्र की समानता का प्रचार कर जन कल्याण तथा राजनीतिक एकता की भावना को विशेष रूप से प्रभावित किया। भारतीय इतिहास मे सदा धर्म और समाज ने प्रत्येक दर्शन व विचारप्रणाली को प्रभावित किया है। राजनीति का स्वतन्त्र अस्तित्व कभी नही रहा। इसी कारण राष्ट्रीय परिवर्तन तथा आन्दोलन सामाजिक शक्तियो के साथ मिलकर धर्म के क्षेत्र मे ही आविर्भूत हुए। अत यह कहा जा सकता है कि इस युग की यह धार्मिक जाग्रति पूर्ववर्ती राष्ट्रीय भावना का ही एक अग रही जिसने राष्ट्र की सामाजिक व धार्मिक शक्तियो को जाग्रत किया।

इस समय मगध साम्राज्य ने अपने विजय अभियान मे अनेक जनपदों को जीता जिनमे से बहुतो मे गणतन्त्र शासन स्थापित था। वज्जिसघ मल्ल शाक्य भर्ग मोरिया आदि जनपद गणराज्य थे तथा छोटे छोटे राष्ट्रो की अपेक्षा अनेक जातियो से सम्मिलित विस्तृत राज्यों की स्थापना हुई। जाति का स्थान देश ने लिया तथा जातीय सस्थाओ का स्थान देशीय सस्थाओ तथा जनपदो ने लिया था। बुद्ध ने अपने सम्प्रदाय का नाम भिक्षुसघ रखा। उनके नियमो और कार्य विधि के अनुसार ही उस

समय की राजनीतिक अवस्था रही होगी। इस युग म राजा, स्वामी नहीं प्रजा का पालक माना जाता था। राजा वंशानुक्रम से होते थ किन्तु जनता के विद्रोह का भय बौद्ध रात क राजा को सदा लगा रहता था और पदच्युत होने के डर स सदा सन्मार्ग पर चलते थ।

बौद्ध धम न समाज म जाति-पाति ऊंच-नीच के भावों को समाप्त कर सामाजिक और सांस्कृतिक एकता को दृढ करने का प्रयत्न किया तथा लोकभाषा क प्रयोग स एकता की ओर भी दृढतर किया। इससे एक लाभ तो यह अवश्य हुआ कि श्रोता तथा अनुयायियों की संख्या म वृद्धि हुई। इसकी सरलता तथा सादगी न भारत की जनता क मन म यह विश्वास उत्पन्न कर दिया कि यही इस देश का धम है एव भारतीय राष्ट्र क विकास म भी योग दिया तथा भारत की राजनतिक एकता को भी दृढ किया। इन दोनों धर्मों न अहिंसा पर विशेष बल दिया जिससे यह हानि भी हुई कि भारतीय राष्ट्र रक्तपात और युद्ध स सकुचाने लगा। वीर योद्धाओं की तलवारों म जंग लगने लगा तथा जनता की प्रकृति शात बनने लगी। युद्ध की भयानक घटनाओं क वर्णन ने भारतीयों को भयभीत कर दिया और वे युद्ध का नया राजनीति की जिंदगी स दूर हो गये।[†]

इस काल की राष्ट्रीय भावना वदिक काल की अपेक्षा अधिक विस्तृत थी और इसकी अभिव्यक्ति धार्मिक एव सामाजिक आन्दोलनों क रूप म हुई।

८ मौर्य काल

मौर्यकाल की राजनीतिक अवस्था के अध्ययन के पूर्व हम उसक पूर्वकाल का विहंगावलोकन करना आवश्यक समझते है। जैन और बौद्ध ग्रन्थों द्वारा हम भारत क राजनीतिक इतिहास की पर्याप्त सामग्री मिलती है जिससे यह स्पष्ट होता है कि उस युग म समस्त उत्तरी भारत छोटे बडे राज्यों तथा अनेक जनपदों म विभक्त था। इस काल म मगध का उत्कर्ष होना महत्वपूर्ण तथ्य है। इसके अतिरिक्त विदेशियों का आक्रमण प्रारम्भ हो गया था। ईरान क नरेशों न हिन्दुकुश पर्वत गंधार तथा पंजाब क कुछ क्षेत्रों म आक्रमण किया और अपने अन्तर्गत सम्मिलित कर लिया। इसक पश्चात यूनान क शासक सिकन्दर ने भी भारत पर आक्रमण किया—उसकी सैन्य शक्ति तथा युद्ध कला बहुत विकसित थी और उसन छोटे-छोटे भारतीय राजाओं को पराजित कर अपने राज्य म मिला लिया। भारतीय कला और संस्कृति पर ईरान तथा यूनान का प्रभाव पड़ा।

---

† प्रो बी एन लूनिया—भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास। प्रथम संस्करण पृष्ठ १४६

भारत के राजनीतिक इतिहास में मौर्य वंश से एक नए युग का श्रीगणेश होता है। इस वंश में चन्द्रगुप्त और महाराजा अशोक विख्यात हैं जिनके शासनकाल में समस्त भारत सर्वप्रथम एक छत्र शासन के अन्तर्गत एक सूत्र में संगठित किया गया और छोटे-छोटे राज्य सम्मिलित हो गये। इस राजनीतिक एकता से सांस्कृतिक और ऐतिहासिक एकता तथा उसकी उत्तरोत्तर प्रगति भी हुई। मौर्यों में चन्द्रगुप्त और अशोक प्रमुख हैं। चन्द्रगुप्त ने कुशल कूटनीतिज्ञ चाणक्य की सहायता द्वारा विदेशी आक्रमणकारियों से देश की रक्षा की तथा विभिन्न राज्यों को एक सूत्र में पिरोकर भारत भूमि के प्रति अपना निष्ठा और प्रेम प्रकट किया। राज्य के कार्य क्षेत्र में भी विस्तार हुआ। राज्य का उद्देश्य आंतरिक उपद्रवों तथा बाह्य आक्रमणों से देश की रक्षा करने के साथ साथ सर्वतोमुखी उन्नति समझा जाने लगा। इस काल में सर्वत्र शान्ति सुव्यवस्था और समृद्धि थी तथा विदेशियों की दृष्टि में भारत की प्रतिष्ठा बढ़ गई।

मौर्यकाल में भारतीय कला तथा संस्कृति का महान विकास हुआ। साम्राज्य का विकास किया गया तथा भाषा, साहित्य, कला के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता मिली। राष्ट्रीयता की भावना देश को विदेशी शत्रुओं से मुक्त कराने से ही प्रकट नहीं हुई वरन जन मानस का सम्पूर्ण जीवन ही इसकी परिधि में आया। चन्द्रगुप्त मौर्य के विशाल व्यक्तित्व ने समस्त भारत को एक राजनीतिक सूत्र में बाँधा तथा नए राष्ट्र का निर्माण भी किया। उसने उत्तर पश्चिम के अतिरिक्त दक्षिण में भी अपनी विजय पताका फहराई। इस समय देश में मातृभूमि के प्रेम की एक लहर छा गई। स्वयं अशोक ने राष्ट्रीय आन्दोलन में राजनीतिक एकता लाने में योग दिया। अशोक के अहिंसा और प्रेम के सन्देश ने विदेशों में भारत की प्रतिष्ठा उन्नत कराई।

मौर्यकाल प्रधान रूप में विचारों की स्वतन्त्रता का युग था तथा इसी कारण अनेक बौद्धिक क्रियाओं का प्रबल उद्वेग हुआ। इसी काल में हम देखते हैं कि सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में ऐसी प्रतिभाएं सामने आईं जिन्होंने भारतीय जीवन को सुन्दर तथा गौरवमय बनाया। मौर्यकाल में नैतिक धार्मिक, शासकीय कलात्मक साहित्यिक व सांस्कृतिक सफलताओं के पीछे निस्सन्देह राष्ट्रीयता की भावना की महत्ता थी। भारत के प्राचीन इतिहास में यह युग ही ऐसा था जिसमें राष्ट्र के प्रति भक्ति तथा प्रेम सम्पादन करने का गुण परिलक्षित हुआ।

५ गुप्तकाल

अशोक के उपरान्त वह विशाल साम्राज्य जिसके लिए उसने चतुर्दश शिलालेख में लिखा था महान् वे हि विजित अर्थात् मेरा साम्राज्य सुविस्तृत है। अपने

मध्याह्न के सूर्य के पश्चात् पतन की ओर जाने लगा। मौर्यों के अपात जिस भाग । एक प्रचंड राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय एकता प्राप्त की थी उसी भारत में अशोक के पश्चात् विकेन्द्रीकरण और विनाश की प्रवृत्ति प्रधान हो गई। केन्द्रिय शक्ति का प्रभाव कम हो जाने पर चारों ओर अराजकता और अव्यवस्था फैलने लगी। देश की विशृंखल राजनीतिक स्थिति से लाभ उठाकर उत्तर पश्चिमी सीमा पर यवन, शक, कुषाण, हूण आदि विदेशियों के आक्रमण हुए तथा देश में अशांति फैल गई। इन आक्रमणों का प्रतिरोध करने में कुछ स्वाभिमानी तथा राष्ट्रप्रेमी गणराज्य अग्रसर रहे। इनमें यौधेय प्रमुख थे जिन्होंने गर्वीली यवनों और शकों के विरोध के कारण विदेशी सत्ता का उन्मूलन कर अपनी विजय पताका फहराई। इनके साथ ही कुणिन्द तथा आर्जुनायनों में मालव आदि के गणराज्य, जो राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर स्वाधीनता संग्राम छेड़ । अपने विजय समारोह पर यौधेयों ने अपने सिक्कों पर देश की राष्ट्रीय लिपि ब्राह्मी में नव निर्माण तथा सिक्कों पर भारतीय देवी-देवताओं को अंकित किया। मालवों के एक वीर योद्धाओं ने सम्मुख यूनानियों से संघर्ष किया और अपना राज्य पंजाब के पश्चात् अजमेर तक फैलाया। मराठ प्रदेश पर स्थापित किया परन्तु इसका चिरस्थायी प्रभाव नहीं पड़ सका।

गुप्तों के राज्यारोहण के समय बुन्देलखण्ड तथा मध्यप्रान्त में वाकाटक नरेश राज्य कर रहे थे। उत्तरी भारत में कोई ऐसी शक्ति नहीं थी जो भारतीय स्वतन्त्रता को सुरक्षित रख सके। कुषाण सम्राटों के पश्चात् देश में राष्ट्रीयता की भावना का उदय तथा वृद्धि हुई जो कई रूपों में प्रकट हुई। कुछ तो विदेशी सत्ताओं के शासन-कालीन राजनीतिक आधिपत्य की प्रतिक्रिया स्वरूप और कुछ धार्मिक क्षेत्र में बौद्ध धर्म के प्रतिरोध स्वरूप हुए। इस आन्दोलन की विशेषता यह थी कि इसमें विदेशी वस्तुओं के प्रति विरोध तथा बहिष्कार की भावना न हो देश की कला साहित्य और उद्योग को विकसित करने की लालसा थी। आर्य संस्कृति का पुनरुद्धार करने का यह राष्ट्र व्यापी प्रयास था। तीसरी शताब्दी के प्रारंभ में नागराजा इस राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रथम नेता हुए। संस्कृत भाषा, देवनागरी लिपि तथा वैदिक विधियों के पुनरुद्धार तथा प्रसार में इनका विशेष ध्यान रहा। गुप्तों के आने के पूर्व इस देश में वाकाटकों की छत्रछाया में साधारण जनता को प्रबल प्रोत्साहन मिला तथा समस्त देश में नवीन जीवन का संचार हुआ।

गुप्तकाल भारतीय इतिहास में स्वर्णकाल के नाम से विख्यात है। इस समय गुप्तों ने भारत जननी की दासता की शृंखलाओं को तोड़कर भारतीय स्वाधीनता तथा संस्कृति की रक्षा का प्राणपण से प्रयत्न किया। यह काल हिन्दू नवोत्थान तथा जागरण का युग था। इसमें राष्ट्रीय अन्तरात्मा को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला और

इसकी अभिव्यक्ति राष्ट्र के जीवन के राजनैतिक, सामाजिक साहित्यिक कलात्मक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में हुई। * क्षत्रप, कुषाण तथा यूनानी आक्रमकों की राजनैतिक प्रभुता नष्ट कर गुप्तों ने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता दृढतापूर्वक स्थापित की। राष्ट्र प्रेम की प्रवृत्ति का यह महत्वपूर्ण अंग था।

समुद्रगुप्त ने उत्तरी भारत के बहुत से स्वतन्त्र राज्यों को जीतकर अपने राज्य में मिलाया तथा दक्षिण में चोल मण्डल को जीतकर, कांजीवरम के राजा विष्णुगुप्त तथा महेन्द्र एवं हस्तिवमन आदि राजाओं को स्वयं को अधिपति मानने को बाध्य किया। इस प्रकार कामरूप, नेपाल कुमाऊं तथा समतट—(दक्षिण-पूर्वी बंगाल) के राज्य में सम्मिलित कर लिए गए। हूणों ने भारत पर आक्रमण किये परन्तु गुप्त सम्राट हूणों की बाढ़ रोकने में समर्थ हुआ।

गुप्तकाल का राजनैतिक-सांस्कृतिक जीवन भी मौर्यकाल की भांति राष्ट्रीय भावनाओं से परिपूर्ण था। राजनैतिक एकता में भी राष्ट्रीयता का रूप स्पष्ट था तथा सम्राटों के हृदय में जन कल्याण व जन सेवा की उदात्त भावनाएं व्याप्त थी।

गुप्तकाल में राजतन्त्र और प्रजातन्त्र दोनों प्रकार के शासन थे। प्रजातन्त्र में एक केन्द्रीय सभा होती थी जो शासन का कार्य करती थी। परन्तु राजतन्त्र भी अधिक थे। प्रजा वत्सलता और धर्मपालन राजा का विशिष्ट धर्म माना जाता था। इस काल के राजा निपुण सेनानी और योद्धा ही नहीं थे वरन कला और साहित्य के प्रेमी और संरक्षक भी थे। ग्रामों में पंचायतों तथा नगरों में सभाओं का प्रचार था तथा राज्य के शासन के लिए मन्त्रिमण्डल की सहायता ली जाती थी। जनपदों की आंतरिक स्वतन्त्रता सुरक्षित थी।

मौर्य सम्राटों की अपेक्षा गुप्त सम्राटों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये आर्य-सभ्यता और संस्कृति के उन्नायक बनकर राष्ट्रीय भावना को चरम उत्कर्ष पर पहुंचाने में सतत् प्रयत्नशील रहे। यह युग देश प्रेम की भावनाओं का अच्छी प्रकार अभिव्यक्त करने वाला था।

६ गुप्तोत्तर कालीन भारत

गुप्त साम्राज्य के क्षीण हो जाने पर उत्तरी भारत में पुनः राजनैतिक उथल पुथल हुई तथा देश में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देने लगी जिसके फलस्वरूप छोटे-छोटे राज्य प्रबल होने लगे तथा उनके पारस्परिक द्वेष एवं संघर्षों से सर्वत्र

* प्रो बी एन लूनिया—भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास—पृष्ठ-२०३

अशान्ति छा गई। इनमें वल्लभी के मैत्रक, मालव तथा मौखरी प्रमुख थे जो अपनी राजनैतिक प्रभुता अन्य नरेशों पर जमाने का प्रयत्न करते थे। स्वर्ग और इनमें समुद्रगुप्त के समय से ही हूणों के आक्रमण निरन्तर होते आ रहे थे। उस समय यह बाढ़ रोक दी गई थी परन्तु गुप्त काल के समाप्त होते ही पुनः आक्रमण प्रारम्भ हुए। हूणों के आक्रमणों से भारत की राजनैतिक एकता को आघात पहुँचा। इनमें से पहले से ही छोटे-छोटे राज्य हो गए थे परन्तु हूणों के आक्रमणों से अब वे राज्य भी छिन्न भिन्न हो गए। देश की लोकप्रिय आत्मरक्षा भावनाओं को भी बड़ी ठेस पहुँचा। हूणों के आक्रमणों को रोकने के लिए कुछ स्वाभिमानी राजा आगे बढ़े और राष्ट्र की स्वतंत्रता को कायम रखने के लिये प्राणों की बाजी लगाकर वहाँ डटे संगठित भी हुए। मालवा के सामन्त यशोधर्मन ने इस आक्रमण को रोका और वह उत्तर भारत का एक छत्र सम्राट बन गया। गुप्तों ने ब्राह्मण धर्म तथा बौद्ध धर्म दोनों को प्रश्रय दिया किन्तु उनके पश्चात बौद्ध धर्म का प्रसार कम होने लगा।

लगभग ६०४ ई० में हूणों ने उत्तरी पूर्वी सीमा पर आक्रमण किया तथा वर्द्धन वंश के प्रमुख सम्राटों ने आक्रमणों का सामना कर भारत भूमि को विदेशियों से रक्षा का वीरतापूर्ण कार्य किया। ६०६ ई० में हर्ष ने राज्य सिंहासन पर आरूढ़ होकर रण अभियान किया तथा कम समय में ही मालवा, गुजरात, सौराष्ट्र, तथा हिमालय पर्वत से नर्मदा तक (नेपाल सहित) गंगा की सम्पूर्ण तलहटी पर आधिपत्य किया। † कुछ इतिहासकार उसका राज्य विस्तार और भी अधिक मानते हैं जिसमें आसाम, बंगाल आदि भी सम्मिलित है। किन्तु यह तो अवश्य स्वीकार किया जाएगा कि हर्ष ने उत्तरी भारत को एक केन्द्रीय शक्ति में ग्रथित कर राजनीतिक एकता की स्थापना की तथा देश में पुनः राष्ट्रीय जीवन की भावना को पल्लवित तथा पुष्पित किया। इस समय बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय की ख्याति अधिक हो गई थी। हर्ष स्वयं प्रयाग में कुम्भ के अवसर पर समस्त धर्मावलम्बियों साधु संन्यासियों श्रमणों आदि को आमन्त्रित कर मुक्त हस्त से दान दिया करता था।

शासन प्रबन्ध में इस समय राजा का विशेष महत्व था। हर्ष को परमभट्टारक परमेश्वर परमदेवता महाराजाधिराज आदि उपाधियों से विभूषित किया गया था।

साम्राज्य की विशालता के कारण साम्राज्य में अनेक शासन केन्द्रों का निर्माण किया गया। हर्ष ने प्रजा की सुख समृद्धि के लिए बड़ी तत्परता से काम किया तथा शिक्षा साहित्य कला धर्म सभी दृष्टि से यह युग की प्रगति और नवजीवन में

† स्मिथ अर्ली हिस्ट्री आफ इण्डिया (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ३५४।

पूण था। गुप्त साम्राज्यो के पश्चात कई युगो के बीत जाने पर अब पुन राजनतिक एकता लोक कल्याण की भावना द्वारा देश की राष्ट्रीय प्रगति को स्थायी रखने के सफल प्रयत्न हुए।

वास्तव म गुप्त सम्राटो तक ही भारत म एक छत्र राज्य स्थापित रहा और उनका शासन समस्त राज्य के लिए एकसा रहा। उनके शासन प्रबध को ही प्राचीन भारत का अंतिम सुव्यवस्थित सुसगठित, मौलिक एव अनुकरणीय कहा जा सकता है। इस समय से १२ वी सदी तक राजतत्र इसी प्रकार चला किन्तु वह सीमित और जातीय होता गया। बहुधा प्राकृतिक सीमाओ के अनुसार तथा जातीय सीमाओ के आधार पर सम्पूण उत्तर भारत म अनेक छोटे-छोटे राज्य स्थापित हो गय थे किन्तु शासक गण अपने को परमभट्टारक महाराजाधिराज आदि लिखते थे जो उनकी झूठी आत्मतुष्टि का प्रतिफल था। † किन्तु इस के काल म तथा उसके पश्चात राष्ट्रीय भावना के अन्दर सास्कृतिक तथा धार्मिक प्रगति की भावना छिपी हुई थी। प्रत्येक राज्य का सीमाए ही अधिकतर राष्ट्र की सीमा होती थी। भारतीय शासको म एक छत्र राजनीतिक शासन की आकाक्षा होते हुए भी भारतीय राष्ट्रीयता सांस्कृतिक धार्मिक आदि आतरिक एकता को लेकर ही चलती रही है। साहित्य भाषा सामाजिक अचार विचार धार्मिक विश्वासो म जन मानस की मौलिक एकता दृष्टिगोचर होती थी और यही राष्ट्रीयता की कसौटी तथा मापदण्ड का मूलाधार है।

---

† रतिभानुसिंह नाहर—प्राचीन भारत का राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ६३१

तृतीय अध्याय

चारणकाल मे राष्ट्रीय भावना का स्वरूप

हि दी साहित्य मे चारण काव्य

हिन्दी साहित्य म वीर काव्य अथवा चारण काव्य क अध्ययन क पूव उस काल का राजनीतिक पष्ठभूमि का चित्रण आवश्यक है क्योकि यह वीर-काव्य क निर्माण म प्रेरणाप्रद रहा है। इस युग की राष्टीय भावना राजनीति क रूप म तो इतनी नही बलिक धार्मिक एव सास्कृतिक जागरण के रूप म जन मानस म अधिक व्याप्त हुई।

हिन्दी साहित्य के वीर गाथा-काल के पूव का युग अपभ्रश साहित्य क विकास का युग है जिसम जनक प्रतिभावान बौद्ध तथा जन सिद्ध और योगियो का उदभव मिलता है जिन्होने पौराणिक तथा धार्मिक साहित्य एव चरित्र ग्रथो का निर्माण किया। राजनीतिक दष्टि स यह युग सगठित शक्ति का नहीं वरन् विश्रखलता का है। उस म कोई ऐसी केन्द्रीय शक्ति नही थी जो देश मे दूर-दूर तक बिखर हुए छोट छोटे राज्यो को एक सूत्र म बाधन म समथ होता। ८ वी तथा १० वी सदी म भारतवष म बहुत से छोटे बड राज्य थ जिनम उत्तर के कन्नौज बगाल काश्मीर चदल राजपूत चौहान तथा दक्षिण के चालुक्य चोल आदि राज्यो की शक्ति तथा शौय का विवरण इतिहास म मिलता है। तोमर राठौर चौहान परमार चन्देला म पराक्रम और प्रभुत्व था किन्तु उसका उपयोग सगठित शक्ति के रूप म न होकर पारस्परिक ईर्ष्या द्वेष म अधिक होता था। दश पर समय समय पर विदेशी शत्रुओ क आक्रमण होत रह कि तु इन सामतो और राजाओं ने सम्मिलित होकर एक मड क नीचे एकत्रित होकर शत्रु स देश की रक्षा का प्रण नही लिया तथा अपने सीमित छोटे-छोटे राज्यो की रक्षा क मोह म हो पड़े रहे तथा देश-व्यापी राष्ट्रीय चेतना न वह रूप प्राप्त नहा किया जो गुप्तकाल म देखने को मिलता है। इस समय वण व्यवस्था और भी जटिल होती गइ। राष्ट्र सरक्षण का दायित्व तथा विदेशी

आक्रमका व शत्रुओ से लोहा लेने का भार केवल क्षत्रियो पर ही रह गया था। वर्ण व्यवस्था की घोर विकृति के कारण प्रत्येक वर्ण मे सकडो भेदोपभेद बनते जा रहे थे। ब्राह्मण और क्षत्रियों म बहुत सी उप-जातियाँ बन गई जो ऊंच-नीच तथा पारस्परिक द्वेष के कारण युद्ध का रूप ले लेती थी। ऐसी परिस्थिति मे शूद्र और क्षत्रिय एक पक्ति मे खडे होकर देश की रक्षा के लिए कसे लड सकते थे।

दसवी सदी के लगभग भारतवष पर मुसलमानो ने आक्रमण किए। महमूद गजनवी के भारी आक्रमण के पश्चात मुहम्मद गोरी का आक्रमण हुआ जिसमे दिल्ली, कनौज, अजमेर के राठौर तथा चौहान राजाओ ने वीरता पूवक सामना किया किन्तु सामूहिक राष्ट्रीय जीवन तथा एकता के अभाव मे देश की रक्षा नहीं हो सकी और उत्तरी भारत का बहुत सा भाग विदेशियो के अधिकार मे हो गया।

रामानुजाचाय ने दक्षिण भारत मे धार्मिक आदोलन चलाया। राष्ट्रीय चेतना, राजनीति में जब स्थान न पा सकी तो सांस्कृतिक चेतना की ओर उसे माग मिला। वीर गाथा काल के २५०–३०० वष पूव के समय को राहुल सास्कृत्यायन ने 'सिद्ध सामत काव्य कहा है। इस समय का सिद्ध साहित्य विरक्ति, नराश्य और महासुख-वाद की रहस्यात्मक भावना से पूरित है। भारतवष की राष्ट्रीय चेतना की झलक इन दूहो मे नहीं मिलेगी – कुछ कवियों ने सत्साहित्य की रचना अवश्य की। स्वयभू ने (७६० ई) म रामायण लिखी। पुष्पदत यौदेय क्षेत्र के थे और दक्षिण के एक जन *राजा के यहाँ आश्रय लिया।*

विदेशी आक्रमणकारियो के कारण विशेषत मुसलमानो के २०० वष पूव, उत्तरभारत के साहित्य तथा जन मानस की प्रवत्ति किसी विशेष दिशा की ओर निर्दिष्ट नही हो सकी। मुसलमानो के आक्रमण के पश्चात हम हिंदी साहित्य की प्रवृत्ति एक विशेष धारा मे बहत हुए पाते हैं। वर्षों के इन सतत आक्रमणो न उत्तर पश्चिमी भारत की जनता तथा राजाओ को सतक और जागरूक बना दिया था। राजपूत राजाओ न व्यक्तिगत रूप म विदेशियो से सघष अवश्य किया किन्तु सामूहिक रूप से मिलकर आक्रमण नही हो सका जिसके फलस्वरूप शत्रु की शक्ति नष्ट नहीं हो पाई। इसी युग के सघष काल म चारणो ने अपने देश का साथ नही छोडा– अपनी सीमित शक्ति प्रतिभा और लेखनी के बल से राजाओ तथा युद्धोन्मत्त शूरो को रणक्षेत्र में जाकर भी प्रोत्साहित किया।

अब हम चारणो की उत्पत्ति तथा उनके महत्वपूर्ण काय पर किंचित प्रकाश डालना आवश्यक समझते हैं। राजस्थान मे अभी भी बहुत सी जातिया हैं जो चारण

या भाट कहलाने मे अपना गौरव समझती हैं। हिन्दी साहित्य मे वीर-गाथा-काल मे इनका अपना एक विशिष्ट स्थान है जिसकी चर्चा आगे की जा रही है।

चारण काव्य की उत्पत्ति व विकास

चारण शब्द की उत्पत्ति प्राचीन काल म लगभग (सन् ६४५ ई तक) मे हुई है। पुराण, श्रीमद्भागवत रामायण महाभारत की भांति "चारण' भी प्राचीन शब्द है। यह सस्कृत का शब्द है चार + अन = चारण, जिसका अर्थ चलाना व आगे बढाना से है। आगे बढाने वाले मे चारण शब्द की सार्थकता प्रकट होती है। "चारण चारयति कीर्ति के अनुसार कीर्ति चलाने वाला ही चारण है। वैदिक काल म चारण कीर्ति का प्रचार करने म ही अपने कर्तव्य की इति श्री समझते थे—चाहे वह कीर्ति देवताओ की हो या राजाओ एव महात्माओ की हो। स्वर्गीय ठाकुर किशोर सिंह जी स्टेट हिस्टोरियन पटियाला के अनुसार चारय तीति चारणा' अर्थात् जो देश का सचालन-कार्य, नेतृत्व करे एव देश भक्ति को प्रोत्साहन दे वही चारण है। †

हिन्दी मे चारण शब्द अपने सस्कृत अर्थ को छोड़कर आया है। श्री मोहनलाल जिज्ञासु ‡ के अनुसार चारण शब्द च + आरण से बना है जिसका अर्थ वन मे चराने से लिया है। इस प्रकार चारण शब्द से वन म चराने वाले एक सन्यासी का बोध होता है। यहाँ चराना शब्द विचारणीय है—चाराना चारना सस्कृत शब्द चारण का एक पर्याय है। चारण प्राचीन काल म सन्यासियो की भाँति एक स्थान से दूसरे स्थान विचरण करते हुए अपनी मजुल वाणी से देवताओं की स्तुति व जनता को उपदेश दिया करते थे। यहा चरान शब्द से देवताओ की स्तुति या कीर्ति को अन्य लोगो मे प्रचार करने से था।

चारण पुल्लिग शब्द है जिसका स्त्रीलिंग चारणी है। चारा अथवा चारिणी शब्द की उत्पत्ति सस्कृत शब्द चारिन से हुई प्रतीत होती है जिसका अर्थ आचरण करने वाला। यह भी चारण जाति के एक विशिष्ट गुण की ओर सकेत करता है। इसीलिए स्तुति पाठ करना और आचरण करना किसी व्यक्ति की महानता के सूचक गुण है।

चारणों की प्रधानता कब से हुई ? इस सम्बन्ध में कोई सुनिश्चित प्रमाण नहीं मिलता है। अभी तक कोई शिलालेख सस्कृत म लिखित ताम्र-पत्र आदि नही

---

† डा उदयनारायण तिवारी— वीरकाव्य पृष्ठ ३६

‡ मोहनलाल जिज्ञासु एम ए का लेख हिन्दी अनुशीलन वर्ष ४, अंक ३ सवत् २००८

मिला जिसमें किसी चारण या भाट के नाम या भूमिदान का उल्लेख हो। 'सुभाषित हरावली' नामक एक श्लोकों के संग्रह में मुरारि कवि के नाम से यह श्लोक दिया गया है—†

> चर्चाभिश्चारणानां क्षिति रमण ! परां प्राप्य संमोदलीला
> मा कीर्त्तीः सौविदल्लाः कुरु महदनादरात् वाणीकृतान् विशालान् ।
> गीतं ख्यातं न नाम्ना किमपि रघुपतेरद्य यावत्प्रसादा-
> द्वाल्मीकेरेव धात्री धवलयति यशो मुद्रया रामभद्र ॥

इस श्लोक का भाव इस प्रकार है — कोई राजा चारणों की कविता से प्रसन्न होकर संस्कृत कवियों का अनादर करने लगा। कवि उसे संबोधित करके कहता है— हे महिपाल ! चारणों की चर्चाओं से बड़ा आनंद पाकर कवियों की रचनाओं का अनादर मत कीजिए क्योंकि वे कीर्ति रूपी नायिका के रखवाले हैं या उसे लाकर राजाओं से मिलाने वाले हैं। देखिए रामचन्द्र का एक गीति या ख्यात नाम को भी नहीं है वाल्मीकि की कृपा से आज तक राम अपने यश की छाप से पृथ्वी को अलंकृत कर रहे हैं। इस श्लोक में चारण, गीत और ख्यात शब्द विशेष सांकेतिक या पारिभाषिक अर्थ में लिए गए हैं। ‡

चारण का अर्थ देवयोनी का सिद्ध, गन्धर्व का सा यश गायक नहीं हो सकता क्योंकि उनका कवियों से मुकाबला कैसा ? 'गीत' और 'ख्यात' भी साधारण यश के काव्य नहीं हो सकते—पारिभाषिक गीतों और ख्यातों से ही अभिप्राय है।

मुरारि कवि प्रसिद्ध 'अनघ राघव' नाटक का रचयिता है। उसका पिता भट्ट श्री वर्धमान माता तंतुमती थी तथा उसका उपनाम बाल्मीकि था। उसका समय ८ वीं या ९ वीं शताब्दि ईसवी है। यदि यह श्लोक उसी मुरारी का है तो उस समय भी चारणों के गीत और ख्यात प्रचलित थे और उनकी संस्कृत के कवियों से प्रतिद्वंद्विता होने लगी थी। मगर इस श्लोक को मुरारी का मानने में संदेह है जिसके कारण यह है कि प्राचीन काल में चारणों के गीत और ख्यातों का प्रचलित होना कठिन है और दूसरे यह कि सुभाषितावलियों में श्लोकों के साथ जो अन्य कवियों के नाम दिए गए हैं वे कहीं कहीं प्रामाणित नहीं होते।

सन् १९१३ में बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी की ओर से महामहोपाध्याय प० हरप्रसाद जी शास्त्री ने राजपूताने में की गई खोज एवं यात्राओं का विवरण

† पीटर्सन दूसरी रिपोर्ट, पृष्ठ ५७–६४
‡ डा उदयनारायण तिवारी—वीर काव्य, पृष्ठ ४

प्रकाशित कराया है जिसमे चारणो के सम्बन्ध मे कुछ सामग्री उपलब्ध हुई। इस विवरण के अनुसार चारण अपनी उत्पत्ति सिद्धा एवं रामायण और महाभारत के चारणो से बतलाते हैं परन्तु यह पूर्णत सत्य नही प्रतीत होता है।

चारणो का आदि पुरुष "जक्त" बताया जाता है। "जक्त" के वंशज आदि चारण कहलाते हैं। † जक्त के चार पुत्र और एक पुत्री थी। पुत्रो के नाम नन्दू, नरहर चोरर और तुम्वेत तथा पुत्री का नाम गौरी था। गौरी बाद मे देवी रूप मे प्रसिद्ध हुई। इनसे चारणो के २८ कुलो की उत्पत्ति हुई। गौरी तथा चोरर ने एक बार अपनी कला से गिरनार के राजा को प्रसन्न किया जिसके फलस्वरूप राजा ने चारणो को उच्च स्थान दिया। चारणो के अन्य कुलो की उत्पत्ति ब्राह्मणो तथा राजपूतो से हुई। अब तक चारणो के १२० कुलो का पता चलता है। प्राचीन काल मे चारण जाति भारतवर्ष के प्राय सभी प्रान्तो मे निवास करती थी। बहुत समय से ये लोग अधिकतर राजपूताना मालवा गुजरात, काठियावाड और कच्छ मे निवास करते आ रहे हैं। लगभग आधे कुलो के चारण मारवाड मे तथा शेष कच्छ और काठियावाड मे रहते हैं। कच्छ के चारण कछेला कहलाते हैं अब उन्होने राजाओ का यशोगान छोडकर व्यापार करना प्रारम्भ कर दिया है।

सौराष्ट्र मे भी चारणो की उत्पत्ति का पता ठीक ठीक नही चलता किन्तु यह तो निश्चित है कि अन्हिलपतन के सोलंकी राजा सिद्धराज जयसिंह के राज्य काल मे चारण वर्तमान थे। जयसिंह का समय १२ वी शताब्दी है। पता चलता है कि उस समय चारण बड़ा के कुम्हारों की पुत्रियो के विवाह के अवसर पर दान लिया करते थे। इनकी माग इतना अधिक होती था कि कुम्हारो ने अपनी पुत्रियो का विवाह करना ही बन्द कर दिया। इनकी सूचना जब राजा को मिली तो उन्होने आज्ञा निकाल दी कि चारण केवल राजपूतो से ही दान ले सकते हैं।

राजस्थानी साहित्य मे चारणो की चर्चा सर्व प्रथम अचलदास खिच्ची की कहानी मे आई है § जिसकी मुख्य पात्री जिमा नामक चारणी है। इसके अतिरिक्त 'ढोला और 'मारवणी की कहानी मे भी चारणो की चर्चा है। मंडावर राज्य के संस्थापक चुडा के समय मे ही राजस्थान मे चारणों का प्रभाव बढा। चुडा के पश्चात का सबसे बडा सहायक अला चारण था। गरा की कविता के कुछ छन्द राजस्थान में इस समय भी प्रचलित हैं किन्तु चारणो द्वारा निर्मित सब

† कविराज मुरारिदान जोधपुर—मशिल चारण ख्याति।

§ डा० उदयनारायण तिवारी—वीर काव्य पृष्ठ ४३

प्रथम ग्रंथ १५वी सदी का "जोधायन" है। यह जोधपुर के महाराजा जोधा के संबंध मे है।

चारण शक्ति के उपासक होते है—भगवती कुल देवी है। आपस मे वे 'जै माता जी की' कहकर नमस्कार करते हैं। भगवती ने एक अवतार, चारण-कुल मे लिया था जिसे चारण उन्हे बुआ जी या बाई जी कहते हैं। * इनकी कुलदेवी करणी है जो किसी सांयात्रिक की तूफान से रक्षा करके गीले कपडो से ही बीकानेर के पास 'देशनोक' ग्राम के सुप्रसिद्ध मंदिर मे आई। वहां का पानी अत्यंत खारा कहा जाता है। करणी जी के मंदिर की चारणो और राजपूतो मे बहुत मान्यता है इस मंदिर मे चूहे अमर हैं। कहते हैं कि सारा मंदिर-प्रतिमा आदि सभी चूहो से ढके रहते हैं। वे लोगो के सिर, टांगो पर भी चढ जाते हैं—उन्हे बाजरा खिलाया जाता है। इन चूहो को मारना तो दूर, झिडकना भी पाप है। कई चारण लाठियो से बिल्लियो से उन्हे बचाते हैं। एक भी चूहा मरने पर सोने का चूहा चढाना पडता है।

चारणों की अन्य जातियां

चारणो के अलावा अन्य भी जातियां हैं जिन्होने राजस्थान तथा अन्य प्रान्तो की बोलियो मे काव्य सृजन किया।

ढाढी—साधारण बोलचाल की भाषा मे काव्य रचना के लिए प्रसिद्ध हैं। मारवाड के प्रसिद्ध राठौर राव वीरम के पराक्रमो का वर्णन बहादुर ढाढी ने 'वीर-मायण' नामक काव्यग्रन्थ मे किया जो आल्हा खंड की भांति जनप्रिय काव्य हैं। ये लोग अवसर रबाब या सारंगी पर लोकगीत गाते है। उच्च श्रेणी की अपेक्षा निम्न श्रेणी की जनता मे अभी तक इनकी कविताओ का आदर हैं। उच्च वर्ण से तिरस्कृत होने पर अनेक ढाढियो ने इस्लाम धर्म अपना लिया किन्तु अभी भी इनके घर भैरव तथा योगमाया की पूजा होती है।

ढुलि—जयपुर, अलवर आदि स्थानो मे इनकी संख्या अधिक हैं। ये लोग चारणो से अपना संबंध स्थापित करते है परन्तु चारण इसे स्वीकार नही करते। ढुलियो द्वारा लिखित साहित्य भी सर्व साधारण जनता की वस्तु है। ये सरल भाषा मे ही काव्य रचना करते हैं, सारंगी तथा ढोलक बजाकर नाचते गाते हैं तथा

---

* चारणों और भाटो का झगडा का लेख—पं० चंद्रधर शर्मा गुलेरी (नागरी प्रचारिणी पत्रिका—भाग १ संवत् १९७७)

इहे स्त्रियाँ भी सहयोग देती हैं। 'कुल-कुलमडन' के अनुसार ढुलि प्राचीन मागधो के ही वशज हैं लाखा फुलानी दोहो का रचयिता ढुलि जाति का ही था।

सेवक—ये मगो के वशज हैं जो समय समय पर भारत म आकर बस गए। ये शाकद्वीपीय ब्राह्मण हैं तथा जनों और बीकानेर के अधीनस्थ मदिरो मे पुजारी का काम करते हैं। शिक्षा का प्रचार तथा सस्कृत का पठन-पाठन इनके परम्परागत गुण हैं। ओसवालो से इनका अधिक सपर्क है—ये लोग भी कविता करते हैं—लोक गीतो तक ही इनका क्षेत्र सीमित नही है वरन् साहित्यिक कविता भी करते हैं। 'रघुनाथ रूपक' के रचयिता कविवर मनसाराम मच्छ तथा हिन्दी के प्रसिद्ध कवि वृद भी सेवक जाति के ही थे।

मोतीसर—ये चारणा का वशवक्ष रखते हैं, उनकी प्रशसा म कविताए लिखते हैं तथा दान भी चारणों से लेत हैं।

ब्राह्मण—राजपूताने म ब्राह्मण सस्कृत तथा स्थानीय दोना भाषाओ मे कविता करते थे। सस्कृत पर तो उनका सपूर्ण आधिपत्य था किन्तु देशी भाषाओ के क्षेत्र म उनके कई प्रतिद्वदी थे। यही कारण है कि राजपूताने मे यह समझा जाने लगा कि कविता तो केवल 'ब्राह्मण के मुख से निकली, उसी को कुछ चारणो न कुछ भाटा ने प्राप्त किया। यहा के ब्राह्मणो ने सस्कृत म कई वीर काव्यो का सृजन किया। अजितोदय तथा अभयोदय काव्य की रचना जगजीवन ने की थी। बून्दी मे 'शत्रुशालय चरित्र' तथा नाथपुराण की रचना भी ब्राह्मणा ने की थी। बूदी मे प्रसिद्ध कवि पदमाकर भट्ट भी ब्राह्मण ही थे।

भाट—चारणो का प्रभाव क्षेत्र कच्छ है किन्तु जोधपुर बीकानेर, शेखावटी आदि म भाटा का काफी प्रभाव है। भाट सभी स्थानो पर पाए जाते हैं और सब जातियो स दान लत हैं। इनमे से अधिकाश न इस्लाम धम स्वीकार कर लिया है—परन्तु इसम उनके व्यवसाय म कुछ भी परिवतन नही हुआ है। राजस्थान का सबसे प्राचीन भाट कवि चोचू था जिसका समय १२ वी शताब्दि विक्रमाब्द बतलाया जाता हैं। इसने बगरावत बन्धुओ का गुणगान किया था तथा इसी के वश म चन्दबरदाई हुआ था जिसने पृथ्वीराज रासा की रचना की।

चारणा और भाटा का झगडा भी बहुत पुराना है। ऐसे ही झगडो का उल्लेख प चन्द्रधर शमा गुलेरी बी ए ने चारणा और भाटो से सबधित नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १ सवत् १९८७ म 'बारहटा लक्खा का परवाना'' नामक लेख म किया है। इस परवाने स ज्ञात होता है कि चारणों और भाटा का झगडा अकबर के दरबार तक भी पहुचा था।

चारणों का जीवन-निर्वाह

कवियो के लिए कविता द्वारा जीविका निर्वाह करने के प्राय दो ही मार्ग होते हैं। एक तो किसी बडे आदमी का आश्रय लेकर रहना दूसरे सब साधारण को ही अपना आश्रयदाता बना लेना। भारत के प्राचीन कवि पहले मार्ग का ही अनुसरण करते चले आए हैं। कवियो की जीविका का स्रोत उनकी रचनाए थी। ढाढी ढुली, भाट आदि गाना गा गाकर तथा प्रशसा करके कुछ माग लेते थे। राजस्थान के लोग समय समय पर चारणो बन्दीजनो तथा भाटो को दान भी देते थे। प्राचीन काल मे राजपूताने के याचक लोग बहुत दान मांगते थे। कहा जाता है कि राजस्थान म राजपूत सदव इस बात से डरते थे कि कन्या के विवाह के अवसर पर जब वे याचको को सतुष्ट न कर सकेंगे तो वे उनकी अप्रशसा म पद की रचना कर डालेंगे। इसी कारण से वहाँ लडकी के जन्म को दुर्भाग्य समझते थे तथा जन्म लेते ही मार तक डालते थे। इस प्रथा को खत्म करने के लिए समाज व सरकार द्वारा कई प्रयत्न भी हुए। राजस्थान म कनल वाल्टर ने 'हितकारी सभा' की स्थापना की जिसके फलस्वरूप विभिन्न वर्ग क चारणो के दान का अनुपात भी निश्चित कर दिया गया।

राजस्थान तथा बहुत सी पुरानी रियासतो मे (जमीदारी तथा रियासत आदि समाप्त होने पर भी) आज भी बहुत से चारणो तथा कवियो को जो गाँव, जमीन आदि मिली थी, कायम है। जोधपुर राज्य म चारणो को ३८० गाव दान म मिले जिसकी आय अभी तक उनके वशजो को नियमित रूप म मिलती है। विभिन्न त्यौहारो विवाहादि अन्य मगल तथा शुभ अवसरो पर धनी लोग चारणो, ब्राह्मणो आदि को दान आदि देते हैं। ब्राह्मणो का दान 'दक्षिणा' कहलाता है। § चारणो का दान 'लाख पसाव, कोड पसाव, अरब पसाव कहलाता है जिसमें एक गाव अवश्य होता था। विवाह के अवसर पर राजपूत जो बधाई की रकम चारणों को देते थे उसे त्याग' कहते हैं। चारण इसे बहुत लड झगडकर मागते हैं। त्याग के समय किसी एक चारण को प्रधान बना दिया जाता है। 'त्याग' मे प्राप्त धन को वह कभी कभी अन्य चारणो म भी बाट देता है। बूंदी के राजा दशहरे पर एक सहस्त्र का 'त्याग' बूंदी के बाहर के चारणो को देते थे। 'लाख पसाव' का अर्थ है एक लाख का दान इसी प्रकार कोड पसाव, अरब पसाव का अर्थ एक करोड तथा एक अरब का दान। पसाव' का अर्थ प्रसाद से था, भीख से नहीं। इस एक लाख, एक करोड या एक अरब से तात्पर्य नगद रुपयो स नहीं है वरन् इसम हाथी, घोडे, ऊंट, गहने

§ चारणो और भाटो का झगडा—प चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (लेख)
काशी नागरी प्रचा पत्रिका भाग १ सवत १९७७ पृष्ठ १२८–३२

अन्न, गाव आदि सब प्रकार की सम्पत्ति सम्मिलित होती है । यह 'पसाव' एक लाख से कम का होने पर भी 'लाख पसाव' ही कहलाता है ।

चारण अपने आपको दान लेने में निर्लज्ज या अपमानित नहीं समझते । कभी समृद्ध चारण व्यक्ति विशेष का दान ही स्वीकार करते हैं । चारणों को एक उच्च वर्ग का बारट या बारहट भी कहते हैं जो वास्तव में 'द्वारहट' शब्द से निकला है जिसका अर्थ है द्वार पर जो हठ करने मग्न रहता है । राजपूतों के विवाह के अवसर पर ये हठपूर्वक दान लेते हैं । कभी-कभी बहुत धनी व्यक्ति तथा राजा महाराजा चारणों को पर्याप्त दान देकर अयाचक बनाकर रखने में अपना गौरव समझते थे । अयाचक हो जाने पर चारण किसी से विवाह आदि मंगल अवसरों पर किसी प्रकार का दान स्वीकार नहीं कर सकता था । त्याग या लाख पसाव' को स्वीकार करना किसी प्रकार से उचित नहीं होता था ।

चारण अपने को किसी व्यक्ति विशेष या महाराजा का सेवक या सेवागीर नहीं कहते । इसका अर्थ नौकर चाकर भी हो सकता है । ये अपने आपको हमेशा 'दवागीर या दुआगो (आशीर्वाद सेवक) कहलाना पसंद करते हैं । चारणों की १२० जातियाँ या गोत्र हैं इसमें कुल चारणों की बिरादरी 'बीसोत्तर' कहलाती है । प्राचीन काल में बहुत से चारण विशेषत अयाचक चारण अपने दाता के दुर्ग के सिंह द्वार पर बैठकर उसका गुण गान करते थे । इसी कारण इन्हें "पोलपाल' पौलपात्र' तथा 'प्रतोलीपात्र' भी कहते हैं । पोल का अर्थ है दरवाजा या द्वार । सरदारों में इनका डेरा भी पोल के ऊपर दिया जाता है । कहते हैं कि जोधपुर की फौज ने एक ठाकुर की हवेली घेरली पोल लगी हुई थी--(दरवाजा बंद था) जब ठाकुर लड़ने को तैयार हुआ तो प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि पोल कौन खोले ? क्योंकि पोल खोलने का अर्थ तुरन्त मृत्यु । उस समय पोलपाल चारण ने कहा कि मैं पोल खोलूंगा क्योंकि इस पोल (द्वारा) के नेग तो मैं ही पाता हूं । उसने पोल खोल दी और पहला गोला उसी पर ही पड़ा और वह तुरन्त मर गया ।

माँडियावास के आसिया चारण बुधदान ने त्याग कम करने या बंद कराने वालों से रुष्ट होकर एक कविता भी लिखी है—

जासी त्याग जकराँ घर सूं जाता खाग न लागे जेज ।
धाररो तोल न बाधो धणियाँ त्याग तणी कही बाधो तोल ।
जासी त्याग जका का घर सूं जाती धरती करे जुहार ।
दीज दोष किसूं मिदरा जमी जाणराँ अक जरूर ।

भावार्थ—जिसके घर से 'त्याग' जाएगा उनके यहा से तलवार जाते देर न लगेगी। स्वामियो! त्याग का हिसाब तो बाजते हो जमीन का हिसाब नहीं बांधते? जिनके घर से 'त्याग' जाएगा उन्हें जाती हुई धरती भी सलाम करती है। सरदारो! दोष किसे दें? यह लक्षण तो अवश्य भूमि छिन जाने के हैं।

चारणों के कुलगुरु भी होते हैं और प्रत्येक चारण का कर्तव्य होता है कि वह मिलने वाले 'त्याग' दान आदि का कुछ अंश कुल गुरु को देता रहे। उज्जैन में चारणों के गुरु नाथिकशनजी हैं इनकी चौथी बही के ८८३ वें पन्ने पर एक परवाना है वह बारहट लक्खा का दान पत्र है। † कहते हैं कि अकबर बादशाह ने लक्खा जी को अंतरवेद में साढे तीन लाख रुपये की जागीर देकर मथुरा में रखा और उन्हें 'वरणपतसाह'—चारणों के बादशाह की पदवी दी थी। एक दोहा भी है—

अकबर मुह सू अक्खिया रुडा कहे दोहू राह।
मैं पतसाह पुयापत लखा वरण पतसाह॥

चारणों में लाखा जी का बडा यश है क्योंकि बादशाह की आज्ञा करके कोई भी दिल्ली, आगरे जाता तो लक्खा जी किसी न किसी उपाय से बादशाह से भेंट करा देते थे। अकबर बादशाह के समय के इतिहास में तो लक्खा नाम कही नहीं है परन्तु लक्खा जी की सतान के पास कई पटटे परवाने हैं जिन्हें देखने से पता लगता है कि लक्खा अकबर, जहांगीर के समय तक विद्यमान थे। इनके बाद नरहरदास ने एक बडा ग्रन्थ भी लिखा जिसका नाम "अवतार चरित्र" है और मारवाड में यह भागवत की जगह पढ़ा जाता है।

अंग्रेजी साहित्य में चारण काव्य

प्राचीन काल में अंग्रेजी साहित्य में भी चारणों तथा भाटों के लिये (Bard) शब्द प्रयुक्त होता था जिससे तात्पर्य राष्ट्रीय कवि आदि भी लिया जाता है। लेटिन लेखकों, विशेषकर लुकन ने (Bardi) शब्द का उपयोग उन सम्मानित कवियों के लिये किया है जो ग्रेट ब्रिटेन में राष्ट्रीय कवि गायक के रूप में रहते हैं। वेल्स में भाटों ने एक व्यवस्थित समुदाय व सभा भी बना रखी है और उन्हें वशानुक्रमागत विशेष अधिकार व सुविधायें भी प्राप्त होती हैं। इन चारणों की सम्पूर्ण सभा के विशेषनियम भी हैं और कानूनन यह मान्य भी की गई। विभिन्न अवसरों पर बड़े-बड़े पर्व और

---

† प० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी—चारणों और भाटों का झगडा
ना० प्र० पत्रिका भाग १ सम्वत् १९७७ पृष्ठ १२७-१३२

अन्न, गांव आदि सब प्रकार की सम्पत्ति सम्मिलित होती है। यह 'पसाव' एक लाख से कम का होने पर भी 'लाख पसाव' ही कहलाता है।

चारण अपने आपको दान लेने में निम्नता या अपमानित नहीं समझते। कभी समृद्ध चारण व्यक्ति विशेष का दान ही स्वीकार करते हैं। चारणों को एक उच्च वर्ग का बारट या बारहठ भी कहते हैं जो चारणों में 'द्वारहठ' शब्द से निकला है जिसका अर्थ है द्वार पर जा हठ करके खड़ा रहना है। राजपूतों के विवाह के अवसर पर ये हठपूर्वक दान लेते हैं। कभी-कभी बहुत धनी व्यक्ति तथा राजा महाराजा चारणों को पर्याप्त दान देकर अयाचक बनाकर रखने में अपना गौरव समझते थे। अयाचक हो जाने पर चारण किसी के विवाह आदि मंगल अवसरों पर किसी प्रकार का दान स्वीकार नहीं कर सकता था। 'त्याग या लाख पसाव' को स्वीकार करना किसी प्रकार से उचित नहीं होता था।

चारण अपने को किसी व्यक्ति विशेष या महाराजा का नौकर या तनखाहदार नहीं कहते। इसका अर्थ नौकर चाकर भी हो सकता है। ये अपने आपको हमेशा दुवागार या दुआगो (आशीर्वाद देने वाले) कहलाना पसन्द करते हैं। चारणों की १२० जातियां या गोत्र हैं इसलिए कुल चारणों की बिरादरी "बीसोत्तर" कहलाती है। प्राचीन काल में बहुत से चारण विशेषतः अयाचक चारण अपने दाता के दुर्ग के सिंह द्वार पर बैठकर उसका गुण गान करते थे। इसी कारण इन्हें 'पोलपाल' 'पोलपात्र' तथा 'प्रतोलीपात्र' भी कहते हैं। पोल का अर्थ है दरवाजा या द्वार। सरदारों में इनका डेरा भी पोल के ऊपर दिया जाता है। कहते हैं कि जोधपुर की फौज ने एक ठाकुर की हवेली घेरली पोल लगी हुई थी-(दरवाजा बन्द था) जब ठाकुर लड़ने को तैयार हुआ तो प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि पोल कौन खोले? क्योंकि पोल खोलने का अर्थ तुरन्त मृत्यु। उस समय पोलपाल चारण ने कहा कि मैं पोल खोलूंगा क्योंकि इस पोल (द्वार) के नेग तो मैं ही पाता हूं। उसने पोल खोल दी और पहला गोला उसी पर ही पड़ा और वह तुरन्त मर गया।

मांडियावास के आशिया चारण बुधदान ने त्याग कम करने या बन्द कराने वालों से रुष्ट होकर एक कविता भी लिखी है—

> जासी त्याग जकरां घर सूं जाता खाग न लागे जेज।
> धाररो ताल न बाधो धणियां त्याग तणी कहीं बाधो तोल।
> जासी त्याग जका का घर सूं जासी धरती करे जुहार।
> दोज दोष किसू सिदरा जमी जाणरां अक जहर।

भावार्थ—जिसके घर से 'त्याग' जाएगा उनके यहां से तलवार जाते देर न लगेगी। स्वामिया! त्याग का हिसाब तो बांधते हो जमीन का हिसाब नहीं बांधते? जिनके घर से 'त्याग' जाएगा उन्हें जाती हुई धरती भी सलाम करती है। सरदारो! दोष किसे दें? यह लक्षण तो अवश्य भूमि दिन जान के हैं।

चारणों के कुलगुरु भी होते हैं और प्रत्येक चारण का कर्तव्य होता है कि वह मिलने वाले 'त्याग', दान आदि का कुछ अंश कुल गुरु को देता रहे। उज्जैन में चारणों के गुरु नास्तिवानजी हैं इनकी चौथी वही के ५८३ वें पत्र पर एक परवाना है वह बारहट लक्खा का दान पत्र है। † कहते हैं कि अकबर बादशाह ने लक्खा जी को अन्तरवेद में साढ़े तीन लाख रुपय की जागीर देकर मथुरा में रखा और उन्हें 'वरणपतसाह'—चारणों के बादशाह की पदवी दी थी। एक दोहा भी है—

अकबर मुह सू अखियो रूडा कहे दाहू राह।
मैं पतसाह धुपायन् लखा वरण पतसाह॥

चारणों में लाखा जी का बड़ा मान है क्योंकि बादशाह की आज्ञा लेकर कोई भी दिल्ली, आगरे जाता तो लक्खा जी किसी न किसी उपाय से बादशाह से भेंट करा देते थे। अकबर बादशाह के समय के इतिहास में तो लक्खा नाम कहीं नहीं है परन्तु लक्खा जी की संतान के पास कई पट्ट परवाने हैं जिन्हें देखने से पता लगता है कि लक्खा अकबर, जहांगीर के समय तक विद्यमान थे। इनके बेटे नरहरदास ने एक बड़ा ग्रन्थ भी लिखा जिसका नाम 'अवतार चरित्र' है और मारवाड़ में यह भागवत की जगह पढ़ा जाता है।

अंग्रेजी साहित्य में चारण काव्य

प्राचीन काल में अंग्रेजी साहित्य में भी चारणों तथा भाटों के लिये (Bard) शब्द प्रयुक्त होता था जिससे तात्पर्य राष्ट्रीय कवि आदि भी लिया जाता है। लटिन लेखकों विशेषकर लुकन ने (Bardi) शब्द का उपयोग उन सम्मानित कवियों के लिए किया है जो ग्रेट ब्रिटेन में राष्ट्रीय कवि गायक के रूप में रहते हैं। वेल्स में भाटों ने एक व्यवस्थित संघटन व सभा भी बना रखी है और उन्हें वंशानुक्रमागत विशेष अधिकार व सुविधायें भी प्राप्त होती हैं। इन चारणों की सम्पूर्ण सभा के विशेषनियम भी हैं और कानूनन यह मान्य भी की गई। विभिन्न अवसरों पर बड़े-बड़े पद और

† प० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी—चारणों और भाटों का झगड़ा
ना० प्र० पत्रिका, भाग १ सम्वत् १८७७ पृष्ठ १२७-१३२

त्योहार मनाये जाते थे जिनमें उद्भट और सुविख्यात भाट आदि सम्मिलित होते थे और राजाओं तथा सम्मानित राज्याधिकारियों की प्रशस्ति व गुण गान किया करते थे। † आज भी वेल्स में 'बार्ड' उस कवि को कहा जाता है जिसका व्यवसाय किसी 'एस्टेडफड' भाटों की संस्था द्वारा स्वीकृत हो। आयरलैंड में भी भाटों की एक अलग ही जाति है जिनके परम्परागत अधिकार अद्भुत हैं। उन्हें तीन विभागों में बांटा गया प्रतीत होता है—

१ एक विभाग में तो वे भाट हैं जो विजय गाथाओं और प्रशस्तियों के गीत गाते हैं।

२ दूसरे समुदाय में वे भाट हैं जो राष्ट्र के कानून और नियमों का प्रचार अपने पद्यों में करते हैं।

३ तीसरी श्रेणी में वे भाट रखे जाते हैं जो लोगों की वंशावलियां तथा ऊंचे परिवारों में होने वाली मुख्य ऐतिहासिक बातों का लेखा जोखा करके गाते हैं।

अंग्रेजी साहित्य में भी चारण काव्य (Bardic poetry) का जो कुछ थोड़ा बहुत रूप मिलता है इसी विचार एवं भावना पर आधारित है। वहां युद्ध और प्रेम के गीत भी गाये गए हैं जिनके कथानक राजकुल के परिवारों तथा उनके अन्य धनिष्ट सम्बन्धियों व कथापात्रों के विजय गान तथा कीर्ति गाथा तक ही सीमित है। आजकल तो राज दरबारों में इस प्रकार के भाट आदि रखने की प्रथा ही नहीं है। तो भी कुछ ऊंचे और प्रख्यात कवियों को राष्ट्र कवि या राजकवि (Poet laureate) घोषित कर सम्मानित किया जाता है। मगर इन्हें केवल चारण मात्र या भाट समझना उचित नहीं है।

---

† Encyclopaedia Britanica Vol 3 (1955) Page 106

BARDS—A word applied to ancient ed celtic poets Latin authors Lucan used the term Bardi as recognised title for the national poets or ministerals among the people of Gaul and Britain In modern Welsh a bard is a poet whose vocation has been recognised at an Eistedfod In Ireland—they appear to have been divided into three sections—

(i) celebrated victories and sang hymns of Praise
(ii) chanted laws of the nation
(iii) gave poetic genealogies and family histories

चारण काव्य का महत्व

चारण जाति का अस्तित्व हमारे देश म प्राचीन काल से रहा है। अपने पवित्र आदश के कारण ही चारणों को समाज मे सदव सम्मान तथा आदर प्राप्त होता रहा है। उनका प्रधान ध्येय लोक कल्याणाय, क्षत्रिय जाति म साहस और वीरता का सचार कर उन्हे अच्छे मार्ग पर लाना था। चारण काव्य का क्षेत्र राजस्थान रहा किन्तु इसे भारतीय साहित्य की सर्वोत्तम कृतियो मे स्थान दिया जा सकता है। राजपूत भारतीय वीरता के प्रतीक थे। राजपूताना और मेवाड वीरो, त्यागियो और शूरों की जन्मभूमि का मुख्य क्षेत्र रहा है। यहाँ के वातावरण म गम हुँकारो की बिजलिया सोई हैं। यहा की मिट्टी ने तलवार का पानी पिया है। राजपूत भारतीय वीरता जगमगाते ज्योति स्तभ रहे और यहाँ का प्रत्येक रज-कण वीरों के पवित्र रक्त से अनक बार तर हो चुका है। यहाँ अनक बार बिजलिया गिरी हैं और अनेक बार आकाश फटा है। § राजस्थान म भारतीय सभ्यता और सस्कृति के सरक्षक निवास करते थे इसी वजह से राजपूत वीरों ने देश की रक्षा के लिये प्राणो के उत्सग करने म कभी हिम्मत न हारी। राजपूतो के कवियो न जीवन की कठोर वास्तविकताओ का स्वय सामना किया और युद्ध म नक्कारो और शख ध्वनि के साथ साथ स्वाभाविक वीरोल्लासपूण काव्य गान किए। कवीन्द्र रवीन्द्र ने भी चारण काव्य की प्रशसा मे कहा था कि 'राजस्थानी भाषा के प्रत्येक दोहे म जो वीरत्व की भावना और उमग है वह राजस्थान की मौलिक निधि है और समस्त भारत के गौरव का विषय है। चारण अपने काव्य से वीर योद्धाओ को प्रेरणा और उत्साह दिया करते थे। आज मैंने उस सदियों से पुरानी कविता का स्वय अनुभव किया। उसमे आज भी बल और ओज है।"*

चारणों द्वारा रचित काव्य दो तरह के होते हैं-कवितावद्ध 'गीत और गद्यबद्ध 'ख्यात। राजपूताना मे अब तक इसी अथ में गीत और 'ख्यात पदो का व्यवहार है जैसा मोटा राजा उदयसिह रा गीत, राठौडा री ख्यात आदि। मारवाडी में 'कह्योडो (कहा हुआ) भी आता है जसे "बाप जी गरोशपुरी जी रो कह्योडो' (पद, गीत, दूहां)

हिंदी में वीर-काव्य—साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है और प्रत्येक भाषा का साहित्य अपने समय की राजनीतिक, धार्मिक तथा अन्य प्रकार की परिस्थितियों और प्रवृत्तियों से प्रभावित होता है। जब हिन्दी साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं तो यह

§ राणा सागा—मनु शर्मा एम ए पृष्ठ ३-४।

* Charan of Rajputana—माडन रिव्यू दिसम्बर १९३८, पृष्ठ ७१०

त्योहार मनाये जाते थे जिनमें उद्भट और सुविख्यात भाट आदि सम्मिलित होते थे और राजाओं तथा सम्मानित राज्याधिकारियों की प्रशस्ति व गुण गान किया करते थे। † आज भी वेल्स में 'बार्ड' उस कवि को कहा जाता है जिसका व्यवसाय किसी 'एस्टेडवड' भाटों की संस्था द्वारा स्वीकृत हो। आयरलैंड में भी भाटों की एक अलग ही जाति है जिनके परम्परागत अधिकार अद्भुत हैं। उन्हें तीन विभागों में बाँटा गया प्रतीत होता है—

१ एक विभाग में तो वे भाट हैं जो विजय गाथाओं और प्रशस्तियों के गीत गाते हैं।

२ दूसरे समुदाय में वे भाट हैं जो राष्ट्र के कानून और नियमों का प्रचार अपने पद्यों में करते हैं।

३ तीसरी श्रेणी में वे भाट रखे जाते हैं जो लोगों की वंशावलियाँ तथा ऊँचे परिवारों में होने वाली मुख्य एतिहासिक बातों का लेखा जोखा करके गाते हैं।

अंग्रेजी साहित्य में भी चारण काव्य (Bardic poetry) का जो कुछ थोड़ा बहुत रूप मिलता है इसी विचार एवं भावना पर आधारित है। वहाँ युद्ध और प्रेम के गीत भी गाये गए हैं जिनके कथानक राजकुल के परिवारों तथा उनके अन्य धनिष्ठ सम्बन्धियों व कथापात्रों के विजय गान तथा कीर्ति गाथा तक ही सीमित है। आजकल तो राज दरबारों में इस प्रकार के भाट आदि रखने की प्रथा ही नहीं है। तो भी कुछ ऊँच और प्रख्यात कवियों को राष्ट्र कवि या राजकवि (Poet laureate) घोषित कर सम्मानित किया जाता है। मगर इन्हें केवल चारण मात्र या भाट समझना उचित नहीं है।

---

† Encyclopaedia Britanica Vol 3 (1955) Page 106

BARDS—A word applied to ancient ed celtic poets Latin authors - Lucan used the term Bardi as recognised title for the national poets or ministerals among the people of Gaul and Britain In modern Welsh a bard is a poet whose vocation has been recognt nised at an Eistedfod In Ireland—they appear to have been divided into three sections—

(i) celebrated victories and sang hymns of Praise
(ii) chanted laws of the nation
(iii) gave poetic genealogies and family histories

चारण काव्य का महत्व

चारण जाति का अस्तित्व हमारे देश म प्राचीन काल से रहा है। अपने पवित्र आदर्श के कारण ही चारणो को समाज म सदैव सम्मान तथा आदर प्राप्त होता रहा है। उनका प्रधान ध्येय लोक कल्याणार्थ, क्षत्रिय जाति म साहस और वीरता का सचार कर उन्हें अच्छे माग पर लाना था। चारण काव्य का क्षेत्र राजस्थान रहा किन्तु इसे भारतीय साहित्य की सर्वोत्तम कृतियो मे स्थान दिया जा सकता है। राजपूत भारतीय वीरता के प्रतीक थे। राजपूताना और मेवाड वीरो त्यागियो और शूरों की जन्मभूमि का मुख्य क्षेत्र रहा है। यहाँ के वातावरण मे गम हुंकारो की बिजलिया सोई हैं। यहाँ की मिट्टी ने तलवार का पानी पिया है। राजपूत भारतीय वीरता जगमगाते ज्योति स्तभ रहे और यहाँ का प्रत्येक रज-कण वीरों के पवित्र रक्त से अनेक बार तर हो चुका है। यहाँ अनक बार बिजलिया गिरी हैं और अनेक बार आकाश फटा है। § राजस्थान म भारतीय सभ्यता और संस्कृति के सरक्षक निवास करते थे इसी वजह से राजपूत वीरो ने देश की रक्षा के लिये प्राणो के उत्सग करने म कभी हिम्मत न हारी। राजपूतो के कवियो ने जीवन की कठोर वास्तविकताओं का स्वय सामना किया और युद्ध म नक्कारो और शख ध्वनि के साथ साथ स्वाभाविक वीरोल्लासपूर्ण काव्य गान किए। कवीन्द्र रवीन्द्र ने भी चारण काव्य की प्रशसा मे कहा था कि "राजस्थानी भाषा के प्रत्येक दोहे मे जो वीरत्व की भावना और उमग है वह राजस्थान की मौलिक निधि है और समस्त भारत के गौरव का विषय है। चारण अपने काव्य से वीर योद्धाओ को प्रेरणा और उत्साह दिया करते थे। आज मन उस सदियो से पुरानी कविता का स्वय अनुभव किया। उसमे आज भी बल और ओज है।"*

चारणो द्वारा रचित काव्य दो तरह के होते हैं-कविताबद्ध 'गीत और गद्य बद्ध 'ख्यात'। राजपूताना म अब तक इसी अथ मे गीत और 'ख्यात पदो का व्यवहार है जसे मोटा राजा उदयसिंह रा गीत, राठौडा री ख्यात आदि। मारवाडी मे 'कह्योडो (कहा हुआ) भी आता है जैसे 'बाप जी गणेशपुरी जी रो कह्योडो' (पद, गीत दूहा)

हिन्दी मे वीर-काव्य—साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है और प्रत्येक भाषा का साहित्य अपने समय की राजनीतिक धार्मिक तथा अन्य प्रकार की परिस्थितियों और प्रवृत्तियो से प्रभावित होता है। जब हिन्दी साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं तो यह

§ राणा सागा—मनु शर्मा एम ए पृष्ठ ३-४।

* Charan of Rajputana—माडर्न रिव्यू दिसम्बर १९३८ पृष्ठ ७१०

बात और भी अधिक स्पष्ट हाती है। हिन्दी साहित्य की उत्पत्ति क समय से ही भारतवष छोटे-छोटे स्वतन्त्र राज्यो मे विभाजित था। इन राज्यो म अधिकतर पारस्परिक युद्ध चला करते थे। इन छोटे बड राज्या क शासका के आश्रित कवि अपने आश्रयदानाओ का प्रशसा किया करते थे। इन कवियो म अधिकतर चारण, भाट, ब्राह्मण आदि हुआ करते थ। वीर काव्य की यह परम्परा हिन्दी साहित्य के स्वणयुग भक्ति-काल मे होती हुई रीतिकाल तक समानान्तर रूप चलती रही और अब भी किसी न किसी रूप म प्रवाहित हा रही है। † यह बात भिन्न है कि युग विशेष म कुछ परिस्थितियो और भावनाओ की प्रधानता क कारण उसका रूप बदलता गया।

वीर रस—साहित्य दपणकार ने उतम प्रकृतिर्वीर क लक्षण देकर वीररस का अन्य रसो से श्रेष्ठ माना है। उसके अनुसार इसका स्थायी भाव उत्साह, देवता महेन्द्र और रग सुवण के सदृश होना है। इसमे जीतने योग्य शत्रु आलम्बन विभाव होते हैं और उनकी चेष्टा आदि उद्दीपन-विभाव हाते है। युद्ध के सहायक, धनुष, सेनादि का अन्वेषण इसका अनुभाव होता है। ‡ धय, गव, स्मृति, रोमाच आदि इसके सचारी भाव हैं। इसके चार भेद होते हैं —

(१) दानवीर (२) धमवीर (३) दयावीर (४) युद्धवीर

इन चारो प्रकार के वीरो का आलम्बन, उद्दीपन आदि इस प्रकार होते हैं —

	स्थायीभाव	आलम्बन	उद्दीपन	अनुभाव	सचारी
१	दानवीर—त्याग म उत्साह	दान योग्य ब्राह्मण	सत्वगुण	सव त्याग परायणता	हष, गव, मति
२	धमवीर—धम म उत्साह	धम व ग्रन्थ	यज्ञ तप	कष्ट सहन	धृति, मति
३	दयावीर—दया मे उत्साह	दया के पात्र	दीन-दशा	सान्त्वना	धृति रोमाच
४	युद्धवीर—युद्ध म उत्साह	शत्रु	शत्रु पराक्रम	गर्वोक्ति	गव-तक रोमाच

इसम युद्धवीर का आलम्बन शत्रु बताया गया है और रौद्ररस का भी आलम्बन शत्रु ही होता है। दानो की अभिन्नता म शका को दूर करत हुए दपणकार ने स्पष्ट कहा है नेत्र तथा मुख का लाल हाना रौद्ररस है वीर रस म उत्साह ही स्थायी होना है। वीर रस क भेदा म भी कही कही मतभेद हैं। कुछ आचाय वीर रस म दयावीर नही मानते—अग्नि पुराण म केवल तीन ही वीर माने हैं। रसगगाधर सार म जगन्नाथ पडित न इन चारा को माना है। बाद म ता यह भी कहा है कि श्रृगार

† हिन्दी वीर काव्य—डा टीकमसिंह तोमर पृष्ठ ६

‡ वीर काव्य—डा उदयनारायण तिवारी पृष्ठ १०

की भाति वीर रस के भी अनेक भेद हो सकते है। सत्यवीर, पाडित्यवीर, बलवीर, क्षमावीर आदि उत्साह की अनेकरूपता के कारण उपभेद हो सकते हैं। इस प्रकार वीर रस के अनेक भेद हो जाएगे और उसका इतना व्यापक रूप हो जाएगा कि सभी रसो का समावेश इसमे हो जाएगा। 'वीर सतसई मे वियोगी हरिजी ने शूरवीर, सत्यवीर, धर्मवीर, विरह्वीर आदि के अनेक उदाहरण दिए हैं। †

डिंगल भाषा—राजस्थान के कवियो ने अपनी कविताए दो प्रकार की भाषाओ म की हैं डिंगल और पिंगल। महामहोपाध्याय श्री हरप्रसाद शास्त्री ने इन्हे काव्य रचना की दो शैलिया मानी हैं परन्तु ये केवल शैलियाँ ही नही दो भिन्न भाषाए भी हैं। डा एल पी टैसीटरी ने कहा कि

'These are no mere styles of poetry' as held by Mahamopadhya H P Shastri but two distinct languages the former being the local Bhasha of Rajputana and the later Braj Bhasha more or less vitiated under the influence of there form *

ये काव्य रचना की दो शैली मात्र ही नही है जैसा कि महामहोपाध्याय श्री एच पी शास्त्री मानते हैं, वरन् दो भिन्न भाषाए हैं जिसमे प्रथम राजपूताने की स्थानीय भाषा है और दूसरी ब्रजभाषा है जो अधिकतया इसी के प्रभाव के अनुरूप है।

जार्ज ग्रियसन ने भी कहा है कि 'मारवाडी भाषा का साहित्य बहुत पुराना है। कविगण कभी तो मारवाडी भाषा मे लिखते थे कभी ब्रजभाषा मे। मारवाडी भाषा को डिंगल तथा ब्रजभाषा को पिंगल कहा जाता था।" यह डिंगल राजस्थान की बोलचाल की भाषा राजस्थानी का साहित्यिक रूप है और पिंगल की अपेक्षा अधिक प्राचीन अधिक सम्पन्न तथा ओजगुण विशिष्ट है। इसकी उत्पत्ति अपभ्रंश से हुई है। ‡ जब ब्रजभाषा आई तो उसमे कविता की जाने लगी। राजस्थानी और ब्रजभाषा म अन्तर बताने के लिए ब्रजभाषा को पिंगल और राजस्थानी को डिंगल कहने लगे। डिंगल चारणो की बनावटी भाषा मानी जाती है जो भ्रमपूर्ण है। पहले सभी कवि इसी भाषा म लिखते थे बाद मे डिंगल धीरे धीरे छूटी और वह केवल उन्ही जातियो मे रह गई जिनका जीविका निर्वाह परम्परा से इसी के सहारे होता रहा था जैसे चारण, मोतीसर भाट, राव ढाढी आदि। डिंगल काव्य मे विशेष शब्दो का समझना जन साधारण के लिए कठिन हो गया इसलिए

---

† वीर सतसई—श्री वियोगी हरि पृष्ठ ८ ६

* Journal of Asiatic Society of Bengal Vol X No 108 Page 375

‡ डिंगल मे वीर रस—श्री मोतीलाल मेनारिया पृष्ठ १-२

समझा गया कि यह चारणो की बनावटी भाषा है। § यह राजस्थानी की विगत प्रयोग भाषा है।

राजस्थानी भाषा का डिंगल नाम कब और क्यो पडा इस विषय मे विभिन्न मत हैं। डा एल पी टसीटरी ने डिंगल शब्द का असली अर्थ गवारू अथवा अनियमित बताया है। उनके मतानुसार व्रजभाषा परिमार्जित थी और साहित्य शास्त्र के नियमा का अनुसरण करती थी और डिंगल इस सबध म स्वतन्त्र थी। वास्तव में यह विचार भ्रमपूर्ण है। क्योकि डिंगल गवारू नही वरन् पढे लिखे चारण भाटो की भाषा थी तथा राज दरबारो मे भी डिंगल का अधिक सम्मान होता था। इसम भी व्याकरण की विशुद्धता छन्द, रस अलकार आदि का उतना ही ध्यान रखा जाता था जितना व्रजभाषा म।

डा हरप्रसाद जी शास्त्री ने डिंगल शब्द की व्युत्पत्ति 'डगल' से बतलाई है और कविराज मुरारिदान का प्राचीन पद उद्धृत किया है– दीस जगल डगळ

दीसे जगल डगळ जेथ जल वगठ चाटे।
अनहुता गल दिय गलहुता गल काटे॥

जगल देश अर्थात मरु देश की भाषा डिंगल कहलाती है। डगल मिट्टी के ढेले अथवा अनगढ पत्थर को कहत हैं। मगर डिंगल भाषा को इस अर्थ म डगल कहना उचित नही जान पडता है।

श्री गजराज ओझा ने डिंगल भाषा म 'ड अक्षर' का बहुतायत से प्रयोग पाकर कहा कि ड अक्षर की प्रधानता को दृष्टि म रखकर ही पिंगल के साम्य पर इस भाषा का नाम डिंगल रखा गया। डिंगल डकार' प्रधान भाषा है परन्तु अभी तक अक्षर की विशेषता पर भाषा का नाम कभी नही पडा है।

कुछ विद्वानो का मत है कि डिंगल डिम्+गल से बना है। डिम का अर्थ है डमरू की ध्वनि और गल से गले का तात्पर्य निकलता है।* डमरू की ध्वनि जब बजती है तो रणचडी का आह्वान करती है तथा वीरो को उत्साहित करती है। डमरू वीर रस के देवता महादेव का वाद्य है। गले से जो कविता निकलकर हिम

---

§ डिंगल भाषा—श्री गजराज ओझा बी ए। ना प्र पत्रिका भाग १४ सम्वत् १९९० पृष्ठ ८३।

* राजस्थानी साहित्य और उसकी प्रगति– (लेख) श्री पुरुषोत्तम स्वामी बीकानेर, (नागरी प्रचा पत्रिका भाग १४ अंक ९ २२४)

डिम की तरह वीरो के हृदय को उत्साह से भर दे उसी को डिंगल कहते हैं। राजस्थानी साहित्य विशेषत डिंगल साहित्य मे ऐसी ही वीर पूर्ण रचनाओ की अधिकता है। डमरू का भाषा शास्त्र मे बडा अर्थ है इसी से, 'अ इ उ ए ऋ लृ क्', आदि की उत्पत्ति हुई है। इस मत की आलोचना की जाती है क्योंकि न तो महादेव वीररस के देवता हैं और न डमरू की ध्वनि उत्साहवर्धक ही मानी गई है। वीर रस के देवता इन्द्र हैं। महादेव तो रौद्ररस के अधिष्ठाता हैं।

इतना सब कुछ होने पर भी यह सभी मानते हैं कि प्रारम्भ मे डिंगल चारणो और भाटो की ही भाषा थी। वे अपने आश्रयदाताओ के कार्य कलापो का, उनके शौर्य पराक्रम का बढा चढाकर वर्णन किया करते थे। जी हजूरी द्वारा अपने स्वामियों को खुश करके, स्वार्थ साधने मे इनका विशेष ध्यान था। अतएव उनके वर्णन अधिकांश में अत्युक्तिपूर्ण हुआ करते थे। इसलिए जो भाषा इस प्रकार की डीग हांकने के काम में लाई जाती थी—उसका नाम डींगल रख दिया। राजस्थान में वृद्ध चारण तथा भाट आज भी डिंगल न कहकर 'डींगल' ही बोलते हैं।

डिंगल मे लिखित साहित्य प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है। इसके रचयिता चारण हैं अत इसे चारण काव्य भी कह सकते हैं। इसमें वीर भक्ति, श्रृंगार नीति आदि सभी प्रकार के ग्रंथ प्राप्य हैं। पौराणिक कथाओं के आधार पर भी कई छोटे-बडे प्रबंध काव्यो का सृजन हुआ है। कई चारणो ने तो ऐतिहासिक इतिवृत्तो, क्षत्रिय राजाओं व वीरो की जीवन गाथाओ पर भी प्रबंध काव्यों रचना की है जैसे सूजा बीठू कृत 'राव जैत सी रो छंद', कविराजा करनीदान का "सूरजप्रकाश" जिसमे जोधपुर महाराज अभयसिंहजी की युद्ध-वीरता का वर्णन है। महाकवि सूर्यमल का 'वंश भास्कर' तथा ठाकुर केसरीसिंह कृत 'प्रतापचरित तथा पाबूदान आसिया कृत 'पाबू चरित्र" आदि मे वीर रस की अत्यंत मार्मिक व्यंजना हुई है।

इस ग्रंथ मे चारणकाल के अन्तर्गत भक्ति श्रृंगार नीति आदि विषयक काव्य-ग्रंथो एवं स्थलो को छोड दिया गया है क्योंकि अनुसंधान का विषय राष्ट्रीय भावनाओ तक ही सीमित है। अस्तु इस श्रेणी और काल की रचनाओ के आलोचनात्मक अध्ययन मे भाव सौंदर्य, काव्य सौष्ठव के सामान्य विवेचन साथ-साथ वीरत्व और राष्ट्र की रक्षा मे बलिदान करने की भावनाओं के दिग्दर्शन आदि पर ही अधिक ध्यान रखा गया है।

वीर काव्य के रूप—इस समय के वीर काव्य के दो रूप प्रचलित थे—

(१) दरबारों में चारण काव्य का राज्याश्रित रूप

(२) गाँवों मे ग्रामीणो द्वारा वीर गीतों का लोकाश्रित रूप

पहल का रूप घटनाप्रधान होने के कारण प्रबन्धात्मक मिलता है तथा दूसरे का भावनापूर्ण होने के कारण मुक्तात्मक। इन दोनो प्रकार के काव्यो म वीरता की भावना की अभिव्यक्ति मार्मिक है। प्रेम और वीरत्व श्र गार रस और वीररस के मूल म काम और सघप की भावना काम करती है।

काम और युद्ध की भावना मनुष्य की मूल प्रवृत्तियो म सबसे प्रमुख है। मनुष्य के प्रारम्भिक जीवन मे सघष और काम का भाव ही प्राधान्य था। सभ्यता और साहित्य के आदि काल मे भी वीर और श्र गार की अभिव्यक्ति भिन्न भिन्न रूपों म हुई है। अग्रेजी भाषा की प्राचीनतम राष्ट्रीय कविता बयाउल्फ (Beowulf) मे बयोउल्फ की वीरता का सुदर वणन है। वह ग्रेन्डल नामक एक भीमकाय राक्षस की हत्या करता है तथा वहां की जनता तथा राजा के कष्ट को मिटाता है (राम की भांति ही)। प्रत्येक दश क प्राचीन काव्यो मे सघष और प्रेम का सरस चित्रण हुआ है। हिदी क वीरगाथा काल म भी युद्ध और प्रेम का अधिक चित्रण हुआ है।

हिन्दी साहित्य मे वीर काव्य—हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक काल मे सिद्धों का साहित्य उपलब्ध है जो सहजिया सम्प्रदाय के अनुयायी थे। नाथ-पथ और गोरखनाथ भी सिद्धों म से ही थे। आगे चलकर सिद्धो की दशन और विचार प्रणाली सत कवियो की वाणी मे आत्मसात हो गई। इनकी भाषा बहुत कुछ बिहारी और बगला से मिलती जुलती है। इन सिद्धो के अतिरिक्त ८०० ई से १४०० ई के बीच कई जन मुनि तथा कवियो की रचनाए लोक भाषा मे उपलब्ध हैं। हिदी साहित्यकारो ने काल विभाजन के अनुसार आदिकाल (वीरगाथा-काल) को सवत १०५० स १३७५ तक माना है। †

किन्तु इस समय की रचनाओ की प्रामाणिकता असदिग्ध नही मानी जाती है। इस काल के प्रमुख ग्रथो म पथ्वीराज रासो आल्हा खड बीसलदेव रासो, खुमान रासा आदि हैं। इसके अतिरिक्त जो अन्य ग्रथ बहुत पीछे के लिखे कहे जाते हैं वे इस प्रकार हैं-‡

(१) सवत् ८६० के लगभग ब्रह्म भट्ट का खुम्माण रासो।
(२) १००० म भगवतगीता भुआलकृत—१६७६ की खोज मे मिला।
(३) ' ११३७ वाल कालिजर क राजानद कवि
(४) ११८० म मसऊद के कुतुवअलि

† रामचद्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास पष्ठ १
‡ अगरचद नाहटा—वीरगाथा कान की रचनाओ पर विचार (ना प्र पत्रिका १६४७)

(५) " ११८४ म चौलुक्य सोमेश्वर ने हिंदी म कविता की
(६) ' ११६१ म साईदान चारण ने समतसार
(७) ' १२०५ ८५ मे अकरम फौज न वनमाल एव वतरत्नाकर
(८) " जागनिक का आल्हाखड
(९) केदार कवि
(१०) जयचन्द के पुत्र शिवजी की सभा में वारद रवेण नामक कवि हुए।
(११) सवत १२४७ में मोहनलाल द्विज ने पतजलि ग्रन्थ
(१२) " १३२५ मे वासहरण
(१३) " १३५४ मे नरपति नाल्ह का बीमलदेव रासो
(१४) " १३५५ म वल्लसिंह का विजयपाल रासो
(१५) ' १३५७ म शारगधर का हम्मीर रासो
(१६) " १३८५ म मुल्ला दाउद का नूर का चन्दा।

बाद मे भी यह परम्परा बनी रही होगी परन्तु प्रकाश म नही आई है।

अपभ्रश-काल म भी नीति, श्रृगार, वीर आदि की कविताए हुई हैं पर उस समय का बहुत सा साहित्य उपलब्ध नही है। स्वयभू (सवत ८०० के लगभग) की कविता मे वीर रस के उदाहरण मिलते हैं जिसमे मेघवाहन तथा हनुमान के युद्ध के बारे मे चित्रण किया है—

मिडिअइ वें वि सेण्णइ आउ जुज्झ घोर।
कुडुल कडय मउड णिवडत कणय डोर।
हण - हण - हणकारू महारउद्द।
छण छण छणतु गण पिछ सद्द।

उसके पश्चात सुग्रीव और मेघवाहन के युद्ध का भी वर्णन किया गया है— उस पद का रूपान्तर श्री राहुल जी ने "काव्यधारा पुस्तक म किया है—

किष्किन्ध नराधिप घरेड याव, घन वाहण मा मडलह ताव।
आ मिडेउ परस्पर युद्ध धार, द्वार स्त्रोत स्व-उत्तरे प्रहर घोर।
घूमत पडत महा तुरग
टूटन्त कवच टूटन्त खडग।
नचत कबन्धउ असि-कराग्र।

हेमचन्द्र (सम्वत ११५०-१२३० तक के लगभग) प्रसिद्ध जन आचाय हो गये हैं। इनके कुछ दोहे वीरता पूण हैं —

भल्ला हुआ जु मारिया बहिणी महारा कन्तु।
लज्जेज तु वयंसि अहु जइ भग्गा घर एंतु॥

(एक स्त्री अपनी सखि से कहती है कि भला हुआ जो पति मारा गया। हे बहिन! यदि हमारा कन्त भागा हुआ घर आता तो मैं अपनी समवयस्काओं से लज्जित होती)।

शारंगधर ने 'हम्मीर रासो' नामक एक वीर गाथा काव्य लिखा, पर यह काव्य आजकल उपलब्ध नहीं है। उसके अनुकरण पर बहुत पीछे का लिखा हुआ ग्रन्थ 'हम्मीर रासो' मिलता है। कुछ पद जो असली हम्मीर रासो के मिले हैं उन्हे रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास मे दिये हैं। †

ढोला मारिय ढिल्ल मह मुच्छिउ मेच्छ-सरीर।
पुर जज्जल्ला मतिपर चलिअ बीर हम्मीर॥
चलिअ बीर हम्मीर पाऊ भर मेहणि कपई।
दिगमग णह अधार धूलि सुररह आच्छाइहि॥
दिगमग णह अधार आण खुरसाणुक उल्ला।
दरमीर दमसि विपक्ख मारु ढिल्ली मह ढोल्ला॥

(दिल्ली मे ढोल बजाया गया म्लेच्छों के शरीर मूर्छित हुए। आगे मन्त्रिवर जज्जल को करके वीर हम्मीर चले। चरणो के भार से पृथ्वी कांपती है। दिशाओं के मार्गों और आकाश मे अंधेरा हो गया है धूल सूर्य के रथ को आच्छादित करती है। ओल मे खुरासानी ले आए। विपक्षियों को दलमल कर दबाया दिल्ली मे ढोल बजाया।)

पअभर दरमरु धरणि तरणि रह धुल्लिअ झंपिअ।
कमठ-पिटठ टरपरिअ मेरु मदर सिर कंपिअ॥
कोहे चलिअ हम्मीर बीर गअजुह सजुत्ते।
किअउ कट्ठ हा कद। मुच्छि मेच्छिअ के पुत्ते॥

(चरणो के भार से पृथ्वी दलमल उठी, सूर्य का रथ धूल से ढक गया कमठ की पीठ तड़फड़ा उठी मेरु मदर की चोटियाँ कंपित हुई। गजयूथ के साथ वीर हम्मीर क्रुद्ध होकर चले। म्लेच्छों के पुत्र, हा कष्ट! करके रो उठे और मूर्च्छित हो गए।

---

† रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ २५

इन पद्यो मे हम उस काल की देश प्रेम की भावना का स्पष्ट परिचय पाते हैं। इस समय मुसलमानो के आक्रमण हो रहे थे और भारतवासियों के लिए म्लेच्छ' विदेशी आक्रमक थे जिनके प्रति घृणा का भाव फैला हुआ था तथा अपने राज्य से विदेशियों को दूर हटाकर उसे स्वतत्र बनाए रखने की भावना राष्ट्रीय प्रेम समझी जाती थी। हम्मीर हिंदू राष्ट्र की रक्षा म सलग्न एक वीर नायक है जो अपने राज्य का ' म्लेच्छा ' से बचाने के लिए पथ्वी को कपाता हुआ रण-अभियान के लिये आतुर है।

अब हम वीर-गाथा-काल के प्रसिद्ध ग्रथो का विवेचन करेंगे जिनमे उस युग की देश प्रेम की भावना का चित्रण मिलता है।

वीरगाथा काल—आचाय रामचद्र शुक्ल ने वीरगाथा काल मे निम्नलिखित ग्रथो को सम्मिलित किया है। इस काल मे दो प्रकार की रचनाए मिलती हैं—(१) अपभ्रश (२) देश भाषा (बोलचाल) की अपभ्रश की पुस्तको मे कई तो जनों के धम-तत्व निरूपण के ग्रथ हैं जो साहित्य की कोटि मे नही आ सकती किन्तु इनका उल्लेख इसलिए किया गया है कि अपभ्रश भाषा के व्यवहार के समय का कुछ पता लग सके। साहित्य कोटि मे आने वाली रचनाओं म कुछ तो भिन्न भिन्न विषयों पर फुटकल दोहे हैं जिसके परिणाम स्वरूप कोई विशेष प्रवृत्ति नही निर्धारित की जा सकती। साहित्यिक पुस्तकें केवल चार हैं-*

(१) विजयपाल रासो (२) कीर्तिलता (३) हमीर रासो (४) कीर्ति पताका।

देश भाषा काव्य की आठ प्रसिद्ध पुस्तकें—

(५) खुमान रासो (६) बीसलदेव रासो (७) पृथ्वीराज रासो (८) जयचद प्रकाश (९) जयमयक-जस-चद्रिका (१०) परमाल रासो (आल्हा) (११) खुसरो की पहेलियां (१२) विद्यापति की पदावली।

इस काल म चद वरदाई का 'पृथ्वीराज रासा , जागनिक का 'परमाल रासो आल्हा खण्ड,' तथा नरपति नाल्ह का बीसलदेव रासो प्रमुख ग्रथ हैं। चन्द (सवत १२२५ १२४९) को हिन्दी का प्रथम महाकवि माना जाता है और इस ग्रथ को हिंदी का प्रथम महाकाव्य कहा जाता है।

चद वरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो'-पृथ्वीराज रासो के पीछे रासो काव्यों की विशाल परम्परा है। अपभ्रश डिंगल, पिंगल गुजराती आदि भाषाओं में भी अनेक रास और रासो काव्यो की खोज हुई है। 'रासो मूलत गानयुक्त नृत्य विशेष से क्रमश

* रामचद्र शुक्ल-हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ ३

विकसित होते होते उपरूपक बना और फिर वीररस के पद्यात्मक प्रबन्धो मे परिणत हो गया। गीत-नृत्य के लिए रास शब्द का प्रयोग श्रीमद्भागवत म भी हुआ है जिसम ध्रुपद आदि अनेक रागो का प्रयोग होता था। नरोतम स्वामी के अनुसार रास और रासा का यह अंतर अंत तक बना रहा। वे रास काव्यो को मूलत प्रेम-काव्य मानते हैं तथा रासो काव्यो को वीर काव्य। रास के उदाहरण के लिए बीसलदेव रास' का नाम लिया जा सकता है तथा रासो के लिए पथ्वीराज रासो या 'कहरिया कौरायसो। परन्तु इसके अपवाद भी हैं और इस निर्णय पर पहुचा जा सकता है कि रास शब्द से मूलत सम्बद्ध होते हुए भी रास और रासा नाम से विविध विषय भाव रस वाले काव्य लिखे गए जिन्ह जन कवि चारण तथा भाटो ने भिन्न भिन्न रूप दिए।

राजस्थान म रासो या रास काव्य की परम्परा डिंगल और पिंगल दोनों मे मध्ययुग से लेकर आधुनिक युग तक प्रचलित रही और सभवत इसी समय पथ्वीराज रासो म प्रक्षेप होता रहा। अपभ्रंश के सनेम रास' और उपदेश रसायन रास को छोड शेष सभी रास और रासा ग्रंथ चरित काव्य हैं और ऐतिहासिकता के साथ अनतिहासिकता का पुट सबम है। ईसा की १२ वी स १५ वी शताब्दी के बीच लिखे हुए रास ग्रंथो म भरतश्वर बाहुबलि रास जम्बूस्वामि रास रेवन्तगिरि रास, कछूली रास गौतम रास दशाणभद्र रास वस्तुपाल तेजपाल रास, श्रेणिक रास पेथड रास समरसिंघरास के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। अन्य राजस्थानी के रासों की भी खोज हुई है मगर वे सब १७ वी शताब्दी तथा उसके बाद के हैं।

पथ्वीराज रासो की जितनी भी हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं उनके आधार पर उसका मूल रूप स्पष्ट नही हो पाया है। कुछ अनैतिहासिक अशुद्धियों तथा तिथियों के भिन्न होने के कारण उसे जाली ग्रंथ माना गया है। विद्वानो म अभी तक मतभेद है कि यह पथ्वीराज रासो चन्दबरदाई का ही लिखा हुआ है—जो पथ्वीराज का समकालीन राजकवि था या अन्य कवि का है। यहाँ इसकी ऐतिहासिकता के पक्ष विपक्ष म विद्वानो के मत तथा तर्क आदि उपस्थित न कर साहित्यिक एव वीर रस प्रधान रचना की दृष्टि स आलोचना की गई है।

क्रमिक विकास के बाद उसे राजकीय कर्मक्षेत्र म प्रविष्ट कराया गया है। सलप की पुत्री इच्छिनी से विवाह करने के लिए पथ्वीराज की अपने प्रतिद्वन्द्वी भीमदेव से लडाई हुई। पथ्वीराज विजयी हुआ और इच्छिनी से विवाह किया। इसी प्रकार कुछ समय बाद शशिव्रता का हरण कर जयचन्द की सेना को हराता हुआ पथ्वीराज अपने राज्य को लौटा। कुछ समय इसी प्रकार आनन्द और सुख स कटा परन्तु पथ्वीराज को युद्ध और विवाहो से तप्ति नही मिलती थी। थोडे दिन ही बाद जयचन्द की पुत्री सयोगिता के रूप की बात सुनकर उस पर अधिक अनुरक्ति हुई और अभियान की तयारी के पूव रनिवास स अनुमति लेन म ही पृथ्वीराज को प्रत्येक रानी के पास ६ ऋतुए बितानी पडी। अन्त म चन्द की सहायता से राजा ससैन्य कनौज को रवाना हुआ और एक दिन गगा के किनारे स्थित सयोगिता से भेंटकर उसे घोड़े पर चढाकर शत्रु सैन्य को मारता हुआ वह दिल्ली पहुच गया। अन्त में विवाह करके सयोगिता को पटरानी बनाकर अन्य रानियो के साथ सुखपूवक रहने लगा।

राजा इधर रतिरग म लीन था उधर शहाबुद्दीन गोरी ने दिल्ली पर हमला किया—उसे कई बार हराया और भगा दिया परन्तु अन्त म युद्ध मे पथ्वीराज गोरी के हाथ पकडे गए। सयोगिता तथा अन्य रानिया सती हो गई और उधर पथ्वीराज को गजनी ले जाकर आखें फोडकर कदी बनाकर रखा गया। कुछ दिनो बाद एक दिन चन्द पहुचा और पथ्वीराज को शब्द भेदी बाण चलाने की अनुमति दिलाकर गोरी की हत्या करा दी तथा दोनों ने वही अपने भी प्राण त्याग दिए। यह सक्षेप म सारी कथा है।

रासो की यह कथा प्रधानत शुक और शुकी के सवाद द्वारा कहलाई गई है जसा कि पुराणो मे तथा अन्य कथाओ म कथोपकथन की शली मिलती है। सपूण कथा चन्द द्वारा लिखी हुई नही है। गजनी प्रसग के प्रारम्भ म ही यह लिखा गया है "पुस्तक जल्हन हत्थ दे चलि गज्जन नृप काज। इसका उत्तराध उसके पुत्र जल्हन ने पूरा किया।

पृथ्वीराज रासो म शृगार और वीर दोनो रसो का बडा सुन्दर विवेचन हुआ है। युद्ध-वणन मे कवि ने शब्दों के चुनाव का ध्यान रखा है तथा शली म ओज दृष्टिगोचर होता है। कुछ उदाहरण ये हैं—

आदि पव मे पृथ्वीराज जब राजकीय कायक्षेत्र मे प्रवेश करते हैं तब एक दिन उनके सामन्तो मे प्रमुख कन्ह गुजरात भीमदव, चालुक्य के भाई का वध कर देता हैं उस समय का वणन—

चढि चलन राज आवाज कीन। नीसान नद्द बज्जे नवीन।
चिहु ओन भरनि छुट्टत तुरग। सजि सिलह भांति नाना अभग।
धम धमकि धरनि धाने सुमग। गज्जिय अवास के गहर गग।
भय हूह हाक आतंक जोर। सह सुन फेरि भेरीन सोर।
धरि रोस मुच्छ मुरत भीम। रनवीर वज्र सक्रोध हीम।

इच्छिनी विवाह प्रसग म पथ्वीराज सदलबल जब चढ आया तब भीमदेव और उसकी सेना म लडाई हुई—

घुमे मुक्क सीस भट लोह छक्के। उभ जानि भून महामत्र हक्के।
फिरें रुड बिन मुड रन रोस राचे। मनो भगार नट्ट विद्या नाच।
परं अश्व हुत सिर जार सूर। तुठें पुण्डरी हड्ड हवं भूर भूर।
लग गुज सीस भजी भति छुड्डें। मनो भवन वृद्धि मथान उड्डें।।
हुए छीन छीन छरी मार छक्क। झर रक्त डोरी महा मल्ल हक्क।
भिरे सस्त्र विन वथय भरभीर भीम। परे लोथि जूथ बिन जीव हीम।।

सयोगिता के रूप और यौवन से आकर्षित होकर पृथ्वीराज सेना सहित कान्य कुब्ज पहुचता है। प्रथम दर्शन मे दोनो ही सुधबुध खो बठते हैं। बाद मे जब पथ्वीराज घोडा लेकर सयोगिता का हरण करने आ जाता है तो वह लजा उठती है। आगे चलकर घोर सग्राम होता है—

जुम झिझ क्क भज्जि कौन सार अग पडय।
दरत रभ रभ भति सार के मुझारय।
जुध जुध वजत सूर धार धीर पारय।
तुट्त श्रोन सीस दुरेन नचि रीस अक्कयो।
रक्त भीम विद्रकार बीर बीर झक्कयो।।
पात के उठत फेरि मच्छ ज्यो तरफई।
रन विधान धीर बीर बीर बीर जपई।।
रुड मुड बल पड मुअ। मचि योगिनी बेताल।
चिल्हनि भष जबुक गहकि। हर गुथी गल माल।।

दाम्पत्य प्रणय का प्रस्फुटन कमक्षेत्र म ही होता है जहा युगल—हृदल एक दूसरे को सहयोग देते हुए परस्पर श्रमसिक्त मुख देखते चलते हैं—

दषि सजोगिय पिय सुबल, श्रम जल बूद वदन।
रति पति अद्दित पवित्र मुख जालि प्रजालि मदन।।

पृथ्वीराज रासो के 'पद्मावती–विवाह–समय' प्रसग म जब पद्मावती अपनी सखियो के साथ गौरी पूजने के लिए जाती हैं ओर पूजा होने पर पृथ्वीराज को देख–कर लज्जा से मुख ढक लेती है। राजा हाथ पकडकर उसे घोडे की पीठ पर चढा कर दिल्ली की ओर चल देता है, रास्ते म युद्ध हुआ उसका वणन बडा प्रभावपूण है–

अग्ग जु राज प्रथिराज भूप, पच्छे सु भयो सब सेन रूप।
पहुचे सुजाय तत्ते तुरग, भुअभिरन भूप जुरि जाघ जग।
उलटी जुराज प्रथिराज बाग, थकि सूर गवन धरि धसत नाग।
सामत सूर सब काल रूप गहि लाह छोह वाहे सुभूप।
घमसान घान सब बीर पेत, घन स्रोन बहत अरु रक्त रेत।
मारे बरस के जोध जोह, परि रुड मुड अरि पेन सोह।

(आगे आगे पृथ्वीराज और पीछे पीछे उनकी सना थी। अत्यन्त उग्र घोडे पहुच गये और सग्राम मे आए हुए योद्धा भुजाओ से भुजा भिडाकर युद्ध करने लगे। ज्योही राजा पृथ्वीराज ने अपने घोडे की बागडोर युद्ध भूमि की ओर मोडी त्योंही आकाश में सूय ठहर गये और शेष नाग के ऊपर स्थित धरा धसने लगी।

धनुष के असख्य बाण छूटते थे और वषा कर अजस्र धारा के समान शस्त्रो की झडी लगी हुई थी। घमासान युद्ध के उस क्षेत्र म सब वीर क्षत विक्षत हो गए और इतना घना रक्त बहा कि सारी पृथ्वी लाल हो गई। शत्रुओ के पडे हुए रुड मुड से सारा रणक्षेत्र शोभित होन लगा)।

इतने म शाहबुद्दीन गोरी भी युद्ध क्षेत्र मे आ जाता है और उसकी सेना के योद्धा भी भयकर गर्जन करते हुए बन्दूक तोप छोडते हुए लडने लग—

न को हार न जित्त रहेई न सूरवर
उर उप्पर मर परत करत अनि जुद्ध महाभर।
कहीं कमध कहीं मथ्थ कहीं कर चरन अतहरि
कहीं कघ नहि तेग कहीं सिर जुट्टि फुट्टि उर।
कहीं त भत हय पुर षुपरि कुम भ्रमुह रुण्ड सब।
हिंदवान रान भय भान मुप गहिय तेग चहुआन जब॥

(न कोई हारता है और न कोई जीतता है। शूर वीरा से युद्ध किय बिना रहा नही जाता। पृथ्वी के ऊपर योद्धा मरकर गिरते हैं। बडे–बडे योद्धा घोर युद्ध कर रहे हैं। कहा वीरो के धड कही मस्तक, कहा हाथ पैर, कही अतडियाँ कटी पडी हैं। कहीं तलवार कधे पर चल जाती हैं कहीं योद्धाओ के सिर आपस म टकराकर

किन्तु इतने पर भी इस ग्रन्थ म सामतो की स्वामिभक्ति, राजा की भूमि वत्सलता शरणागत की रक्षा, स्वामिमान तथा विदेशियो के आक्रमण से देश की रक्षा का भाव मिलता है जो कही कही गौण अवश्य हो गया है। पृथ्वीराज रासो म तत्का लीन राष्ट्रीयता एव राजनीति पर प्रकाश डालने वाले अशो की प्रचुरता है।

नरपति नाल्ह कृत 'बीसलदेव रासो'—नरपति नाल्ह द्वारा रचित यह ग्रन्थ इस काल की रचना माना जाता है। कुछ विद्वानो की धारणा रही है कि यह वीर रस प्रधान ग्रन्थ है किन्तु यह काव्य शृंगार परक अधिक है। यह घटनात्मक काव्य कम है वर्णनात्मक अधिक है। इस ग्रन्थ म न तो बीसलदेव वीर राजा की ऐतिहासिक चढाइयो का वर्णन है और न उसके शौय पराक्रम का ही। शृंगार रस से परिपूर्ण विवाह और रूठकर विदेश जाने का मनमाना वर्णन इस ग्रन्थ का प्रमुख विषय है। अत पृथ्वीराज रासो की भाति राजनीति जीवन पर विशेष प्रकाश नही पडता। यह ग्रन्थ अपनी गेयता, सक्षिप्तता और सरस चित्रण के कारण ही पाठको को प्रभावित करता रहा है।

भट्ट केदार का 'जयचन्द-प्रकाश'—जिस प्रकार चन्द ने महाराज पृथ्वीराज का यश गाया है उसी प्रकार भट्ट केदार ने सम्राट जयचन्द का शौय वर्णन किया है। भट्ट केदार ने 'जयचन्दप्रकाश' नामक एक महाकाव्य (सम्वत १२२४ १२४३) लिखा था। जिसमे जयचन्द की शूर वीरता, प्रताप और पराक्रम का विशद वर्णन है। इसके अतिरिक्त जय मयक जस चन्द्रिका नामक ग्रन्थ भी लिखा जो उपलब्ध नही है। † जयचन्द का प्रभाव बुन्देलखण्ड के राजाओ पर खूब पडा हुआ था और उसने इन छोटे छोटे राज्यो को एक सूत्र म बाँधने का प्रयत्न किया था।

जागनिक कृत-आल्ह खण्ड (परमाल रासो)—वीर कवियो मे 'आल्ह-खण्ड" के रचयिता जागनिक या जगनायक (सम्वत् ११७३) का नाम प्रमुख है। यह कवि कालिंजर के राजा परमाल (परमर्दिदेव) के यहाँ दरबारी कवि के रूप म प्रसिद्ध था तथा इसने महोबे के दो वीर पुत्र आल्हा और ऊदल (उदयसिह) के वीर चरित का विस्तृत वर्णन एक वीर गीतात्मक काव्य के रूप मे किया। धीरे धीरे यह इतना विख्यात हुआ कि सारे उत्तरप्रदेश मे सर्वप्रिय ग्रन्थ माना जाने लगा। उत्तर भारत में रामायण के बाद इसका ही प्रमुख स्थान है। ये गीत आल्हा के नाम से प्रसिद्ध हैं और विशेषत बरसात म गाये जाते हैं। ढोलक के गम्भीर घोष के साथ इसका वीर हुंकार हर चौपाल पर सुनाई देता है। यह ग्रन्थ लिपिबद्ध बहुत बाद म हुआ जिसके फलस्वरूप इसका प्रारम्भिक रूप नष्ट हो गया और इसका कलेवर भी बदल गया है।

† रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ ५०

इसमे बहुत से नय शब्द (जैसे बन्दूक, किरिच फिरगी) आदि आ गये हैं। इन गीतो के सग्रह को "आल्हा खण्ड" कहते हैं जिससे यह अनुमान होता है कि आल्हा सम्बन्धी ये वीर गीत जागनिक के रचे एक बडे काव्य "परमाल रासो" का एक खड हैं जिसमे चन्देला की वीरता का वणन किया गया है। आल्हा और ऊदल परमाल के सामन्त थे। इसको सव प्रथम फरुखाबाद के कलेक्टर चार्ल्स इलियट ने लिपिवद्ध कराया। वतमान रूप म 'आल्हा खण्ड" किसी भी प्रकार वीरगाथा काल की रचना नही मानी जा सकती है।

इस ग्रन्थ में बहुत सी लडाइयो का वणन है। कहा जाता है कि राजा परमाल भीरु था किन्तु उसकी रानी मल्हाना इन्ही वीर सामता की सहायता से विदेशी आक्रमणो को विफल करने मे सफल हुई।

पृथ्वीराज रासो की तरह इसम कुछ राष्ट्रीय भावना है किन्तु यह स्वामी भक्ति और छोटे राज्य के प्रेम तक ही सामित है। इस समय राष्ट्र केवल राजा और उसके आश्रय तक ही सीमित था।

जागनीक मे आल्ह खड के नाम से जो पद लोकप्रिय हैं उनके पढने से हृदय को जोश मिलता है और अग फडकने लगते हैं —

गुस्सा ह्वदकै पृथ्वीराज तब, तुरते हुकुम दियो करवाय।
बत्ती दे देउ सब तोपन म, इन पाजिन को देउ उडाय।
मुकै खलासी सब तोपन पर। तुरतै बत्ती दई लगाय।
दगीसलामी दोनो दल म। धुअना रह्यो सरग मडराय।
तोपैं छूटी दोना दल मे। रण मे होन लगे घमसान।
अरररर गोला छूट। कड कड कर अगिनिया बान।
रिमझिम रिमझिम गोला बरस। सन सन परी तीर की मार।

श्रीधर का "रणमल्ल छन्द'—इन्होंने सवत् १४५४ मे 'रणमल्ल छन्द' नामक एक काव्य रचा जिसमे ईडर के राठौर राजा रणमल की उस विजय का वणन है जब उसने पाटन के सूबेदार जफर खाँ को परास्त किया था–इस पद म हम देश पर आक्रमण करने वाले विदेशी शत्रु से लोहा लेन वाले वीर-पुत्रो के शौर्य का वणन पाते हैं–

ढम ढमढ ढम ढमक्कार ढकर ढोल्ली जगिया
सुर करहि रण-सहणाई, समुहरि सरस समरगिया
कल कलहि काहल कोडि कलरवि कुमल कायर थरहरई।
सचरइ शक सुरताण सायण साहसी सवि सगरइ॥

यना की कमी है। इनकी वीर भावना अपने आश्रयदाता के शौर्य व शक्ति के लम्बे आख्याना तक ही सीमित है। रासो ग्रन्थों म श्रृंगार का भी पुट मिलता है। इस काल की वीर भावना या देश प्रेम व्यक्तिगत तथा एक देशीय है। चारणो और कवियो म उदार वीर भावना की कमी पाई जाती है– इनकी समस्त भावनाए अपने सामतों, आश्रयदाताओं और उनके जीवन की छोटी-मोटी घटनाओ तक ही सीमित है। व्यापक देश राष्ट्र के हित की भावना का उनके लिए कोई महत्व नही था। चारणो के लिए छोटे से राज्य ही राष्ट्रतुल्य रहते थे व्यापक भारतवर्ष के प्रति प्रेमभावना की अभिव्यक्ति नही हुई थी। विदेशियों के प्रति रोष प्रधान रहता था।

आश्रयदाता की भूमि ही उनके लिए राष्ट्र है–आज के अर्थो म राष्ट्र का व्यापक अर्थ नहीं था। इनके लिए छोटा सा राज्य ही राष्ट्रीयता का प्रतीक था।

———

चतुर्थ अध्याय

भक्तिकाल और रीतिकाल मे राष्ट्रीय भावना

भक्तिकाल

भक्तिकाल का प्रारम्भ हिन्दी साहित्य मे एक महत्वपूर्ण घटना है जिसका श्रीगणेश वीरगाथा काल के पूर्व ही बहुत से सिद्धों तथा नाथ सम्प्रदाय के सन्तो ने कर दिया था। भक्तिकाल का समय लगभग सम्वत् १०५० से १३७५ माना गया है।

राजनीति के प्रागण मे जो हिंसात्मक प्रवृत्ति, द्वेष, संघर्ष अराजकता देश में व्याप्त वर्ण-व्यवस्था तथा विभिन्न सम्प्रदायों के कारण फली उसकी प्रतिक्रिया समाज और धर्म में दिखाई देने लगी। देश म मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित होना जा रहा था जिसके फलस्वरूप हिन्दू जनता के हृदय म गौरव गर्व और उत्साह क्षीण होने लगा। ऐसी दशा म अपनी वीरता के गीत न तो वे गा ही सकते थे और न बिना लज्जित हुए सुन ही सकते थे। "इतने महान राजनीतिक परिवर्तन के पश्चात हिन्दू जनसमुदाय पर बहुत दिनों तक उदासी छाई रही। अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था।' †

सामान्य परिस्थिति—अब हम पहले वीरगाथा काल के उत्तरार्ध की राजनीतिक परिस्थिति पर एक विहगम दृष्टि डालना आवश्यक समझते हैं जिसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप साहित्य की धारा ने नया मोड लिया। भारत मे मुस्लिम राज्य की नींव शहाबुद्दीन गोरी ने (सम्वत् ११७५ १२०६) म डाली थी। उसने सन् ११७३ के पश्चात मुलतान सिंध लाहौर को जीतकर अपने राज्य मे मिला लिया। सन ११९२ ई० म तराइन के दूसरे भयकर युद्ध म राजपूतो के नेता पृथ्वीराज चौहान को पराजित किया तथा अजमेर, कन्नौज तथा बनारस आदि स्थान भी जीत लिए।

---

† श्री रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ ६०

मुस्लिम आक्रमणो के प्रतिकार स्वरूप कुछ हिंदू राजाओ ने भी युद्ध क्षेत्र म बढकर मातभूमि की रक्षार्थ बलिदान दिए किन्तु एक सगठित शक्ति न होने के कारण शत्रु को पराजित नही किया जा सका। गुलाम वश के नागको न विद्रोही हिंदू नरेशो का दमन कर मालवा तथा सिंध तक अपना साम्राज्य बढाया। सन १२९६ से १३१६ तक मुस्लिम सत्ता को दृढ और स्थायी बनाने का काम अलाउद्दीन खिलजी न किया जिसने अपने अन्तगत लगभग समस्त भारत को लाकर एक सूत्र में बाँधने का कुछ प्रयत्न किया—किन्तु यह एकता स्थायी न रह पाई। मुहम्मद तुगलक न दक्षिण के देवगिरि वारगल तथा देवसमुद्र के राज्यो पर भी आक्रमण किया और अपने साम्राज्य म मिलाकर विस्तत प्रदेश की स्थापना की किन्तु उसकी योजनाए भी अस फल रही और उसके अतिम दिनो म राज्य व्यापी विद्रोह की लहर उठने लगा। अभी तक मुस्लिम शासको का लक्ष्य भारत की धन-सम्पत्ति लूटकर ऐश करने की ओर अधिक था। प्रजा की सुरक्षा सुख शाति की ओर ध्यान फिरोज तुगलक ने ही सन १३५१ म दिया। उसने लोक कल्याण के कई काय किए नगर बसाए बाग लगवाए राजप्रासाद तथा मदरसे बनाए किन्तु तमूर के आक्रमणो ने उसके इस आदश को महान आघात पहुचाया।

सन १४५१ १५२६ ई० तक भारत म लोदी राजवश ने राज्य किया किन्तु बाबर ने इब्राहीम लोदी को सन १५२६ म हरा दिया और तभी से उत्तरी भारत म बहुत से स्वतत्र राज्य स्थापित हो गये। इस समय समस्त देश—बगाल, गुजरात खानदेश मालवा जौनपुर आदि— म छोटे छोटे राज्य स्थापित हो गए। राजपूत तो पहले से ही स्वतन्त्र थे किन्तु अब उनम नए उत्साह का सचार हुआ। राजपूताने म हम्मीरदेव अत्यधिक पराक्रमी योद्धा राजा के रूप से विख्यात हो गए थे तथा देश भक्ति से परिपूर्ण और मातभूमि के अनन्य उपासक राणा सग्रामसिंह तथा राणा कुम्भा ने अपने अभूतपूव शौय और वीरता का परिचय देकर जनता म नया जीवन फूका। भारतवष म मुगल साम्राज्य की नीव बाबर ने ही डाली। उसके अतिरिक्त इस काल म हुमायू और शेरशाह आदि के राज्य काल के पश्चात सम्राट अकबर ने अपनी दूर दर्शिता तथा सूझ बूझ के कारण इस देश के उत्तरी और दक्षिणी भाग के राज्यो को एक सूत्र म बाधा। बीस वर्षों के सतत सघष और युद्धमय जीवन के पश्चात भी अकबर मेवाड को नही जीत पाया—मेवाड के स्वाभिमानी वीर पुत्रो ने अपनी मातृ भूमि की रक्षा के लिए केसरिया बाना पहन प्राणो की बाजी लगा दी। अपने सिर को हथेली पर रखकर लाखो की सख्या म वीर योद्धा घरो तथा परिवारो को छोड जगलो और पहाडो म बस कर मुगल सेना से लडने के लिए तत्पर हो गए थ। अकबर ने कुछ राजपूतो से मित्रता और उदार नीति प्रदर्शित कर अपनी ओर आकर्षित किया तथा कुछ राजपूत वशो की ललनाओ व कन्याओ से विवाह भी किया। धम के प्रति

उसका उदार दृष्टिकोण था—उसकी धार्मिक सहिष्णुता की नीति ने तथा हिंदुओ को राज्यपद मे उच्च स्थान देने की नीति ने उसे लाक प्रिय बनाया और राष्ट्रीय राज्य का भी निर्माण किया। उसके सामाजिक सुधारा दीन इलाही भूमिकर, अन्य नए तथा लोक कल्याणकारी कार्यों के कारण समाज मे शान्तिमय वातावरण कही कही दिखाई दिया और राष्ट्रीय राजतन्त्र का माग सुलभ हाने लगा। इस समय रणथभौर और चित्तौड आदि ही ऐसे स्थान रह गए थे जो अपना मस्तक उठाये रहे। विदेशी शासन को उलट देने की न तो किसी मे शक्ति ही रह गई थी और न इच्छा ही। देशाभिमानी क्षत्रिय वीर हम्मीर देव ने हिंदुओ का राज्य बनाए रखने की प्रबल चेष्टा की। उसके पश्चात् महाराणा प्रताप के उत्कट स्वदेशानुराग ने एक बार पुन शिथिल और निष्प्राण हिंदू जाति को नवजीवन प्रदान किया तथा मुसलमानो से डटकर युद्ध किया किन्तु महाराणा की मातभूमि प्रेम भावना म राष्ट्रीय चेतना का सहयोग नही था। महाराणा की वीरता उनकी व्यक्तिगत वीरता थी और अधिक से अधिक उन्हें इस पुनीत काय में स्वतन्त्रता प्रिय चित्तौड निवासियो की सहायता मिली थी। समस्त राष्ट्र का उसमे सहयोग नही था। उसका कारण यह है कि देश सो रहा था और विलासिता का क्रम भी अभी देश में चल ही रहा था। सामूहिक राष्ट्रीय भावना की कमी के कारण देश को विदेशी शत्रुओ के पंजो से नही छुडाया जा सका था।

अकबर के पश्चात् जहागीर ने राज्य सचालन किया तथा उसने कला आदि की ओर काफी ध्यान दिया—उसके साम्राज्य में ईरानी सस्कृति तथा सभ्यता का ही जोर रहा। सन् १६२७ मे उसने राज्य सचालन किया किन्तु उसे देश म बहुत से विद्रोहो एव सघर्षों का सामना करना पडा। उसन राज्य के राष्ट्रीय रूप को बनाए रखने का प्रयत्न किया तथा राज्य की उन्नति और समद्धि के लिए जागरूक रहा। शाहजहा के राज्यकाल के अतिम समय मे भी कुछ अशाति छा गई थी। सबसे अधिक असतोष यदि किसी के राज्य म रहा तो वह था औरगजेब। उसने राष्ट्रीय राज्य की उदारशील नीति परिवर्तित कर दी तथा राज्य के इस्लामी रूप द्वारा अपनी धार्मिक अनुदारता एव कट्टरता का परिचय दिया। वह अपने भाइयो के प्रति कठोर व्यवहार तथा जनसाधारण हिंदू के प्रति दुर्व्यवहार की प्रवत्ति के कारण विशाल मुगल *साम्राज्य को खड-खड होने से बचा नही सका। सास्कृतिक और राजनीतिक दोनो* दृष्टियो से जो एकता अभी कायम होती जा रही थी औरगजेब की इस असन्तोष प्रद नीति ने उसे क्षत विक्षत करने म कोई कसर नही छोडी। किन्तु इस समय अन्य कोई ऐसी केन्द्रीय शक्ति नही थी जो इस विद्रोह की चिंगारी को भडकाकर ज्वाला के रूप मे प्रज्वलित कर सकती—केवल खड खड रूप म ही—प्रतिकार की भावनाए उठती रही। धम म जजिया टक्स लगने के कारण अवश्य प्रबल प्रतिक्रिया हुई किन्तु मुगल साम्राज्य को नष्ट करने म सफल नही हो सकी। देश मे अन्य शक्तियाँ आपस मे

लड़कर अपनी शक्ति क्षय कर रही थी, सामूहिक रूप से संगठित होकर एक भंडे के नीचे एकत्रित नहीं हो पाई। औरंगजेब ने हिन्दुओं का ऊंचे पदों से हटाया तथा राजपूतों के साथ मित्रता के संबंधों को समाप्त सा कर दिया जिससे हिन्दू और मुसलमानों के बीच की खाई बढ़ती ही गई।

भारत में मुस्लिम शासकों की विशेषता रही है कि वे हिन्दू समाज में पूर्णतया घुलमिल नहीं सके। मुसलमानों के पूर्व भारत में अन्य विदेशी जातियाँ आक्रमण करती हुई आई—यूनानी, मंगोलियन, शक, हूण आदि किन्तु बाद में ये हिन्दू ही बन गये। परन्तु मुस्लिम भारत में सदैव विभिन्न समुदाय ही बने रहे। बहुत समय तक इन्होंने अपने धर्म प्रचार का प्रयत्न किया। दूसरों का धर्म परिवर्तन कराने की उनकी दृढ़ भावना थी और उसे कानून बनाकर, टैक्स लगाकर तथा हिन्दुओं के मंदिरों को तोड़कर मस्जिद बनाने के द्वारा उस समय समय पर पूरा किया। इसके अतिरिक्त मुस्लिम राज्य के सैनिकों में संगठन और घुमक्कड़ प्रियता विशेष गुण रहे।

इस विभिन्नता के अतिरिक्त दोनों संस्कृतियों के समन्वय के लक्षण भी भारतीय समाज में मिलते हैं। राजनीतिक क्षेत्र में इस काल में मुसलमानों का आधिपत्य भले ही रहा हो किन्तु वे आर्थिक सत्ता हिन्दुओं से नहीं छीन सके। शासन संचालन भूमिकर एकत्रित करने, वास्तुकला, भवन निर्माण आदि में हिन्दू ही कुशल और उपयुक्त थे इसलिए राज्य संचालन में हिन्दुओं का सहयोग आवश्यक था। पहले तो हिंदू जनता मुसलमानों से युद्ध करती रही किन्तु बहुत वर्षों के संघर्ष के पश्चात् बहुत से हिन्दुओं ने मुस्लिम सत्ता को स्वीकार कर लिया और शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहा। बाद में कुछ मुसलमान शासकों ने धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना कर देश में कला व्यवसाय तथा लोक हितकारी कार्यों की उन्नति प्रारम्भ की तथा उन्होंने ललित कलाओं और साहित्य को राज्याश्रय देकर प्रोत्साहित किया। विद्वानों का मत इस विषय में यह है कि हिन्दू संस्कृति पर मुसलमानों का प्रभाव पड़ा है। कुछ का कथन है कि हिंदू धर्म, हिन्दू कला, साहित्य तथा विज्ञान ही मुस्लिम तत्वों से प्रभावित नहीं हुए किन्तु हिन्दू संस्कृति की भावना में भी परिवर्तन हुआ। †

कुछ विद्वानों का मत है कि अपनी राजनैतिक निर्बलता के होने पर भी मध्य युगीन भारत सांस्कृतिक दृष्टि से इतना चेतनामय था कि उसने अपनी अन्तरात्मा को किसी के वश में नहीं होने दिया। भारत ने रणक्षेत्र में चाहे कुछ भी खो दिया हो किन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र में शास्त्रों द्वारा पुनः प्राप्त किया। * ये दोनों ही मत एकांगी

---

† डा. ताराचन्द–इन्फ्लूएन्स आफ इस्लाम आन इन्डियन कल्चर

* प्रो. शर्मा–दि क्रिसेंट इन इंडिया

हैं, वास्तव में सत्य तो यह है कि दोनो संस्कृतियों का जो भी प्रभाव हुआ वह जीवन के बाह्य-स्वरूप तक ही था तथा सामान्य नागरिक जीवन को आत्मसात नही कर सका।

मुस्लिम संस्कृति के भारतीय संस्कृति को पूर्णतया आत्मसात न कर सकने के अन्य भी कई कारण थे। अफगान, तुर्क शासन का सैनिक तथा सामन्तवादी चरित्र भारत की प्राचीन शासन परम्परा के प्रतिकूल था और जन-मानस का सहयोग तथा समर्थन इसे कभी नहीं मिला। मुस्लिम शासक अपने राज्य को सैनिक शक्ति के आधार पर ही विकसित करने में प्रयत्नशील रहे। नियमित अनुकूल और स्थिर नीति की अपेक्षा उन्होंने अपने स्वार्थ के हित की नीति का अनुसरण किया। सन् १२१० से लगभग १६ वीं सदी तक ग्राम पंचायतों की वजह से जनता की स्वतन्त्रता सुरक्षित रही। अफगान सुलतानों ने ग्रामों के स्थानीय स्वशासन में हस्तक्षेप करने का कोई प्रयत्न नही किया। पहले भी भारत के विभिन्न राजवंशो के आपसी संघर्ष के कारण कई विजय यात्राए होती रहीं थी पर जन साधारण की दृष्टि में ये विजय अभियान एक आंधी-तूफान के समान थे जिनके कारण बहुत से लोगो को अपनी जान-माल से हाथ धोना पड़ता था। युद्ध में विजयी होने वाले को कर देना, प्रत्येक किसान अपना पवित्र कर्तव्य समझता था। सर्व साधारण जनता पर उनके आधिपत्य का कोई विशेष असर नही होता था। इस प्रकार ग्राम अपनी स्वायत्त शासन प्रणालियों सहित अछूते रहे। दिल्ली के गृह-युद्धों और राजनैतिक क्रान्तियो ने उसे प्रभावित नहीं किया और अन्त तक ग्रामीण प्रजातंत्र अपने स्वशासन मे स्वतन्त्र रहे।† इसका यहा के जीवन पर एक यह भी परिणाम हुआ कि ग्रामीण जनता शासन से उदासीन हो गई और राजनीतिक हलचलो से अनभिज्ञ बन गई। राजस्थान में होने वाली राजनैतिक क्रान्तियो तथा षड्यन्त्रों के होने पर भी उन्हें अपना विवेक और बुद्धि का प्रयोग करने का महत्व नही दिखाई पड़ा। यही कारण है कि राजनीति से इतनी तटस्थता का परिणाम आगे चलकर देश के लिए बहुत ही घातक हुआ। तुलसीदास जी ने भी "कोऊ नृप होऊ हमे का हानी" कहकर जन-साधारण के मन की इस स्थिति का परिचय कराया है। अंग्रेजो के आने पर भारत वरसो तक गुलाम रहा और यहा जन साधारण मे विद्रोह करके अपनी स्वतन्त्रता को प्राप्त करने की चेतना बहुत देर में आई।

यह चेतना राजनीतिक क्षेत्र में चाहे सुप्त रही हो किन्तु बिल्कुल नष्ट नहीं हुई। सन् १८५७ के विद्रोह में तथा अंग्रेजो के विरुद्ध स्वतन्त्रता के आन्दोलन मे आगे चलकर यह प्रबल हुई। मध्ययुग में यह चेतना कहीं कहीं राजनीति मे अवश्य प्रकट हुई किन्तु अधिकतर इसका रूप हम धर्म में दिखाई देता है। हिन्दू जनता अपनी राजसत्ता के विलुप्त हो जाने पर बड़ी उद्विग्न थी। उस पर कठोर अनुशासन

† प्रो बी एन लूनिया—भारतीय सभ्यता और संस्कृति का विकास, पृष्ठ ३२७

किया जाता था तथा ऊंचे पदों से च्युत किया गया था। इतना ही नहीं हिंदू धर्मावलम्बियों को जजिया टक्स भी देने पड़ते थे और इस टक्स से बचने के लिए कुछ लोग तो मुसलमान भी बन गये किन्तु अधिकतर लोगों ने इस आघात को सहर्ष सहा और अपने धर्म को नहीं छोड़ा और हिंदू प्रभावशाली बने रहे। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं कि राजपूतों ने मुस्लिम आक्रमणों के प्रतिरोध के लिए संगठन किया और लगभग २०० वर्षों तक अपनी वीरता और मातृभूमि प्रेम का परिचय दिया। मेवाड़ के सिसोदिया राजकुल ने हिंदुओं का नेतृत्व बहुत समय तक किया। सन १४३३-६८ तक वीर योद्धा महाराणा कुम्भा और उनके वंशजों ने हिंदुओं के पुनर्जागरण आंदोलन का वीरता पूर्वक सचालन किया तथा उत्तरी भारत के बहुत से भाग को मुस्लिम विजय से बचाने का प्रयत्न किया।

भक्ति काल में साहित्यिक प्रतिक्रिया तथा राष्ट्रीय भावना

निर्गुण धारा-ज्ञानाश्रयी शाखा--हिन्दी साहित्य के आदिकाल में एक ओर तो चारणों की वीर रस संबधी रचनाएं मिलती हैं दूसरी ओर सिद्धों और नाथपंथी साधकों और जोगियों द्वारा तीर्थाटन, पर्व स्नान की निस्सारता फैलाने वाले पदों, 'दूहों' आदि का रूप भी मिलता है। *ये लोग जनता की दृष्टि को आत्म-कल्याण तथा* लोक-कल्याण विधायक सच्चे कर्मों की ओर ले जाने के बजाय कर्म क्षेत्र से हटाने में लगे हुए थे। दक्षिण से भक्ति की लहर भी इस समय उत्तर की ओर फैल रही थी, हमारे यहाँ निर्गुण और सगुण मत तथा भक्त कवियों का आविर्भाव भी ऐसे समय में हुआ जब मुसलमानों की असहिष्णुता से पीड़ित होकर जनता को अपने जीवित रहने तक की आशा नहीं रही थी और उसे मृत्यु या धर्म परिवर्तन के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं दिखाई पड़ता था। मुसलमान मूर्ति-पूजा और सगुणोपासना के विरोधी तथा निर्गुण निराकार के उपासक थे। हिंदू जनता को अपना नैराश्य दूर करने के लिए भक्ति का आश्रय ग्रहण करना आवश्यक हो गया था। इसके अतिरिक्त कुछ लोगों ने हिंदू और मुसलमान दोनों विरोधी जातियों को एक करने की आवश्यकता का भी अनुभव किया-इसके मूल में परमात्मा की एकता के साथ मनुष्यों की एकता का भी प्रतिपादन हो सकता था। मुसलमानों के सम्पर्क से हिंदू समाज पर एक और प्रभाव पड़ा। *वह था वर्णाश्रम की कट्टरता की व्यर्थता।* कबीर तथा उनके अनुयायी निर्गुण मतों ने अपने दोहों और पदों में संसार की अनित्यता वर्णाश्रम व्यवस्था की अनावश्यकता, हिंदू मुसलमानों की एकता बताई तथा अप्राकृत धर्म क्रियाओं की अनुपयोगिता प्रतिपादित की। मूर्ति पूजा तीर्थाटन आदि की असारता बताते हुए हज, नमाज व्रत, आराधना की गौणता समझाई तथा धर्म का प्रकृत और सहज रूप जनता के सामने रखा।

कबीर ने जो कुछ कहा वह विश्वास से कहा। उन्होंने मुल्ला, पण्डित दोनों को सबोधित करके सच्ची बात कही जिसमे उनकी सरलता, स्पष्टवादिता की झलक मिलती है। जो कुछ उन्होंने कहा वह अनुभव के आधार पर ही कहा। 'कबीर मस्तमोला थे— ज्यादा पढे लिखे भी नही थे। कविता करना उनका लक्ष्य नही था फिर भी उनकी उक्तिया मे ऊची कविता की बाँकी मिलती है।'§ सहज शिक्षा और सिद्धात के उपदेश उनकी साखी मे मिलते हैं। कबीर का काव्य भारतीय सस्कृति की अनमोल कडी है। कबीर की निर्भीकता सामाजिक अन्याय के प्रति तीव्र विरोध की भावना और उनके स्वर की सहज सचाई, उनकी विशेषता है। सामाजिक शोषण अनाचार और अन्याय के विरुद्ध सघर्ष म कबीर के काव्य ने एक तीखे अस्त्र का काम किया। आजकल के प्रगतिवादी समालोचको को, कबीर म सामती सामाजिक व्यवस्था के शोषण के खिलाफ विद्रोह दिखाई पडता है— कबीर से हम रूढिगत सामतो दुराचार और अन्यायी सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध डटकर लडना सीखते हैं और यह कि विद्रोही कवि किस प्रकार अन्त तक शोषण के विरुद्ध अपना सिर ऊचा उठाता है।"†

कबीर के पश्चात सिख सम्प्रदाय के प्रथम गुरु नानक देव का स्थान आता है। नानक ने भी मुसलमानो के आतक से त्रस्त पजाब की जनता को धैर्य बधाया और विभिन्न धर्मों म व्याप्त अशाति को दूर करने का प्राणपण से प्रयत्न किया। कबीर की भाति इन्होने भी ईश्वर के सम्मुख कुल और जाति के बधन का निरर्थक बताया। नानक भी अधिक पढे लिखे नही थे किन्तु अन्य सन्त कवियों की भाति इनकी वाणी का प्रभाव सीधे हृदय पर पडता है। इनके प्रसिद्ध पदो का सग्रह 'ग्रन्थ साहब' म किया गया है। नानकदेव ने भी भगवान की भक्ति, साधु सगति तथा जीवन की क्षण भगुरता सम्बन्धी बहुत सुन्दर भजनो की रचना की है।

इसी प्रकार दादू, रैदास, सुन्दरदास आदि ने भी ईश्वर प्रेम का सुन्दर निरूपण कर भक्तो के हृदय मे सदा के लिये स्थान कर लिया है। राजनीति के क्षेत्र म जो पारस्परिक द्वेष, सघर्ष, अराजकता वर्ण व्यवस्था थी—धर्म म उसकी प्रतिक्रिया दिखाई दी। देश के विभिन्न कोनो म सन्तो ने मानव मात्र मे प्रेम की भावना जगाकर जाति भेदो को भुलाते हुए भगवान के प्रेम म लीन होने का स्वर छेडा। इन महापुरुषो ने धर्म तथा सम्प्रदाय एव वर्ण के ऊच नीच के भेद भाव को मिटाकर सब प्राणियो की एकता का शख फूका जिसके परिणामस्वरूप देश का राष्ट्रीय चरित्र ऊचा उठा। दादू ने कहा—

---

† डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृष्ठ ८७

§ श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त—हिन्दी साहित्य की जनवादी परम्परा (प्रथम स०) पृष्ठ ६१

ताओं द्वारा हारती रही उसमे हीन भावना उत्पन्न हो गई थी, वह अब धनुष बाण की सहायता से राक्षसो के हाथ मे पड़ी हुई सीता के उद्धार करने वाले राम को अपना आदर्श मानकर नए जीवन और स्फूर्ति से परिपूर्ण हो गई। तुलसी ने राम का लोक कल्याणकारी पक्ष सामने रखा तथा हिन्दू मुस्लिम ऐक्य को बढाते हुए समाज मे सहिष्णुता मर्यादा, धैर्य, संगठन, शौर्य तथा नई आशा का बीज उगाया था।§ तुलसी असाधारण प्रतिभा लेकर उत्पन्न हुए थे। जिस युग मे तुलसी अवतीर्ण हुए उसमे समाज के समक्ष ऊचा आदर्श नहीं था—शासक तथा उच्च वर्ग के लोग विलासिता मे डूबे थे तथा निम्नकुल के अशिक्षित तथा मृतप्राय थे। देश मे संन्यासी और वैरागियो का जोर था। समाज में धन और ऐश्वर्य की महत्ता अधिक थी और सारा देश विश्रृंखल तथा आदर्श हीन हो रहा था। तुलसी प्रथम समन्वयवादी के रूप में जनता के सामने आये रामचरितमानस प्रारम्भ से अन्त तक समन्वय का काव्य है। उसमे मानव जीवन के किसी न किसी अंग पर प्रकाश है—किसी न किसी सामाजिक या वैयक्तिक कुरीति की आलोचना भी कलियुग चर्चा मे है। वे आदर्शवादी थे और अपने काव्य से भावी समाज की सृष्टि करना उनका लक्ष्य था—उन्हे भविष्य स्रष्टा माना जाता है। † इसका प्रभाव जनसाधारण तथा गृहस्थ मनुष्यो पर अधिक पड़ा।

तुलसी ने अयोध्या नगरी, सरयू नदी आदि का वर्णन किया है जिसमे हम उनकी अटूट श्रद्धा और तन्मयता पाते हैं—राम के मुख से जन्मभूमि के प्रति उद्गार इस प्रकार प्रकट कराए हैं—

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना, वेद पुरान विदित जगु जाना।
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ
जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि।
जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा।
अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुखरासी।
हरषे सब कपि सुनि प्रभु बानी। धन्य अवध जो राम बखानी।

तुलसीदास जी ने वर्तमान परिस्थिति के प्रति उपेक्षा या तटस्थता का भाव नहीं रखा वरन समाज मे पड़ने वाले दुर्भिक्षो की ज्वाला से पीड़ित महामारी से दुखी जनता को देख उन्हे दुख हुआ—

खेती न किसान को, भिखारी को न भीख बलि
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।

§ रामचन्द्र शुक्ल—गोस्वामी तुलसीदास पृष्ठ ३५
† डा हजारीप्रसाद द्विवेदी—हिंदी साहित्य की भूमिका—पृष्ठ १०६

राजा के समान प्रजा भी पतित हो रही थी—

प्रजा पतित पाखंड पाप रत, अपने अपने रंग रई है
साहिति सत्य सुरीति गई घटि, बढ़ी कुरीति कपट कलई है
सीदत साधु साधुता सोचति, खल विलसत, हुलसति खलई है। †

तुलसी ने अपने चारों ओर की गिरी हुई अवस्था और अनाचार को देखकर आदर्श राज्य की कल्पना की जिसका नाम रामराज्य रखा तथा जिसकी सर्वोपरि विशेषता प्रजा में पारस्परिक ऐक्य थी —

बयरु न कर काहू सन कोई,
रामप्रताप विषमता खोई।

जहाँ विषमता नहीं वहां सुख और शांति का विकास होता है, प्रजा, निर्भय, निश्चित और नीरोग रहती है—

बरनाश्रम निज निज धरम, निरत बेदपथ लोग
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग। §

तुलसीदास जी को आधुनिक दृष्टि से क्रांतिकारी चाहे नहीं कहा जाय किन्तु उन्होंने जो कार्य किया और जिस प्रकार का मत अभिव्यक्त किया उसने परिणाम वही उत्पन्न किया जो क्रांति का होता है। राजा यदि बुराई करे प्रजा का ठीक पालन नहीं करे तो अपने समय के अनुरूप तुलसीदास उसे तीन धमकी देते हैं—इस लोक में अयश, दूसरे धन का विनाश हो जाएगा—तीसरे परलोक में हानि होगी—

साचिय नर्पति नीति नहि जाना।
जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना॥ ‡
राजकरत बिन राज ही कर कुचालि कुसाज।
तुलसी ते दसकध ज्यों गइहै सहित समाज॥ *
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी॥ ०

---

† रामचरित मानस—उत्तरकाण्ड
§ रामचरित मानस—उत्तरकाण्ड (२०)
‡ रामचरित मानस—अयोध्याकाण्ड (१७०)
* दोहावली —दोहा ८१६
० रामचरित मानस—अयोध्याकाण्ड (७०)

राजा को प्रजा हितैषी होना चाहिए और तभी देश की सुख सम्पत्ति की वृद्धि हो सकती है। राजनीति का ज्ञान होने पर तथा उस पर चलने से राज्य का स्थिर होना सभव है। राजा को सपूण शिक्षाओं स दीक्षित होकर साम, दाम, दण्ड, भेद आदि नीति का प्रयोग करना चाहिए। तुलसी न प्रजातान्त्रिक रूप का भी चित्रण किया है। जब दशरथ राम के तिलक के सबध मे सकल्प करते हैं तो पौर जनों तथा राज्य के प्रमुख व्यक्तियों से सलाह लेकर उनकी अनुमति प्राप्त करते हैं। उनके पश्चात् राम के तिलक की तयारी प्रारभ होती है—

> नाथ रामु करिअहि जुबराजू। कृपा करि करिअ समाजू।
> जो पचहिं मत लागहि नीका। करहु हरषि हिय रामहि टीका।
> जो अनीति कछु भाषो भाई। तो मोहि बरजहु भय बिसराई।
> सब द्विज देहु हरषि अनुशासन, रामचद्र बैठहि सिंघासन।
> अब मुनिवर विलम्बु नहि कीज, महाराज कहु तिलक करीज।

आदश राजा के धम की सुन्दर व्याख्या तुलसी ने भी की है। रामचरित मानस म विभिन्न रसों का सुन्दर निरूपण पाते हैं वैसे तो उसमे शात रस की ही प्रधानता है पर अन्य रसो का भी चित्रण है। राम रावण-युद्ध म राम के क्रोध का वणन किया गया—

> भये क्रुद्ध जुद्ध विरुद्ध रघुपति त्रोन सायक कसमसे।
> कोदडधुनि अति चडसुनि मनुजाद सब मारुत ग्रसे।
> मदोदरी उर कप कपति कमठ भू भूधर त्रसे।
> चिक्करहि दिग्गज दसन गहि महि देखि कौतुक सुर हस।

युद्ध का वणन भी प्रभावोत्पादक है—

> उर दहेउ कहेउ कि धरहु धावहु विकट भट रजनीचरा।
> सर चाप-तोमर सक्ति-सूल-कृपान परधि परसु धरा।
> प्रभु कीन्ह धनुपटकोर प्रथम कठोर घोर भयावहा।
> भये बधिर व्याकुल जातुधान न ज्ञान तेहि-अवसर रहा।

× × ×

> तब चले बान कराल। फुकरत जनु बहु व्याल।
> कोपेउ समय श्रीराम। चल विसिख निसित निकाम।
> अवलोकि खरतर तीर। मुरि चले निसिचर बीर।
> भये क्रुद्ध तीनिउ भाई। जो भागि तें रन जाई।

वास्तव म तुलसीदास न अपनी रचनाओ म तत्कालीन सामाजिक एव राज नीतिक परिस्थितियों का चित्रण करते हुए मानव समाज के प्रत्येक अग को ध्यान मे रखा जिससे वे जनसाधारण म अधिक लोकप्रिय हुए हैं। इसके अतिरिक्त उन्होने राम राज्य की कल्पना द्वारा सुराज्य तथा स्वराज्य की सुदर भावनाओ का समावेश कर जनमानस के हृदय मे भक्ति के साथ उदार प्रेम, आय मर्यादा, कर्त्तव्य राज धर्म, राष्ट्र धम तथा ऊची और नीची जातियो म प्रेम भावना का रूप दिखाकर तत्कालीन परिस्थितियो का हृदयग्राही चित्रण किया और उसके आचरण की प्रेरणा प्रदान की है। आज भी दूर देहातों तथा शहरो म बसने वाले लाखो शिक्षित अशिक्षित स्त्री पुरुषो के उदात्त सस्कार म तुलसी के नीति सबधी दोहे और चौपाइयो का महत्वपूर्ण योग रहा है। तुलसी ने युग की आवाज को पहचाना और लोक कल्याण के लिए प्रेरणाप्रद साहित्य का निर्माण किया। 'उनके विचार म जिस समाज म ज्ञान सम्पन्न शास्त्रज्ञ विद्वानो अन्याय और अत्याचार के दमन म तत्पर वीरो पारिवारिक कतव्यो का पालन करने वाले उच्चाशय व्यक्तियो पति-परायण सतियों, स्वामी सेवा पर मर-मिटने वाले शासको आदि के प्रति श्रद्धा और प्रेम का भाव उठ जाएगा तो उसका कल्याण कदापि नही हो सकता। *

रामभक्ति शाखा के अन्य कविगण भी हुए जिनम नाभादास, स्वामी अग्रदास तथा रीवा नरेश विश्वनाथसिंह रघुराजसिंह केशवदास आदि प्रमुख हैं। इन्होंने सब प्रकार की कविताए की जिससे परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप से राष्ट्रीय चरित्र को ऊचा उठाने की प्रेरणा दी और साहित्य की अभिवृद्धि की।

कृष्ण भक्ति शाखा – कृष्ण भक्ति की भावना का प्रारभ बहुत पहले हुआ है— महाभारत म कृष्ण के बाल रूप को इतना अधिक महत्व नही दिया जितना उनके योगीराज बनकर द्वारिकापुरी म वास करने तथा कुरुक्षेत्र के युद्ध मे पाँडवो के सहायक के रूप को। जयदेव ने गीत गोविंद रचकर गीति काव्य की परम्परा को बढाया तथा विद्यापति ने कृष्ण और राधा की प्रेममय भक्ति का निरूपण किया। गीतिकाव्य की इसी परम्परा को मीरा और सूर ने अपनाया तथा उनके विभिन्न स्वरूपो लीलाओ का प्रदशन कर आत्म विभोर करने वाले भावो का चित्रण किया। वल्लभाचाय ने पुष्टिमाग की स्थापना की जिसके अनुसार कृष्ण ही ब्रह्म हैं जो सत चित् और आनन्द स्वरूप हैं और इन्हे ज्ञान की अपेक्षा प्रेम और आत्म समपण की भावना से प्राप्त किया जा सकता है। इस परम्परा म सूर, मीरा नरोत्तमदास तथा अष्टछाप के अन्य कवि हुए हैं। कृष्ण की लीला का प्रमुख केन्द्र, ब्रज वृदावन, गोकुल और द्वारका

* रामचन्द्र शुक्ल–हिन्दी साहित्यक का इतिहास पृष्ठ १३८

को केंद्रित मानकर भक्त-वत्सल कवियो ने प्रेम तत्व द्वारा उपासना की है। किन्तु इसमे लोक-पक्ष का समावेश नही है। इन कृष्णभक्तो के कृष्ण प्रेमोन्मत्त गोपिकाओ से घिरे हुए गोकुल के श्रीकृष्ण हैं, बडे बडे भूपालो के बीच लोक व्यवस्था की रक्षा करते हुए द्वारका के कृष्ण नही। ये भक्त राष्ट्र हित की ओर उन्मुख नही थे किन्तु अपने रग मे मस्त रहने वाले जीव थे, तुलसी के समान लोक सग्रह और लोक-कल्याण की भावना इनमे नही थी जिसने देश मे श्रद्धा, भक्ति प्रेम तथा राष्ट्रोत्थान तथा नीति-अनीति के ज्ञान की विवेचना की हो। समाज किधर जा रहा है इस बात की परवाह इन्होने नही रखी। बाद मे ब्रजवासी ब्रजभूमि म रासक्रीडा के नाम पर कृष्ण भक्तो ने वासनापूर्ण भावो की अभिव्यजना करते हुए राधा कृष्ण के नखशिख का विलासपूर्ण नग्न वर्णन किया। मन्दिरो म भी कृष्ण की लीला तथा "केसर की चक्की चले' आदि व्यवस्था करने मे बडे बडे मठाधीशो मे झगडे तक होते रहे और ये कवि इतने गिरे कि अपने पूज्य इष्टदेव राधाकृष्ण को ही उन्होने नायक-नायिका के रूप मे उपस्थित किया और उसम सयोग शृगार का विलासमय वर्णन 'राधिका सुमिरन को बहानो' बन गया।

राम और कृष्ण भक्त कवियो द्वारा तत्कालीन राजनीतिक अव्यवस्था और अशाँति द्वारा निर्मित निराशापूर्ण समाज मे कुछ परिवर्तन आया तथा जनता का मन ससार से हटकर भगवत भक्ति की ओर लगा किन्तु देश मे एकता तथा राष्ट्रीय भावना का प्रसार न हो पाया। राम और कृष्ण के वीरतापूर्ण कार्यों मे अलौकिक शक्तियो का ही आश्रय लिया गया। सूर और तुलसी मे लोक कल्याण तथा सामाजिक उन्नति की राष्ट्रीय भावना प्रच्छन्न रूप मे कही कही दिखाई देती है। अन्य सन्तो, कवियो और महात्माओ ने वैराग्य, त्याग मायामय जगत की निस्सारता सासारिक जीवन के दुखमय स्वरूप को दिखाते हुए केवल ब्रह्म, गिरधर गोपाल, यशोदानन्दन आदि के प्रति प्रेम और भक्ति या ज्ञान की प्रेरणा देने का प्रयत्न किया है—देश का विदेशी शत्रुओ से बचाने तथा स्वतन्त्र कराने की ओर किसी का ध्यान नहीं गया।

भक्तिकाल का वीर काव्य—भक्तिकाल म हम प्रेम और भक्तिपूर्ण रचनाओ के अतिरिक्त वीरगाथा काल की परम्परा को पालन करते हुए राजस्थानी भाषा क कवियो और चारणो का भी उल्लेख पाते हैं जिन्होने तत्कालीन राजनीतिक वैषम्य ओर अशाति की परिस्थिति से सर्वथा तटस्थता नहीं दिखाई वरन विदेशी आक्रमण कारियो के विरुद्ध देश प्रेमियो और वीर योद्धाओ के सघर्ष का प्रेरणाप्रद वर्णन भी किया है। किन्तु इनकी सख्या बहुत कम है—

सूजा जी—ये बीठू शाखा के चारण थे। इनका लिखा "राव जतसी रो छद'

नामक ग्रथ मिलता है (सम्वत् १५६१–१५६८ म बीच) जिसम बाबर के पुत्र कामरान (पजाब और काबुल का हाकिम) तथा बीकानेर नरेश राव जतानी के युद्ध का वणन है—पर इस सम्बन्ध मे मुसलमान इतिहासकार मौन हैं। ओजस्विनी वर्णन शली का यह पद्य प्रसिद्ध है—

> घडहड ढोल धूज धरति, पडिया लगि परस रोडपति ।
> बीकाहर राजा ईद वगि, साकरा मिरे सिरिया सहगि ।।
> पतिसाह फौज पूरन्ति पालि, ब्रह्मण्ड जन जाज विचालि ।
> अम्बहर जत वरस अवार, धुहक्कियाँ मोर मुहि मग्ग धार ।।

ईसरदास—जोधपुर राज्य के निवासी थे तथा चारण जाति के थे। ये जोधपुर नरेश राव मालदेव के यहाँ रहते थे तथा स १५९६ म बीकानेर के युद्ध म साथ थे। इनका 'हाला झाला रा कु डलिया वीर रस की उत्कृष्ट रचना है। इनके दोहे भी प्रसिद्ध हैं—

> सादूलो आपँ समो बीजो कवण गिणत ।
> हाक बिडाणी किम सहै, घण गाजिय मरत ।।

सिंह अपने मुकाबले म और किसी को गिनता है ? वह किसी दूसरे की हाक कसे सह सकता है ? वह तो बादल के गरजते ही मरता है।

> हिरणा लाबी सींगडी, भागण तणो सभाव
> सूरा छोटी दाँतली, दे घण थट्टाँ घाप ।

हरिना के लम्बे सींग होते हैं, पर स्वभाव भागने का होता है। सुअरा क छोटे से दात होने हैं पर वे शत्रु समूह पर गहरा घाव करते हैं।

केशवदास—ये जोधपुर राज्य के चिडिया गाव के निवासी थे तथा जाडण शाखा के चारण थे (सवत् १६१० से १६६७) इन्होंने जोधपुर के महाराज 'अमरसिंह जी रा दूहा' मे वीरता का वणन किया है।

> भीम भयकर नाय भेर नीसाण गरज्ज ।
> गुहिर सद्द गडगड गयण बारह घण गज्ज ।
> खिब कू त अदभुत भडा वाका भुआ डडे ।
> मुडाणी वादलि वलक बीज लता ब्रिहमडे ।। *

---

१० मोतीलाल मेनारिया—राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृष्ठ १५६

पथ्वीराज—बीकानेर नरेश राव कल्याणमल के बेटे थे और जन्म सवत १६०६ मे हुआ। कनल टाड ने इन्हें अपने युग के वीर सामतो मे एक श्रेष्ठ वीर माना और इन्हें अच्छा कवि भी बताया।' इनके वेलि क्रिसन रुकमणी री, गगालहरी, वृसदेवरावडत, दशरथ रावडत ग्रथ हैं। कुछ दोहे—

कलकलिया कुत किरण कलि अकलि।
बरजित विसिल विवरजित बाउ।
धड़ि धड़ि धधकि धार धारजल,
सिहरि सिहरि समखे सिलाउ।

भाले रूपी सूर्य की किरण युद्ध मे सतप्त होकर चमचमाने लगी। बाण बन्द हो गये। शरीर शरीर पर तलवारों की धार चमक रही हैं। मानो शिखर शिखर पर बिजलिया चमक रही हैं।

माई एहड़ा पूत जण, जेहड़ा राणा प्रताप।
अकबर सूतों ओझके, जाण सिराप सांप॥
अकबर समद अथाह, सूरापण भरियो सजल।
मेवाड़ो तिण मांह, पोयण फूल प्रतापसी॥

दुरसा जी—जोधपुर राज्य के घू दला गाव के चारण जाति के थे। इनका जन्म सवत १५९२ मे हुआ। दुरसा जी केवल यशस्वी कवि ही नही योद्धा भी थे। इनके राणा प्रताप की प्रशसा मे कुछ दोहे निम्न हैं—

लोय हिन्दू लाज सगपण रोप तुरकसू।
आरज कुल की आज पूजी राण प्रताप सी।
अकबर पत्थर अनेक, कै भूपत मेला किया।
हाथ न लागो टेक, पारस राण प्रताप मी।

रीतिकाल मे राष्ट्रीय भावना

रीतिकाल की राजनीतिक परिस्थिति के सबध में सविस्तार रूपरेखा प्रस्तुत करने की आवश्यकता नही क्योंकि भक्तिकाल तथा उसके पश्चात् की अवस्था का चित्रण पहले किया ही है। इस काल के साहित्य का स्वरूप ठीक ठीक समझने के लिए भक्तिकाल के अतिम चरण मे कृष्ण भक्ति सम्बन्धी विकृत धारा का निरूपण किया जा चुका है। कृष्ण की ललित लीलाओ के वर्णन तथा कृष्ण राधा के सौंदर्य तथा परकीय प्रेम में भक्त कवियो ने अपनी सारी शक्ति लगाई। इन

जटमल—जटमल द्वारा लिखित 'गोराबादल' की कथा में प्रचलित वीर काव्य शैली का प्रयोग किया है। इसमें अलाउद्दीन के चित्तौड़ दुर्ग पर आक्रमण के अवसर पर गोरा बादल के द्वारा वीरता प्रदर्शित करने का वर्णन मिलता है। ग्रन्थ बड़ा रोचक है तथा काव्योचित गुणों से परिपूर्ण है। युद्ध करते समय गोरा की वीरता का वर्णन देखिए—

तज तखार जुरज्ज कु देह दडा बह साहु दुरजन देह—
कर चक्चूर गयन्द कपाल सकै उमराव न आप सभाल
कहे मुख मीर भयो जमकाल, ग्रदे नर दे हथियार सुढाल
तिणे तिणे देतन सारह वीर, न मारहि तो गिरगोरिल वीर। †

भूषण—भूषण के जन्मकाल के सबंध में अभी निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सका है बहुत से विद्वानों के विभिन्न मत हैं। भूषण का असली नाम भी यह नहीं है यह केवल उपाधि है—

कुल सुलक चित्रकूटपति, साहससील समुद्र।
कवि भूषण पदवी दई हृदयराम सुत रुद्र॥

भूषण का काव्य वीरगाथा का विकसित रूप है। हिंदू राष्ट्र के प्रमुख कवि होने के नाते भूषण को चंद वरदाई और भारतेंदु के बीच की कड़ी कहा जाय तो असत्य नहीं है। जातीयता की संकीर्णता से ऊपर उठकर भूषण ने समस्त हिंदुओं को एकता के सूत्र में बाधने के लिए प्रयत्न किया। भूषण की मातृभूमि प्रेम भावना आसपास के प्रांतों के घेरे को तोड़कर हिमालय पर्वत की चोटी चूमने वाली हिंद महासागर के समुद्र की उत्ताल तरंगों को छूने वाली है। भूषण के अमर नायक वीर शिवाजी समस्त हिंदू समुदाय के नेता के रूप में प्रतिष्ठित हुए। भूषण धन और ऐश्वर्य के लोभ से ही शिवाजी के पास नहीं आए वरन उनके त्याग पूर्ण और पराक्रमी व्यक्तित्व ने ही उन्हें खींच लिया। भूषण ने सच्चे लोकनायक का आदर्श शिवाजी में पाया और इसीलिए शिवाजी को विष्णु का अवतार तक कहा। शिवाजी की केवल वीरता ही नहीं वरन सच्चरित्रता परोपकार प्रियता धर्म परायणता आदि सभी आदर्श रूप हमारे समक्ष हैं। अपने मनोनुकूल नायक को पाकर भूषण की कविता कृतकृत्य हो गई। शिवाजी के यश की धवलता से प्रभावित होकर गिरिजा गिरीश को खोजने लगी कहकर भूषण ने शिवाजी की अनुपम वीरता का यथार्थ चित्रण किया है। भूषण के वीररस के आस्वादन के लिए उत्साहपूर्ण हृदय तथा सिंहोपम निर्भीकता और प्रखर राष्ट्र प्रेम आवश्यक है।

† गोरा बादल कथा—पृष्ठ ३१ छन्द १३४

मुसलमानो के खिलाफ घृणा और द्वेष एव हिंदुओ के प्रति सम्मान और स‌म्भाव प्रदर्शित करने के कारण किसी किसी ने भूषण को साम्प्रदायिक कवि कहा है। अपने धम या सम्प्रदाय की स्तुति करना, विपत्ति पर उसके लिए प्राणोत्सग करना कोई अपराध नही है। केवल अ य धर्मावलम्वी होने के कारण किसी से द्वेष रखना उसका अनिष्ट चितन करना उसके सदगुणो से विमुख हो जाना साम्प्रदायिकता है। अ यायी और आततायी का विरोध करना साम्प्रदायिकता नही, मानव धम है। भारतवष म बहुत पहले से विदेशियो के आक्रमण तथा लूटमार होती आई है कितु राष्ट्र प्रेमी कवियो ने उनकी सुरक्षा और अखडता के गीत गाए तथा शत्रु के नष्ट होने की कामना की। भूषण की रचनाए भी साम्प्रदायिक नही हैं–यह तो उस समय की माग थी। उस समय की राष्ट्रीयता मे और आज बीसवी सदी की राष्ट्रीयता म अ तर यही है। जो स्वरूप आज से कुछ वष पूव अग्रेजी सत्ता का था तथा उसका विरोध करना प्रत्येक भारतीय अपना कतव्य समझता था वही रूप उस समय मुसलमानी शासको के प्रति था। उस समय मुसलमानी सत्ता को अभारतीय अराष्ट्रीय मानने की भावना थी तथा उसके प्रति असतोष प्रकट किया गया। †

किसी किसी ने भूषण को साम्प्रदायिक कहा है। किन्तु भूषण ने हिंदू धम के कट्टर विरोधी आततायी और निमम औरगजेब की निंदा की है वह मुसलमानी धम विरोध के रूप मे नहीं किन्तु अत्याचार और अ याय के विरोध मे है। यदि इनकी दृष्टि जाति द्वेष से विषाक्त होती तो औरगजेब ही क्या उसके पूव पुरुषो, वशजो को भी भला बुरा कहा होता। भूषण ने औरगजेब की तो नि दा की है कितु उसके बाप दादा आदि की प्रशसा की है—

दौलत दिली की पाद कहाए अलमगीर
बब्बर अकब्बर के विरद विसारे त।
बब्बर अकब्बर हिमायू माह सामन सा
नेहतें सुधारी हेम हीरन त सगरी।

साम्प्रदायिक व्यक्ति अपने मे ज्ञान और तर्क पक्ष की दुबलता के कारण औरो के विचार वभि य से हमेशा व्याकुल रहने के कारण चिडचिडा हो जाता है। आत्म विश्वास की कमी के कारण अपने मन के खूटे को वह जोरो से पकडे रहता है और इस प्रकार वह कट्टर हो जाता है। किसी वस्तु पर दूसरे के दृष्टिकोण से विचार नही करने के कारण धीरे धीरे उसम सवेदना का अभाव बढ जाता है तब वह निष्ठुर

† १ हिन्दी की आधुनिक राष्ट्रीय कविता–लेखक डा विनयमोहन शर्मा
अजता, जनवरी १९५७, पृष्ठ २५६

और हृदयहीन हो जाता है। एकांगी विचार रखने के कारण धर्म की चौड़ी सड़कों में वह खो जाता है और सम्प्रदाय की सकरी गली में गुम जाता है। ऐसा व्यक्ति उदार नहीं जल्दबाज होता है वह दूसरों की सुख सुविधा का ध्यान नहीं रखता धकेलता हुआ आगे बढ़ा जाता है और दूसरों के कष्टों में सुख पाने का आदी हो जाता है। यह परपीडन धर्म के विकृत प्रेम का परिचायक है। अपने से विभिन्न सम्प्रदायक वालों की कष्टमय अवस्था को देखकर साम्प्रदायिक व्यक्ति पाशविक आनंद से नाच उठता है। भूषण का व्यक्ति इन दुर्गुणों से सर्वथा मुक्त है। एक मुसलमान कन्या को उसके घर तक सम्मान सहित सुरक्षित पहुंचाने की आज्ञा देकर तथा पड़ी हुई कुरान पुस्तक का सम्मान कर शिवाजी ने अपनी उदारता व दृढ़ चरित्र का ऐतिहासिक परिचय दिया। शिवाजी की मां तथा गुरु समर्थ स्वामी रामदास के प्रेममय उदार और आदर्शपूर्ण उपदेशों तथा शान्त चरित्र और कर्तव्य के वातावरण ने सस्ती साम्प्रदायिकता को कहीं गुंजाइश नहीं रहने दी। जिस प्रकार महाराणा प्रताप ने अकबर का विरोध किया उसी प्रकार भूषण ने औरंगजेब और उसके समर्थकों का अपनी वाणी द्वारा विरोध किया। भूषण ने इस दोहे में—

'इन्द्र जिमि जंभ पर बाड़व सुअम्भ पर रावन सदंभ पर रघुकुल राज है
पौन बारिवाह पर संभु रतिनाह पर ज्यों सहस्रबाहु पर राम द्विजराज है।

औरंगजेब की उपमा जंभासुर रावण सहस्रबाहु और अंधकार से दी है और शिवाजी को इन्द्र राम परशुराम तथा सूर्य कहकर सुशोभित किया है। शिवाजी और औरंगजेब की लड़ाई देवता और दानव प्रकाश और अंधकार के बीच की लड़ाई है। इस कवित्त में 'म्लेच्छ वंश' पापियों के लिए प्रयुक्त हुआ है। गांवों में म्लेच्छ शब्द नीच गंदे तथा पापी मनुष्यों के लिए व्यवहृत होता है।

हिंदुओं पर जजिया टैक्स लगाकर तथा उनके मंदिरों को तुड़वाकर औरंगजेब ने अपनी पक्षपातपूर्ण नीति को मनमाने ढंग से प्रकट किया। मुसलमानों की साम्प्रदायिकता को खत्म करने के लिए भूषण ने सभी हिंदुओं को शिवाजी के नेतृत्व में सम्मिलित होने का आह्वान किया।

मुस्लिम शासन काल में महाराष्ट्र में भक्ति आन्दोलन ने राष्ट्रीय भावना जाग्रत कर दी और उसकी पराकाष्ठा शिवाजी जैसा नेता में हुई। शिवाजी ने राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत मराठों को सैनिक समुदाय में संगठित किया और बीजापुर और मुगल सेनाओं को पराजित कर भयंकर प्रतिरोध के होने पर भी हिंदू राज्य की स्थापना की। स्वदेश प्रेमी वीर कुशल शासक और राजनीतिज्ञ के रूप में शिवाजी ने अपना व्यक्तित्व ऊंचा बनाए रखा। मराठे बड़े ही वीर अद्भुत चपलता तथा शौर्य

पूण योद्धा थे-शिवाजी ने उनमें आत्म सम्मान तथा वीरता की ज्वाला को प्रज्वलित किया।

शिवाजी के सबध म श्री जी एस आर देसाई, रानाडे तथा सावरकर आदि विद्वानो ने कहा है कि वे सपूण भारत मे हिंदू राज्य की स्थापना करना चाहते थे। जब तक समय गुरु रामदास रहे तब तक उनकी प्रेरणा से समाज मे एक सगठन और क्रान्ति की ज्वाला उग्र रूप म धधकती ही रही। श्री एम जी रानाडे ने स्पष्ट कहा है कि दिल्ली मे देश की विभिन्न शक्तिया का सगठन कर एक केन्द्रीय शक्ति हिन्दू पादशाही की स्थापना की जा जाय—

'It was this force behind which supported the efforts of the leaders and enabled them to dream as a possibility of the establish ment of a central *Hindu Padshahi or empire at Delhi uniting and* controlling all other native powers' *

वीर हृदय होने के कारण भूषण की भाषा बहुत स्पष्ट रही और इसी कारण भूषण को 'अप्रिय सत्य भी अधिकतर कहना पडा। सत्य और न्याय के नाम पर अपने देश के लिए सघष करने वाले इस राष्ट्रीय कवि को साम्प्रदायिक कहना भूल है। वास्तव मे 'अपने पौरुष से हताश हिन्दू जाति की ढीली नसो म भूषण के छन्दों ने बिजली का सचार कर दिया।

महाराज शिवाजी ने मुसलमानो के सबध म उदार नीति ही दिखाई। मुसलमानो के प्रति उनके हृदय म घृणा, द्वेष और वर नहीं था। भूषण का म्लेच्छ शब्द से अभिप्राय समस्त मुसलमान जाति से न होकर, विशिष्ट वग से तथा औरगजेब और उसकी तानाशाही से सबध था। भूषण वास्तव मे सपूण भारतवष को एक सूत्र मे आबद्ध देखना चाहते थे। भूषण रीतिकालीन धारा के कवि होते हुए भी वीर रस के कवियो मे सव श्रेष्ठ हैं। हिन्दू राष्ट्र के निर्माण मे जहा शिवाजी का नाम अमर है उसी प्रकार भूषण भी हिंदी जगत म अमर बने रहगे। अपने ग्रथो मे उन्होंने अन्याय, दमन मे तत्पर, हिंदू धम के सरक्षक दो नायको का चरित्र चित्रण किया है। एक तो महाराज शिवाजी, दूसरे पन्ना के महाराज छत्रसाल। शिवाजी तथा छत्रसाल महाराज की कीर्ति तथा वीरता के काव्य मे खुशामद तथा अथ सचय की दृष्टि नहीं हिंदू जाति के गौरव और सम्मान की उदार भावना अधिक थी।

भूषण के ग्रथो मे शिवराज भूषण शिवाबावनी, छत्रसाल दशक ग्रथ प्रसिद्ध है। इनके ३ ग्रथ और कहे जाते हैं--भूषण उल्लास दूषण उल्लास भूषण

* श्री एम जी रानाडे–राइज आफ दी मराठा पावर, पृष्ठ ८

हजारा, किन्तु इनकी प्रामाणिक प्रति अप्राप्य है। भूषण के कवित्त बहुत ही प्रभावपूर्ण और वीररस युक्त होते हैं। भूषण को जितना जातीयता, जाति गौरव तथा हिंदुत्व का ध्यान था उतना शायद ही किसी का हो। भूषण की कविता के नायक हिंदू हैं और जो भी हिंदुओं के पक्ष में लड़े थे उन्हीं का वर्णन भूषण ने किया है। भूषण के कुछ प्रसिद्ध कवित्त ये हैं —

साजि चतुरंग वीर रंग मे तुरंग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।
भूषण भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत है।

वीर पूजा की भावना की अभिव्यक्ति हिंदू हिंदुत्व द्वारा की गई है—

साहि के सपूत मरदाना किरवाना गहि
राख्यो है खुमाना बचाय हिंदुवान का
राखी हिंदुवानी हिंदुवान को तिलक राख्यो
राखी रजपूती रजधानी राखी राजन की
धरा मे धरम राख्यो गुन गुनी मे।

× × ×

वेद राखे विदित पुरान परसिद्ध राखे
राम नाम राख्यो अति रसना सुघर मैं
हिंदुओ की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की
काँधे मे जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं
मीडि राखे मुगल मरोडि राखे पातसाह
बैरी पीसि राखे वरदान राख्यो कर मैं।

× × ×

भुज भुजगेस की बैसगिनी भुजंगिनी सी
खेदि खेदि खाती दह दारन दलन के
बखतर पाखरनि बीच धसि जाती मीन,
पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के
रैया राव चंपति को छत्रसाल महाराज,
भूषण सकत करि बखान को बलन के।
पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर, —
तेरी बरछी ने बर छीने है खलन के।

मानकवि—इनके जीवन के सबंध में कुछ विशेष सामग्री उपलब्ध नहीं हुई है। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'राजविलास' सवत् १७३४ मे लिखना प्रारम्भ हुआ जिसमें वीर केसरी मेवाड नरेश महाराणा राजसिंह की वीरता और शौर्य की प्रशसा की गई है। औरगजेब तथा महाराणा के युद्धों का विशद वर्णन कराकर कवि ने मातृभूमि प्रेम तथा विदेशियों के आक्रमणों से देश की रक्षा का सुन्दर चित्रण किया है।

महाराणा जय राजसिंह ने जजिया कर का भयकर विरोध किया तथा औरगजेब को उसकी इस नीति के खिलाफ पत्र भी लिखा। बाद मे औरगजेब ने राजपूतों पर आक्रमण किया जिसका वर्णन राजविलास के अंतिम नव विलासों में किया गया है—

धये धींग धीग धराल धमक्के।
यही कोद ते लोकपाल चमक्के॥
जये इटठ जप्प जुरे जोध जोध।
करी कक बबो भरे भूरि क्रोध॥

× × ×

बिना सत्थ केते परे लत्थ बत्थे। रन राम रत्ते रूपे पाइ हत्थे।
मचे मुद्ध युद्ध मनो मल्ल मल्ल। अरे मत माहिष्व ज्यों दे अडुल्ल।

बाद में राजपूतों ने शिवाजी तथा मराठो के विद्वानो का अनुकरण किया और उदयपुर को छोडकर पहाड़ो की घाटियों में छिपकर युद्ध करने लगे। उदयपुर के खाली हो जाने पर औरगजेब ने सारा नगर लूट लिया और कई मदिरो तथा मूर्तियो को तुडवाया। उसके बाद अकबर को उदयपुर का काय सुपुर्द कर औरगजेब अजमेर गया। अकबर से भी राजपूतों ने बडी वीरता से युद्ध किया तथा राजपूतो की हिम्मत बढ़ी और अकबर को पीछे हटना पड़ा—

भइ भूमि भयकप, प्रचलि पर धर युद्ध पत्तन,
होत कोट सलोल, गिरत मह दुर्ग माढ़ घन।
दिश विश उटिठ दहक्कक धुक्क मच गुर भर भक्सर।
सर सरिता इह सुक्कि दर राह धरक्कर।
पहूरे मिसंक धव करि बहुत, मिल्यौ म्लेच्छ तिन मारयो।
महाराणा सुभट सामंत सजि बहु असुराण बिडारय।
बड़ो साहिजादा मगो, मह अजमेर कमिहुठ।
[illegible]

भालनि सा भाला भिरया बरछामो बरछानि,
मरे समसेर समसेरेनि सुबग म ।
तीरन को कीना तन तीरनि तुनीरु तोरु,
तोरदार जोरन न पावद सुफग म
× ×
फौजनि की घटा की घमड घोर घेरु करि
मौज दीन मघवा के मन म उछाह मो ।
तोप गरजत तरवारि बीजु तरजन
बरषत बानन अचल चारयो राह मो ।

श्रीधर ने वीररस के वणन म टवग ठवग शब्दो के अतिरिक्त नाद का भी प्रयाग किया है इससे अनावश्यक शब्दो का प्रयोग भी हुआ है--

भटट ठटट डट भटग भटट हरि आभटटे हरि ।
उद्धत जुद्धत युद्ध सुद्ध गज्जत जिमि के हरि ।
× ×
भारी मरी जालनि की झरा झरी तग की
करारनि की कराकरी तरानरी तीर की
श्रीधरत बिलाये दौरि वीरन की भीर रुण्ड
मडन का मण्श्रात सलिता गभार की ।

बीर--ये दिल्ली के रहन वाले कायस्थ थे। रस नायिका भेद के ग्रन्था (सवत् १७७६) के अतिरिक्त वीररस के कुछ कवित्त लिखे हैं--

अरुन बदन और फरकु विमाल बाहु
कौन का हिया है की सामने जा रुख को ।
प्रबल प्रचड निसिचर फिरै धाए,
धूरि वाहन मिलाए दसकध अध मुख का ।
चमके समरभूमि बरछी सहसफन
कहत पुकारे लक अक दीह दुख का ।

सदानद--इनक सबध म जनकारी नही मिलती है। इनका एक ग्रन्थ रासा भगवानसिह प्राणा है जा अभी तक अप्रकाशित है। इसे रासो शली पर लिखा गया है। छोटा होने पर भी प्रभावशाली है--

वीर कहै भगवत सुनो, रनभूमि मे पाऊ क्यो नहि टार,
छोडि गयद तुरगनि के पति भूलि क्यों पद त नहि मार ।

युद्ध ओर गिरें मरत भगी महि बान एक कर मार ।
जात न हू गे गिरें रन गान्गिनान को आनत पार ।

४ । ४

उन्मत्त चमू चतुरंग च ी, तब सोर गगनि न भूमि छी ।
ताता दल भीम न मेरु गिर अ- रात काँर चीर गर ।
अरिरो गु विगार गुमेरू हूरे । गन का गनि निगत्र मानि च ै
गर रेणु उडी नभ आई दई । लमगूर लिन्ना बन्नु र ि भई ।

सूदन—सूदन के जीवन के सबध में अधिक ज्ञात नहीं सका है। इनका सुजानचरित्र ग्रथ बहुत प्रसिद्ध है जिसमे महाराज सूरजमल के सवत् १८०२ से १८१० तक के युद्धों का विस्तृत वर्णन है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने आँखों देखा ही वर्णन किया है। सूरजमल मराठा ने भी स्व और रविनीवन की दुर्गति से यही भासित होता है कि कुछ युद्ध मुसलमान सरदार और बादशाहों से भी हुए जिनका वर्णन इस ग्रथ में किया गया है इसमें मातृभूमि के प्रति प्रेम की भावना का चित्रण किया गया है।

भूषण और लाल की भाँति सूदन का भी एक सच्चा वीर चरितनायक सूरजमल जाट मिल गया था जिसने मुसलमानों के आक्रमणों का वीरतापूर्वक मुकाबला किया। इस ग्रथ को सात जंगों में विभाजित किया गया है जो एक सर्ग के समान हैं तथा प्रत्येक जंग में दो से लेकर छः बड़े सात अक तक हैं। इतिहासकारों ने भी भरतपुर नरेश राजा सूरजमल जाट की भाँति शौर्य तथा राज्य प्रबध की प्रशसा की है। इस ग्रथ में सूदन ने एक एक युद्ध का विस्तृत वर्णन किया है। इसलिए सूदन को वीररस का सफल कवि माना गया है। विद्वानों का मत है कि युद्ध की तयारी में सूदन युद्धवर्णन में लाल तथा आतक ये मारने के वर्णन में भूषण प्राय सर्वश्रेष्ठ हैं। सूदन के कुछ पद निम्न हैं—

अनी दोऊ बनी घन सोर् बाह सनी
धमनु को मानी बान वीनन निसग म ।
हाथी हटि जात साथी सगन थिरात मौन,
भारती म न्हात सम वीरस तरग म ।

कहीं कहीं युद्ध वर्णन में नगाड़ों की तड़ातड़ और भड़ाभड़ का भी प्रयोग किया गया है जिससे प्रतीत होता है कि कवि वीर रस के उद्रेक के लिए शब्द नाद का प्रयोग आवश्यक समझता है-किन्तु इसमें वर्णप्रियता नहीं रहती है। इसके

अतिरिक्त कई प्रकार की भाषा का भी प्रयोग किया गया—मारवाडी, पजाबी, बुन्दारी, फारसी आदि। सूदन के वीररस के १२ पद इस प्रकार हैं—

दुहु ओर बदूक जह चलत बेचूक,
रव होत धुकधुक किलकार कहु कूक।
कहु धनुपटकार जिहि बान सकार।
भट देत हुकार सकार मुह सूक।
कहु देखि दपटत, गज बाजि झपटत,
अरि व्यूह लपटत, रपटत कहु चूक।
× × ×
धडधद्धर धडधद्धर भडभब्भर भडभब्भर।
तडतत्तर तडतत्तर कडक्क्कर कडक्क्कर।

पद्माकर भट्ट—रीतिकाल के कवियो म विख्यात कवि हैं जिन्होंने श्रृगार और रीति के वातावरण म रहकर भी वीरोत्तजक साहित्य का सजन किया। ये तैलग ब्राह्मण थे और सागर नरेश रघुनाथराव आपा साहब के यहाँ रहे। बाद म जेतपुर नरेश तथा सुगरा के अजुनसिंह की प्रशसा मे कुछ छद लिखे—इनका अर्जुन रायसा ग्रन्थ भी बताया जाता है जो उपलब्ध नही है। बाद म ये जयपुर नरेश जगतसिंह जी के आश्रय मे भी रहे और वहा 'जगद्विनोद की रचना की। पदमाभरण की रचना भी यहीं हुई तथा 'गगा लहरी और 'रामरसायन ग्रन्थ भी लिखा।

इनकी वीर रस की रचना 'हिम्मत विरदावली बडी प्रसिद्ध है जिसमे हिम्मत बहादुर के अनेक युद्धो का वणन है जो अजुनसिंह आदि वीरो के साथ लडे गए थे। इस ग्रन्थ मे कुल २११ पद्य हैं तथा इसम पाच सग प्रतीत होते हैं। ग्रन्थ का चौथा सग सबसे बडा है जिसम ११६ छद हैं तथा इसम वीर नायक हिम्मत बहादुर की अजुनसिंह पर चढाई तथा भयकर युद्ध का सुदर वणन किया गया है। कवि ने इन दोनो वीरो को महान सेनानी के रूप म चित्रित किया है।

हिम्मत बहादुर को अपना नायक चुनने म सभवत पद्माकर न भूषण तथा लाल की नीति अपनाई है किन्तु भूषण तथा लाल की नीति द्वारा अन्य कवियो ने लोकमगल तथा राष्ट्रीय भावना स युक्त वीर पुरुषो की प्रशसा की है जिन्होंने मातृभूमि की रक्षा क लिए तथा विदेशी शासन सत्ता को उतार फेंकने के लिए आजीवन यत्न किया। पद्माकर को अधिकतर श्रृगार रस के मधुर भावो के चित्रण म सफलता मिली है—केलिन म कूलन म कछारन म कु जन म क्यारिन म कलिन कलीन किलकन्तु है। वीररस की रचना म कुछ मन इतना नहीं रमा और न

उनकी लखनी ही ने चमत्कार दिखाया है। वीर रस की रचना लाल के यशोभूत होकर थी। हिम्मत बहादुर में उस बलिदान त्याग तथा वीरभावना का नाम भी नहीं था जो शिवाजी तथा राणाप्रताप और छत्रसाल आदि में मिलती है। हिम्मत बहादुर में वीरत्व की भावना नाम मात्र की ही है केवल धन प्राप्ति के लिए अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन कर जनमानस के हृदय में हिम्मत बहादुर लोकप्रियता प्राप्त नहीं कर सके। इससे अधिक तो अर्जुनसिंह में राष्ट्रीय वृत्ति तथा लोक कल्याणकारी भावना अधिक थी।

इस ग्रन्थ में रोचकता भी कहीं कहीं कम हो गई है तथा साहित्य सौष्ठव का अभाव दिखता है ग्रन्थ में इतिवृत्तात्मकता होने के कारण गम्भीरता की ओर लक्ष्य नहीं रखा जा सका है। पदमाकर ने हिम्मत बहादुर के साथ अर्जुनसिंह के भी शौर्य और पराक्रम का वर्णन किया है। कवि ने अपनी दुर्बलता का वर्णन नहीं किया है। पदमाकर की रचना के कुछ उदाहरण देखिये—

आन फिरत चहु चक्क, धाय धक्कनि गढ़ धुक्कहि।
लुक्कहि दुवन दिगंद, जाय जहं तहं तन मुक्कहि।
दुंदुभि धुनि सुनि धीर जलद मन मद तज्जिगज्जहि।
× × ×
छुटटत भयऊ इक बार जब गव तोपखानो-तडकि क।
टुट्टत भयउ गढ़ व द गढ़पति भाजि ग सब सडकि क।
× × ×
तुपक्कें तडक्कें धडक्कें महा है
प्रल चिल्लका सी झडक्कें जहा हैं।
खडक्के खरी वरि छाती भडक्कें
सडक्कें गये सिंधु भज्जे गडक्कें।

प्रतापसाहि—ये रतनेस बदीजन के पुत्र थे तथा चरखारी के महाराज विक्रमसाहि के यहा रहते थे। इनका कविता काल संवत १८८० से १९०० तक समझा जाता है। इन्होंने रसग्रन्थ के अनुरूप अत्यत सरस और मधुर भाषा में नायिका भेद के ग्रन्थ लिखे। इनके वीर रस के कुछ पद मिलते हैं—

महाराज रामराज रावरो सजत दल,
होत मुख अमल अनंदित महेस के।
सेवत दरीन केते गव्वर गनीम रहे
पन्नग पाताल त्योंहि डरन खगेस के।

कहै परताप धरा धसत त्रसत,
कसमसत कमठ पीठि कठिन कलेस के।
कहरत कोल, हहरत है दिग्गीस दस,
लहरत सिंधु, थहरत फन सेस के।

बनवारी—ये संवत् १६६० और १७०० के बीच रहे। इन्होंने महाराज जसवंतसिंह के बड़े भाई अमरसिंह की वीरता की बड़ी प्रशंसा की। इनके कुछ पद बड़े ओजस्वी हैं—

धन्य अमर छिति छत्रपति, अमर तिहारो मान।
साहजहाँ की गोद में हन्यो सलावत खान॥
उत गवार मुख ते कढ़ी इते कढ़ी जमधार।
'वार' कहन पायो नहीं भई कटारी पार॥
कहै बनवारी बादसाही के तखत पास
फरकि फरकि लोथ लोथिन सो अरकी।
कर की बड़ाई कै बड़ाई बाहिबे की करौं।
बाढ़ की बड़ाई के बड़ाई जमधर की।

जोधराज—जोधराज का एक मात्र ग्रन्थ हम्मीर रासो' प्राप्त है जिसमें ९७६ छंद हैं। यह एक ऐतिहासिक काव्य है किन्तु कुछ घटनाएं बदल दी गई हैं जिससे भ्रम हो जाता है। जोधराज ने राष्ट्र प्रेमी तथा वीर पराक्रमी रणथंभौर नरेश राव हम्मीर को चरित्र नायक के रूप में रखकर उनके यश का वर्णन किया है। संपूर्ण ग्रन्थ रस तथा प्रभावोत्मक शैली से पूर्ण है तथा इसमें वीरोत्तजक स्थल पर्याप्त मात्रा में हैं। हम्मीर के संबंध में—'तिरिया तेल हम्मीर हठ चढ़ न दूजी बार प्रसिद्ध है। जोधराज जी ने कहा है कि—

हठ तो राव हमीर को औ रावण की टेक
सत राजा हरिचंद को, अर्जुन बाण अनेक।
पहि टेक छाडे नहीं जीभ चाव जरि जाय।
मीठो कहा अगार को, ताहि चकोर चुगाय।
(हम्मीर रासो, पृष्ट ११६)

रामचंद्र शुक्ल ने भी जोधराज की प्रशंसा करते हुए कहा है कि इनकी कविता बड़ी ओजस्विनी है-प्राचीन काल में अंतिम राजपूत वीर का चरित्र जिस रूप में और जिस प्रकार की भाषा में अंकित होना चाहिये था उसी रूप और उसी प्रकार की भाषा

म जायराज अंकित करने म सफल हुए हैं। ‡ जायराज वीर हिंदू नायकों के पुजारी थे तथा इन्होंने राष्ट्र की रक्षा तथा विदेशी शत्रु के संहार म भाग दो यानि वीर राजपूत तथा सोनगढ़ के युद्ध क्षेत्र म अस्सी हजार मुसलमान सैनिक। के वध तथा वीसलदेव के पराक्रम का वर्णन करते हैं। महिमाशाह का चरित्र भी यथासाध्य उत्कृष्ट ही चित्रित है।

कहीं कहीं इस ग्रंथ म अस्वाभाविकता भी है तथा कई प्राचीन काल की अद्भुत कथाओं की अवतारणा की गई है जो अस्वाभाविक प्रतीत होती है। इस ग्रंथ में हम्मीर की उक्तियां अधिक आकर्षक हैं—

पच्छिम सूरज उगवै उलटि गंग बहै नीर,
कहो दूत धनि साहसा, हठ न तजै हम्मीर।

इसी प्रकार हम्मीर की रानी आशा देवी के एक एक शब्द भारतीय आर्य महिला के आदर्श के अनुकूल ही हैं। जब दुर्ग चारों ओर से शत्रुओं द्वारा घेर लिया जाता है तब हम्मीर राव ने अपनी पत्नी की परीक्षा लेने के लिए अपना हठ छोड़ने को कहा—इस पर रानी आवेश म आकर कहने लगी—

राखइ सात केसन तजो, तजै नीर गढ वंगि।
हठ न तजो पतसाह सो गहि कर तजो न तेगि।

हम्मीर रासो मे वीर रचना के ओजस्वी वर्णन म कवि को सफलता मिली है, यह पद देखिये—

परे स्वामी के कज्ज कुम्भार दाई,
सुनी राव हम्मीर जीते सु मोई,
भजे आरबी ज्यों बचे जस तेय,
कहे साह देखा सु हिंदु अजेय।

चन्द्रशेखर—ये फतहपुर जिले के रहने वाले थे। सवत १८५५ म इनका जन्म हुआ तथा २९ वर्ष की अवस्था मे य जोधपुर के महाराजा मानसिंह के यहाँ पहुंच। अंत म पटियाला नरेश महाराज कर्मसिंह के यहां गए और अंत तक रहे। महाराज नरेन्द्रसिंह के आदेश पर इन्होंने हम्मीरहठ लिखा। शृंगार रस मे भी यद्यपि चन्द्रशेखर कवि बहुत कुशल थे किन्तु वीर नायक हम्मीर का जो शौर्य पूर्ण वर्णन अपनी ओजस्विनी भाषा म किया वह उनकी कीर्ति को स्थायी रखने के लिए

‡ रामचंद्र शुक्ल—हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ ४१८।

पर्याप्त है। सूदन आदि के समय शब्दों की तड़ातड़ और भड़ाभड़ इस ग्रन्थ में नहीं मिलती वरन वीरोत्तेजक तथा उत्साहपूर्ण भावों से ही नायक के प्रताप और पराक्रम का वर्णन किया है। साहित्यक दृष्टि से भी रचना बड़ी सबल तथा प्रौढ़ है।

अलाउद्दीन द्वारा भेजे हुए दूत के सामने हम्मीर की उक्ति देखिए—

चलै सेस डोल मही मेरु हल्ल महारुद्र का तीसरा नैन खोलै।
चहु ओर तोप चलैं, बान छुटैं, भकझोर समसेर की मार बोलै।
उठ रुण्ड भूमैं पर मुण्ड लोटैं, भरे कुण्ड लोहू बहे बीर डोल।
चल प्राण जात भरे गात मारे टर बात ना जौन हम्मीर बोल।

(हम्मीर हठ पृष्ठ १६)

युद्ध वर्णन में भी कवि को बड़ी सफलता मिली है ऐसा प्रतीत होता है कि आँखों के समक्ष रणक्षेत्र का सजीव दृश्य ही उपस्थित है—

केते लोट पोट मर समर मचोट केते,
वाहन पे निकल विहाल लरक्त हैं।
फाटे परे रजा लो करेजा टूक टूक कढ़ें,
छाती छेद विसिख बिसारे धरक्त हैं।

वीर रस के स्थलों पर तो कवि को आश्चर्यजनक सफलता मिली है। कहीं कहीं तो पढ़ते समय शरीर रोमांचित हो उठता है — मगोल के मांगने पर हम्मीर कहता है—

धड़ नच्चे लोहू बहे परि बोल सिर बोल।
कटि कटि तन रन में परे, तो नहिं देहु मगोल।
सिंह गमन सुपुरुख वचन कदलि फलै इकबार।
तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार।

(हमीरहठ, पृष्ठ १२)

रणप्रयाण के समय अपने पुत्र को हमीर की माता आशीर्वाद देती है—

तीरा उपर तीर सहि सेना ऊपर सल,
गग्गा ऊपरि खग्ग गहि, इन सम्मुख मुनमल।
भुज मुख छाती सामुहे, घावा उपर घाव,
पलक न भग पूत की, चढ़े चौगुनो चाव।

(हमीरहठ पृष्ठ ४३)

दक्षिण म मसूर नरेश टीपू सुलतान ने खूब सघष किया किन्तु इसकी मृत्यु तथा मराठामियो की हार के पश्चात् क्लाइव की कूटनीति से दक्षिण भारत अग्रेजा के नियन्त्रण मे आ गया। इसी बीच उत्तरी भारत म बगाल, बिहार और उडीसा की मालगुजारी वसूल करने का अधिकार भी सन १७६८ ई म मुगल सम्राट शाह आलम ने अग्रेज कपनी को द दिया। इसके फलस्वरूप भारत म ईस्ट इण्डिया कपनी राज्य प्रभुता वाली शक्ति बनने लगी। ईस्ट इण्डिया कपनी का व्यापारिक और राजनीतिक दौर दौरा भारत म कई सौ वर्षों तक रहा।

सन १७५७ की प्लासी की लडाई म मीरजाफर जसे देशद्रोही और विश्वास-घाती अधिकारी के कारण अग्रेजा के पर भारत म जम गए। सन १८१८ से भारत के अन्य स्वतन्त्र भागा पर भी अग्रेजो का अधिकार होता गया तथा बहुत स भारतीय शासको ने उनका बडा मुकाबला भी किया और कही कही उनकी जीत भी हुई परन्तु अधिकाश महत्वपूर्ण अवसरो पर अग्रेज ही जीते। अग्रेजा की जीत का कारण उनकी *वीरता और बाहुबल इतना नही है जितना उनकी कूटनीति विश्वासघातकता* तथा अन्याय है। कप्तान इस्टविक साफ लिखता है—

'हम उस समय तक के लिए नित्य स्थायी मित्रता की कसम खा लेते थे जब तक कि हम देश पर कब्जा करने और अपने मित्रो का नाश करने और उन्हे कद कर लेने का सुविधाजनक अवसर न मिल जाता था।' ‡

सिंध के अमीरा स की गई सधियां को तोडते समय अग्रेजो ने उन्हे अपनी मदद करने के लिए लाचार किया। उनके अनुचित व्यवहार पर इतिहास लेखक मर जान ने लिखा है—

' और इसी का नाम अग्रेजो की ईमानदारी है—सबसे पहल अग्रेजो ने अपने वायदो को तोडा। उन्होने सिंध के अमीरो को सिखा दिया कि सधियो का केवल उस समय तक पालन करना चाहिए जिस समय तक उनसे लाभ हो। †

ईस्ट इण्डिया कपनी के सब प्रथम गवनर जनरल वारेन हेस्टिंग्ज न कम्पनी के प्रदेशो को एक सूत्र म सगठित करने के लिए मराठा रुहेलो, हैदरअली तथा टीपू सुलतान आदि से युद्ध किया और शासन मे भी कुछ परिवतन किये। उसके पश्चात लार्ड कानवालिस ने कम्पनी के प्रदेशो के एकीकरण के काय को जारी रखा।

---

‡ कप्तन ईस्टविक ड्राइ लीव्ज फ्राम यग इजिप्ट—पृष्ट२४४
† केम–दि कलकत्ता रिव्यू खड १ पष्ठ २२०–२३

इस प्रकार हम देखते हैं कि मराठा नरेश, होल्कर और सिंधिया की शक्ति कम कर दी गई तथा पेशवा को राजगद्दी से उतार उनका राज्य अंग्रेजों ने अपने राज्य में मिला लिया। पंजाब के पश्चात अवध का राज्य भी हड़प लिया गया। और लाखों पौंड सालाना की आमदनी सहज ही अंग्रेजों को मिलने लगी। कम्पनी ने नया आदेश जारी किया जिसके अनुसार किसी राजा के पुत्र न होने पर उसका राज्य लप्त' होकर अंग्रेजों के साम्राज्य में मिला लिया जाएगा। डलहौजी के शासन काल की इस अन्यायपूर्ण हड़प नीति के अनुसार पूर्व कानाबा, माण्डवी और अम्बाला की रियासतों पर कब्जा कर लिया गया तथा बाद में सतारा, नागपुर तथा झांसी के राज्यों को भी कूटनीति तथा छल कपट द्वारा छीन लिया गया। नागपुर का राजकुल छत्रपति शिवाजी के वंश का था। नाना फड़नवीस तथा हैदरअली जैसे वीर देशभक्त भारत को स्वतंत्र करने के लिए अन्त तक लड़ते रहे और अपने जीवन का बलिदान कर दिया।

सन् १८५७ की क्रांति—सन् १८५७ के विद्रोह के पूर्व अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान का बहुत सा हिस्सा अपने अधिकार में कर लिया था। भारतीय नरेशों ने कहीं कहीं तो युद्ध किए जो स्थानीय महत्व के थे किन्तु अधिकांश को हराकर या अपनी जागीरों को सुरक्षित रखने और जीवनदान की लालसा से आत्मसमर्पण करने के लिए विवश कर दिया गया। जिन जिन राज्यों को डलहौजी के समय अंग्रेजों ने अपने अधीन किया उनके प्रमुख कर्मचारियों तथा दरबार को समाप्त कर अंग्रेज कमिश्नर तथा अफसर नियुक्त किये गये। उत्तर भारत तथा अन्य परास्त राज्यों के हजारों लाखों जागीरदारों जमादारों तथा भारतीय अफसरों को पदच्युत कर कर दिया गया तथा उनकी सम्पत्ति तथा जमीन आदि छीनकर उन्हें कंगाल बना दिया गया।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्त करने का विशेष प्रयत्न पहली बार सन् १८५७ में हुआ। अंग्रेज इतिहासकारों ने इसे सिपाही विद्रोह मात्र कहा है किन्तु वास्तव में सेना के अतिरिक्त इसे जनता की सहानुभूति और सहयोग तथा कई राजा महाराजाओं का मार्गदर्शन मिला। सन् ५७ की क्रांति भावना भारतीय जनता के कई प्रकार के असंतोष का परिणाम थी तथा विदेशी शासन को उलट फेंकने का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रयास था।

सन् १८५७ के पूर्व भारत के किसान जमादार कारीगर व्यापारी मौलवी पंडित, राजा नवाब—सभी अंग्रेजी शासन से दुखी थे। अंग्रेजों ने पुराने उद्योगों को नष्ट कर दिया तथा आवश्यक पदार्थों के व्यापार, उदाहरणार्थ नमक तक अपने हाथों में रखा। राजाओं तथा पुराने रईसों को उनकी रियासतों से अलग कर दिया,

बेगमो और रानियों के शृंगार तक के जेवर, व्यक्तिगत सम्पत्ति हड़प ली तथा भारतीयों के धर्म को घृणास्पद बताकर ईसाई धर्म का प्रचार करना प्रारंभ कर दिया। ये सब कारण ऐसे थे जिनके फलस्वरूप जनता में विद्रोह की भावना धीरे धीरे घर करती गई और एकाएक भड़क उठी।

मुख्य रूप से सन १८५७ की क्रान्ति के पांच प्रमुख कारण कहे गए है—

१ दिल्ली के सम्राट के साथ अनुचित व्यवहार

२ अवध के नवाब और प्रजा के साथ अत्याचार

३ डलहौजी की अपहरण नीति

४ अंतिम पेशवा—बाजीराव के दत्तक पुत्र नाना साहब के साथ अन्याय

५ भारतीयों को ईसाई बनाने की आकांक्षा तथा भारतीय सेना में धर्म संबंधी अत्याचार।

सन १७५६ १८०६ तक सम्राट शाह आलम दिल्ली के तख्त पर था। उसने कलकत्ता, मद्रास, सूरत आदि में व्यापार करने की सुविधा दी तथा कोठियां बनाने के लिए कुछ जागीरें भी दी तथा अंग्रेजों को इसके लिए कुछ टैक्स भी देना पड़ता था। दिल्ली आने पर प्रत्येक अंग्रेज अफसर तथा गवर्नर जनरल बादशाह को सलाम करते तथा नजरें भेंट करते थे। बाद में अकबरशाह गद्दी पर बैठे किन्तु अंग्रेजों का रुख बदलता गया और उसकी शक्ति घटने लगी। सम्राट बहादुरशाह भी वरमा अपने बड़े कुटुम्ब के साथ लाल किले में आर्थिक विपत्ति से भरे दिन काट रहा था। सन १८५६ में मिर्जा कायम को जब गद्दी पर बिठाया गया उस समय अंग्रेजों ने शर्त की कि तुम्हें बादशाह के बजाय शाहजादा कहा जायगा तथा दिल्ली का किला खाली करना होगा तथा एक लाख मासिक खर्च के स्थान पर १५ हजार रुपए दिए जाएंगे। इन शर्तों को सुनकर बहादुरशाह और दिल्ली के निवासी बहुत क्रुद्ध हुए तथा अंग्रेजों के पंजों से देश को मुक्त कराने के उपाय सोचने लगे।

अवध के नवाब का सारा राज्य के सम्पत्ति छीन कर अंग्रेजों ने उसे अपने राज्य में मिला लिया तथा प्रजा प्रना पर अत्याचार कर नवाब वाजिदअली शाह को बदनाम किया तथा निर्वासित कर कलकत्ते भेज दिया गया। इसी समय लखनऊ के महलों को लूट कर बेगमों की सम्पत्ति जब्त कर अवध में तालुकेदार जागीरदारों की जमीनें छीनकर दर दर भटकने पर विवश कर दिया। सन १८५१ में बाजीराव पेशवा के अंतिम दत्तक पुत्र नाना साहब के साथ कम्पनी ने अन्याय किया तथा बिठूर की जागीर एवं पेंशन की रकमों को और पेंशन का बहुत सा रुपया रोक लिया।

नाना के मन मे अंग्रेजो के विरुद्ध घृणा के भाव उठाने लगे तथा देश को स्वतंत्र करने का विचार हृदय मे उत्पन्न होने लगा।

बहुत से अंग्रेज अफसर भारतीयो को ईसाई बनाने के लिए आर्थिक लोभ तथा जबरदस्ती करते थे। साम्राज्य भर मे पूरी शक्ति के साथ यह काम भी किया जाता था, हिंदू तथा मुसलमानो को अपना धर्म छोड़ने के लिए कहा जाता था। किंतु भारतीयो की आन धर्म मे ही थी उन्हे धर्मच्युत कर राष्ट्रीय अभिमान और उत्साह को मिटाने के लिए यह चाल चली जा रही थी। ईसाइयो की तरफ से बहुत से मदरसे अस्पताल खोले जाते थे तथा कम्पनी के डायरेक्टर धर्म परिवर्तन के काम मे खुलकर भाग करते थे। फौज के सिपाहियो को भी ईसाई बनाने तथा उनकी धार्मिक भावना की अवहेलना का कार्य निरन्तर होता था जिससे फौज मे असंतोष फैलता जाता था।

इन सब कारणो ने मिलकर समस्त भारत मे अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध हर श्रेणी के लोगो मे विद्रोह की आग सुलगा दी थी। सन १८५७ की क्रान्ति वास्तव में भारत के हिंदू और मुसलमान नरेशो तथा भारतीय जनता की ओर से देश को विदेशियो की राजनीतिक अधीनता से मुक्त कराने का एक महान और व्यापक प्रयत्न था। भारतीयों ने व्यापक और गुप्त संगठन कर इसे शक्तिशाली बनाया। नाना साहब की पेंशन के लिए अजीमुल्ला को इंग्लैंड भेजा गया जिसने अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा से अंग्रेजो को चौंका दिया। उसने रंगो बापू नामक अन्य सातारा के पदच्युत राजा के प्रतिनिधि से मिलकर लदन मे क्रांति की योजना बनाई और भारत मे तथा अन्य यूरोपीय देशो मे घूमकर अन्य राष्ट्रो से सहायता तथा सहानुभूति प्राप्त करने का यत्न किया और अपने संगठन को मजबूत बनाने की तरकीब सोची। बिठूर मे बैठे हुए नाना साहब ने गुप्त रूप से अपने विशेष दूत को दिल्ली से लेकर मसूर तक समस्त भारतीय नरेशो के दरबारो मे भेजा तथा फौजो तथा जनता को अपनी ओर मिलाकर क्रान्ति मे सहयोग देने प्रचार करने के लिए विशेष लोगो को प्रेरित किया। लोगो से प्रार्थना की गई कि सब दिल्ली मे सम्राट बहादुरशाह के झंडे के नीचे आकर देश को स्वतंत्र कराने मे सहायता दें। लाल किले मे सम्राट बहादुरशाह तथा उसकी योग्य बेगम जीनतमहल और उनके सलाहकार तथा नाना की गुप्त मंत्रणाएं हुआ करती थी। उधर अवध के पदच्युत वजीर अली नकी खा समस्त प्रजा ताल्लुकेदार, जमींदार इस राष्ट्रीय विप्लव की सफलता पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तैयार हो गए। हिन्दू साधुओ तथा मुसलमान फकीरों के वेष मे गुप्तचर एक कोने से दूसरे कोने मे जाकर क्रांति का यह संदेश सुनाने लगे। इस संगठन के लिए धन की कमी नही प्रतीत हुई। सहस्रो रईसो तथा साहूकारो के

बेगमो और रानियो के शरीर तक के जेवर, व्यक्तिगत सम्पत्ति हडप ली तथा भारतीयो के धम को घृणास्पद बताकर ईसाई धम का प्रचार करना प्रारभ कर दिया। ये सब कारण ऐसे थे जिनके फलस्वरूप जनता म विद्रोह की भावना धीरे धीरे घर करती गई और एकाएक भडक उठी।

मुख्य रूप से सन् १८५७ की क्रान्ति के पाँच प्रमुख कारण कहे गए हैं—

१ दिल्ली के सम्राट के साथ अनुचित व्यवहार

२ अवध के नवाब और प्रजा के साथ अत्याचार

३ डलहौजी की अपहरण नीति

४ अतिम पेशवा–बाजीराव के दत्तक पुत्र नाना साहब के साथ अन्याय

५ भारतीयो को ईसाई बनाने की आकाक्षा तथा भारतीय सेना म धम सबधी अत्याचार ।

सन १७५९ १८०६ तक सम्राट शाह आलम दिल्ली के तख्त पर था। उसने कलकत्ता मद्रास सूरत आदि म व्यापार करने की सुविधा दी तथा कोठिया बनाने के लिए कुछ जागीरें भी दी तथा अग्रेजो को इसके लिए कुछ टैक्स भी देना पडता था। दिल्ली आने पर प्रत्येक अग्रेज अफसर तथा गवनर जनरल बादशाह को सलाम करने तथा नजरें भेट करते थे। बाद म अकबरशाह गद्दी पर बैठे किन्तु अग्रेजो का रुख बदलता गया और उसकी शक्ति घटने लगी। सम्राट बहादुरशाह भी वरसो अपने बडे कुटुम्ब के साथ लाल किले म आर्थिक विपत्ति से भरे दिन काट रहा था। सन् १८५६ म मिर्जा कोयम को जब गद्दी पर बिठाया गया उस समय अग्रेजो ने शत की कि तुम्हे बादशाह के बजाय 'शाहजादा' कहा जाएगा तथा दिल्ली का किला खाली करना होगा तथा एक लाख मासिक खच के स्थान पर १५ हजार रुपए दिए जाएगें। इन शर्तो को सुनकर बहादुरशाह और दिल्ली के निवासी बहुत क्रुद्ध हुए तथा अग्रेजो के पजो से देश को मुक्त कराने के उपाय सोचने लगे।

अवध के नवाब का सारा राज्य व सम्पत्ति छीन कर अग्रेजो ने उसे अपने राज्य म मिला लिया तथा प्रजा प्रजा पर अत्याचार कर नवाब वाजिदअली शाह को बदनाम किया तथा निकालकर कलकत्ते भेज दिया गया। इसी समय लखनऊ के महलो को लूट कर बेगमो की सम्पत्ति छीनकर बहुत से ताल्लुकेदार जागीरदारो की जमीनें छीनकर दर दर भटकने पर विवश कर दिया। सन १८५१ म बाजीराव पेशवा के अतिम दत्तक पुत्र नाना साहब के साथ कम्पनी ने अन्याय किया तथा विठूर की जागीर छीनने की धमकी दी और पेंशन का अन्त तक रुपया रोक दिया।

नाना के मन मे अंग्रेजो के विरुद्ध घृणा के भाव उठाने लगे तथा देश को स्वतन्त्र करने का विचार हृदय मे उत्पन्न होने लगा।

बहुत से अंग्रेज अफसर भारतीयो को ईसाई बनाने के लिए आर्थिक लोभ तथा जबरदस्ती करते थे। साम्राज्य भर मे पूरी शक्ति के साथ यह काम भी किया जाता था। हिंदू तथा मुसलमानो को अपना धर्म छोड़ने के लिए कहा जाता था। किंतु भारतीयो की आन धर्म मे ही थी उन्हे धर्मच्युत कर राष्ट्रीय अभिमान और उत्साह को मिटाने के लिए यह चाल चली जा रही थी। ईसाइयो की तरफ से बहुत से मदरसे अस्पताल खोले जाते थे तथा कम्पनी के डायरेक्टर धर्म परिवर्तन के काम मे खुलकर मदद करते थे। फौज के सिपाहियो को भी ईसाई बनाने तथा उनकी धार्मिक भावना की अवहेलना का कार्य निरन्तर होता था जिससे फौज मे असंतोष फैलता जाता था।

इन सब कारणो ने मिलकर समस्त भारत मे अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध हर श्रेणी के लोगो मे विद्रोह की आग सुलगा दी थी। सन १८५७ की क्रान्ति वास्तव मे भारत के हिंदू और मुसलमान नरेशो तथा भारतीय जनता की ओर से देश को विदेशियो की राजनीतिक अधीनता से मुक्त कराने का एक महान और व्यापक प्रयत्न था। भारतीयो ने व्यापक और गुप्त संगठन कर इसे शक्तिशाली बनाया। नाना साहब की पेंशन के लिए अजीमुल्ला को इंगलैन्ड भेजा गया जिसने अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा से अंग्रेजो को चौका दिया। उसने रंगो बापू नामक अन्य सातारा के पदच्युत राजा के प्रतिनिधि से मिलकर लंदन मे क्रांति की योजना बनाई और भारत मे तथा अन्य यूरोपीय देशो मे घूमकर अन्य राष्ट्रो से सहायता तथा सहानुभूति प्राप्त करने का यत्न किया और अपने संगठन को मजबूत बनाने की तरकीब सोची। बिठूर मे बैठे हुए नाना साहब ने गुप्त रूप से अपने विशेष दूत को दिल्ली से लेकर मैसूर तक समस्त भारतीय नरेशो के दरबारो मे भेजा तथा फौजो तथा जनता को अपनी ओर मिलाकर क्रांति मे सहयोग देने प्रचार करने के लिए विशेष लोगो को प्रेरित किया। लोगो से प्रार्थना की गई कि सब दिल्ली मे सम्राट बहादुरशाह के झंडे के नीचे आकर देश को स्वतन्त्र कराने मे सहायोग दें। लाल किले मे सम्राट बहादुरशाह तथा उसकी योग्य बेगम जीनतमहल और उनके सलाहकार तथा नाना की गुप्त मंत्रणाए हुआ करती थी। उधर अवध के पदच्युत वजीर अली नकी खां समस्त प्रजा ताल्लुकेदार जमीदार इस राष्ट्रीय विप्लव की सफलता पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तैयार हो गए। हिंदू साधुओ तथा मुसलमान फकीरों के वेष मे गुप्तचर एक कोने से दूसरे कोने मे जाकर क्रांति का यह संदेश सुनाने लगे। इस संगठन के लिए धन की कमी नही प्रतीत हुई। सहस्त्रों रईसो तथा साहूकारो ने

अपनी पत्रियाँ राष्ट्रीय नेताओं के कब्जा पर रख दीं तथा गाँव गाँव में मौलवी तथा पंडितों द्वारा विप्लव की भावना के लिए प्रार्थनाएँ होने लगीं। दिल्ली बिठूर, लखनऊ, कलकत्ता इस समय विप्लव के संगठन का संचालित करने के प्रमुख केन्द्र बन चुके थे तथा अंग्रेजों को इसका पता भी नहीं चल सका था।

इस गुप्त संगठन में और केन्द्रों को एक सूत्र में बांधने के लिए तथा देश भर में क्रांति का दिन नियत करने के लिए मार्च १८५७ को अजीमुल्ला तथा नाना साहब यात्रा के बहाने बिठूर से निकले, वे दिल्ली अम्बाला लखनऊ कालपी होते हुए बिठूर लौट आए। इस यात्रा में ये लोग अवध व छावनी में गए तथा अंग्रेज अफसरों से मिलकर तरह तरह के बहाने बनाकर अपनी ओर से निश्चिंत करने का प्रयत्न कर रहे थे।

सन् १८५७ के दो मुख्य चिह्न नियत हुए—कमल का फूल और रोटी। लाल कमल का फूल उन समस्त पलटनों में घुमाया जाता था जो संगठन में शामिल थीं—एक सिपाही एक पलटन में फूल देकर दूसरी पलटन तक यह फूल पहुँचा देता था—इसका अर्थ था कि पलटन के सब सिपाही विप्लव के लिए तैयार हैं। रोटी एक गाँव का चौकीदार दूसरे गाँव के चौकीदार के पास ले जाता। वह उस रोटी में से थोड़ी स्वयं खाकर शेष गाँव के दूसरे लोगों को खिलाता और फिर गेहूँ आदि की रोटी बनाकर दूसरे गाँव में भेजता था। इस प्रकार लाखों गाँवों तथा पलटनों में रोटी तथा रक्तवर्ण कमल दोनों चिह्न जनता व सिपाहियों के मन में विद्रोह की भावनाएँ भरने की प्रेरणा दे रहे थे।

विद्रोह की तिथि समस्त भारतवर्ष में ३१ मई रविवार निश्चित की गई थी तथा जनता व सिपाहियों की रात को गुप्त सभाएँ हुआ करती थीं।

विद्रोह का एक कारण यह भी कहा जाता है कि सन् १८५३ ई० में कम्पनी ने कारतूस बनाने के नये कारखाने खोले। पहले के कारतूस तो हाथों से तोड़े जाते थे। किन्तु नए कारतूसों को दाँत से काटकर प्रयोग करना पड़ता था। अज्ञानवश बहुत से सिपाहियों ने ऐसा करना भी शुरू कर दिया किन्तु जब पता लगा कि इन कारतूसों में सूअर और गौ की चर्बी का प्रयोग किया गया है तो हिंदू और मुसलमान सिपाही भड़क उठे तथा इस अन्याय का बदला लेने के लिए तैयार हो गये। प्रसिद्ध इतिहासकार जस्टिन मेक्कार्थी ने लिखा है—

सच यह है कि हिन्दुस्तान के उत्तरीय प्रान्तों के अधिकांश भागों में देशी कौमें अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध खड़ी हो गईं ... चर्बी के कारतूसों का झगड़ा केवल

इस तरह वह एक चिन्गारी था जो अकस्मात इस समस्त विस्फोटक मसाले में आ पड़ी। यह एक राष्ट्रीय और धार्मिक युद्ध था। †

विद्रोह का प्रथम आंदोलन नियत समय के पूर्व ही बरकपुर की १६ नंबर की पलटन में प्रारम्भ हुआ। नए कारतूसों के उपयोग में असमर्थता प्रगट करने पर हिन्दुस्तानी सिपाहियों से हथियार रखा लेने का इरादा अंग्रेजों ने किया तथा अंग्रेज फौज बुलाने के लिए हुक्म दे दिया। इस अन्याय को मंगल पाण्डे नामक सिपाही न सह सका और वह पलटन में से निकलकर भारी बंदूक लेकर आगे बढ़ा और उसने अंग्रेज सार्जेंट को वहीं मार डाला, सामने से घोड़े पर आते हुए लेफ्टिनेंट बाघ को भी उसने निशाना मारकर गिरा दिया और उसकी पिस्तौल की गोली से वह बाल बाल बच गया। बाद में कुछ अंग्रेजी सेना सहित जनरल हीयर ने मंगल पाडे को गिरफ्तार करना चाहा किन्तु मंगल पाण्डे ने अपनी छाती में गोली मारी और वह बेहोश होकर गिर पड़ा तथा गिरफ्तार कर लिया गया। ८ अप्रेल को मंगल पाण्डे को फांसी दे दी गई। मंगल पाण्डे ही भारतीय क्रांति का सबसे प्रथम शहीद था जिसने विदेशी शासन को उलटने के लिए अपने प्राणों को हथेली पर रखकर साहस से काम लिया। अंग्रेजों ने २ ३ पलटनों के हथियार रखवाकर बरखास्त कर दिया इस पर इनके सिपाहियों ने ३१ मई के पूर्व ही अंग्रेजों के बंगलों, मकानों में आग लगाना शुरू कर दिया। मेरठ, लखनऊ तथा अम्बाला में इस प्रकार के अग्निकांड हुए। १० मई को मेरठ में बड़ा भारी विद्रोह का रूप देखने को मिला। क्रांतिकारियों ने जेल से मिलकर सब को दिया को छुड़ाया—जेल तोड़ दी तथा मेरठ के तमाम अंग्रेजों को मौत के घाट उतारकर उनके होटलों, बंगलों तथा दफ्तरों में आग लगा दी। चारों तरफ "हर हर महादेव! मारो फिरंगी को!" की आवाज सुनाई पड़ती थी। रेल की पटरी तोड़ दी गई तथा बिजली के तार काट डाले गए। इसी दिन रात को क्रान्तिकारी सैनिक दिल्ली की ओर रवाना हो गए। अंग्रेजों ने जब हिन्दुस्तानी सैनिकों को क्रान्तिकारियों से लड़ने का हुक्म दिया तो वे लोग क्रान्तिकारियों के गले मिले और अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने लगे। दिल्ली में इन क्रान्तिकारियों ने सब अंग्रेज अफसर मार डाले तथा बंगले और दफ्तर जलाकर खाक कर दिए। सारी सेना तथा हिन्दुस्तानी अफसरों ने सम्राट बहादुरशाह को सलामी दी और उनसे स्वाधीनता-आन्दोलन संग्राम का नेतृत्व स्वीकार करने का आग्रह किया। लाल किले के ऊपर क्रान्तिकारियों का हरा झंडा फहराने लगा। दिल्ली की बड़ी मेगजीन अंग्रेजों द्वारा जला दी गई किन्तु उसकी बंदूकें क्रांतिकारियों के हाथ लग गई। १६ मई १८५७ को दिल्ली मो कम्पनी के

† जस्टिन मेकार्थी—हिस्ट्री आफ आवर टाइम्स (भाग ३) पृष्ठ ८२

हाथों से छिन गई और सम्राट बहादुरशाह दिल्ली का असली बादशाह बन गया और उसका झण्डा भारत भर के क्रांतिकारियों का झंडा बन गया।

दिल्ली की स्वाधीनता की खबर सारे देश में फैल गई। कुछ लोग ३१ मई तक प्रतीक्षा करना चाहते थे किन्तु उत्तरी भारत में विद्रोह की आग बढ़ती रही। ८ नम्बर पलटन के समस्त सिपाही अलीगढ़, बुलन्दशहर, मैनपुरी, तथा इटावा के आसपास के इलाकों को स्वतंत्र करके कम्पनी के खजाने पर कब्जा करते हुए हथियार व रसद लेकर दिल्ली आए।

बरेली और मुरादाबाद में भी अंग्रेजों को भाग जाने की चेतावनी दी गई तथा बहुतों को जीवनदान देते हुए क्रांतिकारी सिपाहियों ने खजाने तथा सरकारी माल पर कब्जा कर स्वाधीनता का हरा झंडा फहरा दिया। बदायूं आजमगढ़ गोरखपुर, बनारस व आसपास और इलाहाबाद तक क्रांतिकारी संघर्ष करते हुए बढ़ आए तथा करोड़ों का खजाना हथियार आदि अपने कब्जे में करते हुए चलते रहे। इलाहबाद के किले में सिख पलटन थी परन्तु उन्होंने क्रांतिकारियों का साथ देने की अपेक्षा अंग्रेजों का साथ दिया और अपने ही क्रांतिकारी भाइयों पर गोली तथा तोप चलाई। जिन जिन नगरों को स्वाधीन किया गया वहां अंग्रेज अफसरों को हटाकर पुराने जमींदारों को नियुक्त कर दिया गया तथा कहा जाता है कि वहां का शासन बड़ी शांति और सफलता से चलाया गया।

जनरल नील बड़ी सेना लेकर बनारस पहुंचा और उसने गिरफ्तारियां तथा फांसी देना शुरू किया। जनरल नील आसपास के गांवों में सिक्ख और अंग्रेज सेना को लेकर पहुंचा तथा आग लगाकर प्रत्येक स्त्री बच्चा और बूढ़ों को खत्म कर दिया, वह बनारस से इलाहाबाद पहुंचा तथा रास्ते में छोटे छोटे बच्चों स्त्रियों तथा प्रत्येक व्यक्ति को गोली मारता हुआ निर्दयता से आगे बढ़ता रहा। इलाहबाद पहुंचने पर चौक में दो चार दिन में ८०० फांसी दी गई। बदला लेने के प्यासे अंग्रेज अफसर विद्रोहियों तथा निर्दोष नागरिकों व बच्चे वाली माताओं को भी बीच बाजार में फांसी लगाने में गर्व का अनुभव करते थे। इस प्रकार इलाहबाद पर कम्पनी का कब्जा हो गया किले में बहुत से हथियार तथा अंग्रेज व सिख सेना सुरक्षित रही।

४ जून ५६ को कानपुर में विद्रोहियों ने नाना अजीमुल्ला के नेतृत्व में पूरे जोश के साथ अंग्रेजों को भगा दिया तथा स्वाधीनता का झण्डा फहरा दिया किले में अंग्रेज अफसर तथा बहुत सी गोरी सेना व मेगजीन था। विद्रोहियों ने तोपें बरसाना शुरू कीं तथा २१ दिन तक निरंतर संघर्ष हुआ। हजारों अंग्रेज स्त्री पुरुष मरने लगे तथा भारतीय स्त्रियां—हिन्दू और मुसलमान बड़ी हिम्मत के साथ सैनिकों को

गोला बारूद तथा भोजन आदि देने का काम उत्साह से कर रहे थे। अन्त में अंग्रेजों ने किले पर सफेद झण्डा चढ़ाकर सुलह करनी चाही तथा सारे हथियार रखवाकर अंग्रेजों को इलाहबाद पहुंचाने का प्रबन्ध कर दिया गया किन्तु कानपुर में पीड़ित जनता ने घेरा लिया और १ हजार अंग्रेजों को मारकर वहीं खतम कर दिया अंग्रेज स्त्रियां और बच्चों को कैद कर सौदाकोठी पहुंचा दिया गया। नाना साहब को वहां का राजा बना दिया गया—नाना साहब ने लाखों रुपये इनाम में बांटे और बिठूर में पहुंचकर वह विधिवत पेशवा की गद्दी पर बैठे।

झांसी की रियासत को सन् १८५४ में कम्पनी में मिलाने का एलान हुआ था जिससे प्रजा में बड़ा भारी असन्तोष हुआ। गंगाधरराव ने मरते समय साढ़े चार लाख के जवाहरात तथा ढाई लाख रुपये नगद छोड़े—कम्पनी ने सब अपने कब्जे में ले लिया। दामोदरराव बहुत छोटे थे, राज्य का सारा भार १८ वर्षीय विधवा रानी लक्ष्मी बाई पर ही आ पड़ा। कम्पनी ने उसका राज्य लेकर पांच हजार रुपया मासिक पेंशन देना चाहा इस तिरस्कार को रानी लक्ष्मी बाई न सह सकी। अंग्रेजों ने उसके चरित्र पर लांछन लगाया और कहा कि वह राज्य संचालन के योग्य नहीं जो नितांत असत्य बात थी। '५७ के स्वाधीनता संग्राम में रानी लक्ष्मी बाई एक मुख्यतम नेत्री थी और ४ जून सन् १८५७ को झांसी में क्रान्ति प्रारम्भ हुई। उधर जून में सीतापुर फर्रुखाबाद, अवध में स्वाधीनता संग्राम हुआ तथा हरा झण्डा फहरा दिया गया। फैजाबाद और सुल्तानपुर में अहिंसात्मक क्रांति हुई और उस क्रान्तिकारियों ने स्वाधीन करा दिया। १० जून तक केवल लखनऊ के एक भाग को छोड़ समस्त अवध कम्पनी के चंगुल से निकल गया और स्वाधीन हो गया। सन १८५७ में अवध के जमींदार, किसान जागीरदार, राजाओं सिपाहियों, तथा स्त्री पुरुषों सभी ने मिलकर दस दिन में फिरंगी का शासन उलट फेंका तथा लखनऊ में बेगम हजरतमहल के झंडे के नीचे आकर जमा हो गए। अवध की अनेक स्त्रियां ने मरदाने वेष में आकर हथियार बांधकर लड़ाई में हिस्सा लिया था और बहुत जल्दी समस्त लखनऊ में वाजिदअली शाह के पुत्र शाहजादे बिरजिस कद्र की ओर से बेगम हजरत महल का शासन कायम हो गया।

जिस प्रकार सिक्खों तथा नेपालियों ने कम्पनी की सहायता की उसी प्रकार राजपूत तथा मराठा नरेशों ने अपनी अनिश्चितता द्वारा इस व्यापक विद्रोह को बड़ी हानि पहुंचाई। जियाजीराव सिंधिया ग्वालियर की गद्दी पर था उसने अंग्रेजों से मित्रता निभाने की वजह से अपनी सेना धन तथा अन्य सुविधाएं कम्पनी को दी किन्तु सिपाही विद्रोह कर चुके थे—यदि वह क्रान्तिकारियों का साथ देता और दिल्ली में बड़ी अव्यवस्थित विशाल सेना का नेतृत्व करता तो कम्पनी की सेना समाप्त हो

हाथो से छिन गई और सम्राट बहादुरशाह दिल्ली का अगला बादशाह बन गया और उसका झडा भारत भर के क्रांतिकारियों का भण्डा बन गया।

दिल्ली की स्वाधीनता की खबर सारे देश म फल गई। कुछ लाग ३१ मई तक प्रतीक्षा करना चाहते थ किन्तु उत्तरी भारत म विद्रोह की आग बढ़ती रही। ८ नम्बर पलटन के समस्त सिपाही अलीगढ बुलन्दशहर मनपुरी, तथा इटावा के आसपास के इलाको को स्वतत्र करके कम्पनी के खजाने पर कब्जा करते हुए हथियार व रसद लेकर दिल्ली आए।

बरली और मुरादाबाद म भी अग्रेजो को भाग जाने की चेतावनी दी गई तथा बहुतो को जीवनदान देते हुए क्रांतिकारी सिपाहियो ने खजाने तथा सरकारी माल पर कब्जा कर स्वाधीनता का हरा झडा फहरा दिया। बदायू आजमगढ़, गोरखपुर, बनारस के आसपास और इलाहाबाद तक क्रांतिकारी सघष करते हुए बढ आए तथा करोडो का खजाना हथियार आदि अपने कब्जे म करते हुए चलते रहे। इलाहाबाद के किले म सिख पलटन थी परन्तु उन्होंने क्रान्तिकारियो का साथ देने की अपेक्षा अग्रेजो का साथ दिया और अपने ही क्रांतिकारी भाइयो पर गोली तथा तोप चलाई। जिन जिन नगरो को स्वाधीन किया गया वहा अग्रेज अफसरो को हटाकर पुराने जमीदारो को नियुक्त कर दिया गया तथा कहा जाता है कि वहा का शासन बडी शांति और सफलता स चलाया गया।

जनरल नील बडी सेना लेकर बनारस पहुचा और उसने गिरफ्तारिया तथा फांसी देना शुरु किया। जनरल नील आसपास के गावो म सिक्ख और अग्रेज सेना को लेकर पहुचा तथा आग लगाकर प्रत्येक स्त्री बच्चो और बूढो को खत्म कर दिया वह बनारस से इलाहाबाद पहुचा तथा रास्ते म छोटे छोटे बच्चो स्त्रियों तथा प्रत्येक व्यक्ति को गोली मारता हुआ निदयता स आगे बढ़ता रहा। इलाहबाद पहुचने पर चौक म दो चार दिन म ८०० फासी दी गई। बदला लेने के प्यासे अग्रेज अफसर विद्रोहियो तथा निर्दोष नागरिको व बच्चे वाली माताओ को भी बीच बाजार म फासी लगाने म गव का अनुभव करते थे। इस प्रकार इलाहबाद पर कम्पनी का कब्जा हो गया किले म बहुत स हथियार तथा अग्रेज व सिख सेना सुरक्षित रही।

४ जून ५६ को कानपुर म विद्रोहियो ने नाना अजीमुल्ला के नेतत्व मे पूरे जोश के साथ अग्रेजो को भगा दिया तथा स्वाधीनता का झडा फहरा दिया किले म अग्रेज अफसर तथा बहुत सी गोरी सेना व मेगजीन था। विद्रोहियो ने तोपें बरसाना शुरु की तथा २१ दिन तक निरन्तर सघष हुआ। हजारो अग्रेज स्त्री पुरुष मरने लगे तथा भारतीय स्त्रिया—हिन्दू और मुसलमान बडी हिम्मत के साथ सनिको को

गोला, बारूद तथा भोजन आदि देने का काम उत्साह से कर रहे थे। अन्त में अंग्रेजों ने किले पर सफेद झंडा चढ़ाकर सुलह करनी चाही तथा सारे हथियार रखवाकर अंग्रेजों को इलाहबाद पहुंचाने का प्रबन्ध कर दिया गया किन्तु कानपुर में पीडित जनता ने बदला लिया और १ हजार अंग्रेजों को मारकर वहीं खत्म कर दिया अंग्रेज स्त्रियों और बच्चों को कैद कर सौंगकोठी पहुंचा दिया गया। नाना साहब को वहां का राजा बना दिया गया—नाना साहब ने लाखों रुपये इनाम के बांटे और बिठूर में पहुंचकर वह विधिवत पेशवा की गद्दी पर बैठे।

झांसी की रियासत को सन् १८५४ में कम्पनी में मिलाने का एलान हुआ था जिससे प्रजा में बड़ा भारी असन्तोष हुआ। गंगाधरराव ने मरते समय साढ़े चार लाख के जवाहरात तथा ढाई लाख रुपये नगद छोड़—कम्पनी ने सब अपने कब्जे में ले लिया। दामोदरराव बहुत छोटे थे, राज्य का सारा भार १८ वर्षीय विधवा रानी लक्ष्मी बाई पर ही आ पड़ा। कम्पनी ने उसका राज्य लेकर पांच हजार रुपया मासिक पेंशन देना चाहा, इस तिरस्कार को रानी लक्ष्मी बाई न सह सकी। अंग्रेजों ने उसके चरित्र पर लांछन लगाया और कहा कि वह राज्य संभालने के योग्य नहीं, जो नितान्त असत्य बात थी। ५७ के स्वाधीनता संग्राम में रानी लक्ष्मी बाई एक मुख्यतम नेत्री थी और ४ जून सन् १८५७ को झांसी में क्रांति प्रारम्भ हुई। उधर जून में सीतापुर फर्रुखाबाद, अवध में स्वाधीनता संग्राम हुआ तथा हरा झंडा फहरा दिया गया। फैजाबाद और सुल्तानपुर में अहिंसात्मक क्रांति हुई और उस क्रान्तिकारियों ने स्वाधीन करा दिया। १० जून तक केवल लखनऊ के एक भाग को छोड़ समस्त अवध कम्पनी के चंगुल से निकल गया और स्वाधीन हो गया। सन १८५७ में अवध के जमींदार, किसान, जागीरदार, राजाओं सिपाहियों, तथा स्त्री पुरुषों सभी ने मिलकर दस दिन में फिरंगी का शासन उलट फेंका तथा लखनऊ में बेगम हजरतमहल के झंडे के नीचे आकर जमा हो गए। अवध की अनेक स्त्रियों ने मरदाने वेष में आकर हथियार बांधकर लड़ाई में हिस्सा लिया था और बहुत जल्दी समस्त लखनऊ में वाजिदअली शाह के पुत्र शाहजादे बिरजिस कद्र की ओर से बेगम हजरत महल का शासन कायम हो गया।

जिस प्रकार सिखों तथा नेपालियों ने कम्पनी की सहायता की उसी प्रकार राजपूत तथा मराठा नरेशों ने अपनी अनिश्चितता द्वारा इस व्यापक विद्रोह को बड़ी हानि पहुंचाई। जियाजीराव सिंधिया ग्वालियर की गद्दी पर था उसने अंग्रेजों से मित्रता निभाने की वजह से अपनी सेना, धन तथा अन्य सुविधाएं कम्पनी को दी किन्तु सिपाही विद्रोह कर चुके थे—यदि वह क्रान्तिकारियों का साथ देता और दिल्ली में बड़ी अव्यवस्थित विशाल सेना का नेतृत्व करता तो कम्पनी की सेना समाप्त हो

जाती तथा भारत भर मे क्रान्तिकारियो को शक्ति का बल मिलता और भारत का नक्शा ही बदल गया होता।

२४ सितम्बर १८५७ को कम्पनी ने दिल्ली का आधे से ज्यादा हिस्सा अपने कब्जे मे कर लिया तथा दोनो तरफ के हजारो लोग मरे। दिल्ली के स्वतन्त्रता सग्राम के सूत्रधार सम्राट बहादुरशाह तथा बख्तखा थे। बख्त खा ने उनसे कहा भी कि यह विपत्ति का समय है हम लोग भागकर दूसरी जगह से आन्दोलन का सचालन करें। किन्तु बहादुरशाह अग्रेजो के गुप्तचर मिर्जा इलाहीबख्श की बातो मे आ गए तथा बेगम सहित एकाएक गिरफ्तार कर लिए गए। उनके दोनो बच्चो को धोखे से गिरफ्तार करके उनका सिर काटकर बहादुरशाह के सामने पेश किया गया। दिल्ली मे कत्ले आम शुरू हुआ तथा किले के अस्पताल मे पडे प्रत्येक घायल, रोगी, स्त्री पुरुषो को गोली से मार दिया गया। कहते हैं कि दिल्ली मे लाहौरी दरवाजे से चादनी चौक तक का इलाका मुरदो से भरा हुआ था। कोई जीवित व्यक्ति नही नजर आता था। मुर्दों की लाशो से कुत्ते और गिद्ध मास नोच नोच कर खाते थे। नगर के लोगो का सारा माल-असबाब उनके सिरो पर लदवाकर एक जगह मगाया जाता और उसमे से कीमती चीज रखकर उन्हे बाहर के बाहर निकाल दिया जाता था। इस प्रकार दिल्ली का पुराना शासन बिल्कुल समाप्त कर दिया गया।

मौलवी अहमदशाह ने लखनऊ से ३० मील दूर बारी नामक स्थान पर अग्रेजो से मुठभेड ली और क्रान्तिकारियो की सेना के साथ शाहजहापुर का सग्राम अग्रेजो जीत लिया और अवध मे प्रवेश किया। राजा जगन्नाथसिंह और उसके भाई ने अहमदशाह को धोखे से गोली मारकर गिरा दिया उसके पुरस्कार मे कम्पनी की तरफ से उसे पचास हजार रुपया मिला। अग्रेज इतिहास लेखक मालसेन ने लिखा है कि– मौलवी एक अदभुत मनुष्य था। मौलवी अहमदशाह सच्चा देशभक्त था उसने आन के साथ डटकर खुले मैदान मे उन विदेशियो के साथ युद्ध किया जिन्होने उसका देश छीन लिया था।* निसन्देह अहमदशाह का नाम सन् १८५७ की स्वाधीनता के शहीदो मे अमर रहेगा।

महारानी लक्ष्मी बाई के नेतृत्व मे क्रान्तिकारियो ने बडी वीरता के साथ झासी तथा उसके आस पास के इलाको को स्वाधीन कर लिया था। सर ह्यू रोज ने रायगढ बानापुर हैदराबाद भोपाल आदि रियासतो की सेना ली तथा वह महाराज सिंधिया तथा टेहरी टीकमगढ के राजा की आर्थिक व अन्य सहायता से झाँसी के निकट पहुच गया। अग्रेजो के आने पर रानी लक्ष्मी बाई के साथ झाँसी की सैकडो

* मालसन—इण्डियन म्युटिनी भाग ४, पृष्ठ ३८१

लिया तोपखानों और मगजीन में काम करने लगी। लगातार आठ दिन तक संग्राम हुआ किन्तु अंग्रेजों के पास विशाल सेना थी। उधर से तात्या टोपे ने देशद्रोही चरखारी राजा पर आक्रमण कर उसकी तोपें छीन कर तीन लाख रुपया वसूल किया तथा वह झांसी की तरफ बढ़ा। झांसी में अंग्रेजों से युद्ध हुआ किन्तु तात्या को अधिक सफलता नहीं मिली। रानी लक्ष्मी बाई सिर्फ २२ वर्ष की थी वह निराश नहीं हुई और अपने घोड़े पर चढ़कर सिपाहियों और अफसरों के हौसले बढ़ाती हुई बिजली की तरह इधर से उधर घूमती रही। शत्रु की दीवारों से गोले और तोपों को निरंतर वर्षा हो रही थी जिसमें बहुत से अंग्रेज अफसर व सिपाही खतम हो गए। एक भारतीय विश्वासघातक की सहायता से कम्पनी की सेना दक्षिणी दरवाजे से नगर में घुस गई और महल की तरफ बढ़ी। रानी ने ऐसी विपत्ति के समय एक हजार सिपाहियों को लेकर तलवारों से लड़ाई शुरू कर दी। निराश होकर रानी रात को अपने दत्तक पुत्र दामोदर को कमर में बांध कर किले की दीवार से एक हाथी की पीठ पर कूद गई और अपने मर्दाने घोड़े पर सवार होकर कुछ सिपाहियों को लेकर कालपी की ओर चल दी। लफ्टिनेंट बोकर ने अपने सिपाहियों के साथ रानी का पीछा किया और वह रात भर तेजी से बढ़ती रही। सुबह होते ही भाण्डेर गांव से अपने शिशु दामोदर को दूध लेकर पिलाया और अंग्रेजी सेना को आता देख पुनः कालपी की ओर रवाना हो गई। अंग्रेज अफसर के बिल्कुल पास आते ही रानी ने अपनी तलवार खींच ली और वहीं एक ही वार में उसे गिरा दिया- आपस में सिपाहियों की खूब लड़ाई हुई और रानी अपने सैनिकों सहित आगे बढ़ गई—रात को १०२ मील का सफर तय कर रानी कालपी पहुंची। कालपी पहुंचते ही रानी का प्यारा घोड़ा मरकर गिर पड़ा और रानी को वहीं रुक कर विश्राम करना पड़ा। सुबह को तात्या टोपे और नाना के भतीजे राव साहब से बातचीत हुई। जनरल ह्विटलाक सागर, बांदा होता हुआ करवी के राज्य को लूटता हुआ कालपी के पास पहुंचा। कालपी में रानी लक्ष्मी बाई, तात्या टोपे, बांदा का नवाब, शाहगढ़, बानापुर आदि के राजा अपनी छोटी मोटी सेनाओं के साथ उपस्थित थे किन्तु इन क्रान्तिकारियों में कोई ऐसा नेता नहीं था न हो पाया था जो सारे युद्ध का संचालन करता। रानी लक्ष्मी बाई सबसे योग्य थी किन्तु वह स्त्री थी जिसके अधीन अन्य राजा रहकर नहीं लड़ना चाहते थे। तात्या टोपे भी कुशल और वीर सेनापति था किन्तु साधारण कुल में पैदा हुआ था। इसी प्रकार के मतभेद के कारण दिल्ली का राज्य भी क्रान्तिकारियों के हाथ से निकल गया। रानी लक्ष्मी बाई ने साहस से काम लिया और कुछ सेना लेकर कालपी से ४२ मील दूर ही अंग्रेज सेना को रोकना चाहा किन्तु सफलता नहीं मिली और कालपी लौट आना पड़ा। सर ह्यू रोज ने कालपी पर हमला किया—खूब घमासान युद्ध हुआ। एक बार तो कम्पनी की सेना को पीछे हटना पड़ा किन्तु अन्त

म १८ मई १८५८ को अंग्रेजों ने कालपी को जीत लिया। क्रान्तिकारी नेताओं को अपनी थोड़ी सेना सहित कालपी छोड़कर भाग जाना पड़ा। स्वाधीनता प्रेमी विद्रोहियों के पास न अब युद्ध सामान था और न धन की सहायता मिली हो किन्तु देश की स्वतंत्रता की इच्छा वाले वीर तात्या टोपे और महारानी लक्ष्मी बाई ने हिम्मत न हारी। तात्या टोपे चुपके से ग्वालियर पहुंचा। उसने वहां की जनता और सेना को अपनी ओर आकर्षित कर स्वाधीनता संग्राम में मर मिटने की भावना भरी और लक्ष्मी बाई, राव साहब, बांदा के नवाब आदि मिलकर जियाजीराव सिंधिया जो अंग्रेजों का भक्त था तथा देशद्रोह कर रहा था ग्वालियर को अपने कब्जे में कर लिया और इस प्रकार बहुत सी सेना तोप और बड़ा भारी खजाना क्रान्तिकारियों के हाथ लगा। उसने ग्वालियर की गद्दी पर राव साहब को बिठाया और सेना को बीस लाख रुपया बांटा। रानी लक्ष्मी बाई ने कहा कि अब समय दावतों और उत्सवों में नष्ट न किया जाय बल्कि आगे को युद्ध की तैयारियां की जाय—किन्तु उसकी बात किसी ने नहीं मानी। इतने में ह्यू रोज महाराजा सिंधिया को लेकर ग्वालियर की तरफ बढ़ा और तात्या टोपे तथा रानी लक्ष्मी बाई ने सेना को हिम्मत बढ़ाते हुए कम्पनी की फौज का सामना किया। लक्ष्मी बाई के साथ उसकी दो सहेलियां मंदरा और काशी घोड़ों पर सवार होकर वीरतापूर्वक शस्त्र चला रही थीं। रानी लक्ष्मी बाई अपने प्राणों की परवाह न करते हुए फाटक के बाहर निकलकर अनेक शत्रुओं को नष्ट करती रही और अंग्रेजों को पीछे हट जाना पड़ा। अगले दिन ग्वालियर किले पर कई ओर से आक्रमण हुआ रानी ने अलौकिक वीरता का परिचय दिया रानी अपने घोड़े पर सवार होकर लड़ती रही और चारों ओर से घिर गई उसके साथ दोनों सहेली तथा १५-२० सवार बाकी रह गए और तलवार लिए हुए शत्रु को मारती हुई क्रान्तिकारियों में मिलना चाहा। रास्ते में एक नाला पड़ता था घोड़े पर सवार रानी ने कूद कर पार करना चाहा किन्तु नया घोड़ा होने के वजह से वहीं रह गए और चारों ओर से शत्रुओं से घिर गई। रानी के पीछे की ओर से वार हुआ और उसका सिर का दाहिना भाग व आंख अलग हो गई किन्तु रानी फिर भी डटी रही। छाती पर वार होने से बेहोश होकर एक दो गोरों को मारकर आगे बढ़ी—इतने में रानी का वफादार नौकर रामचंद्रराव देशमुख आया और पास की एक कुटी में गंगादास बाबा के हवाले रानी का जन दिया। रानी लक्ष्मी बाई ने वहीं अपने प्राण छोड़ दिए और इस प्रकार स्वाधीनता संग्राम के नेताओं में सबसे योग्य और वीर रत्न लुप्त हो गया।

इसके पश्चात दक्षिण में भी कुछ क्रान्तिकारियों ने स्वाधीनता के आंदोलन में सक्रिय सहयोग दिया किन्तु विजय अंग्रेजों की ही रही। निजाम हैदराबाद में क्रान्ति

कारियो का साथ नही दिया। वहाँ की जनता न १८५७ की क्रान्ति म बडा उत्साह दिखाया किन्तु निजाम और उसक वजीर न अंग्रेजा का ही साथ दिया और क्रान्ति कारियो को पकडवाकर अंग्रेजो के हवाले करके उन्ह मरवा दिया।

अवध मे फिर से क्रान्तिकारियो का आदोलन चला और विक्टोरिया के शान्ति और सुख-समृद्धि के प्रयत्न आदि के एलान के ५-६ महीने पश्चात भी सघर्ष होता रहा। किन्तु अन्त म साठ हजार स्त्री-पुरुष नाना साहब बेगम हजरतमहल और नवाब बिरजीस कदर आदि ने नेपाल म प्रवेश किया और अंग्रेजो क विरुद्ध सहायता की प्रार्थना की और नेपाल म रहने की इजाजत चाही किन्तु महाराजा जग बहादुर ने स्वीकार नही किया तथा अंग्रेजा को क्रान्तिकारियो के कत्ल करने की खुली छूट दे दी।

तात्या टोपे अभी स्वाधीनता की आग लिए हुए क्रान्ति की सफलता का प्रयत्न करता रहा। जिधर उसन सदा दसा अपनी थोडी सी सेना के साथ अंग्रेजा को हराता रहा। टोंक जयपुर, रायगढ नागपुर, बडौदा, देवास आदि जहा जहा भी मौका लगा तात्या टोपे वीरतापूर्वक बढकर जनता म स्वाधीनता के भाव तथा अंग्रेजा के विरुद्ध क्रान्ति का भडकाता रहा। २१ जनवरी १८५९ को अलवर के पास तात्या थका माँदा, निराश होकर मानसिंह के पास जगल मे छिपा हुआ था। वहा मानसिंह के विश्वासघात के कारण उसे घेर लिया गया और ७ अप्रैल १८५९ का रात को अंग्रेजा के हवाले करा दिया गया। हफ्ते भर बाद तात्या को फासी द दी गई और इस प्रकार क्रान्ति की रही सही अंतिम ज्योति भी क्षीण पड गई और अंग्रेजो क पर धीरे धीरे यहा जमन लग।

सन् १८५७ की क्रान्ति की महत्ता सन १८५७ की स्वाधीनता की क्रान्ति का प्रत्यक्ष परिणाम चाहे उज्ज्वल एव आशामय न रहा हो किन्तु उससे अंग्रेजो को यह पता लग गया कि यहा के सपूतो म भी देश प्रेम तथा स्वाधीन होने की उत्कट इच्छा है और उन्ह जबरदस्ती दबाकर नही रखा जा सकता। सन १८५७ के वीर क्रान्तिकारियो का दासता की शृखला म बन्धी भारत मा की मुक्ति के लिए किया गया बलिदान व्यर्थ नही गया। इस आन्दोलन से भारतवासियो के राष्ट्रीय जीवन मे आशा और आत्म विश्वास की वह उज्ज्वल ज्योति जली जो ९० वर्ष तक जलकर देश को स्वतत्रता दिलाने की प्रेरणा देती रही।

स्वाधीनता का यह आदोलन भारतवर्ष के लिए ही लाभप्रद नही रहा वरन समस्त एशिया के देश जागरूक हो गए और एक लम्बे दासत्व और अत्याचार से भी बच गए। जिस प्रकार शिवजी ने लोक कल्याणाय समुद्र-मथन म से निकले हुए

विष का पान स्वयं किया और अमृत दूसरा के लिए छोड़ दिया उसी प्रकार १८५७ के वीर क्रान्तिकारियों ने मातृभूमि पर अपने शीश चढ़ाकर हंसी हंसी में अंग्रेजों के अत्याचार और शोषण कष्ट सह लिए और उनकी समस्त एशिया चीन-जापान आदि देशों को जीतने की प्रबल रक्त पिपासा और महत्त्वाकांक्षा को समाप्त कर दिया। १८५७ की क्रांति की आग भारतीयों के हृदय से एकदम समाप्त नहीं हो गई वरन् समय समय पर उसमें से निकली हुई चिंगारी दृष्टिगोचर हुई और सन १९४२ के आंदोलन में उसने वही जनव्यापी उग्र रूप पुन धारण किया जिससे फिरंगी के पैर सदा के लिए डगमगा गए। अत्याचार और अन्याय का सिंहासन टूटने लगा और भारतवासी सन १९४७ में पुन स्वतंत्र हो गए। यद्यपि सन १८५७ के पश्चात् आजादी की लड़ाई के हथियार और साधन बदल गए सत्य और अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी ने देश की गरीबी और गुलामी को दूर करने का नया तरीका बताया किन्तु लक्ष्य एक ही था।

ब्रिटिश शासनकाल तथा कांग्रेस के उदय के समय राष्ट्रीय भावना

सन् १८५७ की विद्रोह की अग्नि की समाप्ति के पूर्व ही भारत का शासन कम्पनी के हाथों से ब्रिटिश सरकार के हाथ में चला गया। सन् १८५८ में इंग्लैंड के सिंहासन पर बैठी हुई रानी विक्टोरिया ने भारत के समस्त राजाओं रईसों तथा जनता के नाम एलान प्रकाशित किया जो संक्षेप में इस प्रकार था--

जब ईश्वर की कृपा से देश में फिर से शान्ति कायम हो जाएगी तब हमारी हार्दिक इच्छा है कि हिंदुस्तान की कारीगरी की तरक्की की जाय ऐसे ऐसे काम बढ़ाए जाय जिससे आम जनता का लाभ तथा तरक्की हो। प्रजा की खुशहाली में हमारा बल है, उसके संतोष में हमारी सलामती है।

हमारी यह भी इच्छा है कि जहाँ तक संभव हो, हमारे प्रजाजनों को उनकी योग्यता, शिक्षा तथा ईमानदारी के अनुसार पक्षपात रहित होकर सरकारी नौकरियों में स्थान दिया जाय और उनकी जाति या उनके धर्म का विचार न किया जाय। हमारी परमपिता से प्रार्थना है कि वह हम और हमारे अधिकारियों को हमारी इन इच्छाओं का जनता की भलाई के लिए पालन करने की शक्ति प्रदान करे।'

सन् १८५७ के पश्चात देशी रियासतों को ब्रिटिश भारत में मिलाना बंद कर दिया गया और कितने ही नए राज्य बनाए गए। इसका कारण था भारतवर्ष में एक सूत्रता और संगठन का अभाव बढ़ता जाए एवं देश राजनैतिक दृष्टि से दो टुकड़ों में बंटा रहे तथा राजा अपने अस्तित्व के लिए ब्रिटिश सरकार पर निर्भर रहे।

इस घोषणा को भारतवासियो ने अपना अधिकार पत्र माना क्योंकि इसमें परमात्मा से प्रार्थना कर और 'सच्चे हृदय' मे रानी विक्टोरिया ने शात रहने का सदेश भेजा था। इसके पश्चात भारतीयो के हृदय मे धधकती हुई क्राति की ज्वाला कुछ शात हुई तथा अग्रेजी राज्य को ईश्वरीय देन समझा गया और एक नए युग की आशा म सब खो गए। वास्तव मे मे इसका कारण यह था कि कम्पनी का शासन समाप्त कर देने म ही अब अग्रेज नीतिज्ञो को भारत मे अग्रेजी राज्य की स्थिरता और प्रगति दिखाई दे रही थी। इस एलान का उद्देश्य स्वतन्त्रता सग्राम म असफल भारतीयो के दिलो का किसी तरह शात करना अधिक था। किन्तु यह केवल एक रस्मी घोषणापत्र था इसके द्वारा अग्रेजो के ऊपर किसी प्रकार का बन्धन न था और इसकी कोई कानूनी कीमत नही थी। †

बबई इलाके के दक्षिण प्रात मे किसानों के विद्रोह की आग भडक उठी थी। मि० ह्यूम ने इस अशाति को प्रकट करने का सरल उपाय ढूढ निकाला हिन्दुस्तानियो की राष्ट्रीय सभा कायम करने की योजना बनाई जो आज काग्रेस के रूप मे दिखाई दे रही है। ह्यूम साहब न कलकत्ता विश्वविद्यालय के पढे लिखे स्नातको म से कुछ ऐसे नवयुवको की माग की थी जो 'अपना सुख चन छोडकर सावजनिक सेवा की भावना से भरे हुए हो। इन लोगो के मन मे आत्म बलिदान और निस्वार्थता ही सुख और स्वतन्त्रता अचूक पथ प्रदर्शक थे।

सन १८७७ ई मे दिल्ली मे दरबार हुआ जिसमे देश के राजा महाराजा तथा अग्रगण्य व्यक्ति सम्मिलित हुए। बगाल की इण्डियन एसोसिएशन के सस्थापक श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी के मन मे इस अवसर पर प्रेरणा उठी कि एक देशव्यापी राजनीतिक सगठन बनाया जाय। सन १८८३ मे कलकत्ते मे राजनीतिक परिषद की आयोजना की गई जिसमे सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तथा आनदमोहन बसु भी उपस्थित थे। इसके दूसरे वर्ष कलकत्ते म अन्तर्राष्ट्रीय परिषद हुई जिसम अखिल भारतीय काग्रेस स्थापित करने की प्रेरणा मिली। मि० ह्यूम ने सबसे पहले सन १८८४ म नोटिस जारी किया कि पूना म इण्डियन यूनियन का पहला अधिवेशन किया जाएगा। काग्रेस के प्रारभ करने म केवल राजनीतिक उद्देश्य ही नही था वरन राष्ट्रीय पुनरुत्थान की भावना भी निहित थी। देश म सास्कृतिक पुनरुत्थान का काय राजा राममोहन राय बहुत पहले से करने लग थ तथा उन्होने भारतीयो म हीनता की भावना को दूर कर आत्म विश्वास और राष्ट्रीयता की भावना भरने का प्रयत्न किया। सामाजिक

---

† जेम्स स्टीफसन—भारत सरकार के ला मेम्बर।

कुरीतियों को दूर करते हुए पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार का आन्दोलन चलाया गया। इस देश को अन्य प्रगतिशील राष्ट्रों के समान ही प्रगति पथ पर बढ़ने का दृष्टिकोण अपनाया। उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना कर अपने सिद्धान्तों का प्रचार बंगाल में तथा वहीं किया। उपनिषदों तथा धर्म की महत्ता का गान राममोहनराय ने भी किया परन्तु स्वामी दयानन्द ने वेदों की महत्ता का व्यापक प्रचार किया। जगह जगह आर्यसमाज की स्थापना कर वैदिक संस्कृति के प्रचार और प्रसार करने के लिए राष्ट्रप्रेमी संस्थाओं की संख्या बढ़ाई। इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में हिन्दू धर्म वैदिक धर्म का सुन्दर विवेचन है तथा इसे अन्य धर्मों से प्राचीन तथा गौरवपूर्ण बताया। श्रीमती एनी बीसेंट ने थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना कर व्यापक रूप से हिन्दुओं के धर्म की महत्ता बताते हुए सांस्कृतिक उत्थान का और प्रयास किया। आर्यसमाज तथा थियोसोफिकल सोसायटी के इन्होंने देश प्रचारकों ने देश में कई शिक्षण संस्थाएं तथा समाज सेवा करने वाली संस्थाओं की स्थापना कर राष्ट्र कल्याण का कार्य किया। इसके अतिरिक्त रामकृष्ण परमहंस ने बंगाल में रामकृष्ण मिशन संस्था स्थापित कर सांस्कृतिक पुनरुत्थान की लहर उठाई तथा स्थान स्थान विशेष में इसकी शाखाएं स्थापित कर भारतीय संस्कृति और धर्म की उन्नति की। इस संस्था के अनन्य भक्त और प्रचारक स्वामी विवेकानन्द ने विदेशों में घूम घूम कर धर्म का प्रचार किया तथा भारत का नाम संसार में उज्ज्वल किया और बताया कि वेदान्त धर्म केवल हिन्दुओं के लिए ही नहीं वरन् मनुष्य मात्र के लिए है। रामकृष्ण मिशन ने शिक्षण संस्थाएं पुस्तकालय तथा रोगियों की चिकित्सा करने वाले अनेक आश्रम चलाए।

इस प्रकार इन संस्थाओं द्वारा सार्वजनिक सभाएं की गई तथा धार्मिक व सामाजिक सुधार शिक्षा प्रचार के साथ राजनीतिक विषय पर भी चर्चाएं होने लगी। मि० ह्यूम ने १८८५ पूना में इंडियन नेशनल यूनियन की परिषद की आयोजना के समय इसके उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। इसका प्रथम उद्देश्य था राष्ट्र की प्रगति में जी जान से लगे हुए लोगों का पारस्परिक परिचय दूसरा उद्देश्य राजनैतिक कार्यों के स्वरूप का निर्णय था। यह अधिवेशन पूना में न होकर बंबई में गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कालेज में हुआ तथा कांग्रेस उद्देश्य इस प्रकार बताए —§

(१) साम्राज्य के विभिन्न भागों में देशहित के लिए लगन से काम करने वालों की आपस में घनिष्ठता मित्रता बढ़ाना।

---

§ डा. पट्टाभि सीतारमैया कांग्रेस का इतिहास (प्रथम खंड) पृष्ठ १५ —
(पाँचवा संस्करण)

(२) समस्त देशप्रेमियों में राष्ट्रीय एकता की भावनाओं का पोषण परिवर्धन करना।

(३) महत्वपूर्ण और आवश्यक सामाजिक प्रश्नों पर भारत के शिक्षित लोगों की चर्चा तथा उसका प्रामाणिक संग्रह करना।

(४) उन तरीकों और दिशाओं का निर्णय करना जिनके द्वारा भारत के राजनीतिज्ञ देशहित के कार्य करें।

इस अवसर पर जो अन्य प्रस्ताव पास हुए तथा अब देश में एक निश्चित और संगठित संस्था के रूप में कांग्रेस का कार्य बढ़ने लगा। अनुनय विनय की नीति को छोड़कर स्वाभिमान और आत्म विश्वास की भावना द्वारा वह अपनी मांग प्रस्तुत करने लगी। इसमें सब जातियों और स्तर के लोगों को स्थान मिला। गांधी जी ने दूसरी गोलमेज परिषद् में कांग्रेस के बारे में अपना मत दिया—कांग्रेस भारतवर्ष की सबसे बड़ी संस्था है। ५० वर्षों से सतत कार्य करने वाली यह संस्था सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय है। एलेन ओक्टेवियन ह्यूम को कांग्रेस के पिता के रूप में हम जानते हैं। श्री फिरोजशाह मेहता और दादाभाई नौरोजी ने इसका पोषण किया। आरंभ से ही कांग्रेस में मुसलमान ईसाई पारसी आदि शामिल थे। मुसलमान और पारसी भी कांग्रेस के सभापति रहे तथा स्त्रियों में श्रीमती एनी बिसेन्ट तथा सरोजिनी नायडू कार्य समिति की सदस्य तथा कार्यकर्त्री हैं। छुआछूत को दूर करने के कार्य को कांग्रेस ने खास स्थान दिया। कांग्रेस मूलरूप में अपने देश के एक कोने से दूसरे कोने तक ७ लाख गांवों में बिखरे हुए करोड़ों मूक अर्ध नग्न और भूखे प्राणियों की प्रतिनिधि है। यह आवश्यक रूप से किसानों की संस्था है तथा चर्खा-संघ आदि कई रचनात्मक कार्यों के रूप में हम गांवों में प्रवेश कर चुके हैं।' [1]

कांग्रेस ने यहां रहने वाले प्रत्येक स्त्री पुरुषों के मन में एकता लाना और आत्म विश्वास फूंकना तथा उनके विचारों व आकांक्षाओं में एक स्पष्ट राष्ट्रीय रूप दिया जिसकी प्रेरणा से राष्ट्र भाषा राष्ट्रीय साहित्य तथा देश की कला, कारीगरी की उन्नति का कार्य होता रहा है।

कांग्रेस के प्रारंभ के अधिवेशनों से हम देखते हैं कि वह जनप्रिय होती गयी तथा देश के बुद्धिमान प्रतिभाशाली कार्यकर्ता बड़े मनोयोग से इसमें अपनी शक्ति लगाने लगे। मि ह्यूम के अतिरिक्त कुछ अन्य अंग्रेज भारत हितैषी इन सम्मेलनों में शामिल हुए (जैसे श्री आल्फ्रेड नायर जाजमन विलियम वेडरबर्न) तथा महत्वपूर्ण कार्य किये। इन अधिवेशनों में बहुत से प्रस्ताव रखे जाते तथा बहस व

---

[1] श्री पट्टाभि सीतारमैया-कांग्रेस का इतिहास प्रथम खंड पृष्ठ १८ १९

पारस्परिक विचार विनियम के पश्चात स्वीकृत किए जाते। 'सब प्रथम कांग्रेस की स्थापना एक समाज सुधारक सगठन के रूप म हुई थी जिसका उद्देश्य मत्रीपूर्ण सबध द्वारा जाति-पाँति रगभेद और प्रात भेद की भावना को हटाकर देश प्रेमियो म एकता बढाना था। बाद म दादा भाई नौरोजी ने स्पष्ट कहा कि कांग्रेस एक शुद्ध राजनीतिक सस्था है। * सन् १८८८ मे लखनऊ म एक विधान स्वीकार किया गया उसम काग्रेस का ध्येय वधानिक उपायो द्वारा भारतीय साम्राज्य के हित और कल्याण को आगे बढाना रखा गया था।

साहित्यिक प्रतिक्रिया—अभी तक हम आधुनिक काल के प्रारम्भ तथा रीति काल के उत्तर काल म होने वाले विभिन्न राजनीतिक सघर्षों तथा क्रान्तियो आदि का अध्ययन कर रहे थे जिन्होने राष्ट्रीयता का नया रूप सामने रखा था। वैदिक युग तथा मध्ययुग की राष्ट्रीय भावना से आधुनिक युग मे व्याप्त राष्ट्रीयता कुछ भिन्न होती गई।

रीतियुग के साहित्य म कवियो के राज्याश्रित होने के कारण कविता भी राजदरबार की शोभा बढाने वाली चीज मानी जाने लगी। श्रृगारपरक रचनाए भक्ति की चासनी म पगाकर आश्रयदाताओ के मनोविनोद और इन्द्रिय सुख की पूर्ति के लिए नए नए उपमानो और अतिशयोक्ति से सजाकर प्रस्तुत की जा रही थी। दूसरी ओर कुछ कवियो ने यद्यपि वीर रस सबधी रचनाए लिखी किन्तु इनम से कुछ को छोडकर शेष अन्य सभी का लक्ष्य आश्रयदाता को सामान्य जीवन की बहुत ऊचा चढा चढाकर रखना था। युद्ध देश रक्षा के कारण कम कन्याहरण या पारस्परिक द्वेष के उद्देश्य से अधिक लडे जाते थे। इस काल क बहुत से कवि अधिक लोकप्रिय नही रहे इसका कारण यह था कि साहित्य जनता से दूर होता जा रहा था।

सन १८५७ की क्रांति तथा नाना लोगो के वीरतापूर्ण कृत्यो की छाया भी तत्कालीन हिन्दी साहित्य म देखने को नही मिलती। इस विद्रोह को निर्दयता पूर्वक दबा देने के कारण जनता आतकित हो गई थी तथा इसका अन्य कारण यह भी था कि हिन्दी के साहित्यकार अधिकतर मध्यम तथा उच्च वर्ग के थे। उन्हे शासको से काम था। मुसलमानो और अत्याचारी शासन विद्रोह के भयानक परिणाम और शासको की विशेष कृपा स प्रभावित होने के कारण उन्होने सन १८५७ ई के विद्रोह की चर्चा अपनी रचनाओ म नही की। † उस समय का साहित्य युग का प्रतिनिधित्व नहीं कर रहा था इसलिए कवियो न अपनी लेखनी कम ही इस ओर उठाई। परन्तु

---

* श्री भगवानदास केला—भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ४८

† डा० उदयभानुसिंह—महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनका युग—पृष्ठ १ भूमिका

जनसाधारण में 'खूब लड़ी मरदानी अरे झाँसीवाली रानी, हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।' विशेषकर बुंदेलखंड की ओर प्रचलित लोकगीतों द्वारा अपनी विद्रोह-भावना की अभिव्यक्ति की। बाद में देशभक्ति का जो भी स्वर सुनाई पड़ता है वह मुक्त नहीं कुंठित है और साथ ही राजभक्ति के उदगारों से अधिक व्याप्त है।

सन् १८५७ की अधिकांश लोक कहावतें व लोकगीत मौखिक रूप में ही उपलब्ध हैं। कुछ गीतों का संकलन भी हुआ है। दिल्ली, मेरठ, अलीगढ़, हाथरस, झाँसी, कानपुर, अवध, तथा दक्षिण में जहाँ जहाँ क्रांति की अग्नि फैली वहाँ की जनता ने स्वयं लोकगीत रचे जिनमें गदर की लूटपाट, अंग्रेजों के अत्याचार, भारतीय सिपाहियों व ग्रामीणों की वीरता आदि के चित्र स्पष्टतया उभरे हैं—इस प्रकार के कुछ गीतों का संकलन श्री भगवानसिंह विमल तथा कन्हैयालाल 'चचरीक' ने किए हैं।

महुआ, मारि अलीगढ़ जिले के दो गाँव हैं। गहलऊ निवासी किसी ठाकुर ने बड़े पराक्रम से अंग्रेजी सेना का महुए कीठना गाँव के निकट सामना किया था और अलीगढ़ (कोल) तक खदेड़ दिया था। इसी भाव को गीत में रखा गया है—

> "महुआ मारि कीठना मारयौ
> कोल के लागि गए तारे
> स्यावास व गहलाऊ वारे।

एक दूसरे गीत में अलीगढ़ जिले में अमानी नामक व्यक्ति ने घुड़सवार अंग्रेजों के दाँत खट्टे किए और भरतपुर तक पीछा किया —

> अमानी मान तौ मान, मोडी न माने
> के अंग्रेज चढ़े घोड़िन प, कित्ते पदर आए
> कित पकरि कुअन म डारे कित उल्टे भागे
> करौ अमानी ने जन पीछौ, बीन बीन के मारे †

> उत्तरप्रदेश के गावों में अक्सर यह सुना जाता है कि—
> 'गदलु परौ सत्तावन म, परि गयौ भिर्रा गामन म।'

सन् ५७ का सबसे लोकप्रिय गीत हाथरस और मुरसान के देशभक्त राजा महेंद्रप्रताप की वीरता के संबंध में मिलता है। यहाँ के किला पर अभी भी अंग्रेजों

---

† १८५७ के स्वाधीनता संग्राम के लोकगीत श्री कन्हैयालाल चचरीक
(आजकल, मई १९५७ पृष्ठ ३९)

द्वारा बरसाए गए तोप के गोलों के निशान हैं। उस समय की लूट का चित्र एक लोकगीत में दिया गया है–

> फिरंगी लुटि गयौ रे
> हाथरस के बाजार में, गोरा लुटि गयौ, रे !
> टोप लुटि गयौ, घोड़ा लुटि गयौ तमचा लुटि गयौ
> जाको चलते बाजार में !

इसी प्रकार मेरठ की लूट के संबंध में भी निम्नलिखित गीत बड़ा लोकप्रिय रहा है जिसे गुजर स्त्रियां गाती हैं–

> मेरठ का सदर बाजार है मेरे सइयां लूट न जाने
> लोगों ने लूटे शाल दुशाले, मेरे प्यारे ने लूटे रूमाल।
> लोगों ने लूटे थाली कटोरे मेरे प्यारे ने लूटे रुमाल
> लोगों ने लूटे मुहर अशरफी मेरे प्यारे ने लूटे बदाम।
> मेरठ का सदर बाजार है मेरे सइयां लूट न जानें।

इन लोक गीतों में राष्ट्रीयता व शौर्य प्रदर्शन का रूप भी कहीं कहीं मिलता है जिससे हम जनता के हृदय में व्याप्त उत्साह और देश प्रेम की भावना का पता लगता है। राजा गुलाबसिंह और भांसी की रानी की वीरता के गीत जन मानस के कंठहार बने हुए थे जिन्होंने सन ५७ के स्वतंत्रता आंदोलन में प्रसन्नतापूर्वक प्राणों का उत्सर्ग किया —

> राजा गुलाबसिंह रहिया तोरी हेरू
> एक बार दरस दिखावा रे
> अपनी ठाढ़ी से मह बोले गुलाबसिंह
> सुनरे ! साहब मेरी बात मे
> पदल भी मारे, सवार भी मारे
> मारी फौज बेहिसाब रे, बाँके गुलाबसिंह रहिया
> पहली लड़ाई लखनगढ़ जीते, दूसरी लड़ाई रहायबाद
> तीसरी सढ़ीलवा में जीते जामू मे कीन्हा मुकाम रे।
> गुलाबसिंह रहिया।

इस प्रकार इन गीतों में देश प्रेमी वीरों और योद्धाओं का स्मरण कर जन मानस में पुरानी स्मृति को ताजी बनाए रखने का सुन्दर प्रयास किया गया है। झांसी की रानी के संबंध में स्त्रियों में गाया जाने वाला एक गीत इस प्रकार है–

बारी वस रानी धुडला प निकरी
हाथन मे ढाल तरवारि
तुम मति निकरो, रानी, वारि रे उमरिया, गोरन की
फौज अपार।
छोटी सी पलटन, प्यारी रे रनिया पदर और सवार
खाई खदक, वन के जिनावर, काटन की भरमार
बारी वस रानी धुडला पँ निकरी

लगभग सन् १८८५ के पश्चात श्री रामगरीब चौबे ने सन ५७ के विप्लव के लोकगीता का सकलन किया तथा इनका प्रकाशन सन् १६११ ई म विलियम कुक ने इण्डियन एटिक्वेरी म कई खडो म प्रकाशित किया। किन्तु इस प्रकाशन का उद्देश्य यह सिद्ध करना था निम्न वर्गों के लोगा ने अग्रजो की जीत के सम्मान म ये गीत रचे थे।

रीतियुग की परम्परा के समाप्त होने का कारण अग्रेजो का भारतवप में पदापण भी माना जाता है। देश प्रेम एव राष्ट्रीयता की नई परिभाषा भी विदशियों क आगमन के परिणामस्वरूप मानी जाती है किन्तु यह पूणत सत्य नही। अभी तक भारत मे जितने भी विदेशी आए वे यहा की सभ्यता और सस्कृति मे आत्मसात हो गए और घुलमिलकर रहन लग। किन्तु अग्रेजा की प्रपच नीति और यहा के धन व सम्पत्ति को लूटने की अदम्य लालसा ने सोए हुए राष्ट्र को जगा दिया और देखते ही देखते सामाजिक राजनीतिक साहित्यिक आदि सभी क्षेत्र म परिवतन होने लगे। पराधीन राष्ट्र अपनी सपूण शक्ति स दासता की बेडिया तोड फेंकने के लिए वातावरण तयार करने लगा। सन् १८५७ का विद्रोह इसी आदोलन का बाह्य रूप था किन्तु उसम पूण सफलता न मिलन के कारण देश को अपने सीमित बल का पता लग गया और राष्ट्र की समृद्धि व स्वतत्रता के नए उपाय सोचने लगा। अब नई परिस्थितिया के अनुरूप अपना माग बनाकर लक्ष्य प्राप्ति करने के अतिरिक्त कोई चारा नही रहा।

१६ वी सदी के उत्तराध मे हिन्दी लेखका और कविया ने अपने साहित्य में नवभारत की राजनीतिक एव सामाजिक भावनाओ की अभिव्यक्ति की। इस युग के कवियों की दृष्टि कभी अतीत के गौरवमय स्मरण की ओर जाती कभी वतमान की हीनावस्था की ओर, और कभी भविष्य की ओर आशा लगाए थी। हिन्दी भाषा के कवियों तथा लेखको न भारत व्यापी राजनीतिक आंदोलन म प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप स सहयोग दिया। पाश्चात्य शिक्षा व अग्रेजी विचारधारा में रगे रहने पर भी इस

युग के लेखकों व कवियों में विचारों की स्वतन्त्रता थी तथा वे भारत की स्वाधीनता की कामना करते थे। इस समय विद्रोह या क्रांतिकारी भावनाओं से परिपूरित साहित्य सृष्टा चाहे न मिले किन्तु उन्हें सुधारवादी तथा देश प्रेमी अवश्य कहा जा सकता है।

हिन्दी की राष्ट्रीय कविता

राष्ट्रीय काव्य में सामान्यतः सरूप और अरूप तत्वों के मुख्य विभाजन के अन्तर्गत विभिन्न विषयों का समावेश हो जाता है। हिंदी साहित्य के आधुनिक युग में राष्ट्रीयता की निम्नलिखित भावनाएं सामने आई हैं–

१ जन्म भूमि के प्रति प्रेम
२ स्वर्णिम अतीत
३ प्रकृति प्रेम
४ विदेशी शासन की निंदा व स्तुति
५ जातीयता के उद्गार
६ वर्तमान दशा पर क्षोभ-अकाल महामारी अवनति
७ सामाजिक सुधार—भविष्य का निर्माण
८ वीर पुरुषों—नेताओं की स्तुति व पूजा
९ दुखी किसान मजदूरों का चित्रण
१० (राष्ट्रभाषा) हिन्दी के प्रति प्रेम

प्रस्तुत प्रबंध में आधुनिक युग के साहित्य में इन्हीं स्तंभों के आधार पर आलोचनात्मक अध्ययन करते हुए राष्ट्रीय भावना का निरूपण किया गया है। विभिन्न कालों में युग प्रवर्तक कवियों की देश प्रेम संबंधी राष्ट्रीय भावनाओं के साथ साथ उनके अन्य प्रसिद्ध व अप्रसिद्ध समकालीन कवियों का भी अध्ययन किया गया है जिससे युग की धारा का यथेष्ट परिचय मिल सके। उपर्युक्त दस स्तंभों के विस्तृत विवेचन की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इनके अर्थ स्पष्ट हैं। इनके नाम व शब्द कुछ दूसरे भी रखे जा सकते थे या संख्या भी बढ़ाई जा सकती थी किन्तु इन्हीं को मुख्य आधार मानकर युग की राष्ट्रीय भावना का स्वरूप निर्धारित किया गया है।

हिन्दी साहित्य का आधुनिक युग भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से ही प्रारंभ होता है। सन् १८५७ के विद्रोह के समय उनकी अवस्था केवल ७ वर्ष की थी। जिस समय भारतेन्दु ने साहित्य क्षेत्र में पदार्पण किया उनकी आयु बहुत ही कम थी। कंपनी का राज्य समाप्त हो गया था तथा विक्टोरिया के घोषणा पत्र से भारतीय जनता में भविष्य के लिए नई आशाएं बंधने लगी थी तथा उद्योग और विज्ञान की प्रगति और

प्रचार से सडके, रेल तार डाक विभाग आदि द्वारा देश मे एक सूत्रता स्थापित हुई। अग्रजी और विज्ञान की शिक्षा का उच्च तथा मध्यम वर्ग मे वडा प्रचार हुआ। भारतेन्दु के जीवनकाल म नवीन और प्राचीन का सुदर समन्वय हुआ-नवीन चेतना और प्रगति के फलस्वरूप प्राचीन साहित्य के अध्ययन का भी प्रोत्साहन मिला। बहुत से विदेशी विद्वानो ने यहा की भाषा तथा साहित्य की खोज की तथा प्रशसा की। सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र मे भी परिवतन हुए। भारतेन्दु इस युग के प्रतिनिधि के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं जिन्होने नव जागरण का एक शक्तिशाली स्रोत प्रवाहित किया और देश की समृद्धि, उन्नति और स्वतत्रता के लिए कामना करते हुए स्वदेशाभिमान पर जोर दिया। स्वदेशी वस्तुओ का उपयोग तथा हिन्दी भाषा की उन्नति के लिए उन्होने जो काय किया वह आगे आने वाली पीढियो के लिए प्रेरणा स्वरूप रहा। भारतेन्दु ने जीवन भर यह काय किया तथा साहित्य के इतिहास को भी एक नया मोड दिया, वह एक युग द्रष्टा और युग सृष्टा के रूप म हिन्दी साहित्य जगत म अवतीर्ण हुए जिससे भाषा और साहित्य दोनो ही प्रभावित हुए। रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार 'भारतेन्दु ने जिस प्रकार गद्य की भाषा का स्वरूप स्थिर करके उसे देश काल के अनुसार नए नए विषयो की ओर लगाया उसी प्रकार कविता की धारा को भी नए क्षेत्रो की ओर मोडा। इस नए रग मे सबसे ऊचा स्वर देश भक्ति की वाणी का था।' ‡ नीलदेवी भारत दुर्दशा आदि नाटको के भीतर आई हुई कविताओ म देश दशा की जो मार्मिक व्यजना है वह तो है ही, उन्होने बहुत सी स्वतत्र कविताए भी लिखी जिनमे देश की अतीत गौरव गाथा का वर्णन वतमान अधोगति तथा भविष्य की चिन्ता आदि अनेक पुनीत भावो का सचार पाया जाता है।

भारतेन्दु बाबू खानदानी रईस थ इसलिए समय समय पर राजभक्ति प्रदर्शित करने का कोई अवसर उन्होने नही छोडा। राज परिवार के सुख दुख, विवाह मृत्यु, आगमन, स्वागत आदि सभी अवसरो पर काव्य द्वारा हर्ष विषाद प्रकट किया। बहुत से विद्वानो ने उनकी राजभक्ति को राजद्रोह बताया तथा उनकी देशभक्ति पर सन्देह भी प्रकट किया। बाबू श्यामसुन्दरदास ने तो यह कहा है कि-'हम यह स्वीकार करते हैं कि भारतेन्दु म उत्कट देश प्रेम और प्रगाढ समाज हितैषिता के भाव थे परन्तु साथ ही हम यह भी मान लेते हैं कि उनका देशानुराग, जाति प्रेम आदि बाह्य परिस्थितियो के फलस्वरूप थ, उन्हे जीवन के प्रवाह के भीतर से नही देखा था उनकी स्वदेश प्रेम-सबधी रचनाए विशेष तन्मयता की सूचना नही देती। *

स्वर्णिम अतीत तथा जन्मभूमि के प्रति प्रेम--स्वर्णिम अतीत के गौरवमय

‡ रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ५९८

* डा श्यामसुन्दरदास-हिन्दी साहित्य (तृतीय सस्करण) पृष्ठ ३६६ ७०

चित्रों की सुन्दर झांकियाँ देश के जनमानस को उत्साहित करती है तथा देश को उन्नत और समृद्ध बनाने की प्रेरणा देती है। अतीत वर्तमान के दुख को भुलाने के लिए सुखद स्वप्न की भाँति ही चित्रित नहीं किया गया वरन् भविष्य की प्रेरणा बनकर भी सक्षम उपस्थित होता है। जन्मभूमि के प्रति प्रेम भी स्वाभाविक है। माता के समान ही मातृभूमि वन्दना भी प्रत्येक स्वाभिमानी देश प्रेमी के हृदय में व्याप्त रहती है।

निम्नलिखित पद्य में (राजकुमार शुभागमन वर्णन) महाभारत काल तथा मध्यकाल आदि के संबंध में स्वर्णिम अतीत का वर्णन करते हुए भारतेन्दु ने लिखा है–

> जदपि न भोज न व्यास नहिं बालमीकि नहिं राम
> शालयगिह हरिचन्द नहि करन जुधिष्ठिर स्याम
> जदपि न विक्रम अरु वररूचु कालिदासहू नाहिं
> प्रतिष्ठान सावन मुनि दिल्ली मगध कन्नौज।
> जदपि अब उजरी परी नगरि सब बिनु मौन। *

प्रिंस अलबर्ट जब भारतवर्ष में आए उस समय 'भारतभिक्षा (सन् १८७२) में लिखी गई जिसमें भारत के अतीत के संबंध में कवि कहता है–

> रह्यो रुधिर जब आरज-सीसा
> ज्वलत अनल समान अवनीसा
> साहस बल इन सम कोउ नाहीं। †

अंग्रेजों ने मिस्र पर आक्रमण किया तथा उसमें भारतीय सैनिकों की सहायता से विजय प्राप्त की। इसी हर्ष के अवसर पर विजयिनी विजय पताका (वैजयन्ती) नामक कविता का सृजन हुआ तथा इसमें भी हमें भारतवर्ष के गौरवमय अतीत का सुन्दर चित्रण मिलता है। भारतीय वीरों की प्रशंसा सुनकर काल्पनिक भव्य पुरुष कहता है कि मुझे क्यों भुलावे में रखते हो अब वह भारत नहीं रहा जो पहले था–

> अब भारत में नहिं वे रहे वीर जे लोग
> जो भारत जग में रह्यो सबसो उत्तम देस
> याही भवि में होत हैं हीरक आम कपास।
> इतही हिमगिरि गंगजल, काव्य गीत परकास

---

* भारतेन्दु ग्रंथावली, खंड २ (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ६९६

† वही पृष्ठ ७०८

याही भारत देश मे रहे कृष्ण मुनि व्यास
जासु काव्य सो जगत मधि ऊचा भारत सीस । §

भारतेन्दु हरिश्चद्र को यह अधिक उचित लगा कि पश्चिम के रोम, यूनान आदि देश काल कवलित हो गए तथा अपनी दुदशा देखने को नही रह किन्तु भारत अभी जीवित है—

हाय पचनद हा पानीपत, अजहु रह तुम घरनि विराजत
हाय चित्तौर निलज तू भारी अजहु खरो भारतहि मझारी ।
इनके भय कपत समारा, सब जग इनका तेज पसारा ।
इनके तनिकहिं भौह हिलाए, थर थर कपत नृप भय पाए । †

प्रबोधिनी के छदो मे भी हम स्वर्णिम अतीत के प्रति सुन्दर आकषण का भाव पाते हैं—

कह गए विक्रम भाज राम बलि कण युधिष्ठिर
चन्द्रगुप्त चाणक्य कहा नासे करिक थिर
कह क्षत्री सब मरे जरे सब गए कित गिर
कह दुग-सन-धन-बल गयो ‡

भारत की प्राचीन महत्ता की ओर ध्यान आकर्षित करत हुए भारतेन्दु ने भारत भाग्य के ही मुख से एक स्थल पर कहलाया है—

ये कृष्ण बरन जब मधुर तान
करते थे अमतोपम वेद गान
तब मोहित सब नर नारि वन्द सुनि मधुर बरन सज्जित छन्द ।
इनही के कोप किय प्रकास, कापत सब भूमडल अकास ।
इनही के हुकृति शब्द घोर गिरि कापत है सुनि चारू ओर ।
जब लेत कर म कृपान, इनही कह हो जग तन समान ।
सुनिक रन बाजत खेत माहि, इनही कह हो जिय सकनाहि । *

'रिपनाष्टक' मे लाड रिपन की प्रशसा करत हुए भारतेन्दु जी ने अपने पूवजो का स्मरण करते हुए कहा—

---

§ भारतेन्दु ग्रथावली खड २ (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ८०२ ३
† वही पृष्ठ ८०४
‡ भारतेन्दु ग्रथावली दूसरा खड (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ६८३-४
* वही पृष्ठ ६३२ ३

निवी दधीच हरिश्चन्द्र धन बलि नृपति युधिष्ठिर।
जिमि हम द्वारो नाम प्रात उठि सुमिरत है निर। †

इस प्रकार भारतेन्दु ने बार बार अपने पूर्वजों के गुण शौर्य और तेज आदि की एक बार का स्मरण किया है। इस अतीत गौरव में गहरी चमक भी भरी हुई है और कवि का ध्यान सदा अतीत से प्रेरणा लेकर भविष्य के सुधार व निर्माण की ओर लगा रहता है।

भारतेन्दु के समकालीन कवियों में प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र अम्बिकादत्त व्यास प० सुधाकर द्विवेदी बालमुकुन्द गुप्त राधाचरण गोस्वामी आदि अनेकों सहृदय साहित्यकार हुए हैं भारतेन्दु से प्रेरणा प्राप्त कर देश प्रेम से अभिभूत हो हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि की। अब भारतेन्दु युग में पाई जाने वाली राष्ट्रीय भावनाओं का निरूपण प्रस्तुत है जिसके प्रणेता भारतेन्दु थे।

प० बद्रीनारायण जी चौधरी प्रेमघन ने स्वप्न बिंदु में देशभक्तिपूर्ण गाता की सुन्दर रचना हुई जिसमें देश की वन्दना की गई है—

जय जय भारतभूमि भवानी
जाकी सुयश पताका जग के दसहू दिसि फहरानी।

प्राचीन काल की वीर रमणियों की स्मृति में वे कहते हैं

धनि धनि भारत की भामनियाँ जिनको सुजस रह्यो जग छाय।

श्री राधाकृष्ण ने 'पृथ्वीराज प्रयाण तथा प्रताप विसर्जन' काव्य लिखकर गौरवपूर्ण अतीत का अंकन किया है—

जननी हम सीख अब दीजे
परम कुपूत तेरो यह ताहि बिदा अब कीजै।

इसमें पृथ्वीराज जब कैद होकर गजनी से लाए जाते हैं तब भारत माँ से बिदा लेते हैं।। प्रताप विसर्जन में भी राणा प्रताप के समक्ष वीरों ने चित्तौड़ की स्वाधीनता की रक्षा का प्रण ले लिया तथा प्रसन्नता से मृत्यु का आलिंगन किया—

अति अमोल स्वाधीनता तुच्छ विषय के दाम
बेचि सिसोदित कीर्ति को यह करिहै अबति निकाम
रुक हम सोच एहि।

† भारतेन्दु ग्रन्थावली—दूसरा खण्ड पृष्ठ ८१७

प्रेमघन जी ने 'जीणजनपद' म मातृभूमि के प्रति सहज स्नेह का वणन बडी ही सुन्दर और ललित भाषा मे किया है। ग्राम्य जीवन का सच्चा चित्र देखिये--

खेतन मे जल भरयो शस्य उठि ऊपर लहरत।
चारहु ओरन हरियारी ही की छवि छहरत।
भोरी भोरी ग्राम वधू इक सग मिलि गावति।
इक सुर मे रस भरी गीत झ कार मचावति॥

आनद आरुणोदय की एक रचना--

हुआ प्रबुद्ध वद्ध भारत निज आरत दशा निशा का।
समभ अत अतिशय प्रमुदित हो तनिक तब उसने ताका
अरुणोदय रखता दिवाकर प्राची दिशा दिखाती,
देखा तब उत्साह परम पावन प्रकाश फलाती।

देशी बनी वस्तुओ का अनुराग पराग उडाता
शुभ आशा सुगध फैलाता मन मधुकर ललचाता
उन्नतिपथ अति स्वच्छ दूर तक पडने लगा लखाई
तब वदेमातरम्' मधुर ध्वनि पडन लगी सुनाई
हो आय सतान सकल मिलि बस, न विलम्ब लगाओ
ब्रिटिश राज स्वातत्र्य मय समय न व्यथ बिताओ।

भारतेन्दु युग के कवियो म अधिकाश का स्वर विद्रोही का स्वर नही है--देशोन्नति के लिए उद्बोधन जागरण करने का स्वर अवश्य है।

देशवदना म श्रीधर पाठक का स्थान अग्रणी है। अपने कुछ सुदर मत्रपूत गीता मे इन्होंने भारत का मानवीकरण ही नही दवीकरण भी किया है।' ‡ इस प्रकार देश के राजनीतिक जागरण म जन्मभूमि व राष्ट्र की वदना का गान मुखरित हुआ। उनके गीतो म भारत की शक्ति, शौय धन भव की वदना के साथ स्वाधीनता की जय घोषणा और स्वतत्र होने की कामना भी है--

जय जयति सदा स्वाधीन हिन्द
जय जयति जयति प्राचीन हिन्द †

श्रीधर पाठक के गीतो म भारत माता की वदना स्पन्दित है स्तवन की सी

‡ डा सुधीन्द्र एम ए -- हिन्दी कविता म युगान्तर (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २३७
† श्रीधर पाठक--हिन्द वदना, प्रथम सस्करण

तन्मयता के साथ यह बात भी है कि देश को उसकी भौगोलिक एकता की पीठिका म देखा गया है। उनके भारतगीत सग्रह के गाना को देखिये—

> प्रणमामि सुभग सुरम्य भारत गरत मम मातजननम्
> मम देश मम सुखधाम मम सत प्रान धन-जन जीवनम्
> मम तात-मात सुतादिप्रिय निज-बन्धु-गृह-गुरु मन्दिरम्
> सुर असुर नरनागादि अगनितजाति-जनपद सुन्दरम । †

भारतस्तव म हम श्रीधर पाठक के देशप्रेम का चित्रण और भी अधिक पाते हैं। इसकी शैली जयदेव के गीत गोविन्द और बकिम के 'वन्देमातरम्' की गरिमा लिए हुए है—

> बदे भारत—भूमिमुदारम्
> सुखमा-सदन-सकल गुन सारम्
> भाल विशाल हिमाचल भ्राजम चरन विराजित अर्णव राजम्।
> तप धृत सहस्र कोटि करवालम्, दुसह दुराप प्रताप विशालम्।

> जय जय प्यारा भारत देश
> जग म कोटि कोटि जुग जीव, जावन सुलभ अमीरस पावे
> सुखद वितान सुकृत का सीर, रहे स्वतत्र हमेश।

अतीत का स्मरण करत हुए पाठक जी न लिखा है—

> इस भारत म वन पावन तू ही तपस्वियो का तप आश्रम था।
> जगतत्व की खोज म लग्न जहा ऋषियो ने अभग्न किया श्रम था।
> जब प्राकृत विश्व का विभ्रम और था सात्विक जीवन का क्रम था।
> महिमा वनवास की थी तब और, प्रभाव पवित्र और अनुपम था। *

इसके अतिरिक्त राय देवीदास पूर्ण न भी मातृभूमि की वदना के सबध म कई गीत लिखे—

> वन्दे वन्दे मातरम सदा पूर्ण विनयेन।
> श्री देवी परिवदिता या निज पुत्र जनेन।
> या निज पुत्रन जनेन पूजिता मायाऽनूपा
> या धृत भारतवर्ष देश वसुमति स्वरूपा।

---

† श्रीधर पाठक—भारत गीत (प्रथम सस्करण)।

* श्रीधर पाठक—श्रात पथिक (प्रथम सस्करण)

तामहमुत्साहैव शमे समये स्वच्छदे ।
बदे जनहित करी मानरम व दे-व दे । ‡

श्रीधर पाठक और देवीप्रसाद की पूण की भापा यद्यपि सस्कृतनिष्ठ है तो भी उसम गेयता और प्रभावोत्पादकता है । श्रीधर पाठक के गीत काफी लोकप्रिय रहे हैं ।

प्रकृति वणन हि दी साहित्य मे युगो से प्रकृति का महत्व मानव से सम्बधित होने पर ही था । उसके स्वतन्त्र अस्तित्व की कल्पना दुलभ रही । आधुनिक काल के पूव हमारे साहित्य म प्रकृति उद्दीपन और अलकार रूप मे प्रयुक्त होती रही है । का यकारो की दृष्टि स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण में 'कालि दी तट और करील कुजो तक ही सीमित रही । § पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव मे इस युग के कवियो ने स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण का प्रयास किया । भारते दु के प्रकृति चित्रण मे भी पुरानी परिपाटी दृष्टिगोचर होती है उ होने प्रकृति को उद्दीपन के रूप मे तथा अलकारो की बहुलता के रूप म प्रयुक्त किया है । विशुद्ध प्रकृति का वणन कम ही हुआ है । उनके वणन अलकारो की सजावट स पूण रहते हैं । वास्तव मे भारते दु मानव प्रकृति के कवि थे, बाह्य प्रकृति के विराट स्वरूप और विविध रूपो मे उनका मन अधिक नही रम पाया । बाह्य प्रकृति की अनतरूपता के साथ उनके हृदय का सामजस्य नही हो पाया । नाटको म भी एक दो जगह पर उ होने जो प्राकृतिक वणन रखे हैं वे केवल परम्परा पालन के रूप म हैं, उनके भीतर उनका हृदय नही पाया जाता ।' *

वे केवल उपमा और उत्प्रेक्षा के चमत्कार के लिए लिखे जान पडते हैं । एक पक्ति मे कुछ अलग अलग वस्तुए व व्यापार है दूसरी पक्ति म उपमा या उत्प्रेक्षा । गगा यमुना तथा वसत वणन आदि मे प्रकृति का स्वतन्त्र चित्रण अशत ही है--उसमे प्रधानता है मानव व्यापारो की ।

भारते दु ने गगा नदी का चित्रण करते हुए लिखा है--

नव उज्जवल जलधार, हार हीरक सी सोहति ।
बिच बिच छहरति बू द, मध्य मुक्तामनि पोहति ।
लोल लहर लहि पवन एक प इक इमि आवत ।
जिमि नर गन मन विविध, मनोरथ करत मिटावत

---

‡ रायदेवीप्रसाद पूण-स्वदेशी कु डल (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १३

§ डा किरण कुमारी गुप्ता हि दी का य म प्रकृति चित्रण (प्रथमावृत्ति) प २७०

* रामचद्र शुक्ल हि दी साहि य का इतिहास (दशम सस्करण) पृष्ठ ६६०

दीठि जहां जहं जात रहत तितही ठहराई
गंगा छवि 'हरिचन्द' कछू बरनी नहिं जाई ।

चंद्रावली नाटिका में सखि द्वारा यमुना का वर्णन कराया गया है परन्तु इसमें भी उपमा तथा उत्प्रेक्षा आदि का ही बाहुल्य है—

कहूं तीर पर अमल कमल सोभित बहु भांतिन ।
कहुं सैवालिन मध्य कुमुदिनी लगि रही पांतिन ।
मनु दृग धारि अनेक जमुन निरखत ब्रज सोभा
परत चंद्र प्रतिबिम्ब कहूं जल मधि चमकायो
लोल लहर लहि नचत कबहुं सोई मन भायो । *

भारतेन्दु को दो ऋतुओं से विशेष प्रेम है—वर्षा और वसंत, जिन पर कई कविताएं मिलती हैं । वर्षा ऋतु में वृंदावन का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है—

नाचत मोर सोर चहुं ओर न गुंजत अलि बहु भांति ।
बोलत चातक सुक पिक चहुं दिसि लखि के घन की पांति
हरी हरी भूमि भरी सोभा सों देखत हीं बनि आवै । ‡

वर्षा ऋतु का वर्णन भारतेन्दु ने जनरुचि का ध्यान रखते हुए कुछ लावनियों में भी किया है—

सूझ पथ न कहीं, हाथ से हाथ न दिखलाता
एक रंग धरती अकास का कहा नहीं जाता
बूंद बजें टप टप मारग कोई नहिं जाता आता
गिर कगारे टूट टूट के नदी छनक मार
ऐसे समय चल परदेसवा पिय नहिं मानत मोरी अरज ॥ वर्षा विनोद ।

उनके वसंत वर्णन में भी हम उतना आकर्षण नहीं पाते जितना उद्दीपक प्रभाव—

बन बन आग सी लगाइ के पलास फूल
सरसों गुलाब गुललाला कचनारो हाय

---

* भारतेन्दु हरिश्चन्द्र—चंद्रावली नाटिका पृष्ठ

‡ भारतेन्दु ग्रंथावली—खंड दूसरा (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १२१

आइ गयो मिर प चढाय मन वान निज
बिरहिन दौरि दौरि प्रानन सम्हारो हाय
हरिचद कोइलें कुहुकि फिरें बन बन
बाजे लाग्यो जग पेरि काम को नगारो हाय । †

(प्रेम माधुरी)

भारतेन्दु काल के कवियो मे श्रीधर पाठक जी सब प्रथम ऐसे कवि हैं जिन्होंने प्रकृति के सहज सौंदय का निरीक्षण किया तथा प्राकृतिक दृश्यो का बिम्ब ग्रहण कराया—राष्ट्रीय भावना से प्रेरित हो इन्होंने भारत के अग हिमालय, काश्मीर आदि का विशद वणन किया है। विन्य पवत पर वनश्याक का वणन देखिए—

विन्ध्य के वन्य विभाग मे एक सरोवर स्वच्छ सुहावना है ।
कमलो से भरा भवरो से घिरा विटपा से सजा मन भावना है ।
कल-हस स्वतत्र कलोल करें खगवृन्द का बाल सुहावना है ।
बहे मद समीर पराग लिए, अनुराग लिए हुलसावना है ‡

काश्मीर सुषमा मे कवि ने काश्मीर के शोभा दृश्यो का चित्रण सुन्दर ढग से किया—

प्रकृति यहा एकान्त मे बठी निज रूप सवारति,
पल पल पलटति भेष छनि छवि छिन छिन धारति ।
विमल अम्बु सर मुकुरन मह मुख बिम्ब निहारति
अपनी छवि पै मोहि आपही तन मन-वारति । *

देश प्रेम की भावना में उन्होंने हिमालय, गगा आदि प्राकृतिक वस्तुओं के गौरव का गान किया है

जय जय शुभ्र हिमाचल शृगा, कालव निरत कलोलिनि गगा ।
भानु प्रताप चमत्कृत अगा तेज पुज तप वेश ।
जय जय भारत प्यारा देश । §
भारत हमारा कसा सुन्दर सुहा रहा है
शुचि भाल प हिमाचल चरणा मे सिंधु अचल ।

---

† भारतेन्दु ग्रथावली—खड दूसरा (प्रथम सस्करण) पष्ठ १६४
‡ श्रीधर पाठक—काव्य कौस्तुभ (प्रथम सस्करण) पष्ठ ८३
* श्रीधर पाठक—काश्मीर सुषमा (प्रथम सस्करण) पष्ठ ४
§ श्रीधर पाठक—भारत गीत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ३६

उर प विशाल सरिता सित हीर हार चचल,
मणिबद्ध नील नभ का विस्तीण पट अचचल ।

भारत की श्री पर मुग्ध होकर प्रकृति भी अपना सवस्व न्योछावर कर देती है—प्रकृति नटी भारत को अपना भूषण बना लेती है—

स्वर्गिक शीशफूल पथ्वी का, प्रेम मूल प्रिय लोकत्रयी का
सुललित प्रकृति नटी का टीका ज्यो निशि का राकेश । ‡

पाठक जी ने वर्षा ऋतु म मेघो के जल वष्टि न करने पर देश के कष्ट से पीडित होकर लिखा—

है घन ! किन देशन म छाये बर्षा बीति गई,
फिरहू कहा भरमाये कहा यह रीति नई
सावन परम सुहावन पावन सोभा जोय,
सो बन तुम्हरे आवन रह्यो भयावन होय ।

देवीप्रसाद पूण जी न भी प्रकृति प्रेम का सरल और शुद्ध रूप से चित्रण किया । उसम कवि के हृदयगत भावों का सामजस्य नही रहता । ग्रीष्म की प्रचडता का स्वाभाविक चित्रण देखिये—

धावत घु धात घनी छावती गगन धूरि,
प्रबल बवडर ठौर ठौर भूमि भासे हैं ।
तावत प्रचड मातण्ड महि मडल को
परत जमीन जन जीव जाल त्रासे हैं । §

पचवटी की लताओ का आकषण कवि के हृदय म बसा हुआ है तथा पक्षियो की विविध क्रीडा मे मन रम जाता है—

हरे हरे लहलहे विपुलद्रुम ब द वद सोहै
लोनी लतिका अति ललित फल वलित लत मन मोहै ।
केकी कीर कपोत कोकिला चातक चोक चकोरा,
मैना लवा लाल मुनिवर कहू विहग चहू ओरा ।

---

‡ श्रीधर पाठक भारत भारती पृष्ठ २६

§ देवीप्रसाद पूण पूण सग्रह—प्रथम सस्करण

गगा का वणन बडे भक्ति भाव से किया गया है। जल की शुभ्रता का चित्रण देखिए—

> चामर सी चद सी, चद्रिका सी चद ऐसी,
> चाँदनी चमेली चारु चादी सी सुघर है।
> कु द सी, कुमुद सी, कपूर सी कपास ऐमी
> कल्प तरु कुसुम सी कीरति सी वर है। *

भारतेन्दुकाल के अन्य कवियों ने भी कही कही प्रकृति वणन के कुछ पद लिखे हैं परन्तु श्रीधर पाठक और पूण जी के नाम ही उल्लेखनीय हैं जो प्रकृति के उपासक और प्रतिभा सम्पन्न कवि थे। 'देशभक्ति के रूप मे भी प्रकृति के चरणो म अपने हृदय का सचित अनुराग अर्पित किया।' † इन्ही की प्रेरणा से आधुनिक युग मे प्रकृति चित्रण की परम्परा इस रूप मे चलती रही।

विदेशी शासन की स्तुति तथा निंदा इस युग के कवियो म हम जहा एक ओर देशप्रेम का नया स्वर पाते हैं वहाँ दूसरी ओर ब्रिटिश शासको की प्रशसा और भक्ति के गीत भी पाते हैं। अग्रेजो की सगठित सनिक शक्ति का परिणाम यहाँ की जनता व कवि सन् १८५७ की क्रान्ति के बाद देख ही चुके थे। 'ऐसी हालतो मे हिन्दी के कवियो ने जो कूटनीति धारण की वह बहुत स्वाभाविक थी। राजनीतिक भय अग्रेजों की विजय के आतक का परिणाम था। ‡ हिन्दी कवियो ने अपनी रचनाओं द्वारा एक ओर अग्रेजो की न्यायप्रियता, प्रजातत्र पद्धति में विश्वास ऊची शिक्षा प्रेम कानून आदि की प्रशसा की है दूसरी ओर उनकी साम्राज्यवादी नीति की भत्सना भी की है। देश के उद्योग धधो की अवनति तथा तरह तरह के करो का विरोध भी किया। राजभक्ति के साथ सरकार से अपनी माँग पूरी कराने की अपील भी करते थे। इस युग के कवियो का स्वर विद्रोही का स्वर नही है तथा उनके स्वरा में विदेशी शासन को बदल डालने की ऊग्र भावना नही मिलती है। कुछ विद्वानों के मतानुसार इसे ही उचित समझा गया है— समय की व्यापक शक्तियो ने तत्कालीन राष्ट्रीयता को यही रूप दिया।" §

भारतेन्दु की कविता मे हम राजभक्ति और विदेशी शासन की निंदा तथा देशप्रेम दोनो का समन्वय प्राप्त होता है। इन दो विरोधी तत्वो का किसी व्यक्ति मे

* देवीप्रसाद पूण—पूण सग्रह (प्रथम आवृत्ति) पृष्ठ १२२

‡ डा किरणकुमारी गुप्ता—हिंदी काव्य म प्रकृति चित्रण (प्रथम सस्करण) ३१६

† डा लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय—साहित्य चितन (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १३६

§ वही पृष्ठ १३६

एक साथ होना आज उपहासास्पद व संदेहपूर्ण समझा जायगा किन्तु वास्तव में उस युग में उदार देशभक्ति का न तो अंग्रेज ही विरोध करते थे और न राजभक्ति का जनता ही तिरस्कार करती थी। सन् १८५७ की क्रांति के पश्चात् सरकार भारतीयों की शक्ति देख चुकी थी और अब यह उदार नीति का व्यवहार करने लगी थी। 'जनता भी सरकार से प्रेम करने लगी थी तथा वह अपने राजा व रानी के सत्कार्यों की प्रशंसा करती थी। * भारतेंदु तथा उनके समकालीन कवियों में सरकार के प्रति इसी प्रेम भरी प्रवृत्ति का निरूपण हुआ। राजकुमार ड्यूक आफ एडिनबरा के सन् १८६९ ई० में भारत आगमन पर स्वागत पत्र लिखा गया–

जाके दरसन हित सदा नैना मरत पियास।
सो मुखचंद विलोकिहैं पूरी सब मन आस।
नैन बिछाए आपु हित आवहु या मग होय
कमल पावड़े ये किए अति कोमल पद जोय। ‡

ड्यूक के सन् १८२६ ई० में काशी आने पर भारतेंदु ने स्वयं बड़ी तैयारी करके स्वागत किया और एक सभा में ड्यूक की प्रशंसात्मक रचनाएं पढ़ी गईं जिन्हें सुमनांजलि पुस्तक में संकलित किया गया। भारतेंदु ने निम्नलिखित कवित्त बनाया–

वाको जन्म जल याको रानी कोख सागर तें
यह सकलंकी याम छोटहू न आई है।
वह नित घटै यह बाढ़ै दिन दिन बढ़ै
बिरही दुखद यह जन सुखदाई है।
जनि अधिकाई सब भाँति राजपुत्र ही की
गहन के मिस यह मति उपजाई है।
देखि आज उन्नति प्रकाशमान भूमि चंद
नभ ससि लाज मुख कालिमा लगाई है। †

भारतेंदु की राजभक्ति से प्रसन्न होकर सरकार ने उसी साल उन्हें आनरेरी मजिस्ट्रेट बनाया था किन्तु बाद में उन्होंने त्याग पत्र दे दिया। उसके पश्चात सन् १८७१ में जब प्रिंस की अस्वस्थता टायफायड ज्वर से पीड़ित होने के कारण चिंतनीय हो गई तब उनके निरोग की प्रार्थना की गई। युवराज प्रिंस आफ वेल्स के सन् १८७५ ई० में भारत आने पर स्वागत किया गया तथा कविताएं लिखी गई। प्रिंस अलबर्ट जब

* निबन्ध, बच्चनसिंह भारतेंदु की कविता (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ४२
† भारतेंदु ग्रंथावली दूसरा खंड (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ६२५
‡ वही पृष्ठ ६३२

भारत मे आए तव उनके स्वागत मे 'भारत भिक्षा' शीर्षक कविता लिखी गई जिसमे भारत माता अपने पूर्व गौरव का स्मरण करती और दुखी होती है क्योंकि उसका सब विलुप्त हो गया। भारत माता कुंवर से भिक्षा मागती है—

> हम तुव जननी की निज दासी, दासी सुत मम भूमि निवासी।
> तिनको सब दुख कुंवर छुडायो, दासी की सब आस पुरायो। *

महारानी की न्याय बुद्धि मे भारतेन्दु जी का इतना अधिक विश्वास था कि वे आजीवन उनके दीर्घायु होने की कामना करते रहे। सभवत उनकी राजभक्ति ही उनकी देशभक्ति का रूप हो किन्तु इतना अवश्य कहना पडेगा कि भारतेन्दु तथा उनके अन्य साथियो मे अभी वह आत्म विश्वास और अन्यायपूर्ण शासन को समाप्त कर स्वतत्र देश की कल्पना की भावना नहीं थी जितनी आगे के कवियो मे देखने को मिलती है। भारतेन्दु ने राजभक्ति के साथ साथ देश की वर्तमान दशा पर क्षोभ अवश्य प्रदर्शित किया है और कही कही अग्रेजों की नीति का विरोध भी किया है किन्तु वह बहुत ही कम है। भारतेन्दु जैसे युगान्तकारी कवि से बहुत कुछ अपेक्षा की जा सकती थी।

भारत दुर्दशा तथा नील देवी आदि नाटको मे निराशा का वातावरण चित्रित हुआ है तथा कवि ने कुछ कुछ विद्रोह का स्वर भी बोलना आरभ किया—

> रोअहु सब मिलिके आवहु भारत भाई
> हा हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई। †

श्री ब्रजरत्नदास जी ने लिखा है कि 'वे हृदय से पूर्ण राजभक्त थे राज कर्मचारी भक्त या चापलूस न थे।' * इन्होने एक ओर तो भारतीयो को उनकी अवनति का कारण बताया तथा उन्नति का मार्ग दिखाकर देशभक्ति का परिचय दिया दूसरी ओर राजा या उसके कर्मचारियो द्वारा प्रजा को जिस न्याय से कष्ट पहुचा हो उसे बताकर देशभक्ति का रूप हमारे सामने रखा।

> स्वागत स्वागत धन्य प्रभु श्री सर विलियम म्योर,
> टिक्स छुडवाहु सबन को, विनय करत कर जोर।

भारत दुर्दशा नाटक मे हमें कई स्थलो पर अग्रेजो की नीति के विरुद्ध स्पष्ट भावनाए मिलती हैं—

---

* श्री ब्रजरत्नदास—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २१७
† भारतेन्दु ग्रथावली—दूसरा खड (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ७१०

अंग्रेज राज सुख साज सज सब भारी
प धन विदेस चलि जात इहै अति ख्वारी।

एक स्थान पर भारत दुर्दैव कहता है कि मैं सब पर टक्स लगाकर बर्बाद कर सकता हूँ—

मरी बुलाऊ देस उजाड़ू महगा करके अन्न
सबके ऊपर टिक्स लगाऊ धन है मुझको धन्न।

भारतेन्दु की कविताओं म राजभक्ति का स्पष्ट निरूपण हुआ है सभवत उन्होने देश की समद्धि और उन्नति के लिए अंग्रेजी राज्य की स्थिरता समझी हो।

प्रेमघन जी की भारत बधाई' रचना म राजभक्ति की भावना स्पष्ट है जो एडवड सप्तम के राज्याभिषेक पर लिखी गई। युवराज अलबट के भारत शुभागमन पर भी कुछ पद लिखे जिसम भारत की रीति नीति पर दुख प्रकट किया—

ठेठ विदेसी ठाट सब बनयो देस विदेस।
सपनेहु जिनम कहु न भारतीयता लेस॥

प्रेमघन जी ने महारानी विक्टोरिया के न्याय दया शासन प्रबध आदि की मुक्त कठ स प्रशसा की तथा अंग्रेजो के शत्रु को अपना शत्रु समझा—

शुद्ध नीति को राज प्रजा स्वच्छन्द बनायो।
सो तो न्याय भवन म खरो याय दिखरायो।
देश प्रबन्ध चतुर दयालु न्याई दुख हारी।
विद्या विनय विवकमान शासन अधिकारी। *

ब्रैडला क स्वागत म सन १८५७ के विद्रोह म अंग्रेजो से मिल जाने वाले दुष्ट जनो पर आक्षेप करते हुए प्रतापनारायण मिश्र ने लिखा—

दुष्ट समझ अपने भाइन कह साथ न दीन्हो
भोजन बिना विद्रोहिन क दल निबल कीन्हो।
ठौर ठौर निज घर लुटवाये अरु फुकवाये
प्रान खोय बहु ब्रिटिश वग के प्रान बचाये।

राजकुमार विक्टर क आगमन पर तथा लार्ड रिपन आदि के सबंध म कुछ राजभक्ति पूण रचनाए की—

* प्रेमघन सवस्व—भाग १ (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २७३

हरि शशि सवत् पाच मह, सित परव अगहन मास
श्री विक्टर आगमन ते भयो हिंद सुख रास।

महामहोपाध्याय प सुधाकर द्विवेदी भी भारतेन्दु जी के अभिन्न मित्रो में से थे तथा उनसे हमेशा प्रेरणा पाते रहते थे। विक्टोरिया हीरक जयंति पर राजभक्ति पूर्ण कविता लिखी तथा उन्हे महामहोपाध्याय की पदवी मिली। अंग्रेजी राज्य की प्रशसा मे उन्होंने लिखा—

एहि सुराज मह एक रस पीअत बकरी बाघ
छन मह दौरत बीजुरी सागरहू को लाघ। *

प्रेस एक्ट कानून के सबध म भी लिखा—

छपि छपि के परकास म लुप्त रहे जे ग्रथ
पढि पढि के पडित भए, बने नए बहु पथ।

राधाकृष्ण जी ने भी कचहरी म हिन्दी को प्रवेश मिलने पर बधाई दी—

धनि मेकडानेल लाट प्रजा के दुख निवारे,
कचहरिया लीला सो सबके प्रान उबार।
जब लौं हिन्दू हिन्दी रहे यह शुभ दिन न बिसारिहै,
मेकडानेल नाम पवित्र यह नित सादर उच्चारिहै।

जातीयता के उदगार इस युग की राष्ट्रीयता हिन्दू राष्ट्रीयता थी। समष्टि रूप से मुसलमान तथा अग्रेजो के यहा पर आकर बस जाने तथा राज्य करने से प्रसन्नता नही थी वरन् दुख का ही अनुभव होता था। भारतेन्दु काल मे दो विचार धाराए मिलती हैं। एक तो राष्ट्रीय और दूसरी वर्ग, धर्म एव साम्प्रदायिक विषयो से सबधित। पहली के सबध म यह कहना आवश्यक है कि हिंदुओं की विशेष परिस्थिति के कारण कुछ हिन्दुत्व लिए हुए थी– हिन्दु हिन्दुस्तान' की आवाज बुलद थी और और उसमे भी राजनीतिक राष्ट्रीयता के स्थान पर जो बीसवी शताब्दी की देन है, धार्मिक राष्ट्रीयता ही प्रमुख थी। †

भारतेन्दु उस अर्थ म राष्ट्रीय कवि नही हैं जिस अर्थ म हम आज लेते हैं। भारतेन्दु की राष्ट्रीता जातीयता से भरी हुई है। यह भूषण की राष्ट्रीयता थी नितात हिन्दू राष्ट्रीयता। मुसलमान यहाँ पर विदेशी ही हैं। पुराने वीरो को सबोधित करते हुए वे कहते हैं—

---

* राधाकृष्ण—मेकडानेल पुष्पांजलि

† डा लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय—भारतेन्दु की विचारधारा (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ४६

मेटहु जियके सत्य सव, सफल करहु निज नन।
लखहु न अरबी सो लरा ठाढी आरत सैन। *

रोम नष्ट हो गया बबरो ने उस पर विजय प्राप्त की पर वहा बसे नही। उनके हृदय मे यह बात बडी चुभती है कि मुसलमान विजेता यहा बस गए दुर्गों को तोडा महलो को गिराया तथा मदिरो को भूमिसात किया और यहां रहने लगे—

यवन हृदय-पत्र पर बरबस, लिखे लौह लेखनि भारत जस §
जहा विसेसर सोमनाथ माधव के मदिर
तह मसजिद बनि गई होत अब अल्ला अक्बर। ‡
मस्जिद लखि बिसुनाथ ढिग परे हिए जो घाव। †

यवन गोवध करते थे इसलिए परम वष्णव भारतेदु जी उन्हे कभी क्षमा नहीं कर सकते थे—

क प्रतच्छ गो बधन को जवनन छाडि वानि,
जो सब आय प्रसन्न अति, मन महं मगल मानि। **

हिन्दू राष्ट्र के लिए अपने प्राण न देकर मुसलमानो से जा मिलने वाले जयचद पर उन्हें बडा क्रोध आता था। उनकी राष्ट्रीयता भी भूषण की राष्ट्रीयता के समान म्लेच्छो के प्रति तिरस्कार की भावना लिए हुए थी जो भारत की स्वतन्त्रता का हरण कर यहा अत्याचार कर रहे थे। कुछ कजरी तथा होली म इस प्रकार की भावना मिलती है —

अपने स्वारथ भूले लुभाए काहे कटवा बुलाए जयचदवा।
अपन हाथ से अपने कुलके काहे ते जडवा कटाए जयचदवा।
फूट के फल सब भारत बोए बरी की राह खुलाए जयचदवा।
और नामि द आपो बिलाने निज मुँह कजरी पुताय जयचदवा।

भारतेदु को हिदुओ की रक्षा और उन्नति की कामना सदा रही और इसलिए उन्होंने भगवान को जगाते हुए कहा —

---

* भारतेदु ग्र थावली-दूसरा खड-पृष्ठ ८०२
§ वही पृष्ठ ८०५
‡ वही पृष्ठ ६८४
† वही पृष्ठ ६६६
** वही पृष्ठ ७८२

जागो बलि वेगहि नाथ अब, देहु दीन हिंदुन सरन । *

भारतेन्दु ने हिन्दू धर्म और हिन्दू राष्ट्र के रक्षकों का नाम स्मरण कई स्थानों पर किया तथा इसमें समष्टिगत मुसलमानों के प्रति घृणा के भाव अवश्य हैं किन्तु व्यक्तिगत रूप से कुछ मुसलमानों की प्रशंसा भी की है। भूषण ने भी अकबर आदि के सबंध में सहृदयतापूर्ण उद्गार प्रकट किए हैं। भारतेन्दु ने लिखा है—

जदपि न विक्रम अकबरहु कालिदास हू नाहिं
जदपि जवन गज राज कियो इतही बसिकै सह साज ।
प तिनका निज करि नहिं मान्यो कबहू हिन्दु समाज ।
अकबर करिक बुद्धिमत्ता कछु सौ मेटयो सदेह ।
सोउ दारा सिकोह भों निवही औरंग डारी खेह । †

भारतेन्दु ने वष्णव मुसलमानों को भक्तिनेत्र में पाकर कोटि कोटि हिंदुओं को न्यौछावर भी करने की इच्छा प्रकट की है—

अलीखान पठान सुतासह ब्रज रसवार,
सख नवी रसखान मीर अहमद हरि प्यारे
बिक्रमदास कबीर ताज खा बेगम बारी
तानसेन कृष्णदास बिजापुर नृपति दुलारी ।
मिरजादी बीबी रास्ती, पद रज नित सिर धारिये
इन मुसलमान हरिजनन पर कोटिन हिंदुन वारिये । ‡

पं० बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने सुहाती रुलाती तथा हसाती गालियां लिखी हैं जिसमें हिन्दू जाति पर भी कहा कहीं व्यग्य किया है—

पिता मही भारती तुम्हारी तुम सौ समुझि निकारी,
सात सिंधु तरि म्लच्छन के घर जाय बसी करि यारी । ‡‡

पं० प्रतापनारायण जी मिश्र ने हिन्दू जातीयता के उद्गारों का वर्णन खूब खुलकर किया और युग की माग को पूरा किया। उन्हें मुसलमानों से चिढ थी जिसका कारण इस प्रकार बताया है—

* भारतेन्दु ग्रंथावली—दूसरा खंड, पृष्ठ ६८३
† वही पृष्ठ ६६६
‡ वही पृष्ठ २६४
‡‡ पं० बद्रीनारायण जी चौधरी प्रेमघन-सर्वस्व काव्य-खंड ३

अगरेजन के राज जवनगण, रहे नवाबी ठान हो,
अब धौ अपने त्यौहारन म, कियो घोर अपमान हो।
अब ताजिया सवार मे परिहै, तव नहि बचिहै प्राण हो।
हिंदु सब अपने रग माने, समभें लाभ न हानि हो।

इन्होने हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान का नारा बुलद कर हिंदू जाति को जाग्रत करने का प्रयत्न किया—

चहहु जो साचहु निज कल्यान, तौ सब मिलि भारत सतान।
जपो निरन्तर एक जवान, हिन्दी, हिन्दू हिन्दुस्तान।

वतमान दुदशा पर क्षोभ तथा सामाजिक सुधार —हिंदी साहित्य के आधुनिक युग के प्रारभकाल के अधिकांश कवियो का लक्ष्य जन मानस का ध्यान देश की हीनावस्था, दुरशा तथा पतन की ओर आकर्षित करते हुए उसमे सुधार और परिवतन लाने की ओर अधिक रहा। यह भी राष्ट्रीयता का स्वरूप था तथा अग्रेजी शासन के दोषो को दिखाने क इस प्रयास ने लोगो को उद्वेलित करने म इसने एक प्रेरणा का काय किया। अग्रेजो की प्रशसा तथा अपने गौरवमय अतीत के वणन के साथ ही साथ इस युग के कवियो ने वतमान युग की विषम परिस्थितियो एव कुरीतियो का भी चित्रण किया है। 'राष्ट्रीयता' भारतवष के लिए नवीन विश्वास थी इसके पूव इस देश मे यह बात अपरिचित थी। राष्ट्रीयता का अथ—प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का अश है और इस राष्ट्र की सेवा के लिए इसको धन धान्य से पूण बनाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति का सब प्रकार के त्याग और कष्ट स्वीकार करना चाहिए [1]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने नाटको म जहा जहा अतीत का स्मरण किया है वहा भारत की वतमान दुदशा पर भी दृष्टिपात किया है—

रोवहु सब मिलि के आवहु भारत भाई
हा हा! भारत दुदशा न देखी जाई।
सबके पहले जो रूप रग रस भीनो,
सबके पहले विद्या फल जिन गहि लीनो।
अब सबके पीछे सोई परत लखाई,
हा हा! भारत दुदसा देखी न जाई।

भारतीयो की गरीबी और कमजोरी का कारण भारतेन्दु जी ने उद्योगो के

---

[1] डा हजारीप्रसाद द्विवेदी—हिंदी साहित्य (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ३६५

ष्ट प्राय होना तथा नए नए टक्सों का लगना बताया है जिससे सारा धन विदेशो ो चला जाता है–

> अंग्रेज राज सुख साज सज सब भारी।
> प धन विदेस चलि जात इहै अति ख्वारी।

नए नए टक्सो तथा करो के सबध म भारते दु जी न कई स्थानो पर सुन्दर वचार प्रकट किए हैं—

> भू जी भाग नही पर भीतर का पहिरी का खाई
> टिक्स पिया मोरी लाज को रखयो ऐसो बनो न कमाई।

'मुशायरा' शीर्षक कविता तथा अन्य नाटकों मे भी टैक्स के सम्बन्ध मे लिखा है—

> चना हाकिम लाग जा खात। सब पर दूना टिक्स लगाते
> ('अंधेर नगरी')

भारतीयों के आलस्य पर भी उन्होंने व्यंग्य किया है जिसके कारण उन्नति नही हो रही—

> दुनिया म हाथ पर हिलाना नही अच्छा,
> मर जाना पै उठके कहीं जाना नही अच्छा।
> मिल जाय हिन्द खाक म हम काहिलो को क्या
> ऐ मीर फश रज उठाना नहीं अच्छा।

'अंधेर नगरी' नाटक म वहा की दुर्दशा का वणन करते हुए लिखा है—

> भीतर स्याहा बाहर सादे राज करहिं अमले अरु प्यादे,
> अंधाधुंध मच्यो सब देसा, मानहु राजा रहत विदेसा।

'नए जमाने की मुकरियो म वतमान दशा का व्यंग्यपूण वणन बडा ही आकर्षक है। इनमे शब्द चित्रो द्वारा अंग्रेजी भाषा, पढे लिखे ग्रेजुएट पुलिस की लूट, अनाचारी अंग्रेज तथा मद्यपान आदि पर बडी सरस व तीखी अभिव्यक्ति की है। मुकरी के दो तीन उदाहरण देखिये—

> सब गुरु जन को बुरा बताव, अपनी खिचडी अलग पकाव
> भीतर तत्व न झूठी तेजी, क्यो सखि साजन नहि अंग्रेज।
> तीन बुलाए तेरह आव, निज निज बिपना राई सुनाव।
> आँखो फूट भरा न पट, क्यों, सखि साजन नहिं ग्रेज्युएट।
> भीतर भीतर सब रस चूस हसि हँसि के तन मन धन मूस।
> जाहिर बातन मे अति तेज क्यो सखि साजन नहिं अंग्रेज।

मुह जब लाग तब नहिं छूट, जाति मन धन सब कछु लूट ।
पागल करि मोहि कर खराब, क्यों सखि साजन नहिं सराब । †

भारतेन्दु ने समाज दुर्दशा तथा उसमे व्याप्त कुरीतियों से सबंधित कविताओं मे यथार्थ चित्रण मात्र ही नहीं किया है वरन् उन्हें दूर करके देश की उन्नति का मार्ग भी बताया और इस प्रकार परोक्ष रूप से समाज सुधारक का कार्य किया जो आगे चलकर राजनीति व राष्ट्रीय सस्था कांग्रेस का एक महत्वपूर्ण कार्य रहा। भारतेन्दु ने यह अच्छी प्रकार जान लिया था कि भारत के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग हो तथा देश के उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाय। भारतेन्दु भारतीय वस्तुओं के प्रयोग के पक्षपाती थे क्योंकि विदेशी वस्तुओं के क्रय से देश का धन विदेशों को ही जाता है—

मारकीन मलमल बिना चले कछू नहिं काम,
परदेशी जुलहान के मानहु भए गुलाम ।
वस्त्र कांच कागज कलम चित्र खिलौने आदि
आवत सब परदेश सो नितहि जहाजन लादि । ‡

हमारे देश मे सब प्रकार की सामग्री उपलब्ध है जो कच्चे माल के रूप मे प्रयोग की जा सकती है किन्तु यहीं—रुई सींग चमड़ा आदि विदेशों को जाती है तथा उससे विभिन्न महगी वस्तुए बनकर आती हैं। इस सामग्री का उपयोग यहीं हो सकता है—

इत रुई सींग अरु चरमहि नित ल जाय
ताहि स्वच्छ करि वस्तु बहु भेजत इतहि बनाय ।
जानि सकै सब कुछ सबहि विविध कला के भेद,
बन वस्तु कल की इत मिट पीनता खेद । *

इन्होंने स्वदेश वस्तु के प्रचार के लिए प्रभु को जगाना चाहा जिससे देश समृद्धिशाली और उन्नत बन सके—

सीखत कोऊ न कला उदर भरि जीवत केवल
जीवन विन्स की वस्तु ले ता बिनु कछु नहिं करि सकत,
जागो जागो अब सांवरे, सब कोउ रुख तुमरो तकत । §

---

† भारतेन्दु ग्रन्थावली-दूसरा खड (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ८११ १२
‡ भारतेन्दु ग्रन्थावली-दूसरा खड पृष्ठ ७३५
* वही पृष्ठ ७३६
§ वही पृष्ठ ६८४

भारतीयो को जाग्रत कर उन्नत बनाने के लिए उन्होने समाज विरोधी बातो का उल्लेख किया जिन्हे दूर करना आवश्यक है—

विधवा विवाह निषेध किए, विभिचार प्रचारयो
रोकि विलायत गमन, कूप मडूक बनायो।
औरन को ससग छुआई प्रचार घटायो।

स्थान स्थान पर भारत की उन्नति, एकता एव पारस्परिक सहयोग पर बल दिया—

इन सो कछू आस नहि ये तो सब विधि बुधि बल हीन
बिना एकता बुद्धि कला के भए सबहि विधि दीन।
खात पियत अरु लिखत पढत सौ काम न कछू चलो री
आलस छोडि एक मत ह्व कै साँची बुद्धि करो री। †

इस प्रकार हम भारतेन्दुकालीन अन्य कवियो मे भी इसी प्रकार भारत के भविष्य निर्माण तथा गौरवशाली होने की उत्कट भावना पाते हैं।

प० बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने भारतेन्दु की भाति देश की राजनीतिक तथा समाजिक परिस्थितियो का निरूपण किया। महारानी विक्टोरिया की हीरक जुबली के अवसर पर लिखी गई कविता मे भारत की बिगडी हुई दशा का चित्र मिलता है —

भयो भूमि भारत मे महा भयकर भारत,
भए वीरवर सकल सुभट एकहि सग गारत।
बिगरो जनसमुदाय बिना पथ प्रदर्शक पडित।
नए नए मत चले गए झगरे नित बाढे।
नए नए दुख परे सीस भारत पे गाढे। §

अपने भारत सौभाग्य नाटक मे भारतभूमि से लक्ष्मी, सरस्वती और दुर्गा तीनो के चले जाने की भावना का चित्रण करते हुए 'दुर्गा' से कहलाया है—

आजु लौं रही अनेक भाति धीर धारि के,
प न भाव मोहि बठनो सुमौन मारि के।
जातिहा चली वही सरस्वती गई जहा।

इस प्रकार भारतवर्ष से विदेशियो के आगमन के उपरांत धन गया, विद्या, बुद्धि गई तथा शौर्य और बल भी लुप्त प्राय हो गया। इस कथानक द्वारा देश की

† भारतेन्दु ग्रथावली-दूसरा खड पृष्ठ ४०६
§ प० बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'-प्रेमघन सर्वस्व-खड दूसरा पृष्ठ २६८

जनता को झकझोर कर अपनी विलुप्त हुई लक्ष्मी, सरस्वती और दुर्गा को पुन भारतभूमि म लाने की प्रेरणा मिलती है। प्रेमघन जी देश की परिस्थिति सुधारने के लिए धार्मिक व राजनीतिक आन्दोलनो पर अपने विचार प्रकट करते थे तथा यथा साध्य अधिवेशनो म जाकर सहयोग भी देते थे।

दादा भाई नौरोजी जब पालमेट के सदस्य बन तब मगलाशा कविता द्वारा उनको 'काले कहे जाने पर निम्न विचार प्रकट किए—

अचरज होता तुमहु सम गोरे बाजत कारे
तासो कार कारे शब्दहु पर हैं वार।
कार काम, राम जलधर जल बरसावन वारे।
कारे लागत ताही सो कारन को प्यारे।
याते नीको हैं तुम कारे जाहु पुकारे।
यह असीस दत तुम को मिलि हम सब कार।
सफल होहि मन के सबही सकल्प तुम्हारे। §

होली पर लिखी गई कविता म भी हम भारत की दुदशा का चित्र पाते हैं—

मची है भारत म कसी हाली सब अनीति गति हो ली।
प्रमाद मदिरा अधिकारी लाज सरम सब घोली॥

कांग्रेस अधिवशनो म जाने वाले कमठ प्रतिनिधियो के स्वागत के समय देश की उन्नति की आशा को व्यक्त करने वाली कई कविताए प्रेमघन जी ने लिखी—

सब द्वीप की विद्या कला विज्ञान इत चलि आवई
उद्यम निरत अराज प्रजा रहि सुख समृद्धि बढावई।
दुष्काल रोग अनीति नसि सद्धम उन्नति पवाई
मट विघुन अन्न सुरत्न भारतभूमि नित ऊपजावई।
नीके भारत के दिन आये नेशनल कांग्रेस सब होय,
जाग भाग राजऋषि आए लाट रिपन छल खोय। †

प० प्रतापनारायण मिश्र जी भी कट्टर देशभक्त थ और स्वदेश वस्तुओ का व्यवहार (स्वदेशी आन्दोलन क पूर्व स ही) करते थे। उन्होंने भी कांग्रेस अधिवेशन पर कविताए लिखी —

जय जयति भगवति कागरस असस मगलकारिनी।

§ प्रेमघन—खड २ पृष्ठ २५४

स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए उन्होने ललकारते हुए कहा—

सब तजि गहो स्वतन्त्रता, नहिं चुप लातें खाव,
राजा कर सो न्याय है पासा परे सो दाव ।

इन्होने बहुत से पद पुरान गीतों की लय के आधार पर बनाए जिससे जन-साधारण मे उनका प्रसार हो सके । इन गीतो मे भी देश की हीन दशा पर दुख प्रकट किया गया—

देवी तोरी सेवा न जान कोई
अपने स्वारथ मा बौराने, हिंदुन अक्किल खोई
खेलें सब फागु भाग हत भारतवासी
धनबल को नित धूरि उडावत, गौरव पर धरि आग ।

प्रतापनारायण मिश्र जी की उक्तियाँ बडी चुभती हुई तथा व्यग्य और हास्यपूर्ण हैं । इन्होने 'जन्म सुफल होय' चरण को लेकर लाड रिपन पादरी, हजरत, सेठ, राजा, बगुलाभगत, आलसी आदि पर सुन्दर उक्तियां की हैं जिनमे तत्कालीन सामाजिक दशा का अच्छा चित्र खींचा गया है । कुछ उदाहरण देखिये—

सेठ उवाच—

बुद्धि विद्या बल मनुजता छुवहिं न हम वह कोय
लछमिनियाँ घर मे बसे, जन्म सुफल तब होय । ‡

पादरी उवाच—

हम जो चाहे सो करें, पै दुख्ख मति कोय
जग हमार चेला बने जन्म सुफल तब होय । †

गौरांगदेव उवाच—

नित हमरी लातें सहें, हिंदू सब धन खोय,
खुले न इंगलिस पालसी जन्म सुफल तब होय । §

पढ़े लिखे बाबू लोगों पर भी इंगित किया है—

तन मन सो उद्योग न करहीं, बाबू बनिबे के हित मरहीं,
परदेसिन सेवत अनुरागे, सब फल खाय धतूरन मागे ।

---

‡ प्रतापनारायण मिश्र-प्रताप पीयूष पृष्ठ १६
† वही पृष्ठ १८
§ वही पृष्ठ १६

जनता को झकझोर कर अपनी विलुप्त हुई लक्ष्मी सरस्वती और दुर्गा को पुन भारतभूमि मे लाने की प्रेरणा मिलती है। प्रेमघन जी देश की परिस्थिति सुधारने के लिए धार्मिक व राजनीतिक आन्दोलनो पर अपने विचार प्रकट करते थे तथा यथा साध्य अधिवेशनो म जाकर सहयोग भी देते थे।

दादा भाई नौरोजी जब पालमेंट के सदस्य बने तब 'मगालाशा' कविता द्वारा उनको 'काले' कहे जाने पर निम्न विचार प्रकट किए—

अचरज होता तुमहु सम गोरे बाजत कारे,
तासो कारे कारे शब्दहु पर हैं वारे।
कारे श्याम, राम जलधर जल वरसावन वारे।
कारे लागत ताही सो कारन को प्यारे।
याते नीको है तुम कारे जाहु पुकारे।
यह असीस दत तुम को मिलि हम सब कारे।
सफल होहिं मन के सबही सकल्प तुम्हारे। §

होली पर लिखी गई कविता म भी हम भारत की दुदशा का चित्र पाते है—

मची है भारत मे कसी होली सब अनीति गति हो ली।
प प्रमाद मदिरा अधिकारी लाज सरम सब धोली॥

कांग्रेस अधिवेशनो म आन वाल कमठ प्रतिनिधियो क स्वागत के समय देश की उन्नति की आशा को व्यक्त करने वाली कई कविताए प्रेमघन जी ने लिखी—

सब द्वीप की विद्या कला विज्ञान इत चलि आवई
उद्यम निरत अराज प्रजा रहि सुख समृद्धि बढावई।
दुष्काल रोग अनीति नसि सद्धम उन्नति पवाई
भट विबुध अन्न सुरत्न भारतभूमि नित ऊपजावई।
नीके भारत के दिन आये नेशनल कांग्रेस सब होय
जागे भाग राजऋषि आए लाट रिपन छल खोय। †

प० प्रतापनारायण मिश्र जी भी कट्टर देशभक्त थ और स्वदेश वस्तुओ का व्यवहार (स्वदेशी आन्दोलन क पूव स ही) करते थे। उन्होने भी कांग्रेस अधिवेशन पर कविताए लिखी —

जय जयति भगवनि कागरस असम मगलकारिनी।

§ प्रेमघन—खड २ पृष्ठ २५४

स्वतत्रता प्राप्त करने के लिए उन्होंने ललकारते हुए कहा—

सब तजि गहौ स्वतन्त्रता, नहिं चुप लातें खाव,
राजा कर सो न्याय है, पासा परै सो दाव।

इन्होंने बहुत से पद पुराने गीतो की लय के आधार पर बनाए जिससे जन-साधारण म उनका प्रसार हो सके। इन गीतो मे भी देश की हीन दशा पर दुख प्रकट किया गया—

देवी तोरी सेवा न जान कोई
अपने स्वारथ मा बौराने, हिंदुन अक्किल खोइ
खेलें सब फागु भाग हत भारतवासी
धनबल की नित धूरि उडावन, गौरव पर धरि आग।

प्रतापनारायण मिश्र जी की उक्तिया बडी चुभती हुई तथा व्यग्य और हास्यपूर्ण हैं। इन्होंने 'जन्म सुफल होय' चरण को लेकर लाड रिपन पादरी, हजरत, सेठ, राजा बगुलाभगत आलसी आदि पर सु दर उक्तिया की हैं जिनमे तत्कालीन सामाजिक दशा का अच्छा चित्र खीचा गया है। कुछ उदाहरण देखिये—

सेठ उवाच—

बुद्धि विद्या बल मनुजता, छुवहिं न हम कहु कोय,
लछिमिनियाँ घर म बसै जन्म सुफल तब होय। ‡

पादरी उवाच—

हम जो चाहे सो करें, पर दुलख मति कोय
जग हमार चेला बने, जन्म सुफल तब होय। †

गौरागदेव उवाच—

नित हमरी लातें सहे हिंदू सब धन खोय,
खुल न इगलिस पालसी, जन्म सुफल तब होय। §

पढे लिखे बाबू लोगो पर भी इगित किया है—

तन मन सो उद्योग न करही, बाबू बनिबे के हित मरही,
परदेसिन सेवत अनुरागे, सब फल खाय धतुरन भागे।

---

‡ प्रतापनारायण मिश्र प्रताप पीयूष पृष्ठ १६
† वही पृष्ठ १६
§ वही पृष्ठ १८

मिश्र जी ने 'तृप्यताम कविता म बडी चित्ताकर्षक शली द्वारा देश की महगाई, अकाल और हीनावस्था का चित्र उपस्थित किया है —

नागदेवता से—

महगी और टिकस के मारे हमहि क्षुधा पीडित तन छाम,
साग पात लौं मिले न जिय भर लेनो वृथा दूध को नाम,
तुमहि कहा प्यावै, जब हमारो करत रहत गोवश तमाम,
केवल सुमुखि अलक उपमा लहि नागदेवता तप्यताम । ‡

गुलामी से मुक्त होकर स्वतत्रता प्राप्त करना ही देशोन्नति का मूल है । यह भावना इन पक्तियो मे मिलती है —

सब तजि गहो स्वतन्त्रता नहि चुप लात खाव,
राजा कर सो न्याव है पासा पर सो दाव । †

ब्रिटिश साम्राज्यवादियो की लालच और भूख की चरम सीमा तो श्मशान के दृश्य म अकित की गई है जहा प्रेत नर नारियो के मृतक शरीरो को खाने मे व्यस्त हैं तथा उनम रक्त की एक बूद भी पाने मे असमर्थ हैं —

सुख से खेलहु खाहु सजहु तन जो कुछ मिले हाड औ चाम
लहो जो एको बूद खून तो बसि पिशाच कुल तृप्यताम । §

बालमुकुद गुप्त न भी ब्रिटिश राज्य के आर्थिक शोषण का चित्र उपस्थित करते हुए ईश्वर से प्रश्न किए हैं । देश म आज हाडा की चक्किया चलती हैं और उनका व्यापार होता है । इस पद मे भारतवर्ष को मरघट बताया गया है तथा भारतवासियो को प्रेत के रूप मे रखा गया है—

जह तह नर ककाल के लागे दीखत ढेर
नरन पशुन के हाड सो भूमि छई चहु ओर ।
हरे राम केहि पाप ते भारत भूमि मझार,
हाडन की चक्की चले हाडन को व्यापार । *
भारत घोर मसान है तू आप मसानी,
भारतवासी प्रेत से डोलहि कल्यानी । **

---

‡ प्रतापनारायण मिश्र—तृप्यताम-पद १६

† प्रतापनारायण मिश्र—लोकोक्ति शतक-पृष्ठ ३

§ प्रतापनारायण मिश्र—तृप्यताम-पद ५७

* बालमुकुन्द गुप्त—स्फुट कविता—हे राम-पद २

** बालमुकुन्द गुप्त—स्फुट कविता—आवहु भाई-पद ४

देश मे फले हुए अकाल, महामारी, महगाई आदि के कारण जो शोचनीय दशा हो रही थी उसका उल्लेख भी उस युग के साहित्य मे हम मिलता है। अकाल पर प० बद्रीनारायण जी 'प्रेमघन' ने लिखउ हुए कहा है—

भागो भागो अब अकाल पडा है भारी,
भारत पै घिरी घटा विपत की कारी।
सब गए वनज व्यापार इतै साभागी
उद्यम पौरुष नसि दियो बनाय अभागी।

राधाचरण गोस्वामी जी ने भी स्वदेशभक्ति के साथ देश की दुर्दशा का वणन किया तथा अतीत का स्मरण भी किया—

मैं हाय हाय दे धाय पुकारो कोई भारत की डूबी नाव उबारो कोई।
उड गए वेद के बादवान अति भारे ऋषि जन रस्सा नहि रहे खेंचन हारे।
यामें चिंतामणि सदृश रत्न की ढेरी, यामें अमृत सम औषधीन की फेरी।
बह चली सकल यूरोप हाय मति मोई, भारत की डूबी नाव उबारो कोई।

श्री राधाकृष्ण जी भारतेन्दु के निकट सबधी थे और प्रेरणा पाकर देशभक्ति पूण काव्य की रचना की ओर भी बढे। इनकी रचनाओं म भी देश की वतमान हीनता पर दुख प्रकट किया गया दृष्टिगोचर होता है। इन्होंने भारत बारहमासा लिखा जिसमें देशभक्ति का पुट मिलता है—

लायो असाढ सुहावन सब देस मिलि आनद करे,
यूरप अमेरिका फ्रास जरमन मोद जिय में नहिं धरें।
एक हम अभागे देस भर के बैठि के रोवत रहैं,
नहिं काम कोउ करनो हमें, बस व्यथ दिन खोवत रहैं। †

नए वप की बधाई शीपक कविता म भारत म महाप्रलय की कामना की गई है—

दीन दुखी आरत विपत्ति के मारे भारतवासी,
सहमि उठे सुनिकै आगम छज्जन की छई उदासी।
पडित कहै महाभारत के ग्रह सब एकत आवैं
भारत में भारत मचवावैं महाप्रलय घहरावैं। §

देश का दुख दारिद्र्य हरने के लिए उन्होंने प्रभु को पुकारा—

---

† श्री राधाकृष्ण—भारत बारहमासा-पद ४
§ श्री राधाकृष्ण—नए वप की बधाई-पद २

प्रभु हो पुनि भूतल अवतरिए,
अपुने या प्यारे भारत को पुनि दुख दारिद हरिए।

प्रतापनारायण जी ने गोरक्षा पर भी खूब लिखा। कांग्रेस की लोकप्रियता होने के कारण 'प्रेमघन' जी तथा सुधाकर द्विवेदी मिश्र जी आदि ने जनता से सहयोग देने का आह्वान किया। प्रेमघन जी ने चरखे पर कुछ गीत लिखे—

चल चल चरखा तू दिन रात
चरखा चरखा (आगमान) बनाता नित दिन ज्यों ग्रीषम बरसात
ज्यों ज्यों चपल चरखा चला
वमन व्यापारी विदेसी छति विलखि कर मला।

राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रति प्रेम राष्ट्रीयता के विभिन्न अंगों में अपने देश की भाषा का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। मातृभूमि के समान ही मातृभाषा का प्रेम प्रत्येक देशभक्त के हृदय में हिलोरें लेता है और उसका निरादर और अवहेलना करने वाले के प्रति सहज ही रोष जाग्रत होता है। भारतेन्दु युग के कवियों में हम देखते हैं कि अधिकांश व्रजभाषा के कवि हैं किन्तु सबका राष्ट्रभाषा हिन्दी की उन्नति प्रसार एवं प्रचार की ओर लक्ष्य रहा। अंग्रेजों की पाश्चात्य साहित्य संस्कृति व भाषा के व्यापक प्रसार की नीति ने इस भावना को और भी उकसाया। स्वतन्त्रता की भावना हर दिशा में आई तथा भाषा, साहित्य समाज कला धर्म संस्कृति आदि सभी की वृद्धि और विकास की भावना से अनुप्राणित हो इस युग के कवियों ने हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान का नारा बुलंद किया। अरबी फारसी, उर्दू और अंग्रेजी आदि भाषा से घृणा नहीं थी वरन भारतेन्दु आदि ने इन भाषाओं से नए ज्ञान नई बातों को ग्रहण करने तथा अपनी भाषा में अनुवाद करने की बात कही। उर्दू और अंग्रेजी जब भारत की राष्ट्र भाषा का अनादर करके उसके स्वाभिमान को आघात पहुंचाने लगी तो नागरी और हिन्दी भाषा के प्रचार न बन पाया।

इस समय न्यायालयों में उर्दू और फारसी का प्रयोग होता था किन्तु भारतेन्दु प्रेमघन प्रतापनारायण मिश्र आदि कवियों ने राष्ट्र के नेताओं के साथ हिन्दी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होते देखने की कामना की और उसके लिए प्रयत्नशील भी रहे। बाद में राजा शिवप्रसाद आदि के मतभेद के बावजूद भी मालवीय जी तथा अन्य नेताओं के प्रयत्न से सन १९०० से हिन्दी का प्रयोग न्यायालयों में होना प्रारम्भ हुआ। इसलिए इस युग के प्रत्येक कवि तथा पत्रकार ने हिन्दी की महिमा तथा उर्दू फारसी अंग्रेजी का मजाक उड़ाना देशप्रेम का अंग समझा।

भारतेन्दु जी सच्चे हृदय से हिन्दी से प्रेम करते थे तथा उसकी दुर्दशा पर अत्यंत दुखी रहते थे। अपनी ग्रीषम प्यारे हिमत बनाइए कविता में लिखा है—

भोज मरे अरु विक्रमहू किनको अब राइ के काव्य सुनाइए,
भाषा भई उर्दू जग की अब तो इन ग्रथन नीर डुबाइए,
राजा भए सब स्वारथ प्रीत अमीरहू हीन किन्हे दरसाइए,
नाहक देनो समस्या अब यह ग्रीषम प्यारे हिमन बनाइए। ‡

भारतेन्दु जी ने तो देश की सब प्रकार की उन्नति का कारण भाषा को ही माना है—

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल। †

'हिन्दी भाषा की उन्नति पर व्याख्यान, जिसे भारतेन्दु जी ने हिन्दीवर्धिनी सभा में पढ़ा था वास्तव में भारतेन्दु के भाषा प्रेम की पद्य में सुन्दर अभिव्यक्ति है। भारतेन्दु जीवन के किसी भी क्षेत्र में अतिवादी नहीं थे। राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक आदि सभी क्षेत्रों में समन्वयात्मक दृष्टिकोण ग्रहण किया। हिन्दी की स्वाभाविकता उसकी जातीय शैली की रक्षा करने की चेष्टा थी। § भारतेन्दु के अनुसार सर्वांगीण उन्नति के लिए घर के उन्नत होने की आवश्यकता है और घर उन्नत तभी हो सकता है जब हम मातृभाषा का अध्ययन करें। अनेक भाषाएं पढ़ने लिखने के पश्चात भी हमारा सारा चिंतन कार्य मातृभाषा में होता है—

पढ़ै संस्कृत जतन करि पंडित भे विख्यात
पै निज भाषा ज्ञान बिन कहि न सकत एक बात।
अंग्रेजी पढ़िके जदपि सब गुन होत प्रवीन।
प निज भाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन।
यह सब भाषा काम की जब लौ बाहर वास
घर भीतर नहिं कर सकत, इनसों बुद्धि प्रकास। *

भारतेन्दु ने केवल अपनी भाषा व साहित्य ही पर संतोष रखकर अकर्मण्य बैठे रहना नहीं चाहा। उन्होंने अंग्रेजी फारसी, उर्दू तथा संस्कृत एवं अन्य प्रान्तीय भाषाओं से अनुवाद करके हिन्दी को समृद्ध करने के लिए मार्गदर्शन दिया—

---

‡ भारतेन्दु ग्रंथावली दूसरा खंड-पृष्ठ ८६६
† —वही— पृष्ठ ७३१
§ डा लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १७४
* भारतेन्दु ग्रंथावली-दूसरा खंड-पृष्ठ ७३१ ३२

विविध कला शिक्षा अमित ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देसन से लै करहु भाषा माहि प्रचार।

आधुनिक विज्ञान व अन्य उपयोगी विद्याओं का भंडार अंग्रेजी है। यदि इन ग्रंथों का अनुवाद हो तो देश की उन्नति हो सकती है—

रेल चलत जहि भांति सो, कल है कारा नांव
ताप चनायन विमि सब, जारि सकत जा गांव।
ए सब विद्या की कहूँ होइ जुपै अनुवाद
निज भाषा मह तो सबै यारा लहै सवाद। ‡

हिन्दी भाषा के भंडार की वृद्धि के लिए भारतेन्दु ने बहुत से ग्रंथ नाटक, काव्य, प्रहसन आदि की रचना की तथा पत्र-पत्रिकाओं द्वारा हिन्दी भाषा के प्रचार का आंदोलन चलाया। भारतेन्दु चाहते थे कि हमारी भाषा का देशव्यापी प्रचार हो—

प्रचलित करहु जहान मे निज भाषा करि जत्न
राज काज दरबार में फैलावहु यह रत्न।
भाषा सोधहु आपनी, होइ सब एकत्र,
पढहु पढावहु लिखहु मिलि छपवावहु कछु पत्र।
करहु विलंब न भ्रात अब उठहु मिटावहु सूल
निज भाषा उन्नति करहु प्रथम जो सबको मूल। †

भारतेन्दु के अतिरिक्त इस युग के अन्य कवियों ने भी राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रति अपना प्रेम और उद्‌गार प्रकट किया। उर्दू भाषा पर भी इस युग के कवियों ने बड़े व्यंग्य भरे उद्‌गार प्रकट किए हैं। प० बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' जी को कचहरी मे 'उर्दू बीवी' का हिन्दी की उन्नति पर अधार होत देखा गया—

पुरखवत सो बीच कचहरी उर्दू बीवी।
बैठी ऐंठी करत अजहु मौ सौ विधि मीमो।
लखि आवत नागरी बरन बरन तकि,
नाक सिकोरत भौंह मरोरति औचकहि चरि।

उर्दू भाषा की हंसी उड़ाते समय उन्होंने लिखा—

निज भाषा को सबद लिखा पढि जात न जामें
पर भाषा का कहो पढ कैसे कोउ तामें

‡ भारतेन्दु ग्रंथावली दूसरा खंड पृष्ठ ७३६
† वही पृष्ठ ७३८

लिख्यौ हकीम औषधि मे 'आलु बोखारा'।
उल्लू बनो मौलवी पढ़ि 'उल्लू बेचारा'।
साहिब 'किस्ती' चाही पठाई मुनसी 'कसबी'
'नमक' पठायो भई 'तमस्सुक' की जब तलबी,
पल्न मुतार' 'सितार' 'किताब' 'कबाब' बनावत
'दुआ देनहु' 'दगा' देन का दोष लगावत।
मम साहब 'बडे बडे मोती' चाह्यो जब,
'बडी बडी मूली पठायी तसिल्दार तब।

प० प्रतापनारायण जी मिश्र ने 'हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान' का नारा लगाकर जन साधारण को उदबुद्ध करने का प्रयास किया—

चहहु जो साचहु निज कल्यान, तो सब मिलि भारत सतान।
जपो निरन्तर एक जबान, हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान। †

हिन्दी भाषा के प्रेम के सबध मे उन्होंने लिखा—

देवनागरिहि गरे लगाओ प हो मोद महान
रहो निशक प्रेम मद मान श्री प्रताप समान।
सिखहि नागरी नागरी नागर बनहि सु लोय।
ब्राह्मण की आसास ते घर घर मगल होय।

'भारत रोदन' शीर्षक कविता मे भी हिन्दी, उर्दू का विवेचन किया गया है—

उर्दू काहूँ देस की, भाषा होती न सिद्ध
केवल आये अभाग ते, ह्या ह्वै रही प्रसिद्ध।
हेर फेर नुक्तान को एक ओर धरि देहु,
'प्रेत प्रीति' लिखी मौलवी, सो पढाय तो लेहु।

भारतेन्दु प्रतापनारायण मिश्र, प्रभृति इस युग के कवियो ने स्वय उर्दू मे गजलें और कविताए कीं और उनका उर्दू फारसी का अध्ययन भी अच्छा था किन्तु वे उर्दू को हिन्दी का स्थान नही देना चाहते थे। वे हिन्दी को ही राजभाषा व राष्ट्रभाषा के रूप मे समस्त भारत मे प्रसारित होते हुए देखना चाहते थे। एक अन्य कविता मे प्रतापनारायण मिश्र ने हिन्दी की चर्चा करते हुए कहा—

† श्री प्रतापनारायण मिश्र—प्रताप पीयूष पृष्ठ २१८

हक म हिन्दी के नहीं अहले कमीशन देते राय,
छूटे हैं खरगोश पर कुत्ते शिकारी हाय हाय। ‡

मुहावरों के सुन्दर प्रयोग द्वारा नागरी के सबधी मे विचार रखे गए हैं—

छोडि नागरी सगुन आगरी, उर्दू के रग राते,
देसी वस्तु विहाय, विदेसिन सो सवस्व ठगाते।
मूरख हिन्दू बस न लहै दुख जिनकर यह ढग दीठा
घर की खाड खुरखुरी लागे चोरी का गुड मीठा।*

राधाचरण गोस्वामीजी भी हिन्दी भाषा मे कट्टर हिमायती थे तथा उन्होंने सन १८८३ मे शिक्षा कमीशन के सम्मुख २१ हजार हिन्दी प्रेमियों से हिन्दी भाषा के पक्ष मे हस्ताक्षर एकत्रित करके प्रेषित किए। हिन्दी के सबध में इन्होने खूब प्रचार किया और लिखा भी। इनका एक पद इस प्रकार है—

कवि पडित परिजन प्रभृति छात्र, रसिक रिझवार
राजा प्रजा सुप्रेम बस करि हिन्दी को प्यार
हिन्दी हिन्दुस्तान का भाषा विशद विशाल।
जन्म होत सबसो कहैं मा! मा! दा! दा! बाल।

श्री राधाकृष्णदास जी ने भी हिन्दी भाषा का कचहरी मे प्रवेश मिलने पर मेकडानेल को बधाई देते हुए कहा—

धनि मेक्डानेल लाट प्रजा के दुख निवारे
कचहरिया लीना सो सबके प्रान उबारे।
जब लों हिन्दू हिन्दी रहै यह शुभ दिन न बिसारिहैं
मेकडानेल नाम पवित्र यह नित सादर उच्चारिहैं। †

उपसंहार

भारतेन्दु युग के प्रारंभिक वर्ष सक्रान्तिकाल के थे। रीतिकाल के सामती आदर्श जर्जरित होते जा रहे थे तथा हिन्दी साहित्य म नवोत्थान प्रारम हो गया था। वैज्ञानिक साधनों रेल तार मुद्रण यन्त्र आदि के द्वारा समाज म नया परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। सन् १८५७ का विप्लव भारतीय इतिहास का महत्वपूर्ण घटना रही।

---

‡ प्रतापनारायण मिश्र— चाहे गाना समझो चाहे रोना कविता

* प्रतापनारायण मिश्र— लोकोक्तिशतक

† राधाकृष्णदास— मैकडानल पुष्पांजलि

यद्यपि हिन्दी साहित्य में इस संघर्ष का अधिक उल्लेख नहीं मिलता किन्तु लोकभाषाओं में देश को स्वतन्त्रता को प्राप्त करने वाले वीर पुरुषों के शौर्य पूर्ण युद्ध की सुन्दर तथा मार्मिक अभिव्यक्ति मिलती है। इन लोकगीतों में विदेशी राज्य के प्रति घृणा तथा उपेक्षा का भाव व्यंजित हुआ जिससे देश के जनमानस की चेतना और देश प्रेम की भावना का अनुमान लगाया जा सकता है। इस साहित्य में राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आंदोलन के उग्र रूप की झांकी दिखाई देती है जिसने अगले लगभग ६० वर्षों तक ब्रिटिश शासन से सतत संघर्ष करते रहने की प्रेरणा और शक्ति दी।

भारतेन्दु युग में जनता के मनोभावों का चित्रण कवियों तथा लेखकों द्वारा होने लगा। रीतिकाल की कविता जीवन से दूर जा चुकी थी किन्तु इस युग में फिर जनमानस के जीवन से प्रेरणा पाने लगी। कवियों की दृष्टि भी यथार्थवादी हुई तथा देश एवं समाज में व्याप्त राजनीतिक, धार्मिक चेतना का चित्रण किया जाने लगा। काव्य का क्षेत्र व्याप्त हुआ तथा विदेशी शासन की स्तुति से आरंभ होकर देशभक्ति के उद्गारों के उन्मेष में इस युग के अधिकांश कवियों द्वारा काव्य सृजन हुआ। इस युग की राजभक्ति पूर्ण रचनाएं अपने युग की परिस्थिति जन्य होने के कारण स्वाभाविक थी। विक्टोरिया की घोषणा ने जनता के मन में संताप की लहर उत्पन्न की। सन् १८५७ की क्रान्ति से जनता त्रस्त हो उठी थी, उसने इस घोषणा का हृदय से स्वागत किया तथा ब्रिटिश शासन द्वारा आयोजित नई सुविधाओं रेल, सड़कें, बिजली आदि की सभी कवि प्रशंसा कर रहे थे। किन्तु ये आशाएं भ्रान्तिपूर्ण थी और इसका आभास कवियों को भारतेन्दु युग के उत्तरकाल तथा द्विवेदी-युग में हुआ। प्रारंभ में राष्ट्रीय महासभा की नीति भी ब्रिटिश शासन की विरोधी नहीं रही। इसलिए भारतेन्दु युग के साहित्यकारों की राजभक्तिपूर्ण रचनाएं केवल खुशामद या चाटुकारिता नहीं हैं उनमें देश की वास्तविक परिस्थिति का चित्रण भी हुआ है। देशवासियों की दुर्दशा निर्धनता, अवनति आदि के प्रति कवियों में उपेक्षा नहीं मिलती।

स्वर्णमय अतीत के चित्रण द्वारा कवियों ने निराश और हतप्रभ देशवासियों के सामने एक आदर्श रखा और उसकी प्रेरणा से वर्तमान तथा भविष्य को सुन्दर बनाने की भावना भरी। इस प्रकार परोक्ष रूप से जनता में देशभक्ति की अग्नि सुलगती रही। अतीत तथा वर्तमान काल के वीर पुरुषों के जीवनादर्शों, स्तुति तथा देशभक्ति पूर्ण उद्गारों द्वारा जनता को नया बल मिला। अतीत के स्मरण में इस युग के कवियों की भावना प्राचीन हिन्दू गौरव तथा संस्कृति की रक्षा के प्रति अधिक रही। इस युग की राष्ट्रीयता हिन्दुत्व की भावना लिए हुए थी, 'हिन्दी हिन्दी हिन्दुस्तान' की उन्नति, समृद्धि को ही राष्ट्रीयता माना जाता था। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि उनमें मुसलमानों के प्रति घृणा या वैमनस्य की भावना बढ़ाने का उद्देश्य

था वरन् सम्पूर्ण भारत के उत्थान की अभिलाषा इनमें होती थी। ये कवि किसी सम्प्रदाय के प्रति अनुदार नहीं थे वरन् सच्ची देशभक्ति से प्रेरित होकर ही इस प्रकार के उद्गार प्रकट करते थे।

समाज तथा धर्म में व्याप्त कुरीतियों को निकालकर उन्हें दूर करने की भावना भी इस युग में मिली। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उनके समकालीन कवियों ने देश की आर्थिक दुर्दशा का चित्रण ही नहीं किया वरन् कुछ उपायों व स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार द्वारा उसे दूर करने का मार्ग भी बताया। कहीं कहीं अंग्रेज शासकों द्वारा देशवासियों की बेकारी गरीबी का चित्र खींचते हुए विदेशी शासन को इसका कारण बताकर अपना रोष प्रकट किया है। भारत का धन विदेश में जाता देख कवियों का मन क्षुब्ध हो जाता है और निरंतर पड़ने वाले अकालों, भुखमरी और रोगों से ब्रिटिश शासन के प्रति असंतोष की अभिव्यक्ति हुई है। कहीं कहीं ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि वह सोए हुए भारतीयों को जाग्रत करे। कवियों ने जन्मभूमि के प्रति प्रेम उत्पन्न करने वाले गीत लिखे तथा देश के प्राकृतिक सौन्दर्य वैभव का वर्णन कर राष्ट्रीय उद्गारों की अभिव्यक्ति की। हिन्दी भाषा तथा नागरी की उन्नति के लिए भी अधिकांश कवियों ने अपना योग दिया। भाषा को सब प्रकार की प्रगति का मूल स्रोत मानकर इसे राजभाषा व राष्ट्रभाषा के उच्च पद पर पहुँचाने का आन्दोलन भी इस युग में प्रारम्भ हुआ। हिन्दी के प्रति प्रेम जाग्रत करने के लिए विभिन्न विषयों पर कविताएं लिखी जाने लगीं और इस प्रकार देशप्रेम के इस महत्वपूर्ण अंग पर भी भारतेन्दु युग के कवियों का लक्ष्य रहा।

भारतेन्दु युग में नवयुग का श्रीगणेश मात्र हुआ था इसलिए इस समय की कविता में कलात्मकता नहीं ढ़ूँढ़नी चाहिए। काव्य के विषय भी नवीन थे जिनसे मधुरता और कोमलता अधिक नहीं आ पाई। इस युग का महत्व तो समाज का यथार्थ चित्रण कर देश के प्रति प्रेम जाग्रत करना था। अपने युग की परिस्थिति का सफल चित्रण कर देश में व्याप्त सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक विषमताओं को दूर कर उसमें सुधार करने का प्रण इस युग के कवियों में मिलता है जिससे जनता में नया उत्साह, नया बल और नई चेतना उत्पन्न हुई। देश की पराधीनता की श्रृंखला से मुक्त करने की भावना भर कर जनमानस में राष्ट्र के प्रति प्रेम जाग्रत करने का मूक प्रयास इस युग के कवियों ने किया। पाश्चात्य ज्ञान सभ्यता और संस्कृति ने जनमानस को एकदम अभिभूत नहीं किया वरन् भारतीय संस्कृति के आधार पर नया ज्ञान, नई चेतना और नया जीवन प्राप्त कर देश की उन्नति के लिए प्रेरणा दी। यद्यपि इस युग के कवियों का राष्ट्र प्रेम का स्वर अधिक तीव्र नहीं है तो भी इसने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में भूमिका का कार्य जनमानस को सतत् संघर्ष, त्याग व बलिदान की ओर प्रवृत्त कर देश को मुक्त कराने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया।

षष्ठ अध्याय

द्विवेदी युग मे राष्ट्रीय भावना

राजनीतिक तथा सामाजिक पृष्ठभूमि

सन १९०४–०५ म रूस-जापान युद्ध हुआ जिसम रूस पर एशिया के प्रगतिशील देश जापान की विजय हुई जिसके फलस्वरूप चीन भारत ईरान और तुर्की आदि देशों मे नई चेतना, नया उत्साह और बल मिला। जनता न अपन आदोलन और सघष म आत्म विश्वास का अनुभव किया।

जसा कि पहले कहा गया है कि सन १८०५ तक काग्रेस की नीति ब्रिटिश सरकार को प्राथना पत्र दने इग्लड म प्रतिनिधि मडल भेजने, जाच कमीशनो की नियुक्ति करन आदि की ही थी क्योंकि काग्रेस का इस समय ब्रिटिश सरकार की निष्पक्षता और ईमानदारी मे पूण विश्वास था। किन्तु धीरे धीरे उसका यह विश्वास बदलता गया। बगाल क विभाजन ने देश म एक असतोष की लहर उत्पन्न की जिसके फलस्वरूप स्वदेशी आदोलन और राष्ट्रीय शिक्षा का प्रसार तथा विदेशी वस्तु के बहिष्कार आदि की भावनाए बढने लगी। बग भग के पश्चात श्री अरविन्द तथा तिलक के नेतृत्व म राष्ट्रीय दल सगठित होने लग जिन्होने काग्रेस का ध्यय स्वराज्य घोषित करन की माग की।

सूरत अधिवेशन सन १९०७ म हुआ। इस समय काग्रेस नरम तथा गरम दो दलों मे बट गई थी। गरम दल वालो का विचार था कि काग्रेस को भिक्षा लेने तथा अनुनय विनय की वृत्ति को छोडकर सख्ती से काम लेना चाहिए जिससे ब्रिटिश सरकार झुके। सन् १९०८ म काग्रेस क लिए एक विधान तयार किया गया जिसकी प्रथम धारा म इसके उद्देश्य क सबध म लिखा गया भारत की जनता भी एस शासन प्रणाली प्राप्त करे जसी ब्रिटिश साम्राज्य न स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशो म है। इन उद्देश्यो की पूर्ति के लिए वतमान शासन प्रणाली म लगातार सुधार कराके तथा देश के बौद्धिक नतिक, आर्थिक तथा औद्योगिक साधनो का सगठन करके वध उपायो से प्रयत्न किया जाएगा।' †

---

† पट्टाभि सीतारामय्या—काग्रेस का इतिहास प्रथम खड (पाचवा सस्करण) पृष्ठ ५१

सन् १९०९ में मार्ले मिन्टो सुधार कानून बना जिसके फलस्वरूप भारतीय व्यवस्थापिका सभा में लार्ड गवर्नर जनरल तथा निर्वाचित रहने लगे तथा भारत सरकार का एक सदस्य भारतीय रहने लगा। इसी कानून द्वारा पंजाब को छोड़कर अन्य सभी प्रान्तों में मुसलमानों के लिए प्रथम साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रथा जारी कर दी गई जिसके कारण आगे चलकर कटुता बढ़ती गई। मुसलमानों ने अंग्रेजों की पक्षपातपूर्ण नीति का लाभ उठाया तथा कांग्रेस में विभाजन भाग लेना कम कर दिया। सन् १९०६ में उन्होंने अलग मुस्लिम लीग नामक संस्था स्थापित कर ली।

सन् १९१४ के प्रथम महायुद्ध में भारतीयों ने पूरा सहयोग दिया और तभी से शासन संबंधी सुधारों की मांग तथा स्वतंत्रता प्राप्त करने की भावना दृढ़ होती गई। सन् १९१६ के लखनऊ अधिवेशन में कांग्रेस के मंच पर सब दलों और सम्प्रदायों का सहयोग रहा। हिन्दू मुसलमान नरम दल, गरम दल आदि सभी पक्षों के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए जिन्होंने स्वराज्य योजना पर विचार किया। प्रथम महायुद्ध के पश्चात पराधीन देशों को आत्मनिर्णय के सिद्धान्त की घोषणा की गई जिससे प्रेरणा पाकर लोकमान्य तिलक तथा श्रीमती एनी बिसेंट ने 'होमरूल लीग' की स्थापना की। लोकमान्य तिलक का यह वाक्य कांग्रेस के इतिहास में अमर हो गया स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लूंगा। सन् १९१७ में स्वायत्त शासन की वृद्धि की घोषणा ब्रिटिश पार्लमेन्ट में हुई। अंग्रेजों की ओर से यह कहा जाता है कि वे सत्य, न्याय और संसार की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं उन्हें संसार को विश्वास दिलाना था कि वे इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए तैयार हैं। सन् १९१७ में भारत मन्त्री श्री मान्टेग्यू भारत आए और अनेक सरकारी-गैर सरकारी कार्यकर्ताओं से मिलकर सन् १९१९ में इसके अनुसार एक सुधार कानून बनाया। अब पार्लमेंट का भारतीय शासन नियंत्रण हो गया तथा भारतीयों को ऊंचे पद प्रदान किए जाने लगे। प्रान्तीय शासन दो भागों में बांटा गया—रक्षित और हस्तान्तरित। गैर सरकारी निर्वाचित सदस्यों में से ही मन्त्रियों का लिया जाना निश्चित हुआ और इस प्रकार प्रान्तों के शासन में भारतवासियों को छोटा हिस्सेदार के रूप में रखा जाना प्रारंभ हुआ। योरोपीय युद्ध से सामान्य लोगों में अपूर्व जाग्रति हो गई थी। जागीरदार तथा बड़े-बड़े व्यवसायी राजभक्त थे। मध्यम श्रेणी में लोगों को संतुष्ट करने के लिए देशी व्यवसाय और औद्योगिक उन्नति की नीति अपनाई तथा विदेशी पूंजी को भारत में लगाया। कांग्रेस के नरम दल के लोग संतुष्ट हो गए किन्तु गरम दल इन सुधारों से संतुष्ट न था। कांग्रेस से अलग होकर नरम दल के लोगों ने अपना एक अलग संस्था 'लिबरल फेडरेशन' की स्थापना कर ली।

वास्तव में इस नीति के द्वारा साम्राज्यवाद की जड़ें मजबूत करने की योजना की गई थी क्योंकि असहयोग आन्दोलन में भारत के बड़े-बड़े व्यापारियों ने आन्दोलन

को दबाने तथा सरकार को सहायता देने का प्रयत्न किया। योरोपीय युद्ध के समय विप्लव को कुचलने के लिए 'डिफेंस आफ इंडिया एक्ट' पास हुआ जिसके फलस्वरूप जो बहुत से नवयुवक नजरबंद किए गए थे उन्हें युद्ध के पश्चात मुक्त कर देना था। सरकार का ख्याल था कि साधारण कानून विप्लव को दबाने के लिए काफी नहीं है क्योंकि विक्टोरिया की घोषणा के पश्चात् भी यहाँ के अधिकारियों ने बड़े निर्दय और स्वार्थपूर्ण ढंग से कार्य किया जिसके कारण कुछ साहसी युवक स्वाधीनता के लिए छटपटाते रहे। इन लोगों ने गुप्त सभाएं की, अस्त्र शस्त्र और धन संग्रह के लिए डाके डाले-अंग्रेज अधिकारियों की हत्याओं की योजनाएं बनाई तथा बम फेंकने, रेल उलटने आदि के प्रयत्न चलते रहे। गरम दल के लोगों के आतंक मार्ग का प्रारंभ महाराष्ट्र के गणपति तथा शिवाजी उत्सवों द्वारा प्रेरित हुआ। गणेश जी की मूर्ति की स्थापना के उत्सवों में राजनीतिक भाषण होने की भावना भरने के प्रयत्न होते। इस अवसर पर पटेबाजी, कुश्ती, अखाड़ों के भी कार्यक्रम होने लगे। महाराष्ट्र में तिलक ने अपने 'केसरी' पत्र से इस आंदोलन को अधिक बल दिया तथा उनकी प्रेरणा से चापेकर तथा सावरकर बंधुओं ने विदेशों में तथा भारत में अपने भाषणों, लेखों तथा वीरता पूर्ण कार्यों द्वारा इस क्रांति को नया बल दिया। उधर बंगाल में विप्लव बढ़ता गया। खुदीराम बोस, प्रफुल्लकुमार ने अंग्रेज अधिकारियों की हत्याएं कीं तथा हंसते हंसते फांसी के तख्ते पर लटककर स्वतंत्रता के यज्ञ में आहुति डाली। इधर उत्तरप्रदेश में भी मातृदेवी नामक संस्था की स्थापना श्री गेंदालाल दीक्षित ने महाराष्ट्र की शिवाजी समिति के आधार पर की जिसका उद्देश्य था—

> यदि देशहित मरना पड़े मुझको सहस्रों बार भी
> तो भी न मैं इस कष्ट को ध्यान में लाऊं कभी।

इस संस्था का नारा था—

> भाइयो आगे बढ़ो, फोर्ट विलियम छीन लो!
> जितने हैं अंग्रेज सारे, उनको बीन लो!!

यह संस्था आगे चल नहीं पाई। राजा महेन्द्रप्रताप ने भी देश के स्वतंत्रता आंदोलन के लिए विदेशों की यात्रा की तथा अफगानिस्तान, जर्मनी स्विट्जरलैंड, मास्को आदि जाकर उन्होंने विदेश विभाग से संपर्क स्थापित कर अंग्रेजों के विरुद्ध कार्यवाही करने का भरसक प्रयत्न किया किन्तु बाद में प्रेम धर्म और विश्व बंधुत्व का प्रसार करने में ही अपनी शक्ति लगाई।

नवम्बर सन् १९१७ में रूस में जनतंत्र की स्थापना हुई जारशाही खत्म हो गई। रूसी किसान मजदूरों की यह मुक्ति भारत में भी मजदूर किसानों के लिए

प्रेरणादायी हुई। महायुद्ध के समय सरकार ने एक कमेटी नियुक्त की जिसके सभापति जस्टिस रोलेट थे तथा कुमार स्वामी शास्त्री तथा प्रभातचंद्र मित्र सदस्य थे। इसका उद्देश्य था कि भारत में क्रान्तिकारी आन्दोलन से सबंध रखने वाले दलों के षडयंत्रों को दबाने में सरकार को जो दिक्कत मालूम हो, उसमें परिचय कराना तथा कानून बनाने के लिए सलाह देना। पुलिस रिपोर्टों की खूब छानबीन करके इस कमेटी ने एक रिपोर्ट प्रस्तुत की और उसमें यह सिफारिश की कि जनता से प्राय सब नागरिक अधिकार छीन लिए जाय। इसे बड़ी कौंसिल में भी प्रस्तुत कर दिया गया जिसके कारण समस्त देश में इसका विरोध हुआ और कांग्रेस ने इन सिफारिशों की कटु निन्दा की। मार्च १९१९ से महात्मा गांधी ने इस बिल के विरोध में सत्याग्रह आन्दोलन चलाया तथा समस्त देश में उपवास रखा गया प्रार्थनाएं प्रायश्चित तथा सार्वजनिक सभाएं हुई। समस्त देश ने गांधी जी का साथ दिया और इस प्रकार अहिंसक शांति का आंदोलन जोरों से चला। दिल्ली में इस समय गोली कांड हुआ किन्तु अधिकांश जनता ने सत्याग्रह के अहिंसक तरीके को अधिक पसंद किया और इसके द्वारा देश के अनेकों युवकों को अपने साहस, त्याग और बलिदान के भाव प्रकट करने का अवसर मिला। सत्याग्रह के साथ आत्मबल बढ़ाने उपवास, ईश्वर प्रार्थना आदि बातों का भी समावेश होता गया जिससे जनमानस में इसके प्रति श्रद्धा का भाव बढ़ने लगा।

कांग्रेस के अहिंसा और शान्तिमय प्रतिकार करने पर भी सरकार के अत्याचार चलते रहे। कहीं कहीं तो इतने नृशंस और अमानुषिक कार्य किए गए कि लाखों लोगों के खून से इतिहास के पन्ने रंग गए। १३ अप्रैल १९१९ को अमृतसर में हिन्दुओं के संवतसर के अवसर पर एक सार्वजनिक सभा जलियांवाला बाग में हुई। यह स्थान शहर के बीच में था। उस सभा में २० हजार स्त्री पुरुष तथा बच्चे एकत्रित थे। जनरल डायर सौ हिन्दुस्तानी सिपाही तथा पचास गोरे सिपाही लेकर पहुंचा और जनता को तितर बितर होने के लिए केवल ३ मिनिट देकर गोली चलवा दी। इसमें चार सौ आदमी मरे तथा हजारों घायल हुए मुर्दे तथा घायल रात भर वहीं पड़े रहे। इस प्रकार सरकार ने जनता पर आतंक जमाने के लिए निन्द्य एवं अमानुषिक अत्याचार किये। फौजी कानून के द्वारा किसी भी स्थान पर किसी भी समय पर भागते हुए लोगों पर मशीनगनों से गोली की बौछार की जाती तथा उन्हें सार्वजनिक स्थानों पर कोड़ों से पीटा जाता। हजारों छात्रों को हाजरी देने के लिए १५ १६ मील बुलाया जाता छोटे बच्चों को फौजी परेड के समय बुलाया जाता तथा मकान मालिकों को मार्शललॉ के पोस्टरों की रक्षा की जवाबदारी दी जाती-बहुत सी बारात के लोगों को कोड़ों से मारा गया चिट्ठियों का हफ्तों तक रोक थाम की जाती। स्टेशनों पर लोगों को बंद करने के लिए बड़े सीकचे लगाए गए जिससे आम जनता देख सके। कुछ सड़कों पर पेट के बल या हाथ पर के बल चलने की सजा भी

ईजाद की गई। लोगों की व्यक्तिगत सम्पत्ति, वाहन बंदूक आदि छीनकर सिपाहियों के नाम पर ले लेना तथा हिंदुस्तानियों को बिजली तथा पानी न पहुंचने देना आदि बहुत सी बातें पंजाब तथा अन्य प्रांतों में सरकार द्वारा की गईं। सरकारी अधिकारी समझते थे कि इस प्रकार की आतंकपूर्ण स्थिति से देश का क्रांतिकारी आंदोलन तथा सत्याग्रह दबा दिया जाएगा किन्तु कांग्रेस लोकप्रिय होती गई और सन् १६१६ के अमृतसर अधिवेशन में ३० हजार लोगों ने उपस्थित होकर अपने संगठन का परिचय दिया। इस समय कांग्रेस में घोषणा की गई कि नए सुधार अपूर्ण और असंतोष जनक हैं तथा पंजाब की दुर्घटनाओं की जांच करने के लिए उपसमिति बनाई गई। सरकार ने भी हंटर कमीशन बैठाया किन्तु तीन हिंदुस्तानी सदस्यों की राय न मान कर पांच अंग्रेज सदस्यों की रिपोर्टों को प्रामाणिक मानते हुए अधिकारियों का पक्ष लिया। कांग्रेस कमेटी ने सरकार के वक्तव्य को निंदनीय बताते हुए सत्याग्रह आंदोलन को उचित और उपयोगी ठहराया।

सन् १६२० में कलकत्ते में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ जिसमें महात्मा गांधी जी की प्रेरणा से असहयोग आंदोलन प्रारम्भ हुआ। मुसलमानों को महायुद्ध के पश्चात जो वचन दिए गए थे उनको पूरा नहीं किया गया। अमृतसर में कांग्रेसी तथा प्रमुख खिलाफत नेता एकत्र हुए तथा लायड जार्ज की करतूत से उत्पन्न स्थिति के संबंध में चर्चा की और अंत में गांधी जी के नेतृत्व में खिलाफत आंदोलन करने का निश्चय किया गया और प्रस्ताव रखा कि जब तक दोनों अन्यायों (खिलाफत तथा पंजाब) का प्रतिकार नहीं होगा भारत को संतोष नहीं होगा और राष्ट्र के सम्मान की रक्षा तथा भविष्य में ऐसे अन्यायों को रोकने का एकमात्र उपाय स्वराज्य की स्थापना है। वर्तमान स्थिति में यहां जनता के लिए उत्तरोत्तर बढ़ने वाले असहयोग के सिवाय और कोई मार्ग नहीं है। †

असहयोग को काम में लाया जाने वाला कार्यक्रम स्थिर किया गया जिसमें सरकारी स्कूलों, अदालतों कौंसिल की मेम्बरी, वकालत ऊंचे पद तथा उत्सवों आदि को छोड़ने और विदेशी वस्त्र माल के बहिष्कार के साथ राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाएं और पंचायत स्थापित करने तथा खादी के निर्माण और प्रचार आदि पर जोर देने की बात थी। कांग्रेस की स्थापना के प्रारंभ से लेकर सन् १६१८ तक हम देखते हैं कि जनसाधारण का सहयोग बहुत कम ही मिला। किन्तु जब से गांधी जी के नेतृत्व में सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुए तब से जनता ने पूरा सहयोग दिया और त्याग तथा बलिदान और कष्टों का सहर्ष स्वागत किया। अब कांग्रेस वाले गली गली, गांव-गांव तथा घर घर जाकर जनता को उसकी भाषा में कांग्रेस के उद्देश्य

---

† डा० पट्टाभि सीतारामय्या—कांग्रेस का इतिहास भाग १ पृष्ठ १६८

और कार्यक्रम सम्मान सने और इस प्रकार जल्दी ही कांग्रेस जनता का प्रतिनिधित्व करने लगी।

सन् १९२० म कांग्रेस के ३६ वें नागपुर अधिवेशन म असहयोग नीति के समर्थन के साथ कांग्रेस का नया विधान प्रस्तुत किया गया राष्ट्रीय महासभा का उद्देश्य सभी कानूनी तथा शांतिपूर्ण उपायों म भारत की जनता का स्वराज्य प्राप्त करना है। इस प्रकार गांधी जी की अहिंसा नीति और सत्याग्रह का प्रभाव राजनीति पर बहुत पड़ा तथा हिंदी कविता म उसका स्वर सुनाई पड़ने लगा। असहयोग का सूत्रपात सन् १९२० म प्रारभ हो गया। यह अहिंसा भारत की सांस्कृतिक निधि थी। अब राजनीति चुने हुए लोगो की दिलचस्पी का विषय नही रहा वरन् जनसाधारण अपना बलिदान देकर राष्ट्र को स्वतत्र करने का दृढ निश्चय किया। किसान और मजदूर वर्ग की विराट शक्ति को भी इसी युग मे पहचाना गया तथा उनके शोषण पीडन के विरुद्ध कई आदोलन हुए।

हिंदी की राष्ट्रीय कविता

द्विवेदी युग (सन १९००-१९२० ई तक) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के पूर्व कुछ ऐसे साहित्यकार और कवि थे जो भारतेन्दु हरिश्चन्द्र स प्रेरणा पाकर नए नए विषयों पर देशभक्ति पूर्ण काव्य की रचना कर रहे थे किन्तु उनम स अधिकांश का स्वर विद्रोह का स्वर नहीं था वे समय समय पर अंग्रेजो की प्रशसा करने में अपना गौरव भी समझते थे। एक तरफ तो ये राजभक्त कवि के रूप म दिखाई देते दूसरी और जनता के प्रिय पात्र भी बनना चाहते थे। इस युग के अधिकांश कवियो मे इतना साहस और शक्ति नही थी कि वे ब्रिटिश शासको का खुलकर विरोध कर युग की आवश्यकता को समझते हुए जनता का नेतृत्व करते। इसके फलस्वरूप हम भारतेन्दु युग म राष्ट्रीयता का क्षीण स्वर ही पाते हैं। सरकार पर रोष या असतोष की भी व्यंजना उनमें कम ही मिलती है।

कुछ विद्वानों ने इसके कारणों का उल्लेख करते हुए कहा है कि यह काल ऐसा था जब सन १८५७ की क्रान्ति को कुचल दिया गया था तथा अपने दुख म प्रकट रूप से आंसू बहाना व रोना भी विद्रोह या राजद्रोह माना जाता था। अंग्रेज अफसरो की प्रतिकार की उग्र भावना से सबके मन म आतंक छाया हुआ था इसीलिए परोक्ष रूप म देशभक्ति की भावना प्रकट होती रही। विक्टोरिया के घोषणापत्र के पश्चात् विदेशी शासन के प्रति भारतीयो को रोष कुछ कम हुआ तथा उन्हे प्रसन्न करके अपने सुधार और उन्नति की प्रार्थना की जाने लगी। किन्तु जब ३० ४० वर्षों तक कुछ भी लाभ नही हुआ तथा विदेशी शासको के अत्याचारो से भी मुक्ति नही मिली तो

जनता मे विद्रोह की सुप्त भावना फिर भडकने लगी । इसलिए जहा भारतेन्दु युग के कवि केवल सामाजिक दशा और देश की गरीबी पर आसू बहाकर विदेशियों का ध्यान अपनी ओर कराने का असफल प्रयत्न करते रहे वहा द्विवेदी युग के कवियो ने राष्ट्र प्रेम से भरे उद्‌गारो की सुन्दर अभिव्यक्ति की ।

द्विवेदी युग राष्ट्रीय जागरण का युग है । काग्रेस की स्थापना के बाद भारतीय गौरव के पुनरुत्थान सबधी आंदोलना का जोर इस युग मे था । तिलक और गाधी जी के आगमन स देश म नई शक्ति का सचार हुआ तथा उग्र राष्ट्रीयता की लहर फैल गई । साहित्य के विभिन्न अगा की वृद्धि का काय भी इस युग से ही प्रारभ होने लगा । प० महावीरप्रसाद द्विवेदी युग निर्माता के रूप मे हिन्दी साहित्य मे अवतीर्ण हुए तथा सन् १६०३ से सरस्वती के सम्पादक बने तथा अपने आस पास के अनेका प्रतिभा शाली कवियो तथा लेखका को प्रोत्साहन और प्रेरणा देते हुए साहित्य भडार की अभिवृद्धि म जुट गए । इस युग के कवियो की राष्ट्रीय भावनाओं का निरूपण प्रस्तुत है जो इस युग का तीव्रतम स्वर था—

स्वर्णिम अतीत तथा जन्मभूमि के प्रति ममता गौरवमय स्वर्णिम अतीत के प्रति उत्कट भावनाओ का परिचय हमे प० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी की कुछ रचनाओ में मिलता है—

जहा हुए व्यास मुनि प्रधान रामादि राजा अति कीर्तिमान ।
जो थी जगत्पूजित धन्यभूमि, वही हमारी यह आर्य भूमि । ‡
जहा सभी थे निज धर्मधारी, स्वदेश का भी अभिमान भारी ।
जो थी जगत्पूजित पूज्य भूमि, वही हमारी यह आर्य भूमि । †

गगा भीष्म कविता मे वसिष्ठ मुनि के पास जब अष्ट वसु आए तब उन्हें शाप दिया गया । बाद मे भीष्म के आने पर—

सूक्तियुक्त सुन उसकी वाणी द्रवित हो गई गगारानी,
उसने वह सुन हाथ उठाया इस प्रकार वर बचन सुनाया । *

जन्मभूमि की वदना सबधी द्विवेदी जी ने कई कविताए लिखी हैं जिनसे उनकी मातृभूमि के प्रति श्रद्धा और प्रेम प्रकट होता है—

‡ प० महावीर प्रसाद द्विवेदी—द्विवेदी काव्यमाला (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ४०६
† वही पृष्ठ ४०६
* वही पृष्ठ ४१६

देखी वस्तु विश्व की सारी, जन्मभूमि सम एक न प्यारी।
हे सरस्वती के हितकारी सुनिए गुनिए बात हमारी। †
जग में जन्मभूमि सुखदायी, जिस नर पशु के मन न समाई,
उसके मुख-स्वाद नर नारी, होते हैं भ्रम के अधिकारी।
जन्मभूमि की बलिहारी है, यह सुरपुर से भी प्यारी।
इसकी महिमा अति भारी सुधि भी इसकी सुखकारी।

'वन्देमातरम' शीर्षक कविता में हम देशप्रेम का और भी तीव्र स्वर सुन सकते हैं—

हे दुर्गे ! दस भुजा तुम्हारी दुर्गति-नाश निशानी है,
हे कमले ! हे अमले ! अचले ! तू सब सुख की खानी है।
नहीं एक भी भारतखण्ड में ऐसा पापी प्रानी है—
कहे न जो नित 'यही हमारी महामहिम महारानी है।'

'प्यारा वतन' में प्रकृति के प्रति सहज आकर्षण के द्वारा कवि के हृदय में अपने वतन के प्रति प्रेम उमड़ता हुआ पाते हैं—

प्यारे वतन हमारे प्यारे, आ जा पास हमारे
वह जंगल की हवा कहाँ है ? वह इस दिल की दवा कहाँ है ?
बिछुड़ा वतन हुआ यह वेजा, फटता है सुध किए कलेजा। *

भारतवर्ष तथा मेरे प्यारे हिन्दुस्तान शीर्षक कविताओं में भी हम द्विवेदी जी के उदार भावों का परिचय पाते हैं—

जय जै प्यारे देश हमारे, तीन लोक में सबसे न्यारे
हिमगिरी मुकुट मनोहर धारे जय जय सुभग सुवेश।
बल दो हमें ऐक्य सिखलाओ सभलो देश होश में आवो
मातृभूमि सौभाग्य बढाओ, मेटो सकल क्लेश। †

तथा—

तू था दुनिया का सरताज तेरा है सबको नाज
तेरे हाथ मेरी लाज तुझमें है सबका त्राण।
मेरे प्यारे हिन्दुस्तान।

हम बुलबुल तू चमनिस्तान, हम शरीर तू प्राण समान
नहीं कहीं तेरा उपमान जानमाल तुझ पर कुरबान।
मेरे प्यारे हिन्दुस्तान।

---

† महावीर प्रसाद द्विवेदी—द्विवेदी काव्य माला (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ३६५,३६८

* महावीर प्रसाद द्विवेदी—द्विवेदी काव्यमाला (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ३६१ २,४५५

अयोध्यासिंह उपाध्याय जी ने भी कुछ स्फुट कविताओं में भारत के यश-वैभव का चित्रण किया है—

वसुधा ललामभूता भारत, अवनि, प्रबल, आलोक से है आलोकित आज
सुमुन्नति का है जहा तहाँ कोलाहल परम समाकुल है सकल समाज। ‡

निखिलार्थ कर सवारा ससार का सहारा
जय जय विशाल भारत भुवनाभिराम प्यारा
वरदेन आप मुखरित, उन्नति उदार सुचरित
बहु पूत पूत पूजित अनुभूत सत्र द्वारा। †
सब तरह स आज जितने देश हैं फूल फले,
विद्या बुद्धि धन विभव के हैं जहा डेर डाल।
वे बनाने स उन्ही के बन गए इतने भाल
व सभी हैं हाथ स उसके सपूतों के पाले।
लोग जब ऐसे समय पाकर जम लेंगे कभी।
देश की वो जाति की होगी भलाई तभी। §

सैयद मीर अली 'मीर' न भी 'काल की आत्मकहानी' शीर्षक कविता मे अतीत का स्मरण किया है।

भारत का जब सुख पर ध्यान था तब वह भी मालामाल
जबसे छोडा मेरा ख्याल, तब से ही वह पामाल। *

श्री गिरिधर शर्मा न भी 'उद्बोधन' तथा 'ईश्वरस्तुति' आदि कविताओं म भारत मां की वदना की है—

मेरा देश देश का मैं दश मेरा जीवन प्रान
मेरा सम्मान मेरे देश की बडाई म
जिऊगा स्वदेशहित, मरूगा स्वदेश काज
देश के लिए करूगा कभी न बुराई।
जब लों रहेगी मास मवस भी लुटा दूगा
ईश को भी भुला दूगा, देश की भलाई मे।
स्वराज्य म क्षत्रिय भूमिपाल विद्या कला कौशल की कला को
सवत्र है वीर वीरों! बढादा यश पताका जग मे उडा दो।

---

‡ हरिऔध—सम्मेलन पत्रिका सवत् १९७७ अक ४
† हरिऔध—कल्पलता (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ३०
§ हरिऔध 'कर्मवीर' सरस्वती अप्रैल सन् १९०७
* सैयद मीर अली 'मीर' सरस्वती जुलाई १८०९

प्रधान कर्तव्य मनुज का प्रगट सो का रखना गर्व
हे भाइयो ! भारत भूमि मां की, सेवा करो, धर्म यही तुम्हारा §
कुछ भी न तव शक्ति के बाहर, यह सब मन-मन्दार पर आहर।
भारत को तुम दो वह विक्रम, जिससे वह हो पुन पुरातम।

उमाशंकर त्रिवेदी ने अतीत का स्मरण करते हुए 'पूर्व पुरुषा के प्रति' शीर्षक कविता में लिखा—

भीष्म पितामह महावीरवर सत्य धार्मिक धीर
जिसने किया महाभारत में युद्ध घर गंभीर।
भारतभूमि ! प्रकट कर कोई पूर्व पुण्य अवतार
राजभक्तवर देशभक्तिवर गुण गौरव आगार। †

श्री चन्द्रिकाप्रसाद अवस्थी ने 'स्वदेश प्रीति' कविता में देशप्रेम प्रकट किया है—

देशभक्ति को कभी न छोड़ो सब गुण का है दाता देश।
हम उसके वह सदा हमारा यही करो विश्वास विशेष।
अत उक्त गुण गण को अपना पूरण हितकारा निर्धार।
सब स्वदेश वासी जन मिलकर देशोन्नति की करो पुकार। †

श्री रामरणविजयसिंह ने भी 'हे भारत' शीर्षक कविता में बीते दिनों को स्मरण किया है—

हे भारत विरचा विधि तोकों जग मे सुन्दर रतन महान।
ना कहिये यो तोहि बनायो फल इक मीठो सुधा समान।
देस देस के नृप बिलोकि तोहिं मुह के बल दौरत सब ओर।
तनिक न तन की सुधि के राखें, कष्ठ सहैं वे यद्यपि घोर। §

श्री मुन्नीलाल ने अपनी 'स्वदेश भक्ति' कविता में राष्ट्रीय भावना का सुन्दर रूप रखा है—

तन मन धन से सभी प्रकार, करिये देशभक्ति स्वीकार,
सब बातो का सार यही है, मंगल मूल विचार यही है।

---

§ गिरिधर शर्मा—सरस्वती जुलाई १९०६
† उमाशंकर त्रिवेदी—सरस्वती, जनवरी १९०३
† चन्द्रिका प्रसाद अवस्थी—सरस्वती, अक्टूबर १९०५
§ रामरणविजयसिंह—सरस्वती नवम्बर १९०५

अपना देश न किसको भाया, किसने मोद न उससे पाया।
देशभक्ति की नीति निराली सब सुजनों न सादर पाली। *

श्री मन्नन द्विवेदी भी बडे देशभक्त और कविहृदय थे तथा समय समय पर राष्ट्र प्रेम व अतीत गौरव सबधी कविताए लिखते रहे उदाहरण देखिए—

जन्म दिया माता सा जिसने किया सदा लालन पालन।
जिसकी मिट्टी जल आदिक से विरचित है हम सब का तन।
ऐसी मातृभूमि मेरी है स्वर्ग लोक मे भी प्यारी।
जिसके पद कमला पर मेरा तन मन धन सब बलिहारी।

हिन्दी के प्रसिद्ध व्याकरणाचार्य श्री कामताप्रसाद गुरु ने भी प्रसादगुण युक्त सरल एव प्रभावपूर्ण देशप्रेम सबधी कविताए की—

जीती जाती हुई जिन्होंने भारत बाजी,
निज बल से मलमेट विधर्मी मुगुल कुराजी।
जिनके आगे ठहर सके जगी न जहाजी।
है जग जाहिर वही छत्रपति भूप शिवाजी॥

इस युग मे देश भक्ति के सबसे प्रसिद्ध गायक राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त रहे जिन्होंने अपनी रचनाओ द्वारा राष्ट्रीय जगरण का शख फूका। पहल सरस्वती मे इनकी 'स्वर्ग सहोदर' आदि कई स्फुट कविताए प्रकाशित हुई जिनमे भारत की स्तुति की गई है—

यह भारत स्वर्ग सहोदर है
जितने गुण सागर नागर हैं कहते यह बात उजागर है
अब यद्यपि दुर्बल भारत है, पर भारत के सम भारत है।
अब दीनदयालु दया करिए, सब भाति दरिद्र दशा हरिए
भरिए फिर वैभव नित्य नया, चिरकाल हुआ सब छूट गया।
खुलता दुख दस्य महोदर है यह भारत स्वर्ग सहोदर है। †

गुप्त जी की आरभ की अधिकाश रचनाए भारतीय सस्कृति के विविध रूपो का चित्रण करती हैं। उनके अधिकाश कथानक किसी पौराणिक कथा रामायण, महाभारत, बौद्ध या ऐतिहासिक गाथाओं के चरित्रो एव घटनाओ को लिए हुए हैं। इनकी प्रारभ की रचनाए जयद्रथ वध' तथा 'भारतभारती ने राष्ट्रीयता के क्षेत्र मे एक नई क्रांति पैदा कर दी। मातभूमि वदना तथा गौरवमय अतीत सम्बन्धी उनकी कुछ रचनाए देखिए—

* मुन्नीलाल सरस्वती मार्च सन् १९०७

† मैथिलीशरण गुप्त—स्वदेश सगीत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १६

नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है
सूर्य चंद्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है।
नदियाँ प्रेम प्रवाह फूल तारे मंडन हैं।
बन्दीजन खग वृन्द शेष फन सिंहासन हैं।
मातृभूमि की धूलि में जब पूरे सन जाएँगे,
होकर भव बंधन मुक्त हम, आत्मरूप बन जाएँगे। ‡

'मेरा देश' आदि शीर्षक कविताएँ जो आरंभ में सरस्वती में प्रकाशित हुईं तथा बाद में 'मंगलघट' में संकलित कर ली गई हैं उनमें भी हम भारत की स्तुति का मंगलमय चित्र पाते हैं—

बलिहारी तेरा वर वेश, मेरे भारत ! मेरे देश !
बाहर मुकुट विभूषित भाल भीतर जटा जूट का माल,
ऊपर नभ नीचे पाताल, और बीच में तू प्रण पाल।
हरा भरा यह देश बनाकर विधि ने रवि को मुकुट दिया
पाकर प्रथम प्रकाश जगत ने इसका ही अनुसरण किया।

'मातृमंदिर' शीर्षक कविता में भी हमें जन्मभूमि के प्रति उदात्त भावना मिलती है—

भारतमाता का मंदिर यह समता का संवाद जहाँ
सबका शिव कल्याण यहाँ है पावें सभी प्रसाद यहाँ।

गुप्त जी धार्मिक व्यक्ति हैं और भारतीय संस्कृति के गौरव और विशालता में उन्हें पूर्ण आस्था है। वे भारत को केवल अपनी मातृभूमि के कारण ही महत्व नहीं देते वरन् इसलिए भी कि वह उनके इष्ट हरि की भी लीला भूमि रही है। अपनी 'मातृभूमि' कविता में वे कहते हैं —

जय जय भारत भूमि भवानी !
अमरों ने भी तेरी महिमा बारबार बखानी
तेरा चंद्र वदन वर विकसित शांति सुधा बरसाता है
मलयानिल निश्वास निराला नवजीवन सरसाता है
हृदय हरा कर देता है यह अंचल तेरा धानी
जय जय भारत भूमि भवानी। †

'भारतवर्ष' शीर्षक कविता में हम भारत की वंदना का चित्र पाते हैं—

---

‡ मैथिलीशरण गुप्त—मंगलघट (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ६, २६, २६२
† मैथिलीशरण गुप्त—मंगलघट (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ३३

हरा भरा यह देश बना कर विधि ने रवि का मुकुट दिया,
पाकर प्रथम प्रकाश जगत ने इसका ही अनुसरण किया,
लेखा श्रेष्ठ इसे शिष्टोंने, दुष्टो ने देखा दुदष,
हरि का क्रीडा क्षेत्र हमारा भूमि भाग्य सा भारतवर्ष । §

'भारत की जय' शीर्षक कविता म गुप्त जी ने भारत के पुन महान एव गौरवशाली होने की कामना की है—

न हमको कोई भी भय हो दयामय भारत की जय हो ।
अलसता पर तन की जय हो चपलता पर मन की जय हो
कृपणता पर धन की जय हो मरण पर जीवन की जय हो
पवित्रात्मा का प्रलय हो, दयामय भारत की जय हो ।

रामचरित उपाध्याय ने रसखान की भाति इसी देश मे पुनजम लेने की कामना की है। स्वग मे नरक शीर्षक कविता म उनके देश प्रेम का सुदर चित्रण हुआ है—

करे यदि ईश फिर भी जम मेरा, बना सेवक रहू मैं हिंद तेरा
करें वह पशु मनुज या कीट, मुझको पडे पर छोडना पलभर न तुझको
चाहे मरुभूमि हो या उवग हो, स्वजती किन्तु भारत की धरा हो । ‡

उपाध्याय जी की 'भव्य भारत कविता म भी हम भारत वदना का स्वर पाते हैं—

जय जय भारत पुण्य विधान
इस त्रिभुवन से अय देश क्या तेरे सम पावेगा मान ।
स्वग लोक से आकर गगा तेरे पद धोती है
तेरा पूजन करने ही से वह भी पूजित होती है । †

मुकुटधर पाडेय ने भी अपने विद्यार्थी जीवन मे देशप्रेम तथा प्रकृति प्रेम सम्बधी रचनाए लिखी । सरल भाषा म स्वदश के प्रति उदगार प्रकट किए है—

देश हमारा है हमे प्यारा अतिशय भ्रात ।
बढकर के हम हैं यहा हुए सभी एक सात ।।

---

§ मथिलीशरण गुप्त—स्वदेश सगीत पष्ठ ११
‡ रामचरित उपाध्याय—कविता-सरस्वती, अगस्त सन १६१८
† सरस्वती जून १६२०

पुण्य हम है यही मुक्ति का है यह द्वारा।
हम स्वर्ग से भी बढ़कर है यह देश हमारा ॥ §

रूपनारायण जी पांडेय की 'जन्मभूमि जननी' कविता में हम मातृ वन्दना का चित्रण मिलता है—

ज्योतिमयी जगत की शोभा, नेत्र विदग्ध मनुज मन लोभा
गुण गरिमा महिमा मणि धारिणी अमन्दाम गुन धन धनी।
जय जय जन्मभूमि जननी। *

जय विद्या वर बुद्धि निधान जन्म भूमि गुण गौरव खान
शांति सौम्य का धाम ध्यान जय जय पावन हिन्दुस्तान। §§

रामनरेश जी त्रिपाठी ने भी देशप्रेम की भावना को लेकर बहुत सी स्फुट कविताएं एवं खंड काव्य रचे हैं जिनमें प्रकृति चित्रण देश परिचय तथा देश वन्दना की भावना मिलती है। वन्देमातरम कविता में मातृभूमि को मंगलकारिणी माना गया है—

आदि मम मात भारत धरणि।
मंगल करणि संकट हरणि।
मात जीवन पुष्प यह मम है समर्पित चरण तव
वीर जननि प्रसन्न हो तुम, सदय भुवन भरणि
मंगल करणि संकट हरणि। ‡

जन्म भूमि भारत में पुण्य भूमि भारत की संतान होने का गौरव कवि अनुभव करता है—

जिस पर गिर कर उदर दरी से जन्म लिया था
जिसका खाकर अन्न सुधासम नीर पिया था
वह पुण्यभूमि भारत यहां हम इसकी संतान हैं
कर इसकी सेवा हृदय से पा सकते सम्मान हैं। †

---

§ मुरलीधर मुकुन्दधर पांडेय - पूजा फूल (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १२७
* जातीय कविता - (काव्य संग्रह) १६२१ पृष्ठ ८१
§§ रूपनारायण पाडेय-पद्य पुष्पांजलि (प्रथम) १६१२ पृष्ठ ७
‡ जातीय कविता—नारायण दत्त सहगल (काव्य संग्रह) प्रथम संस्करण पृ १३१
† रामनरेश त्रिपाठी—'जन्मभूमि भारत'—सरस्वती जनवरी १६१४

श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी तथा प० मातादीन शुक्ल ने अतीत के गौरवपूर्ण स्मरण के साथ भारत वंदना की है—

> सब मिली भारत के गुन गावो
> पुण्य भूमि यह सुन्दर पावन मा को सीस नवाओ
> नए यहा औतार अनेकन सबको यह समझाओ
> सब देसन को गुरु यही है यह विश्वास जमाओ । §
> जय जय स्वदेश जय जय स्वदेश
> तू अनुपम शोभाशाली है प्राकृत सुषमा का माली है ।
> तू कर्मभूमि शूरो की तू स्वर्ग भूमि हूरो की,
> तू धर्मभूमि वीरो की, रत्नभूमि हीरा की । *

कवि मयक तथा शिवनारायण द्विवेदी ने भी इस युग की धारा के अनुरूप ही मातृभूमि प्रेम तथा भारत महिमा के गीत गाए हैं—

> मेरा भारत मेरा स्वर्ग
> जीवन का उपसर्ग विसर्ग ।
> प्रकृति नटी की लीला पटु नट सुन्दर सर्ग विशेष
> गौरव गरिमा का आगार-स्वाभिमान का कर्णधार,
> स्वतंत्रता का क्रीडागार बना प्रेम पक में सदैव रहा । †
> मातृभूमि भारत देश प्राण सम प्यारे
> नित्य प्रति आनद स्रोत सुषमा आनद स्रोत
> अविकल धुनि सहस होन देश हे हमारे ! §

श्री भगवन्नारायण भार्गव बी ए ने भी हिंदवंदना तथा राष्ट्र प्रेम सबंधी रचनाए लिखी जिनका सकलन 'राष्ट्रीय तरग' पुस्तक मे हुआ । उनकी रचना मे ब्रजभाषा की सुमधुर पदावली का प्रयोग है ।

> त्रिभुवनन की है श्रेष्ठ भूमि ! तुम किय वसुधा पावन,
> बारि २ अभिवादन तो को अम्बे ! नेह दृढावन ।

---

§ प० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी—राष्ट्रीय गीत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १०
* जय स्वदेश (कविता) चित्रमय जगत मासिक अक्टूबर १८१८
† भारत (कविता) मर्यादा भाग ३२१ नवम्बर १६११
§ मातृगान (कविता) — वही मई १६१३

जय जय भारत तेज रवि जय जग देस प्रधान,
जयति विमल मगल भवन मरयाा सुचि स्थान । †

प० गयाप्रसाद शुक्ल सनेही हिन्दी के बडे ही भावुक और सरल हृदय के कवि हैं जिनमे देशप्रेम की भावना के उद्‌गार ही अधिकतर मिलते हैं। इन्होंने पुरानी और नई दोनो शली की कविताए लिखीं। इनकी बहुत सी कविताए 'त्रिशूल' उपनाम से भी मिलती हैं। भारतवष की स्तुति और वदना सबधी बहुत सी रचनाओ का सजन इन्होने किया--

सुर सरित सलिल सुधा से सिंचित
मजुल मलय समीर सचरित,
सुषमा सव सुरपुर की सचित करतें सुर गुणगान,
जयति भारत जय हिदुस्तान । †
जय जय भारत राष्ट परम प्रिय प्राण हमारे
समव विभव विभूति जयति जय प्राण हमारे ।
जय रस रूप स्पश शद जय घ्राण हमारे
तूने जाग्रत किये भाव म्रियमाण हमारे।

अपने गौरवपूण अतीत का स्मरण भी कवि को बार बार हाता है -

जगत गुरु जगन्मुक्ति दातार झुकाता था शिर सब ससार
सभ्यता के आकर आधार, किया सम सबको हमने प्यार।
बढाया अमरो मे सम्मान किया जो मनुज जाति उत्थान,
वही हम हैं भारत सतान वही हम है भारत सतान । §

प० बद्रीनाथ भट्ट ने मातृभूमि वदना की तथा भोज और विक्रमादित्य जयमल आदि के शौय का वर्णन किया—

हे मातृभूमि सब सुखागार तुझको प्रणाम है बार बार
वे भोज और विक्रमादित्य जिनके थे अद्‌भुत सभी कृत्य
वे जयमल पथ्वीराज वीर जो थे अविचल और समरधीर
हे मातृभूमि तव अग्र भुक्त है तेरे ऋण से सभी युक्त । *

---

* श्री भगवन्नारायण भागव बी ए -राष्ट्रीय तरग (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ३७
† त्रिशूल--राष्ट्रीय मत्र (प्रथम) पष्ठ ३
§ सनेही—त्रिशूल तरग (प्रथम सस्करण) पष्ठ २६
* श्री बद्रीनाथ भट्ट--मातृभूमि (कविता) मर्यादा माघ १९४१

प० सत्यनारायण कविरत्न ने सरस और मधुर शैली म कुछ सामाजिक रचनाए की जिनकी विषय, देशप्रेम, नेताओ की प्रशस्तिया, लोकहितकर आयोजनो के लिए अपील आदि है। उनकी एक कविता म 'प्यारे हिन्दुस्तान' के सबध मे कुछ भाव मिलते हैं—

हमारा प्यारा हिदुस्तान, नयन का तारा हिदुस्तान।
वो ही रस घनश्याम को, स्वाती बूद रस ऐन
चाहे उसको ही विकल हम पपिया दिन रैन,
चन वस देवे उसका गान।
वो ही रस का सार है निरमल नित्य नवीन
प्रकति मधुर सुदर सरल, हम हैं उसकी मीन
दीन का वह जीवन धन प्रान। †

श्री गोपालशरणसिंह ने विद्यार्थियो को सबोधित करते हुए तथा मातृभूमि की महिमा सम्बन्धी कुछ सरस रचनाए की। उनकी मातभूमि शीषक कविता देखिए—

सुरा का यथा स्वग की भूमि प्यारी,
हम तू यथा सवथा सौख्यकारी।
सुधा नित्य पीते सभी स्वगवासी,
पियें प्रेम पीयूष तेरे निवासी। §

प० माधव शुक्ल ने इस युग के उत्तराध से ही अनेक देश प्रेम तथा राष्ट्रीय भावना से पूर्ण कविताए लिखना प्रारभ किया जो जन मानस म बहुत ही लोकप्रिय रही। उनकी बाद की रचनाए बहुत ही क्रांतिपूर्ण और राष्ट्रप्रेम से परिपूर्ण हैं। भारत वदना सम्बन्धी इनकी कविता बडी मधुर और प्रभावोत्पादक एव आकषक है—

जयति जयति जन्मभूमि जगहु ते प्यारी
तव सन्मुख तुच्छ अखिल सम्पत्ति जग सारी।
जग विच स्वा हमारा देश,
भारत अस शुभ नाम लेत छन उपजत प्रेम विशेष।
ताप जन्मभूमि शोभा लखि रहत न दुख लवलेश। *

---

† श्री सत्यनारायण कविरत्न—हृदय तरग (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ४१
§ जातीय कविता (काव्य सग्रह)—नारायणदत्त सहगल (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १०
* श्री माधव शुक्ल—भारत गीतांजलि (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २३

यह देश वीर आर्यों की भूमि रही है जहाँ ऋषिगण स्वच्छ गान करते हैं-इस देश की वंदना करते हुए कवि कहता है—

> बैठे ऋषिगन स्वतन्त्र गान करत वेद मन्त्र,
> यज्ञ धूम जहँ से उठि सब दिसा स्वच्छ करत।
> जयति भारती वसुंधरे,
> आर्य सुपूजित चरणे शरणे ! भरण गुणागार । §

प्रकृति प्रेम भारतेन्दु युग में ऐसी रचनाएं बहुत कम देखने में आती हैं जिसमें प्रकृति को प्यार भरी दृष्टि देकर कवि ने अपने हृदय से प्रेरणा प्राप्त की हो। उस युग की अधिकांश रचनाएं नीरस हैं तथा उनमें वह सजीवता नहीं जिसमें कवि का वास्तविक प्रेम प्रकट होता हो। ऐसा प्रतीत होता है कि कवियों ने प्रकृति प्रेम का रस पान करने की तृप्ति नहीं पाई और न ही वह उसके सौन्दर्य पर मुग्ध ही हुए। केवल अलंकारों की छटा और परम्परागत वर्णनों का बाहुल्य ही प्रकृति वर्णन के नाम पर होता रहा है।

द्विवेदीयुग में इस क्षेत्र में अधिक उन्नति हुई तथा प्रकृति एवं उसके विभिन्न अंगों पर बड़ी सुन्दर रचनाएं हुईं। इस समय सर्व प्रथम स्वतंत्र रीति से प्रकृति चित्रण प्रारम्भ हुआ। श्रीधर पाठक ने भारतेन्दु युग के उत्तरार्ध से ही राष्ट्रीय तथा प्रकृति प्रेम की सरस रचना लिखना प्रारम्भ कर दी थी—हिमालय, काश्मीर आदि की शोभा का अपूर्व वर्णन बड़ा सजीव और रमणीय है जिसके सम्बन्ध में पिछले अध्याय में लिखा जा चुका है। पाठक जी ने देहरादून के पास के जंगल का चित्रण इस प्रकार किया है—

> अगम घोर घन बनवा जंगल जार
> गहवर गल कठिनवा कुवट कुढ़ार,
> भिरन जहा तरवरवा निरवा बाँस
> भरत बतास अधिकवा दीरघ साँस। *

श्रीधर पाठक ने प्रकृति का संवेदनात्मक तथा चित्रात्मक आदि सभी प्रकार का वर्णन किया जिनके अधिक उद्धरणों की आवश्यकता नहीं है।

पं महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने समकालीन कवियों को शृंगारपरक कविताओं से विरक्त किया तथा प्रकृति के विशाल और उन्मुक्त वैभव के चित्र प्रस्तुत करने की प्रेरणा प्रदान की। द्विवेदी जी ने राधा-कृष्ण के शृंगारी रूप को भी

---

§ श्री माधव शुक्ल—जाग्रत भारत (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १

* श्रीधर पाठक—देहरादून-पृष्ठ २२

नतिक धरातल पर लाकर वणन किया। अलकार तथा उद्दीपन रूप म भी प्रकृति के उपयोग का इनके काव्य म अभाव हो गया। इनकी काय रचना में हमे आलम्बन मे और देश के अग रूप मे प्रकृति के दशन होते हैं। प्रकृति का यथा तथ्य चित्रण किया गया है तथा कवि ने केवल परम्परानुसार ही प्रकृति के विभिन रूपा का वणन नही किया वरन् स्वय उनका निरीक्षण किया। अतएव हम यह स्पष्टत कह सकते हैं कि ऐसा प्रकृति वणन देश काल के दोष से सर्वथा मुक्त रहता है। वसत ऋतु का वर्णन दखिए —

नव वसन्त बहार भइ जब सब कली वन की विकसी तब,
सुखद शीतल मद सुहावना, विमल वायु मजु भावनी।
चित्त बौरन के रस तें पगी पिक कुहू कुहू बोलन है लगी।
खिल रहे सुषमा सरसा रही, महकमोहक मजु उडावही। §

द्विवदी जी की अधिकाश रचनाए शुद्ध वर्णनात्मक शैली म लिखी हुई हैं जिनमे से प्रकृति का वर्णन अपना अन्तर्भावना से अतिरजन किए बिना ही करते चले जाते हैं। देश प्रेम की भावना से प्रेरित होकर द्विवेदी जी ने भी देश के अग हिमालय काश्मीर आदि का वणन नहीं किया वरन् मातृभूमि का साथक रूप से विवेचन किया है—उन्हें अपनी जन्मभूमि अत्यत प्रिय है।

समयानुसार जल-वृष्टि न होन के कारण त्रस्त जन समूह और प्रकृति का इतिवृत्तात्मक वर्णन किया। मध को उपालम्भ दने हुए उन्होने कहा

चारा नही चरहि काह पशु बिचारे,
सूखोहु घास मिलती नहा खाजि हार।
जो लोग कष्ट लखि तोहि दया न आवे,
तो काह मूक पशु दुखहु ना दुखावे। *

द्विवेदी जी के प्रकृति प्रेम म भी हम स्वदेश प्रेम का धारा बहत हुए देखते हैं। द्विवेदी जी न अपने अथक प्रयत्न और माग निर्देश स सौंदय प्रियता की भावना को नारी के रूप से हटाकर प्रकृति की ओर लगाने का प्रयत्न किया जो बाद म अधिक विकसित हुई।

प अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' न जन-कल्याण की भावना को लेकर प्रकृति का आलम्बन, उद्दीपन अलकार तथा अय रूपो म चित्रण किया और उसके

§ द्विवेदी काव्यमाला—पृष्ठ ३५९

* द्विवेदी काव्यमाला—पृष्ठ २५८

साथ रागात्मक सबध स्थापित किया । प्रकृति ने हरिऔध जी को नई रूप से प्रभावित किया अत प्रकृति मे उपदेश, सहानुभूति सवेदना, अनुराग, माहृत्य आदि भावो का दर्शन मिलता है । प्रकृति के कोमल, मधुर और विराट व भयकर दोना स्वरूपो का चित्रण कवि ने किया है । गीता के आश्रम का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है -

प्रकृति का नीलाम्बर उतरे, श्वेत साडी उसने पाई ।
हटा घन घू घट शरदाभा, विहसती महि म थी आई ॥
पादपो के श्यामल दल ने प्रभा पारद सी पाई थी ।
दिव्य हो हो नवला लतिका, विभा सुरपुर स लाई थी । †

ग्रीष्म म दावानल से जलते हुए वन का चित्र भी खीचा है—

निदाघ का काल महादुरत था, भयावनी थी रवि रश्मि हो गई ।
तवा सम थी तपती वसुधरा, स्फुलिग वर्षारत तप्त व्योम था । *

मानव व्यापारो की पष्ठभूमि के रूप म भी इन्होंने प्रकृति का उपयोग किया है । प्रकृति के भीषण रूप द्वारा कवि का उद्देश्य कृष्ण की मम वीरता को प्रकट करना है—

प्रकृति की कुदिना को अवलोक के,
प्रथम से व्रज भूपति व्यग्र थ ।
पहुचत वह थे शरवेग स, विपत सकुल ठौर समस्त म ।

सावन का वर्णन बडा सरस और आकर्षक है—

सरस सुन्दर सावन मास था घन रहे नभ म घिर घूमते ।
विलसती बहुधा जिनम रही छविवती उडती बक मालिका । ‡

'हरिऔध' ने जड प्रकृति को भी मानव के दुख से ग्रस्त और दयार्द्र होते हुए दिखाया है । कृष्ण के मथुरागमन के समय प्रकृति निश्चल, नीरव व शात हो जाती है । वृक्ष का एक पत्ता भी नही हिलता । § एक स्थान पर कवि न बताया है कि मानव की भाति प्रकृति सुन्दरी भी समयानुसार वस्त्राभूषण के प्रयोग म परिवतन करती रहती है—

प्रकृति वधू ने असित वसन बदला सित पहना
तन से दिया उतार तारकावलि का गहना ।

---

† प अयोध्यासिह उपाध्याय-व देही वनवास दशम सग
* वही पष्ठ १०
‡ प अयोध्यासिह उपाध्याय—प्रिय प्रवास सग १२
§ डा किरणकुमारी गुप्ता—हिन्दी काव्य म प्रकृति चित्रण, पष्ठ ३३२

उसका नव अनुराग नील नभ तल पर छाया,
हुई रागमय दिशा, निशा ने बदन छिपाया। **

अपने राष्ट्र प्रेम का भावना मे वह भारत की अधोगति से समस्त प्रकृति को व्यग्र देखते हैं तथा मानव अनुभूति के दर्शन करते हैं।

प्रकृति कवि को नियमितता व लोकहित का पाठ भी पढाती है--

तुम्हारे तरल अग में लग, केलिरत हो छवि पाती है।
लोकहित से लालायित हो, ललित लहरें लहराती हैं। *
तर ऋतु आकर जा होता है ताप विधाता।
तो लाकर घन बनता है जग जीवन दाता। §

इस प्रकार हरिऔध जी ने प्रकृति का प्राय सभी रूपा म देखा है प्रकृति वर्णन उनके काव्य का एक प्रधान अग है और विशेषत प्रियप्रवास के प्राण प्रकृति वर्णन मे ही निवसित हैं। यद्यपि कहीं कहा उसम कुछ नवीनता नही दिखाई देती है तो भी इस युग के प्रकृति प्रेमी कवियो म हरिऔध जी का स्थान अवश्य महत्वपूर्ण है।

द्विवेदी युग के निबधकारा तथा समालोचको म आचाय शुक्ल जी का स्थान अद्वितीय है। निबधकार के साथ शुक्ल जी सरस कवि हृदय थे और प्रकृति के प्रति उत्कट प्रेम और श्रद्धा प्रकट की। शुक्ल जी प्रकृति के नैसर्गिक रूप के उपासक रह तथा इनके प्रकति चित्रण मे वन्य दृश्य एव ग्राम्य वातावरण के अधिकतर दर्शन पाते हैं--

लद कलियान औ फूलन सो कचनार रहे कछु डार नवाय।
भरो जह नीर धरा रस भीजिके दीनी है दूब की गाट चढाय।
डोलत है बहु भृ ग, पतग सरीसप मगल मोद मनाय।
भागत धाइन सौ कढि तीतर पास कहू कछु आहट पाय। †

[स]त म केवल कचनार के पुष्प भार से नमित शाखाओं शुक-क्रीडाओ और के कलनाद पर ही मुग्ध नही हुए हैं वरन--

---

हरिऔध--पारिजात पष्ठ ७४
वही पष्ठ १०८
[ह]रिऔध--प्रियप्रवास-सग १४
[प] रामचद्र शुक्ल--बुद्धचरित पष्ठ १८

सूखती तलया के चारा ओर चिपकी हुई
लाल काइया की भूमि पार परत।
गहरे पडे गोपद के चिन्हा स अंकित जो।
श्वेत बक जहाँ हरी दूब म विचरत। *

प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करते हुए कवि ने धरित्री का सुन्दर चित्रण किया है—

भूरी हरी घास आस पास फूली सरसा है,
पीली पीली बिंदियो का चारा ओर प्रसार है।
कुछ दूर विरल सघन फिर और आगे
एक रग मिला चला गया पीत पारावार। *

मानव के आतरिक भावो का सादृश्य प्रकृति क व्यापार द्वारा बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव से चित्रित किया है। रग भवन म नृत्यगान के अनतर स्त्रिया सोती हैं—

सोव थकि हास औ विलास सौ पसारि पाय
जसे कलकट रस गीत गाय दिन कर।
पख बीच नाए सिर अपनो ललात तौलो,
जौ लो न प्रभात आय खोलन कहत स्वर। §

प्रकृति चित्रण मे भी इन्होंने उत्प्रेक्षा अलकार का प्रयोग किया है। भगवान बुद्ध की ज्ञानोपलब्धि के पश्चात् प्रकृति को पुष्प समूह और हरी घास से भरी देखकर कवि कहता है—

प्रभु दयान सा पुलकित पूजन करति अवनि हरषाय।
चरणन तर बहु लहलहात तृण कोमल कुसुम बिछाय।

समस्त प्रकृति बुद्ध जाग्रति का पाठ पढाती हुई प्रतीत होती है—

जगने के इस जटिल यत्न मे बीज फूटता।
उठाने के कुछ उसका अग टूटता,
खोल खेत म आख वही अखुवा कहलाता।
मिट्टी मुह म डाल फूल यगो न समाता।

---

* प रामचद्र शुक्ल—काव्य कौमुदी (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ४०५
§ प रामचद्र शुक्ल—बुद्ध चरित पृष्ठ ७७

शुक्ल जी वास्तव म प्रकृति के स्वतन्त्र और सूक्ष्म रूप के सच्चे दृष्टा हैं और प्रकृति के स्वाभाविक रूप के उपासक हैं ।

गुप्त जी इस युग के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवियो म अग्रणी हैं । उनके अधिकांश काव्य ग्रंथों म हम प्रकति का उपयाग केवल अलकार अथवा देश क अग रूप म अधिक मिलता है प्रकृति का स्वतन्त्र चित्रण कम है । पचवटी म प्रकृति के प्रति उनका प्रेम अधिक दिखाई देता है—

> चारु चद्र की चचल किरणे, खेल रही थी जल थल म ।
> शुभ्र चादनी बिछी हुई थी अवनी और अम्बर थल मे । §

आनद से कवि का मन नाच उठता है और प्रकृति की सौंदर्यानुभूति उस विकल बना दती है—

> इसी समय पौ फटी पूव म पलटा प्रकति पटी का रग ।
> किरण कटको से श्यामम्बर फटा दिवा के दमके अग ।

साकत म प्रकति का रूप और भी अधिक निखर आता है माव जगत का मानवेतर जगत स तादात्मय हा जाता है । देश के अग–रूप म भी प्रकति का इन्होने यथातथ्य चित्रण किया है, चित्रकूट का वर्णन दखिए--

> जो गौरव गिरि उच्च उदार,
> तुझ पर ऊचे ऊचे झाड, तने पत्र मय छत्र पहाड,
> क्या अपूव है तेरी आड, करत हैं बहु जीव विहार ।

प्रकृति चित्रण म कल्पना का पुट देकर उसे बहुत ही आकपक बनाया गया है—

> है बिखेर दती वसुधरा मोती सबके साने पर
> रवि बटार लेता है उनके सदा सवेरा होने पर,
> और विराम दायिनी अपना सध्या को दे जाता है
> शून्य श्याम तनु जिससे उमका नया रूप झलकाता है । ‡

गुप्त जी ने प्रकृति को मानव रूप म देखा है । शिव के पास अस्त्र प्राप्ति क लिए जाते हुए अजु न प्रकृति को माँ के रप म देखत हैं—

> आकाश म चलत हुए यो छवि दिखाद द रही
> मानो जगत को गाद लेकर मोद दती मही ।

---

§ मथिलीशरण गुप्त—पचवटी (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १
‡ मथिलीशरण गुप्त—पचवटी पृष्ठ ७

उन्नत हिमाचल से धवल यह सुरसरी सा टूटती।
मानो पयोधर से धरा के दुग्ध धारा छूटती।

गुप्त जी के काव्य म प्रकृति का सहयोग मानव की प्रसन्नता को द्विगुणित और दुख को भी अधिक तीव्र कर देना है। कृष्ण के वियोग में समस्त प्रकृति को अपनी दुख दशा श्रीहीन प्रतीत होती है —

उद्धव अब आये इस वन म सूना जब लाता है।
सुनो, वही कोकिल, अब कसा ऊ ऊ कर रोता है। †

साकेत, वकसहार, द्वापर आदि म जन्मभूमि के प्रति प्रेम और श्रद्धा प्रकट की है। राम अयोध्या से विदा होते समय वन्दना करते हैं—

जन्मभूमि ल प्रणत और प्रयान दे
हमको गौरव वग तथा निज मान दे
तेरा स्वच्छ समीर हमारे श्वास म
मानस मे जल और अनल उच्छ्वास म। *

गुप्त जी मूलत राष्ट्रीय कवि हैं। इनके काव्य म प्रकृति का अधिक महत्व नही है-प्रकृति का स्वतन्त्र अस्तित्व भी बहुत कम स्थलों म है इसी लिए आलम्बन रूप म प्रकृति वर्णन बहुत कम प्राप्त होता है। ये अधिकतर इतिवृत्तात्मक हैं या इनमे प्रकृति द्वारा नैतिक उपदेश दिए गए हैं।

श्री लोचनप्रसाद पांडेय ने हिमालय के सौदर्य तथा घुआधार जलप्रपात की शोभा का चित्रात्मक वर्णन इस प्रकार किया है—

गौर शरीर जटा मस्तक पर लखिए सोहै हैं घनश्याम
गगधार उपवीत शुभ्र अति कांधे पर राज अभिराम।
कहैं मोदयुत पथिक देखकर शिव-सम रूप विशाल
नमोस्तु ते गौरीशकर प्रभु! रक्षक हिंद कृपाल। †
रव झझर सुखकर सुभग धारा दुग्ध समान,
प्रखर प्रताप प्रवाहयुत नीर-पतन-उत्थान।
नीर-पतन-उत्थान शैल सुषमा से शोभित
उत्थित धूमाकार जहा हैं जलकण अगणित।

---

† मथिलीशरण गुप्त—द्वापर पृष्ठ १८०
* मथिलीशरण गुप्त—साकेत पृष्ठ ११६
† लोचनप्रसाद पांडेय—कविताकुसुम (चतुर्थ सस्करण) पृष्ठ ८४

- करते रविकर इन्द्रधनुष मय जिसका अवयव
धुआधार का दृश्य नमदा–ताडव भरव । *

श्री मुकुटधर पाडेय तथा मुरलीधर पाडेय की प्रकति वणन सम्बन्धी कविताए बडी प्रभावोत्पादक हैं जिनमे भारत के ग्रामो का मरल वणन तथा विभिन्न ऋतुओ का सजीव व सच्चा चित्रण हुआ है—

छोटे छोटे भवन स्वच्छ अति दृष्टि मनोहर आते हैं,
रत्न जटित प्रासादो से भी बढकर शोभा पाते है ।
हरी भरी यह फसल धान की कृपको के मन भाती है
खेतो मे आते ये देखो हिरणों के बच्चे चुपचाप । **

ग्रीष्म तथा तथा शरद ऋतु का वणन देखिए—

तप्त लूह चलने लगी गरमी पडी अपार
स्वेद बिन्दु ढलने लगे तन से बारम्बार ।
रवि मयूख के ताप से झुलस गये बन बाग ।
नही सरसो फूली कही पीत पावडे डाल
नही कही फूले सुमन नाना रग मभाल । †
अब है घन विहीन आकाश, कभी न छिपता सूय प्रकाश
सकल मही मे फूले काश, करते वर्षा अनत प्रकाश ।
छिटके मणि सम तारे निशि में विमल व्योम के चारो दिशि मे
चन्द्र चद्रिका की छवि न्यारी, जो चकोरगण को है प्यारी ।

राय देवीप्रसाद पूण ने खडी बोली तथा व्रजभाषा दोनों प्रकति वणन किया । इनकी कविताओ में प्रकति निरीक्षण का परिचय मिलता है । वर्षा के आगमन पर कवि कहता है—

हरित मनि के रग लागी भूमि मन को हरन
लसति इन्दवधून अवली छटा मानिक वरन ।
विमल बगुलन पानि मनहु बिसाल मुक्तावली ।
चन्द्रहास समान चमकति चचला त्यो भली । ※

---

* धुआधार-सरस्वती सन १९१८ (सख्या ५)
** मुरलीधर मुकुटधर पाडेय — पूजाफूल (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २८
† ग्रीष्म–स्वदेश बाधव, मई सितम्बर १९१०
※ कविता कुसुम माला (काव्य सग्रह) चतुथ सस्करण पृष्ठ १३४

अमलताश प्रचंड गर्मी तथा जल के अभाव में भी खिला और फूलता रहता है—

> देख तब समय द्रुमकुल-ग्रस्त । विचारा उसका गुण निशान ।
> पर जो विषय काल को मन गया उस सामग्री पर ध्यान ।

हिमालय को त्रिपाठी कवि इस प्रकार चीन्हता है—

> है उत्तर में मोद चाल सम तुग विशाल
> विमल सघन हिम चलित ललित घवनित सब काल ।'

रूप नारायण पांडेय ने वर्षा की बहार का वर्णन करते हुए प्रकृति का चित्रण किया है—

> घिर आई घन घटा घटा कर घारे घाम को
> चली और ही हवा, न गर्मी रही नाम को ।
> पड़ने लगी फुहार, हुआ अभिषेक भूमि का
> नव अभिनय की हुई अहो अभिनीत भूमिका । *

त्रिपाठी जी ने देश प्रेम तथा प्रकृति प्रेम को अपने काव्य का प्रधान अंग बनाया । इनका प्रकृति वर्णन कहीं शुद्ध तथा यथातथ्य है कहीं देश के अंग रूप में है और कहीं कहीं बाद के छायावादी कवियों की भांति नारी भावना से पूर्ण है। प्रत्येक प्राकृतिक वस्तु और चित्र का यथातथ्य वर्णन करते हुए पथिक कहता है—

> कहीं श्याम चट्टान कहीं दर्पण सा उज्वल सर है
> कहीं हरे तृण खेत कहीं गिरि स्रोत प्रवाह प्रखर है ।
> कहीं गगन के खंभ नारियल तार भार सिर धारे ।
> रस रसिकों के लिए खड़े ज्यों सुरत नरार न्यारे ।§
> प्रतिक्षण नूतन वेश बनाकर रंग बिरंग निराला,
> रवि के सम्मुख थिरक रही है नभ में वारिदमाला
> नीचे नील समुद्र मनोहर ऊपर नील गगन है
> घन पर बैठि बीच में विचरूं यही चाहता मन है ।

प्रात काल का सुन्दर चित्रण भी मनोहर है—

> गगन नीलिमा में हीरों का तेजपुंज अभिराम ।
> एक पुष्प आलोकित करता था जल थल, नभ धाम ।

---

* कविता कुसुम माला (काव्य संग्रह) चतुर्थ संस्करण पृष्ठ १३५

§ पं रामनरेश त्रिपाठी—पथिक पृष्ठ ३३

वरछी सी उनकी किरणो से, खाकर गहरी चोट।
अधकार हा श्रीण छिपा था तरु पत्तों की ओट। *

त्रिपाठी जी प्रकृति के सरस और सुदर रूप के उपासक हैं, उनके काव्य मे प्रकृति का मधुर मजुल रूप ही प्रकट होता है—उग्र रूप के कही कहीं चित्र मिलते है—

क्षण म उमड घुमड गजन कर घिर जाए घनघोर,
बहा विषम विक्षिप्त प्रभजन, वृक्षो को झकझोर।
होने लगी वृष्टि रिमझिम-कर अविरत मूसलधार।
आदोलित लहरें तरणी पर करने लगी प्रहार।

प्रकृति उन्हे कभी भ्रमात्मक ससार का दिग्दशन कराती-कभी उपदेश देती तथा उत्साह का सचार करती है—

रवि जग म शोभा सरसाता, सोम सुधा बरसाता
सब हैं लगे कम म कोई निष्क्रिय दृष्टि न आता,
जीवन भर आतप सह वसुधा पर छाया करता है
तुच्छ पत्र की भी स्वकम मे ऐसी तत्परता।
आते हैं विघ्नो के झोके बार बार प्रचड।
गिरते हैं तरु पर रहता है गिरिवर अटल अखड।

प रामनरेश त्रिपाठी ने लोक सेवा व लोक कल्याण को सामने रखा तथा नवयुवको के परिश्रम द्वारा भारत के भविष्य को उज्वल करना चाहा। मातभूमि के प्रति इनके भाव अत्यत उदार और सेवाभाव पूण हैं—

वन्य सखाओ स बढकर क्या
है जग जन का प्यार ? *

यह प्रिय कुटी छोडनी होगी अति सुखदायक गोद
यह तरु लता और पशु पक्षी वन के विविध विनोद।

इस युग के अय कवियो की भांति कवि गुरु भक्तसिंह ने भी देश प्रेम और मातभूमि के भावो से पूण कविता लिखी है—

मातभूमि है तरी यह झाकी कभी न मुझको भूलगी।
तरे इस गुलाब की लाली आखो म नित फूलगी। §

---

* प रामनरेश त्रिपाठी—मिलन, पष्ठ २५
* वही पष्ठ १६
§ गुरु भक्तसिंह—नूरजहाँ, पृष्ठ ६

विकट रेगिस्तान का भी स्वाभाविक वर्णन किया गया है—

विकट है सूखा रेगिस्तान, वनस्पति का है नही निशान।
नाचती हैं किरणें भू पर आग जलती नीचे ऊपर।

प्रकृति गुरु भक्तसिंह के काव्य का प्रमुख अंग रही है प्रकृति को मानव रूप प्रदान किया जाता है तथा उससे तादात्मय की भावना दिखाई देती है। भक्त जी ने द्रौपदी चीर हरण के अवसर पर सूर्यास्त का सुन्दर चित्र खीचा है—

गहन विपिन म भूली भूली आई सरिता के तीर,
सहस्र करो से खीच रहा है दिन नायक जिनका वर चीर।
वे पानी होने के भय से 'कृष्ण कृष्ण' चिल्लाती है
मीन व्याज तड़पी जाती है लहर व्याज बल खाती है।

शीतकाल का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

भूमडल ने चक्कर खाया, ऋतु बदली जाडा आया
अग्निकोण से उगे दिवाकर तिरछी हुई विकत-छाया
विष को ठडा करने वाले हिम की ऊपर देख समाधि
नाग भाग पाताल सिधारे श्वास चढ़ाकर लगा समाधि।

निशा का वर्णन कितना सजीव बन पड़ा है—

दिशा फूली है निशा के आगमन से
लगे हैं झाँकने उडगन गगन म
मलय ने आ कली को गुदगुदाया
लिपट कर खूब जूही को हसाया।
कमल भी सो रहा है मुह छिपाये
विटप लतिका है सोती सर झुकाये। *

गुरु भक्त जी की कल्पना प्रकृति का साकार रूप प्रदान करती है। 'प्रकृति को मानव रूप प्रदान कर उसे अत्यत मधुर और आकर्षक बना दिया है। इस युग के (मध्यकाल) के काव्यकारो म इन्होने प्रकृति को सबसे अधिक चतन्य और सजीव चित्रित किया है। §

श्री श्यामनारायण पाण्डे ने भी प्रकृति वर्णन का प्रयास किया है किन्तु उनके काव्य म राष्ट्रीय प्रेम की भावना प्रधान है। हल्दीघाटी म पशु प्रकृति का वर्णन है—

---

* श्री गुरु भक्तसिंह—नूरजहाँ पृष्ठ ३६

§ डा किरणकुमारी गुप्त—हिन्दी काव्य म प्रकृति चित्रण-पृष्ठ ३६७

अधखिले नयन हरिणी के मृदुकाय हरिण खुजलात ।
झाडी म उलझ उलझ कर बारहसिंघे झुकझलात ।
बन धेनु दूध पीते थे लेरु दुम हिला हिलाकर ।
मा उनको चाट रही थी तन से तन मिला मिलाकर ।
झरना का पानी लेकर गज छिटक रहे मतवारे । *

विदेशी शासन की निन्दा भारतेन्दु युग के कवियो मे राजनतिक चेतना आरंभिक रूप मे थी । उन्हें विश्वास था कि विक्टोरिया की घोषणा से कुछ राजनीतिक सुविधाए प्राप्त होगी तथा आर्थिक दुरवस्था भी दूर हो जाएगी । इसी कारण से कविगण विक्टोरिया की जयन्ति से लेकर वायसराय ड्यूक और गवनरों के आगमन आदि अनेक अवसरो पर कविताए लिखकर अपनी राजभक्ति प्रदर्शित करते रहे । इस प्रकार की प्रशसात्मक रचनाओ म देश की हीन दशा की ओर भी शासको का ध्यान आकर्षित कराया जाता था तथा उनसे इसम सुधार करने की प्राथना भी की जाती थी । किन्तु उसका कुछ लाभ नहा हुआ, भारतेन्दु युग की उत्तराध की कविताओं मे कवियो मे ब्रिटिश शासन के प्रति असतोष की लहर उठन लगी थी । यह असतोष प्रातीय स्तर से बढकर समस्त राष्ट्र तक तीव्रतर रूप ग्रहण करता गया ।

द्विवेदी युग मे यह असतोष देशभक्ति म परिवर्तित होने लगा । काग्रेस की स्थापना के पश्चात देश की जनता के समक्ष एक रूपरेखा रखी गई जिसे लक्ष्य करके स्वतन्त्रता प्राप्ति का प्रयत्न होना प्रारभ होने लगा । अब विदेशी शासन से प्राथना कर दया की आशा के स्थान पर खुलकर विरोध तथा असहयाग की भावना बढने लगी । देशभक्ति की रचनाओ का क्षेत्र भी अब पिछले युग से विस्तृत हो गया तथा कवि जन मत का अधिक प्रतिनिधित्व करने लगे । इसलिए द्विवेदी युग के कवियो ने ब्रिटिश शासन की स्तुति या प्रशसा मे स्पष्ट रूप से अपने उद्‌गार प्रकट नही किए । उसके विरोध व निंदा में ही अधिकाश रचनाए मिलती हैं ।

श्री गिरिधर शर्मा ने 'कलकी का एड्रेस शीर्षक कविता मे परोक्ष रूप से पाश्चात्य ज्ञान व ब्रिटिश शासन की निंदा की—

रे दोषाकर ! पश्चिम बुद्धि कसे होगी मेरी शुद्धि ।
द्विज गण को कौने बठाया, जड दिवान्ध को पास बुलाया ।

* श्यामनारायण पाण्डेय—हल्दी घाटी पृष्ठ ११३

रवि ने तुमको दिया उजाला, करता का प्रिय सुमन विकास
मिलते हुए सुमन के गुच्छ तेरी आंखों गये न तुच्छ।
अब तक हुए नही दो चार तेरे घोर अत्याचार
भंग भंग तू करता है पातक से न जरा तू डरता है। *

अर्थात रे रात को करने वाले चन्द्रमा (दाता के आदर) तेरी शुद्धि किस भांति होगी। रात्रि हो जाने पर द्विज गणों का—पक्षी समूह (विद्वान पुरुषों) को तूने अलग बिठा दिया है तथा मूर्ख पिशाच (उल्लू) को अपने पास बुलाया है। पूर्व दिशा के सूर्य ने (भारतवर्ष) तुझे सुमनो को खिलाने के लिए प्रकाश दिया किन्तु खिले हुए पुष्पों के गुच्छे तेरी आंखों को अच्छे नही लगे और उन्हें तूने तुच्छ ही जाना। अब तूने बहुत से अत्याचार और जुल्म किए हैं। तूने देश के टुकड़े (बंग भंग) किए तथा तू पापों से भी नही डरता।

श्री रामचरित उपाध्याय ने तिरस्कार शीर्षक कविता में विदेशी शासकों के अत्याचारों और एक दूसरे को लड़ाने की नीति की भर्त्सना की है—

अरे अदय भाई चारे का तुमम कुछ भी नाम नहीं
सत्य बोलना कपट न करना दुष्ट ! तुम्हारा काम क्या।
सरल जनों को दम दे तुमको खूब लड़ाना आता है
कृत्रिम सभ्यता धर बगलो में तुमको रहना आता है।
आख निहत्थों को दिखलाकर बरबस बनते शूर रहो
हमसे तुमसे क्या नाता दूर रहो बस दूर रहो। †

श्री मुन्नीलाल जी ने विदेशी शासकों की लूट की नीति को भारत की गरीबी का कारण बताया—

जब से आये यहां विदेशी भाई आए लूट खसोट मचाई।
तब से भारत हुआ भिखारी, लुप्त हो गई सम्पत्ति सारी। §

इस युग के कुछ कवि ऐसे भी थे जो अभी भी सम्राट से प्रार्थना करके स्वराज्य लेने की आशा रखे हुए थे। श्री अम्बिकाप्रसाद जी ने भी हम स्वराज्य दीजिये'—कविता में विदेशी शासकों से इस प्रकार कहा है—

---

* कलकी का एड्रेस—श्री गिरिधर शर्मा सरस्वती दिसंबर १९०५
† तिरस्कार—प० रामचरित उपाध्याय—शारदा मई १९२१
§ जातीय कविता—पृष्ठ ११९

उदार जाति आपकी सिखा चुकी उदारता,
स्वतन्त्रता न दी अजौ यही बडी विचित्रता।
हठात आय जाति ने बडा सुयोग पा लिया,
विपत्ति दख आप प स्वजात माल दे दिया।
समस्त हिंद दख लो स्वरक्त है बहा रहा।
विनीत प्रायना यही नृपन्द्र ! मान लीजिए
स्वराज्य योग्य हो चुक, 'हम स्वराज्य दीजिए। *

श्री 'वीरात्मा ने अन्यायी खूखारी विदेशी शासन को ललकारते हुए उसे समाप्त कर देने का सकल्प लेते हुए कहा—

मत रोको मतवाला से अब एक बार भिड जाने दो
भारतीय खू का भी उनको चस्का आज चखाने दो।
रहे न अरमा दिल के दिल म जी की जलन बुझाने दो
अन्यायी खूखारी शासन, जग से अब उठ जाने दो। †

माधव शुक्ल ने बडे स्पष्ट स्वर म विदेशी शासको के अन्याय व अत्याचारो को सामने रखा और निंदा की। उनम विद्रोह तथा क्रांति का स्वर तीव्र होता हुआ दिखाई देता है—

पजाबी महिलाओ की इज्जत दुष्टो ने खाक की
जलियावाला बाग मे मेरे बच्चा का सिर चाक किया
उनका अन्याय देखकर सूरज चदा भी शर्मिदा है
उदाहरण जिसका कि दुष्ट डायर अब तक भी जिंदा है। †

कवि ने भारत को स्वाधीन करने को ठान ली और हर प्रकार के जुल्म व अत्याचारो को सहने की तयारी कर ली। उसने भविष्यवाणी की कि या तो भारत मे स्वतत्रता लहराएगी या यह श्मशान भूमि होगी —

या स्वतन्त्रता लहराएगी या तो होगा हिन्द मसान,
तैंतीस कोटि लाश पर शासन तब करना सुख से मतिमान।

---

* राष्ट्रीय तरग (काव्य सग्रह) पृष्ठ ६

† स्वदेशमाता–सरस्वती माघ १६०८

† श्री माधव शुक्ल जाग्रत भारत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १०
(यह कविता पहले लिखी गई किन्तु सन १६२२ म प्रकाशित हुई)

धँस न जाय धरती म लदा गा आवाग यही ।
पर ऊपर वा रहो देगत फट न पडे आवारा यही ।

श्री रामचरित्र उपाध्याय ने 'कृपोरशक' शीपक कविता म परोक्ष रूप से अग्रेजी शासकों की निदा सबधी उदगार प्रकट किए इसम व्यग्य है—

श्वेत वण है अग हमारा अलग सभी से ढग हमारा,
कहते हैं करत हम नही जग अपयश का है गम नही ।
जहा जहा हम जाते हैं सभी वहा पर दुख पाते हैं
धोखे का है धम हमारा कठिन क्रूर कम हमारा
जिसका पकडा हमने हाथ लगी विपत्ति उसके साथ । *

जातीयता के उदगार इस युग की राष्ट्रीयता भी हिन्दू राष्ट्रीयता थी किन्तु भारतेन्दु तथा उनके समकालीन कवियो की अपेक्षा इस समय के स्वर में क्षीणता आने लगी। गयाप्रसाद शुक्ल सेनही त्रिशूल ने भारतेन्दु युग के सुप्रसिद्ध कवि श्री प्रतापनारायण की भाति ही हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान का नारा लगाया—

भजमि मन हिन्दी हिन्दू हिन्द ।
जननी सदृश मातभाषा है कहिये कोटि कवित्त । †

भारतमाता का स्वरूप भारतीय सस्कृति के अनुरूप ही दुर्गा देवी के रूप मे रखा गया । बाबू बालमुकुद गुप्त की एक कविता देखिए—

जयति सिंह वाहिनी जयति भारतमाता
जय असुरन दल दलनि जयति जय त्रिभुवन त्राता ।
सग सरस्वती अरु कमला सोभा बाढी अति,
चारहु ओर गगन करि सेना सुरसना पति । *

श्री कन्हैयालाल जन ने भी 'जयनागरी जय भारती' का स्वर ऊचा किया—

जय पुण्यभू भारत मही जय नागरी जय भारती,
जय जय कहे निज जन्मभू की मिल उतारें आरती । §

---

* कृपोरशक—सरस्वती अगस्त १९२१
† श्री त्रिशूल—त्रिशूल तरग (ततीय सस्करण) पष्ठ ३५
* श्री बालमुकुन्द गुप्त—स्फुट कविता (दूसरा सस्करण) पष्ठ २९
§ श्री कन्हैयालाल जन—भारत जागति (प्रथम सस्करण) पष्ठ ८९

श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने भी ब्रजभाषा में वीररस संबंधी कविताएं लिखी जिनमें हमें हिन्दू संस्कृति की रक्षा तुर्कों व फिरंगियों को नष्ट करने के प्रयत्नों का वर्णन है—महाराणा प्रताप का वर्णन करते हुए कहते हैं—

प्रबल प्रताप जब चढत विलोकी बव
बरिनी को अमित अतंक पूरि ताप है।
आप तुरकनि की सितारा धरि धारा माहि
अब टाप हिन्दुनि की छाप छिति छाजे है। ‡

शिवाजी के संबंध में उनके शौर्य का वर्णन करते हुए रत्नाकर जी कहते हैं—

मान के विरुद्ध सनमान मानि क्रुद्ध भयौ
आनन में आनि भाव उद्धत विराजे हैं
कहै रत्नाकर सो चंड सरजा कौ रूप
देखि म्लेच्छ मंडल उदंड छोभ छाजे हैं। *

इसी प्रकार झाँसी की रानी भी फिरंगियों की फौज को समाप्त करती हुई दिखाई गई है—

ग्वालियर-कोट सौं सचोट सिंहनी सी कढि,
लछमी हमच्छ ह्वी विपच्छी-सेन सारी के।
झारति कृपान फौज फारति फिरंगिनी की
दारति दरोरि दल जंगिनि हुजारी के।

भारतीय संस्कृति के अमर गायक बाबू मैथिलीशरण गुप्त ने भी हिन्दुओं को आगे बढ़ने की ओर उदबुद्ध किया। उन्होंने अमीचंद और जयचंद जैसे हिंदुओं को धिक्कारा—

हे हिन्दू तुम हो क्यों दीन ? क्यों हो दलितदुखी अति दीन।
क्यों तुम हो यों आज हताश क्यों यह पराधीनता पाश।
औरों से मिलकर मन्द, बनकर अमीचंद जयचंद,
किया हमीं ने अपना नाश, पहना पराधीनता पाश। †

---

‡ रत्नाकर (संपूर्ण काव्य संग्रह) का ना प्र सभा (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ५०२
* रत्नाकर-काशी ना प्रचा सभा—पृष्ठ ५१०,५३२
† मैथिलीशरण गुप्त हिन्दू ८७

हिन्दू संस्कृति के रक्षक वीर शिवाजी, छत्रसाल आदि ने हिन्दुपन की आन रखी तथा मुस्लिम शासकों के हमारे धर्म पर किए गए अत्याचारों के होने पर भी इसकी साख नहीं गई—

> झुकी न हिन्दुपन की साख गई न बलिदानों की आग
> वीर शिवाजी बाजीराव, रखकर यहां कौन सा भाव
> हिन्दुपन का करो विचार चम्पत, छत्रसाल अरिकाल
> बने हिन्दुवान की ढाल।
> जजिया लगे कर सिर लाख रही किन्तु तब भी साख। ‡

हिन्दुओं की आपसी फूट के कारण म्लेच्छों का प्रभुत्व हिन्दुस्तान में बना। श्री धनसिंह जी की फूट शीर्षक कविता देखिए—

> जह हिन्दू राजा सहित समाजा राज किया सुख पाई
> म्लेच्छन प्रभुताई तह सब पाई देखहु फूट बड़ाई।
> पथीराज अरु नृप जयचन्दा। परे युगल जब फूट कुफन्दा
> दोऊ म्लेच्छन कर प्राण गवायो। म्लेच्छन भारत मह छायो। †

श्री रामचन्द्र शर्मा चतुर्वेदी यद्यपि द्विवेदी युग में ही काव्य रचनाएं करने लगे थे किन्तु उनकी रचनाओं का संग्रह 'राष्ट्रीय संदेश' पुस्तक में सन १९२५ ई० में हुआ। इनकी हिन्दू संगठन तथा हिन्दी आदि कविताओं में जातीयता के उद्गार मिलते है—

> सर्वस्व खो चुके हो हिन्दू कहाने वालो
> अब तो उठो अभागो ! अपनी दशा संभालो !
> हम रामराज्य का भी आनन्द ले सकेंगे
> संसार को अनेकों आदर्श दे सकेंगे
> हिन्दू समाज का बस सच्चा संगठन हो। *

प० सत्यनारायण कविरत्न जी ने भी ईश्वर से 'दया कीजिए' शीर्षक कविता में हिंद देश तथा हिन्दी के उद्धार की प्रार्थना की—

---

‡ मैथिलीशरण गुप्त हिन्दू पृष्ठ ११२

† हिन्दी पद्य संग्रह (प्रथम भाग) पृष्ठ २५

* श्री रामचन्द्र शर्मा चतुर्वेदी विद्यार्थी—राष्ट्रीय संदेश (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १२

आनम गौरव को भाग व जगत विस्तार,
चहु सुमति प्रभा प्रगटाई कुमति को टारें।
शुभ भव्य भविष्यत आशा जिय मे धार,
प्रिय हिन्द दश हिन्दी भाषा उद्धार। §

श्री युवराज तथा श्री जगन्नाथदास चतुर्वेदी ने 'हिन्दी गान' शीर्षक कविता म इसी भाव को स्पष्ट किया है—

हम हिन्दू हैं देश हमारा प्यारा हिन्दुस्तान,
इसी हेतु भाषा भी हिन्दी यह सिद्धान्त महान।
हम हिन्दी क पुत्र हमारी हिन्दी माता,
हिन्दू हिन्दी हिन्द नामको निरखहु नाना।

कविवर हरिऔध' जी की जातीय भाषा' तथा वक्तव्य शीर्षक कविताओं मे हिन्दुत्व की भावना सबंधी जातीयता के उद्गार मिलते हैं—

ह प्रभु उर हिन्दुआ म ज्ञान का अकुर जग,
हिन्द म बन कर रहे सब काल व सबके ठग।
दूर हो सब विघ्न बाधा भाग हिन्दी का जगे,
जाति भाषा के लिए जो राजसुख का रजगन। *
प्रतिदिन हिन्दू जाति का है होता ह्रास,
सख्या हमारी दिन दिन होती न्यून। ‡

द्विवेदी युग क कुछ कवियों म जातीयता की भावना के स्थान पर हम हिन्दू मुस्लिम एकता तथा उदार विचारधारा के दर्शन भी होते हैं जिनके द्वारा देश की उन्नति प्राप्त करने का आग्रह रखा गया। श्री देवीप्रसाद राय 'पूर्ण' जी ने हिन्दू-मुसलमानो म प्रेम न होने पर दुख प्रकट किया—

मुसलमान हिन्दुआ वही है कौमी दुश्मन।
जुदा जुदा जो करे फाडकर चोली दामन। ‡

---

* दया कीजिए (कविता) चित्रमय जगत अक अप्रेल मई १६२०
§ जातीय भाषा-कविता हरिऔध सम्मेलन पत्रिका स १८७१ भाग ३-पृष्ठ ४३
† सम्मेलन पत्रिका सवत् १६७७ अक ५
‡ पूर्ण सग्रह-पृष्ठ ३१२

हिंदू संस्कृति के रक्षक वीर शिवाजी, छत्रसाल आदि ने हिंदुपन की आन रखी तथा मुस्लिम शासकों के हमारे धर्म पर किए गए अत्याचारों के होने पर भी इसकी साख नहीं गई—

झुकी न हिंदुवन की माग, रुकी न बलिवदी की आग
वीर शिवाजी बाजीराव, रणसर कहा कौन सा भाव
हिंदुपन का करो विचार चम्पत, छत्रसाल अरिकाल
बन हिन्दवान की ढाल।
जजिया लगे कर सिर लाग रही किन्तु तब भी साख। ‡

हिंदुओं की आपसी फूट के कारण म्लेच्छों का प्रभुत्व हिन्दुस्तान में बढ़ा। श्री धनसिंह जी की फूट नामक कविता देखिए—

जहं हिंदू राजा सहित समाजा राज कियो सुख पाई
म्लेच्छन प्रभुताई तह समु पाई देखहु फूट बडाई।
पथीराज अरु नृप जयचदा। परे युगल जब फूट कुफंदा
दोऊ म्लेच्छन कर प्राण गवायो। म्लेच्छन भारत मह छाया। †

श्री रामचन्द शर्मा चतुर्वेदी यद्यपि द्विवेदी युग में ही काव्य रचनाएं करने लग थे किंतु उनकी रचनाओं का सग्रह राष्ट्रीय सदेश पुस्तक में सन् १९२५ ई में हुआ। इनकी हिंदू सगठन तथा हिन्दी आदि कविताओं में जातीयता के उदगार मिलते हैं—

सर्वस्व खो चुके हो हिंदू कहान वालो
अब तो उठो अभागो! अपनी दशा सभालो!
हम रामराज्य का भी आनद ले सकेंगे
ससार को अनेकों आदर्श दे सकेंगे
हिंदू समाज का बस सच्चा सगठन हो। *

प० सत्यनारायण कविरत्न जी ने भी ईश्वर से दया कीजिए' शीर्षक कविता में हिंद देश तथा हिन्दी के उद्धार की प्रार्थना की—

---

‡ मथिलीशरण गुप्त हिन्दू पृष्ठ ११२
† हिन्दी पद्य सग्रह (प्रथम भाग) पृष्ठ २५
* श्री रामचन्द्र शर्मा चतुर्वेदी विद्यार्थी—राष्ट्रीय सदेश (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १२

आतम गौरव को भाग व जगत विस्तार,
बहु सुमति प्रभा प्रगटाई कुमति को टारै ।
शुभ भव्य भविष्यत आशा जिय म धार,
प्रिय हिन्द देश हिन्दी भाषा उद्धार । §

श्री भुवराज तथा श्री जगन्नाथदास चतुर्वेदी ने 'हिन्दी गान शीर्षक कविता म इसी भाव को स्पष्ट किया है—

हम हिन्दू हैं देश हमारा प्यारा हिन्दुस्तान,
इसी हेतु भाषा भी हिन्दी यह सिद्धात महान ।
हम हिन्दी के पुत्र हमारी हिन्दी माता,
हिन्दू हिन्दी हिन्द नामका निरवहु नाता ।

कविवर 'हरिऔध' जी की जातीय भाषा तथा 'वक्तव्य शीर्षक कविताओ मे हिन्दुत्व की भावना सर्वथा जातीयता के उद्गार मिलते है—

हे प्रभु उर हिन्दुओ म ज्ञान का अकुर जगे,
हिन्द मे बन कर रहे सब काल वे सबके ठग ।
दूर हो सब विघ्न बाधा भाग हिन्दी का जगे,
जाति भाषा के लिए जो राजसुख को रजगन । *
प्रतिदिन हिन्दू जाति का है होता ह्रास,
सख्या हमारी दिन दिन होती न्यून । ‡

द्विवेदी युग क कुछ कवियो म जातीयता की भावना के स्थान पर हम हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा उदार विचारधारा क दर्शन भी होते है जिसके द्वारा देश की उन्नति प्राप्त करने का आदर्श रखा गया। श्री दवीप्रसाद राय 'पूर्ण' जी ने हिन्दू मुसलमानो म प्रेम न होने पर दुख प्रकट किया—

मुसलमान हिन्दुआ वही है कौमी दुश्मन ।
जुदा जुदा जो करे फाडकर चोली दामन । ‡

---

* दया कीजिए (कविता) चित्रमय जगत, अक अप्रेल मई १८२०
§ जातीय भाषा कविता हरिऔध सम्मेलन पत्रिका स १६७१ भाग ३-पृष्ठ ४३
† सम्मेलन पत्रिका सवत् १६७७ अक ५
‡ पूर्ण सग्रह-पृष्ठ ३१२

श्री रामनरेश त्रिपाठी ने भी समस्त जातियों की एकता पर विशेष जोर दिया— उठो त्याग दें द्वेष एक ही सबके मत हो।

श्री रूपनारायण पांडेय ने भी देश के इसाई, मुसलमान, पारसी आदि जातियों को आपस में भ्रातभाव रखने के लिए कहा—

> जैन बौद्ध पारसी यहूदी मुसलमान सिख ईसाई।
> कोटि कंठ से मिलकर कह दो हम सब हैं भाई भाई॥
> पुण्यभूमि है, स्वर्ग भूमि है जन्मभूमि देश यही।
> इससे बढ़कर या ऐसी ही दुनिया में है जगह नहीं। †

इस प्रकार द्विवेदी युग के उत्तरार्द्ध से यह भावना बढ़ती गई तथा आगे चलकर इसका व्यापक रूप हम देखते हैं। देश की अन्य प्रान्तीय भाषा बंगला, उर्दू आदि से इसी प्रकार विभिन्न जातियों की एकता संबंधी भावनाओं की वृद्धि होती गई। किन्तु इतने पर भी देश में साम्प्रदायिक झगड़े समाप्त नहीं हुए।

वर्तमान दशा पर क्षोभ इस विषय पर भारतेन्दुकालीन कवियों ने काफी मात्रा में लिखा किन्तु उन्हें शासकों से सुधार तथा सहायता की आशा थी। इसी कारण से उन्होंने ऊंचे स्वर से विदेशी शासकों पर आरोप लगाकर कार्यभार अपने हाथों में लेने की भावना प्रकट नहीं की। द्वितीय उत्थान के कवियों ने दया की भीख तथा प्रार्थना को निरर्थक माना एवं परिस्थितियों को अधिक दुखप्रद ही पाया इसलिए उन्होंने खुलकर वर्तमान काल की हीनावस्था का चित्रण किया तथा इसका दोषी विदेशी शासकों को ही ठहराया।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने दुर्भिक्ष पीड़ित लोगों का करुणापूर्ण चित्र खींचा है —

> लोचन चले गये भीतर महं कंटक सम कच छाए,
> कर में खप्पर लिए अनेकन जीरण पट लपटाये।
> मांसविहीन हाड़ की ढेरी भीषण भेष बनाये,
> मनहुँ प्रबल दुर्भिक्ष रूप बहुधरि विचरत सुख पाए। *

देश में बुराइयां आ गई हैं—

---

† मातृभूमि-सरस्वती खंड १४ संख्या ६ सन् १९१३

* महावीरप्रसाद द्विवेदी-द्विवेदी काव्यमाला पृष्ठ १७५ ३६२ २१३

आलस्य फूट मदिरा मद दोष सारे
छाये यहा सब कही टरते न टारे ।

बाल विधवा समाज के लिए अभिशाप बन गई—

उच्छिष्ट रुक्ष अरु नीरस अन्न खहीं,
चाडालिनीव मुख बाहर मू दि जैहीं ।
गालिप्रदान निशिवासर नित्य पहा
हा हन्त ! दुखमय जीवन या वितहीं ।

द्विवेदी जी ने समाज की वतमान दशा के सभी अगो पर लेखनी नही चलाई और न ही किसी एक ही विषय पर बहुत सी रचनाए की । उन्हे कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के धर्माडम्बर, बालविधवाओ की पतितावस्था और ठहरौनी आदि की कुप्रथा ने विशेष प्रभावित किया ।

श्री मन्नन द्विवेदी न दासत्व के समान और कोइ वस्तु नीच नही मानी—

दासत्व के तुल्य न वस्तु नीच है देखा किसी ने इस विश्व बीच
हो जो गए परतन्त्रदास आनद आता उनके न पास । *

ठाकुर हरिद्वारसिंह मालग्रामी न जागनिक के लोक-प्रसिद्ध ग्र थ आल्हा की लय पर 'स्वदेशोद्धार शतक ग्र थ लिखा जिसम बडे प्रभावोत्पादक ढग मे देश की वतमान अवस्था पर क्षोभ प्रकट किया गया है—

भये आलसी बिन उद्यम के भोगी कर अनेक विलास
बढो विरोध महान परस्पर सबही सुख सम्पत्ति भ नास । †

श्री रूपनारायण पाण्डेय न देश म फली हुई निधनता बीमारी आदि का वणन किया है—

रोज सकडो लोग प्राण तजते हैं हा हा !
भारत मा अति रम्य देश होता है स्वाहा ।
वसन हीन अति दीन ठड फिर बादल ऊपर
पुन प्लेग का कोप नाहि अब हे परमेश्वर । §

---

* दासत्व-सरस्वती-सन १८१३ ई

† ठाकुर हरिद्वारसिंह मालग्रामी 'स्वदेशोद्धार शतक (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ११

§ श्री रूपनारायण जी पाण्डेय पद्य पुष्पाजलि (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ३०

भारत की हालो नीयत कविता म न्न म व्याप्त अकाल क दुर्परिणामा की झांकी दी गई है—

> अन न मिल पेट भर कबहू जागी महंगी का लागी अब।
> है अकाल जह बारह मास चहु दिसी जहां दुख का बास।
> घर घर तू मा झोली है, कहै कौन होली है।

माधुरी क सम्पादक श्री मातादीन शुक्ल न भी उस युग की दुरवस्था क कर्ण दृश्या का चित्रण किया—

> भूख स हैं मर रह जो मर भुख ह कभी फूटी नजर दखा उन्हें। *

श्री सियारामशरण गुप्त जी न आज की अवनति का चित्र अतीत के स्मरण के साथ किया—

> ससार भर म यह हमारा दश ही सिरमौर था
> सौदर्य म गुण शांति म उमा न कोई और था।
> बल बुद्धि वीय सभी हमारा हो चुका ति नाग
> जातीयता का नाम का भी न हमम नाय है। ‡

राष्ट्रकवि मथिलीशरण गुप्त न भी वतमान युग की कष्टपूण हानावस्था का चित्र भारतभारती' म सुन्दर ढग से खीचा है। भारत भारती म अतीत क गौरव पूण स्मरण क साथ ही वतमान काल की पतितावस्था एव भविष्य की स्थिति के मार्मिक चित्र रख हैं—

> प्राय सदा दुर्भिक्ष एसा है बना रहता जहां,
> आश्चय क्या यदि फिर निरन्तर नीचता फल वहा। †
> बमौत अपन आप या ही हम अभागे मर रह
> हा प्लग जस राग तिस पर हैं चढाई कर रह
> उच्छिन्न होकर अद्ध मृत सा छटपटाता दश है
> सब ओर क्रन्दन हो रहा है क्लश को भी क्लश है।
> हिन्दू समाज सभी गुणो स आज कसा हीन है,
> वह क्षीण और मलीन है, आलस्य म ही लीन है।

---

* निस्सार जीवन चित्रमय जगत नवम्बर १९१७

‡ हमारा ह्रास—सरस्वती भा० १४ सख्या ४ सन १९१३

† मथिलीशरण गुप्त—भारतभारती—(बीसवा सस्करण) पृष्ठ ८८ १०२ १५१

परतंत्र पद पद पर विपद में पड़ रहा वह दीन है
जीवन मरण उसका यहां अब एक दवाधीन है।

इस युग के कवियों ने कृषकों की दयनीय दशा के भी करुणापूर्ण चित्र खींचे हैं। गुप्त जी ने 'भारत भारती' 'किसान' आदि रचनाओं में भारतीय किसानों के प्रति सहानुभूति दिखाई है—

पानी बनाकर रक्त का कृषि कृषक करते हैं यहां,
फिर भी अभागे भूख से दिन रात मरते हैं यहां।
सब बेचना पड़ता उन्हें निज अन्त वह निरुपाय है
बस चार पैसे से अधिक पड़ती न दैनिक आय है। ‡

श्री गयाप्रसाद शुक्ल सनेही 'त्रिशूल' भी वर्तमान हीन दशा की करुणापूर्ण झांकी दिखाने में बड़े सिद्धहस्त हैं। सरल और सुन्दर भाषा में इन्होंने देश की गरीबी किसानों की दुर्दशा तथा नारी समाज की बुराइयों को मार्मिक चित्रण किया है—

हिन्द का हाय दौलत वहां बह गई,
और क्या इल्म का वह खजाना हुआ ?
सत्यनिष्ठा गई चापलूसी रही
दांत हम हाकिमों को दिखाने लगे। †

देहातों की दुखपूर्ण स्थिति देखिए—

आती है नित नई सिरों पर हाय बलायें
बच्चे दाबे हुए बगल में भूखी मायें।
भग्न हृदय है नग्न सी खेत निराने में लगा। *

त्रिशूल' जी की रचना में करुणापूर्ण स्थलों का आधिक्य है। दहेज की कुप्रथा पर भी उद्गार प्रकट किए गए हैं—

यह दहेज की आग सुदशा ने दहकाई
प्रलय वह्नि सी वही आज चारों दिशि छाई।

---

‡ मैथिलीशरण गुप्त-भारत भारती-(बीसवां संस्करण) पृष्ठ ९३
† त्रिशूल त्रिशूल तरंग (तृतीय संस्करण) पृष्ठ २७
* दुखिया किसान सरस्वती-संख्या १२-सन् १९१८

घर उजाड वन बना रही कर रही सफाई,
ताप रहे हम मुदित समझते हाली आई। §

श्री नाथूराम शकर शर्मा शकर आयसमाजी थ। इनकी रचनाओ मे समाज तथा देश की दुदशा के सजीव चित्र मिलते है। शकर जी की शली बडी व्यग्यपूर्ण और आकपक है जिसमे हास्य का भी कुछ पुट रहता है। देश म भूख फल रही हैं तथा इसकी कीति व धन नष्ट हो रहा है—

लुट गया न पू जी पास है भारत भूखा मरता है
जो था नव खड में नामी द्वीप रहे जिसके अनुगामी
सो सार देशो का स्वामी अब औरो का देश है। *

नकर ने देग की आथिक, राजनीतिक व सामाजिक पतन का कारण धम की हीनता माना है—

वर वदिक बोध विलाय गयो छल के वल की छवि छूट पडी।
पुरुषारथ साहस मल मिटे मत पथन के मिस फूट पडी।
अधिकार भया परदेसिन को धन धाम धरा पर लूट पडी।
कवि शकर भारत भारत प भय भूरि अचानक टूट पडी। ‡
रुई नाज देशी दिया कीजिए विदशी खिलौने लिया कीजिए।
छुपी धूप की धाक छाया ढली न विनान फूला न विद्या फला।

सनातन धम के मदिरा म विनास लीलाए हाती हैं—कृष्ण भगवान पर व्यग्य करते हुए कहते हैं—

फरिया चीर फाड कुबरी को, पहिनलो पचरगा गौन
अब लक लडी लाल तिहारी कहिए और बनेगी कौन।
मु दना नही किसी मदिर म, काटो हाटल मे दिनरात,
पर लखौआ ताड न जाव बढिया खानपान की बात। †

शकर जी ने राजनीति के दभी नेताओं तथा अवसरवादियो पर छीटे छोडते हुए कहा है—

§ दहेज की कुप्रथा कायकुज-अक ८ १६०६
* श्री नाथूराम नकर शर्मा नकर सरोज (तृतीय सस्करण) पृष्ठ ७३
‡ श्री नाथूराम नकर शमा-शकर सरोज-पृष्ठ ७५
† श्री नाथूराम नकर शर्मा अनुराग रत्न-पृष्ठ २२८

गारे गुरगुण की खातिर मे, खरच करूगा दाम,
दमकेगा दुमदार सितारा बाके जुगनू नाम
खिताबा को फटकारूगा किसी से न हारूगा।

श्री रामरहिन मिश्र ने दश की करणापूर्ण दशा की और ध्यान आकर्षित करते हुए प्रभु से अवतार लेने की प्रार्थना की है—

दयामय कब लोगे अवतार
चीजें सब हो गई महगी नष्ट हुआ व्यापार,
मन्यामेट हुआ जाता है सबका कारोबार,
दीन दुखी सबला बालक सब सहते दुख अपार।

श्री रामचरित उपाध्याय ने भी समाज की कुप्रथाओ बाल विवाह वृद्ध विवाह आदि के सबध में लिखा—

बाल विवाह रोक हम दत यदि हमको मिलते अधिकार
वृद्ध विवाह का किन्तु देश म कर देते हम खूब प्रचार।
क्योंकि साठ से होकर भी दूल्हा अभी बनेंगे हम
किसी बालिका से विवाह कर इमम कभी मनेंगे हम।

श्री उपाध्याय जी ने समाज मे व्याप्त छुआछूत विलासिता अशिक्षा आदि पर भी व्यग्य किया है—

पालन करें एक पत्नीव्रत प्रण करके सब कोई,
रोक शोक से दीन दशा मे तो न रहे फिर कोई,
पर मैं कलि का कुवर कन्हैया बना रहू तो क्या है?

\+ + +

गाँजा भाग अफीम आदि का यदि प्रचार रुक जाये
तो होकर नीरोग देश यह सदा सभी सुख पावे।
छिपकर किन्तु साथ चली के ब्राण्डी पिया करू मैं
हानि नही जो खुलकर खडन इनका किया करू मैं।

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' ने भारत की दरिद्रता और हीनावस्था का कुडलियों में वर्णन किया है—

यथा चद्र बिन जामिनी, भवन भामिनी हीन,
भारत लक्ष्मी बिन तथा है सूना अति दीन।
है सूना अतिदीन सपदा सुख से रीता
है आश्चय अपार कि वह है कसे जीता।
सुनो रमापति अपार कि वह है कस जीता,
है अति व्याकुल वृ द कुमुद वे था च" बिन। §

हिंदू मुस्लिम के पारस्परिक झगडो को देख पूर्ण जी कहत हैं—

हाय हि"द ! अफसोस जमाना कसा आया
जिसने करक मितम भाइयो को लडवाया।

समाज की आर्थिक तथा दु खपूण स्थिति को महानुभूतिपूण ढग से प्रस्तुत करने मे श्री केशवप्रसाद मिश्र बडे लोकप्रिय रहे हैं। भारतीयो की दरिद्रता, भुखमरी का चित्रण देखिए—

हा हा कार मचा भूखो का है धनिको के पास,
फिर कसे व ता" फुलाय खाते विषमय ग्रास ?
सभा समाज देशी सेवा एव वा" विवा"
जठर पिठर म चारा रहते आते हैं सब याद।
हा ! हा ! हन्त बिना ही खाये बीत गये "िन चार। *

श्री रामनरे"श त्रिपाठी जी ने कल्पना मिश्रित राजनीतिक घटनाचक्र को लेकर देशभक्तिपूर्ण खड काव्य मिलन तथा पथिक आ"ि का सृजन किया जिनम भारतीय समाज की वतमान हीनावस्था का मार्मिक चित्रण हुआ है—मिलन म विदेशी दु म" शासन स मुक्ति की प्रेरणा मिलती है—

अन्न नही है वस्त्र नही है उद्यम का न उपाय
धन भी नही और टिकने को कहाँ जाँय क्या खाय।
लाखो नहीं करोडों की हैं सुख स हुई न भें"।
मिलता नहीं जन्म भर उनको खाने को भर पेट। †

---

§ पूर्ण सग्रह पृष्ठ २०३
* केशवप्रसाद मिश्र—वर्षा और नियन सरस्वती अगस्त १९१६
† श्री रामनरेश त्रिपाठी—मिलन—पृष्ठ २२ १३

प० अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने केवल पौराणिक आख्यानों को लेकर काव्य ग्रंथों की सृष्टि नहीं की। समाज में व्याप्त बहुत सी विषम बुराइयों की ओर भी ध्यान आकर्षित कराया। छोटी छोटी कविताओं द्वारा समाज की नैतिक दुर्बलताओं के चित्र खींचे गए हैं—

जाति के हित की सभी तानें सुनीं, स्वहित के लिए सब राग सुने।
लोकहित की गिटकरी काना पड़ी, पर हमें मवम मिली मतलब की धुन।

दीन की आह में चित्रित एक वर्णन देखिए—

महल पहन है जहाँ वहाँ मातम छा जाता
स्वर्ग छन्न है जहाँ वहाँ रौरव उठ आता।
दीन आह की ध्वनि यदि हरि काना में जाती
नंदन वन हैं जहाँ आज मरु वहाँ दिखाती।

प० केशवप्रसाद मिश्र ने सरल ढंग से देश के निधनों तथा दुःखी किसानों के मर्मस्पर्शी चित्र खींचे हैं—

जो करता था पेट काटकर सरकारी कर दान
रहता था प्रस्तुत करने को अभ्यागत का मान।
नहीं हुआ था जिसे भयवश कभी दुख का मान,
आज वही भूखा मरता है मातादीन किसान।
हाहाकार मचा है भूखों का है धनिकों के पास
फिर कैसे ये तोंद फुलाये खाते विषमय ग्रास। †

सामाजिक सुधार तथा राजनीतिक संघर्ष इस युग के कवियों का ध्यान अतीत की ओर अधिक नहीं रहा। उनकी दृष्टि में यथार्थ की ओर ही अधिक रही तथा वर्तमान की गरीबी स्वतंत्रता आंदोलन एवं असहयोग की नीति आदि सभी को अपना विषय बनाकर जन मानस का प्रतिनिधित्व किया। देश को दासता के बंधन से मुक्त करने की भावना है। कवियों ने विद्यार्थी मजदूर किसान व नवयुवकों को प्रेरणा दी। मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं तथा कष्टों को हंसी खुशी सहन कर देश पर बलिदान होने की भावना को बढ़ाने में इस युग के कवियों ने बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया। राष्ट्रीय आंदोलनों ने साहित्यकारों को प्रभावित किया। इसी प्रकार इस काल की अधिकांश रचनाओं में राष्ट्रीयता ग्लानि व जागृति के चित्र अंकित हैं।

† वर्षा और निधन— सरस्वती अगस्त १६१६

महावीरप्रसाद द्विवेदी ने बग भग के विरुद्ध आदोलन से प्रभावित होकर 'आहिनाथ ! आहि ! 'शीर्षक कविता लिखी जिसम राजनीतिक सघष क प्रति जागरूक होने के प्रमाण मिलते हैं—

नाना रत्न पूरि जिहि माहि शोभा जासु बढाई,
पुण्य भूमि प्रख्यात नाम करि सकल कला उपजाई ।
प्रभुता जासु सब दशन प प्रथमहि ते प्रकटाई
ताहि वह अरण्य करिवे को प्रभु अब भुजा उठाई ।
बहुरि भयौ भूकम्प भयकर प्रलय प्रचड समाना
बग देश कर अग भग मुनि काको हिय न सकाना । *

कांग्रेस की स्थापना के पश्चात् गाधी जी के नेतृत्व म स्वदेशी आदोलन तथा असहयोग काय प्रारभ हुआ । श्री द्विवेदी जी ने स्वदेशी वस्त्र स्वीकार' शीर्षक कविता द्वारा ये भाव प्रकट किए—

विदेशी वस्त्र हम क्यो ले रहे वृथा धन देश का क्यों दे रहे हैं
न सूझे है अरे भारत भिखारी गई है हाय तेरी बुद्धि मारी ।
हजारा लोग भूखे मर रहे हैं पडे वे आज या कल कर रहे हैं,
स्वदेशी वस्त्र स्वीकार कीजै विनय इतना हमारा मान लीजै ।

देश की स्थिति सुधारने के लिए विदेशी वस्तु को त्यागना आवश्यक है—

हे देश ! सप्रण विदेशज वस्तु छोडो,
सबध सब उनसे तुम शीघ्र तोडो ।
मोडो तुरत उनसे मुह आज स ही
कल्याण जान अपना इस बात मे ही ।

इस समय ब्रज मडल म भी होली के अवसर पर फाग नही वरन् युद्ध होता है-श्री राजा रमेशसिंह बहादुर की फाग नहीं समर पुस्तक म कुछ पद देखिए—

अरी बीर यह होइ नहि, बृजमडल में फाग,
मरत जुगुल धनुरग दल सहित अमित अनुराग ।
रग राते नर नारी की भई नहीं यह भीर,
सन्मान दन रग में जुरे बीर रनधीर ।

---

* महावीरप्रसाद द्विवेदी द्विवेदी काव्यमाला-पृष्ठ १७८ ३६८

अरुन रग वगरो नही बीथिन मे चहु ओर,
फलि रुधिर रनभूमि म बहत सहित अति जोर। †

श्री मीर अली 'मीर' ने नवयुवको को सबोधित करते हुए मातभूमि की सेवा सदेश दिया—

स्वजाति सेवा, स्वधर्म सेवा स्वदेश सेवा स्वभेषसेवा
सुराज सेवा सुकम सेवा करो तनय के स्वरूप सेवा।
सुवीर युवको उचित सिखावन, स्वमातमहि को न भूल जाना। ‡

श्री वागीश्वर मिश्र न भी स्वदेशी आदोलन मे ऐसे लोगों से विनय की है कि विदेशी वस्त्रादि छोड दें—

धराधर धार रुपयों की बही है विलायत ओर सीधी जा रही है।
स्वदेशी वस्त्र को स्वीकार कीज विनय इतना हमारा मान लीज।
शपथ करके विदेशी वस्त्र त्यागो, न जावो पास उससे दूर भागो। §

श्री चडिकाप्रसाद अवस्थी मातभूमि भक्ति तथा अपने देश की परम्परा और सामग्री का आदर तथा विश्वास जनमानस मे भरना चाहते हैं—

देशभक्ति को कभी न छोडो, सब सुख का हैं दाता देश,
हम उसके वह सदा हमारा यही करो विश्वास विशेष।
प्रतिदिन अपन काम काज मे, जो जो चीजें लात हो
सभी देश की निर्मित हों, जो पीत हो या खाते हो। ††

श्री लक्ष्मीधर बाजपेयी जी न स्वदेशी अनुराग का स्वर ऊचा कर पुरुषाथ करने का सदेश दिया—

आलस छोड करो पुरुषाथ, जिससे सधे सुखद परमाथ।
देशी चीजो का अनुराग वस्तु स्वदेशी का कर अनुराग
करो सभी इसका उद्धार विनती यही पुकार पुकार। *

---

† श्री राजा रमेशसिंह बहादुर– फाग नहि समर–(प्रथम सस्करण) पृ० १३
‡ जातीय कविता (सग्रह) पष्ठ १४
§ स्वदेशी वस्त्र स्वीकार (कविता) सरस्वती जुलाई १६०३
†† स्वदेश प्रीति-सरस्वती अक्तूबर सन् १६०५
* चारमाला–नवम्बर १६०७ (सरस्वती)

श्री राय दवीप्रसाद पूण से स्वदशी कु डल' पुस्तक म इसी भावना को लेकर सुदर कु डलिया की रचना की। इन कविताओ म देश की वतमान परिस्थिति के मार्मिक चित्र मिलते हैं तथा देशोन्नति के प्रति भी कवि सचेष्ट दिखता है—

पानी पीना देस का खाना दसी अन्न,
निमल देशी रुधिर से नस नस हो सम्पन,
नस नस हो सम्पन्न तुम्हारे उसी रुधिर से
हृदय यकृत सर्वांग नखो तक लेकर शिर से।
यदि न देशहित किया कहेंगे सब 'अभिमानी
शुद्ध नही तब रक्त नही तुभम कुछ पानी। *

श्री गयाप्रसाद शुक्ल सनेही त्रिशूल ने राजनीतिक आंदोलन सत्याग्रह सबधी बहुत से गीत लिखे जिनम हम जनमानस का प्रतिनिधित्व मिलता है। राष्ट्र के स्वाधीनता आंदोलनो एव सघर्षो न बलिदान का पाठ पढाया तथा अत्याचारो को सहन करने की शक्ति दी है—

सत्याग्रह प्रेमास्त्र मनो का हरने वाला
जिनसे परम विरोध उन्हे वश करने वाला।
अगर चाहते हो कि स्वाधीन हो हम
न हर बात म यो पराधीन हो हम
रहे दासता म न अब दीन हो हम
असहयोग कर दो असहयोग कर दो।

राष्ट्रीय शिक्षा पचक शीषक कविता म उर्दू मिश्रित भाषा मे त्रिशूल जी ने मुसीबत सहने की चर्चा की है।

कौम मरती नही दुश्मनो की मारो मे
मिटती है वह नही जुल्म की तलवारो स।
बचती हैं बेरहम कातिलो हत्यारो स
सख्त बलाओं और मुसीबत के वारों स। ‡

राष्ट्र निर्माण शीषक कविता म वीर सपूतों को राष्ट्र की उन्नति म योगदान करन का आह्वान किया है—

* रायदवीप्रसाद पूण स्वदशी कु डल (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ८
‡ त्रिशूल-त्रिशूल तरग (तृतीय) पृष्ठ ८

बनाओ राष्ट्र यत्न के साथ।
धन विद्या व्यापार तुच्छ थे उपाधियाँ निस्सार।
होती हैं सच्चे स्वराज्य पर न्योछावर शत बार।
उठो हिंद के वीर सपूतो, कमर कसो अब यार,
बाधा देने दो न किसी को करो पुण्य पथ पार।

त्रिशूल जी ने असहयोग आन्दोलन पर एक कविता लिखी जिसमें उसे देश की स्वतन्त्रता का एक मात्र साधन माना है—

अगर चाहते हो कि स्वाधीन हो हम
न हर बाल मे यो पराधीन हो हम।
रहे दासता न अब दीन हो हम, न मनुजत्व के तत्व से हीन हो हम।
असहयोग कर दो–अहसयोग कर दो। †

सत्याग्रह को सद्धान्तिक विवेचन त्रिशूल जी ने अपनी कई रचनाओं मे किया जिससे हमें उस समय की राजनीतिक पृष्ठभूमि का इंगित मिलता है—

ऐक्य राज्य स्वातन्त्र्य यहा तो राष्ट्र अंग है
सिर धड टांगो सदृश जुड़े हैं संग संग हैं।
व्यक्ति, कुटुम्ब समाज सब मिले एक ही धार में।
मिल शान्ति सुख राष्ट्र के पावन पारावार।

खिलाफत और असहयोग भारत के राजनीतिक संघर्ष के विभिन्न स्वरूप हैं जिनका लक्ष्य स्वराज्य प्राप्त करना ही है – त्रिशूल जी की कविता मे ये उद्गार मिलते हैं—

मनाते हो घर घर खिलाफत का आलम
अभी दिल में ताजा है पंजाब का गम।
तुम्हे देखता है खुदा और आलम
यही ऐसे जख्मो का है एक मरहम।
असहयोग कर दो, असहयोग कर दो।

श्री माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' की कुछ प्रारम्भिक कविताओं में रौलेट एक्ट तथा भारत रक्षा, अन्य अन्यायपूर्ण कानून तथा जलियावाला बाग मे-

---

† राष्ट्रीय सिंहनाद (काव्य संग्रह) (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १०६

डायर की नग्नता के कारण भारतीयों के खून की होली के मार्मिक चित्र हैं। 'भारतीय आत्मा' सच्चे देशभक्ति कवि है जिन्होंने कांग्रेस मे सक्रिय भाग लिया। इनकी कविताओं मे देशभक्ति पूर्ण उद्गार प्रकट हुए हैं—

> मैं 'मुहबदी' का हार हिये, मत लिखो कठिन कवरण धारे
> भारत रक्षा' के शूलों की, पावों में बड़ी झनकार।
> हथियार न लो भी हथकड़ियां रौलट का हिय में घाव लिये
> डायर से अपने लाल कटा, वहती थी आचल लाल किये।

'भारतीय आत्मा' को भी जेल कृष्ण का कारागार लगा तथा तथा बेड़ियों की झनझनाहट में कविता मुखरित हुई—

> आत्मदेव ! प्यारी हथकड़ियाँ और बड़ियाँ दे परितोष,
> उतनी ही आदरणीया है जितना वह जय जय का घोष।
> तू सेवक है सेवाव्रत है तेरा जरा कसूर नही,
> शूली वह इसा की शोभा वह विजयी दिन दूर नही। *

श्री 'भ्रमर' तथा श्री 'कण' ने भी अहिंसा शांति तथा असहयोग से देश की स्वतंत्रता प्राप्त करने का मार्ग बताया जो कि उस समय कांग्रेस की नीति थी—

> छिडा है असहयोग सग्राम
> शांति सहित शुद्धात्मा से ही होंगे सारे काम।
> आएगा यहां काम अन्त मे तो कौडी का चाम।
>
> —भ्रमर

> असहयोगिना शांतिमयी सेना सजने दो।
> प्राणों का युद्ध भी भय न करो निर्भय बनने दो।
> ग्रहण करो मन शस्त्र निहत्थी लडो लडाई
> अभी इसी में रहे समझत देश भलाई। §
>
> —कण

श्री रूपनारायण पाण्डे ने स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार को अच्छा बताया—

> मन स्वदेशीवस्तु लन नित प्रणमस्तु करि
> परदेशी वस्तुन तमाम नाशन की प्राणधार।

---

* भारतीय आत्मा—बधन सुख (कविता)

§ राष्ट्रीय तिरगा (कुष्ण मयूर) पृष्ठ १३

देश दुदशा दलन देश सेवा मह करि मन,
शुभ स्वतत्रता लाभ हेतु वारें नित तन धन । *

जलियावाला बाग के नरसहार और अमानुपिक अत्याचारा से पीडित भारतीयो के मन में जो वेदना हुई उमका चित्रण श्रीमती रा र वक्कड न इन शब्दो म किया—

अपनुम इन्द्र विपिन ने बढकर प्यारे जलियावाल वाग ।
तरे दुख का सुमिर आज भी भडक उठे सीने म आग ।
मत निराश हो जलियावाले ! मेरे वीर फिर आवेंग,
स्वतत्रता की ध्वजा देश मे आकर के फहरावेंगे ।

रक्त वहा है निज वीरो का वृथा नही वह जावेगा,
शुभ स्वराज्य की सुदर लतिका लाकर शीघ्र लगावेगा । †

श्री लक्ष्मणसिंह क्षत्रिय 'मयक न तथा भवानीशकर यानिक ने देश के लिए बलिदान करने तथा उसकी स्वतत्रता को ज मसिद्ध अधिकार सवधी कई राष्ट्रीय रचनाए की जिनमे हम उस युग की राजनीतिक चेतना की झाँकी मिलती है —

स्वराज्य के लिए जियो स्वदेश क लिए मरा
उठो प्रभात हो गया विचार का प्रभात हो
स्वराज्य का सूय हा उदं, स्वतत्र सुप्रभात हो । §

तभी होगा हमको सतोप, होय जब भारत को परितोष,
हमारे जन्मसिद्ध अधिकार, करे जब प्राप्त याय अनुसार । ‡

श्री कृपाण' ने राष्ट्रीय यन' कविता में स्वतत्रता आदोलन को अश्वमघ यन की उपमा दी है तथा रूपक द्वारा सुन्दर चित्रण किया है—

कमवीर न यज्ञ सामाजिक रचा अश्वमेधी विनान
असहयोग घोडा छोडा है निबल सबल की हो पहचान ।

---

* श्री रूपनारायण पाडेय-पद्य पुष्पाजलि

† राष्ट्रीय सिंहनाद—पृष्ठ ५४

§ श्री मयक गेयगीत, मर्यादा जुलाई १९१७

‡ श्री भवानीशकर—तभी होगा सतोप मर्यादा मितम्बर १९१९

देशभक्ति की अग्नि प्रकट कर जला दें सौभागिरी दुकान,
कृपाण' शुभकर्मों के लिए बिन कष्ट नहीं कृपा भगवान। *

श्री माधव शुक्ल के राष्ट्रीय गीतों में विद्रोह तथा स्वतंत्रता संघर्ष का स्पष्ट स्वर सुनाई देता है। इनके ये गीत नवयुवकों तथा देशप्रेमियों के कण्ठहार हो गए। शुक्ल जी के गीतों में मार्मिकता तथा जनमानस का सफल प्रतिनिधित्व मिलता है—

चाहती है माता बलिदान जवानो उठो हिन्द सतान
हसते हुए फूल से आकर शीश झुका दो मा के पग पर।
फांसी चढो जेल म जाओ भयवश न देश भुलाओ,
हथकडियो पर मिलकर गाओ, स्वतत्रता का गान। §

असहयोग आदोलन एव सत्याग्रह सबधी कविताए भी बहुत लोकप्रिय रहीं जिनसे स्वतत्रता के सनिको को बडा बल और प्रेरणा मिलती थी—

गहेंगे असहयोग का अस्त्र
तुच्छ जिनके सम्मुख सब अस्त्र।
हमारा है गाधी सरदार
सत्यता का प्रतच्छ अवतार।

चर्खविदान्त' गीत म श्री माधव शुक्ल ने चर्खे द्वारा स्वराज्य प्राप्ति का स्वप्न देखा था—

चरखा करता निर्मल काया, इसी से भारत ने अपनाया
चरखा परम विन गांधी ने चर्खा चारो वद बनाया।
असहयोग ब्रह्मा ने जिसको मधुर स्वरो मे गाया,
सत्याग्रह यामिनी कहु छन छन दमकि २ डरपावत अरिगन,
उन पे सुख स्वराज्य बरसावत मेघ हिंद रतनारे।

सत्याग्रह रूपी बिजली की कौंध ने शत्रुओ के दिल मे भय उत्पन्न कर दिया है तथा हिंद के मेघ उन पर स्वराज्य और सुख की वर्षा करते हैं—

* श्री कृपाण—राष्ट्रीय य?—चित्रमय जगत मार्च अप्रेल १९२२
§ श्री माधव शुक्ल जाग्रत भारत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ५ ८ ७४

अंग्रेजो की गोली से स्वराज्य के वीर सेनानी घबरात नही आजादी प्राप्त करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। तिलक का अमर वाक्य कवि की वाणी मे मुखरित हुआ—

जेल की धूल उडाय चुके अब गोला सा खेलेंग होरी,
है स्वराज्य मद मस्त खिलाडी ले दम निकास मरोरी
चुन चुन के सब वीर बहादुर लेहु सबै चक्कजोरी,
बचे एको नहिं गोरी गोली सो। *
हम भी पथ्वी पर जन्मे हैं हम भी नरतन धारी है
जन्मसिद्ध देवी स्वतन्त्रता के हम भी अधिकारी।

रालेट बिल के लागू होने पर देशव्यापी असतोष की लहर कवि के लेखनी से भी दूर नहीं रही—

अंग्रेजन हाकिम हित बगल सजी सजाओ वारी,
हिंदुन हित जर जरी झोपडिया ताप टिक्कस मारी।
एतनेहु पै शासक रालेट बिल तोप लगावत भारी,
जान है जरजरित हिंद्गढ नासन की तयारी। †

सन् १६१६ स स्वतन्त्रता यात्रा म होमरुल या स्वराज्य का आरम हुआ। इसके लिए सत्य न्याय तथा अहिसा की आवश्यकता है। शूली तथा कृष्ण का जन्म स्थान (कारागृह) सत्याग्रह क अभियान म प्रेरणास्वरूप हो गए। राष्ट्रकवि मथिली शरण गुप्त ने नवयुग के स्वागत' शीर्षक कविता म कहा है—

मुझे ज्ञात है, बलहानेन लभ्य' मन्त्र विख्यात
रहे कही हम ऊचा सिर होगा।
कारागार कृष्ण मदिर होगा
शूली ! वह ईसा की शोभा प्रस्तुत ह म सभी प्रकार।

श्री रामनरेश त्रिपाठी न भी देशभक्ति के स्वर म महात्मा गाधी की प्रेरणा पाकर अहिसा द्वारा आत्मबल की प्राप्ति की महत्ता बताई

मैं अमर हू मौत स डरता नही,
सत्य हैं मिथ्या डरा सकता नही।

---

* श्री माधव शुक्ल-जाग्रत भारत पृष्ठ ७८
† भारत गीतांजलि (पाचवा सस्करण) पष्ठ ५१

मैं निडर हूँ शस्त्र का क्या काम है
मै अहिंसक हूँ, न कोई शत्रु है।

वीर पुरुषों तथा नेताओं की स्तुति और पूजा प्रत्येक राष्ट्र के इतिहास म अपने राष्ट्र उन्नायको तथा आत्म पुरुषो की प्रशस्ति के गीत मिलते हैं जिससे जन मानस क हृदय म न्याप्त श्रद्धा का परिचय मिलता है। वीरो की पूजा की भावना (Hero worship) पाश्चात्य साहित्य में भी मिलती है जिस राष्ट्रीय भावना की धारा में लिया जाता है। अतीत काल के पौराणिक तथा ऐतिहासिक महापुरुषा के देश क प्रति किए गए उत्सग एव बलिदाना के वणन नवपीढ़ी को प्रेरणा प्रदान करने में सहायक होते हैं तथा उन्हे मागदशन मिलता है। वतमान काल में अपने त्याग, तपस्या और कमनिष्ठा तथा सेवा स देश के कर्णधार वदनीय होते हैं। राष्ट्र वीरों के इन्ही महान क्रियाकलापो का वर्णन द्विवेदी युगीन साहित्य में भी मिलता है। राज नीतिक चेतना जसे जसे भारतीयो में बढ़ती गई वसे वैसे वीर पूजा की भावना को बल मिला। अतीत के गौरवपूर्ण स्मरण ने वीर पुरुषा के उज्जवल चरित्र तथा आत्म बलिदान द्वारा वतमान काल में भारतीय नवयुवको का सफल माग दशन किया तथा उन्हे राष्ट्र सेवा की ओर उन्मुख किया।

श्री जगन्नाथदास जी रत्नाकर ने ब्रजभाषा में शुद्ध वीररस की कविताए हैं तथा ऐतिहासिक महापुरुषो व वीर वीरांगनाओ के शौय का व किया है—

वीर अभिमन्यु की लपालप कृपान वक्र
सक्र असनी लौ चक्रव्यूह माहिं चमकी,
कहै रत्नाकर न ढालनि प खालनि प,
झिलिम झपालनि पै क्यों हू कहू ठुमकी। *

महारानी दुर्गावती अपने दुग की रक्षा में रत विदेशी शत्रुओ का वीरतापूवक सामना करती है—

दुग त निकसी दुरगावती स्ववीर धीर
फूक क स्वतन्त्रता को मत्र ललकारे हैं।
कहै रत्नाकर स्वदेश हित ठानि तीनि,
मुगल-पठान दल बद्दल बिदारे हैं। §

* रत्नाकर का सपूर्ण काव्य सग्रह—(काशी ना प्र सभा) पृष्ठ ४६४
§ आधुनिक वीर काव्य (हिन्दी सा सा प्रयाग) पृष्ठ ८ ३४

रोष दुख दारिद सु चूरि दीनता के दूरि
भूरि सुख सम्पति सौं पूरी प्रजा पाली है।
कहै 'रत्नाकर स्वतन्त्रतानुरक्ति अरु
देस भक्ति थापी वीर सक्ति सौं निराली है।

श्री लाला भगवानदीन की राष्ट्रीय भावना पौराणिक और ऐतिहासिक शूर वीरों की अर्चना के रूप में मिलती है। 'वीर पचरत्न' लाला जी की एक सुन्दर वीररस पूर्ण रचना है जिसमें प्रताप तारा, दुर्गावती, अभिमन्यु, आल्हाऊदल आदि का बडी सरल किन्तु ओजमयी भाषा में वर्णन किया गया है। आल्हा ऊदल तथा प्रताप के सबंध में कहा है—

वीरत्व स है जिसने अचल कीर्ति कमाई।
निज ―न को निज शक्ति की करतूत दिखाई।
वीरत्व प ―गत हो गई जिसमें चढाई
निज देश के बच्चों को हा शुभ-सीख सिखाई।
और जो देखो परताप के भाला की चमाचम
अँखि हुई अनल सी हुआ मुह भी तमातम।

राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त ने पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथानकों से बहुत से वीर पुरुषों के यशोगान करने वाली अनेक रचनाओं द्वारा हिन्दी के राष्ट्रीय काव्य को समृद्ध किया हैं। राम कृष्ण, भीम, अर्जुन प्रताप आदि बहुत से महारथियों के चरित्र प्रेरणाप्रद हैं। गुप्त जी ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'भारत भारती', साकेत आदि में वर्णन किया है—

थे भीम तुल्य महाबली, अर्जुन समान महारथी
श्रीकृष्ण लीलामय हुए थे आज जिनके सारथी।
वे सूर्य वंशी चंद्र वंशी वीर थे कंस बली,
जो थे अकेले ही मचाते शत्रु दल मे खलबली। ‡
आर्य स्त्रियाँ निज धर्म्म पर मरती हुई डरती नहीं
आद्यन्त सब सतीत्व शिक्षा विश्व मे मिलती यहीं।

कर्मवीर गाधी के जीवन से कवि ने प्रेरणा देते हुए कहा—

‡ मैथिलीशरण गुप्त—भारत भारती (छठवां संस्करण) पृष्ठ ४६

संसार की समर स्थली है वीरता धारण करो
जीवन समस्याएं जटिल हो, किन्तु उनसे मन डरो।
घर वीर बन कर आज अपनी विघ्न बाधाएं हरो। †

गुप्त जी ने गाँधी जी के नेतृत्व में विश्वास करने का मंत्र सुनाया—

बैठ तुम्हारे साहस रथ में हम न रुकेंगे अपने पथ में
नाथ तुम्हारी इच्छाओं को बाधायें ही बल देंगी।

श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान ने बुन्देलखंड के लोकगीत के आधार पर खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी कह कर वीर देवी रानी लक्ष्मीबाई की वंदना की। सुभद्राकुमारी जी की यह कविता बड़ी ही लोकप्रिय है तथा इसकी ओजमयी शैली ने नवयुवकों के हृदय में देशभक्ति की भावना भरी—

सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी
चमक उठी सन सत्तावन की वह तलवार पुरानी थी
बुंदेले हर बोलो के मुंह हमने सुना कहानी थी
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

ठाकुर भगवतसिंह ने महाराणा उदयसिंह की राना वीर वीरांगना वीरा का स्मरण किया जिसमें देश प्रेम तथा स्वाधीनता की भावना भरी हुई थी वीरा कहती है—

संसार में स्वाधीनता ही ईशकृत सम्मान है
रक्षा उचित है अस्तु उसकी जब तलक यह प्रान है
हे ! देववर ! स्वातंत्र्य तब जिसने किया निर्माण है
उस ईश को कर जोड़ युग श्रद्धा समेत प्रणाम है।
स्वाधीनता में जो सदा सिरमौर था संसार में
है गिर रहा प्रभुवर ! वह परवश्यता की गार में
भयभीत भारतभूमि की रक्षा करो रक्षा करो। §

श्री सुरेन्द्रनाथ तिवारी ने भी वीरांगना वीरा तथा पृथ्वीराज के शौर्य का वर्णन कर उनके प्रति वीर पूजा की भावना प्रकट की—

---

† मैथिलीशरण गुप्त— कर्मवीर बनो (कविता)
§ ठा० भगवतसिंह विशारद—वीरांगना वीरा (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १२-४२

टीडी दला सी शत्रु सेन काटने फिर वह लगी
दोनों तरफ तलवार लेकर छाटन फिर वह लगी
शोभित हुई ज्यो सिंहिनी वीरांगना तारा वही ।
जिस ओर वह घूमी वहाई रक्त की धारा वही । †

श्री भवानी दत्त जोशी ने भारतभूमि के वीर पुरुषो का स्मरण किया है तथा उनके देश प्रेम तथा राष्ट्र सेवा की उदात्त भावनाओ का सुन्दर चित्रण किया है। 'वीर भारत' नाटक के कुछ पद उल्लेखनीय हैं—

भारत क प्रिय वीरों ! वीर धम व्रतधारी
भारत के पुरुषों वे तुम मुख उज्जवलकारी ।
स्वामी काज स्वदेश के भक्त सत्य प्रणकारी,
तन धन इन अरपन करि होहु जात जयकारी । ‡

श्री सत्यानारायण कविरत्न ने देश प्रिय नेता महात्मा गाधी की स्तुति मे 'श्री गाधी स्तव लिखा तथा श्रद्धा प्रकट की—

जय जय सदगुण मदन अखिल भारत के प्यारे
जय जगदीश अनमधि कीरतिकल विमल उजयारे ।
जय देश भक्ति आदर्श प्रिय शुद्ध चरित अनुपम अमल,
जय जय जातीय तडाग के अभिनव कोमल कमल । §

श्री गयाप्रसाद शुक्ल सनेही त्रिशूल' ने राष्ट्रीय होली शीर्षक कविता में देश के नेताओ की प्रशंसा एव गुणगान करते हुए देश राग की तान सुनाई है—

छिडी है देश राग की तान !
मुरली मधुर 'मदनमोहन की करती मधुमय तान
डमरू लिए बालगगाधर डाल रहे है जान ।
देते ताल सकल नेता हैं गाँधी से गुणवान,
भारत हृदय मजु रग स्थल सुरपति सभा समान ।
है स्वराज्य कामना कामिनी नृत्य निरत हर आन । *

---

† श्री सुरेन्द्र तिवारी—वीरांगना वीर (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ७

‡ श्री भवानीदत्त जोशी-वीर भारत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १–६

§ श्री सत्यानारायण कविरत्न—श्री गाँधी स्तव, सम्मेलन पत्रिका सवत् १६७४ अक ८८८

* त्रिशूल—त्रिशूल तरग (तृतीय सस्करण) पृष्ठ १०२

इस पद म महामना मदनमोहन मालवीय, बाल गगाधर तिलक तथा महात्मा गांधी जी की देश सेवा का उल्लेख किया गया है।

श्री प० झाबरमल ने 'तिलकगाथा' पुस्तक म बाल गगाधर तिलक के जीवन पर प्रकाश डाला है तथा उनकी सेवा त्याग व तपस्या का सुन्दर चित्रण किया है—

उसी तरह कतव्य कम स विमुख हुए भारतवासी
साहस रहित दलित अ्याय स तज हाल–पर–विश्वासी।
सतत यत्न कर तिलक देव ने किया शुद्ध सचारित्र नाग,
आत्म बोध का पाठ पढाया तब मृतको म आए प्राए। *

श्री नृसिह ने 'राष्ट्रीय सनिक' का वणन करते हुए उसके बलिदान तथा गांधी की जय ध्वनि स शत्रुओ की विकलता का मार्मिक चित्र खीचा है—

खादी का खासा कुर्ता है उसकी ही गाधी टोपी है,
मया का मुक्त कराने की धन जान शौक से सौंपी है।
वदेमातरम् का धन गजन वह राष्ट्र ध्वजा का फहराना
गांधी की जय जय ध्वनि स रिपुओ के दिल दहलाना। ‡

श्री माधव शुक्ल न वीर पूजा तथा वीरा की प्रशस्ति सबधी बहुत से गीत लिखे। देश का नेतृत्व करने वाले अमर सेनानी और त्यागी महापुरुषो की वदना का स्वर माधव शुक्ल की सरल सहज तथा मधुर वाणी मे सुनाई देता है—

जयति जयति हिंद देश जय स्वराज्य जय स्वदेश
जयति राष्ट्र गुरु उदार पूज्य 'तिलक कणधार'
'मोहन जय कमवीर नायक जन धीर वीर। †
जय जय तिलक दव भारत हितकारी,
विद्या गुण बुद्धि खान देव रूप धारी।
भगवान तिलक ! मरी कानो म है तरी निर्भीक पुकार
भूल नही सकते स्वराज्य है जन्मसिद्ध मेरा अधिकार।

गाधी स्तव कविता म महात्मा गाधी जी के त्याग और सेवामूर्ति रूप के चित्रण द्वारा उनकी स्तुति की गइ है। गांधी भारत की शान ही नही वरन् सारी मानवता क गौरव का प्रतीक है—

---

* श्री प झाबरमल शमा—तिलक गाथा (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ६

‡ राष्ट्रीय सिहनाद (काव्य सग्रह) प्रथम सस्करण—पृष्ठ २५०

† श्री माधव शुक्ल—जाग्रत भारत (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २ २२, २६

तेरे निहारत ही भारत के जागे भाग,
मन्यिन की सूखी साख बीच प्रान परिगो।
तेरे निहारत स्वतन्त्रता सचेत भई
दासता वपूनिनी को मानो पून मरिगो।

गांधी तू आज हिन्दी की शान बन गया,
सारी मनुष्य जाति का अभिमान बन गया।

इस प्रकार अनेको कवियों ने गांधी जी, तिलक मालवीय जी, स्वामी दयानन्द आदि की प्रशस्ति म बहुत से गीत लिखे तथा पौराणिक एव ऐतिहासिक महापुरुषो के जीवन के विभिन्न चित्र उपस्थित करते हुए उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। तिलक की मृत्यु पर सारे देश मे शोक छा गया— बहुत से कवियों ने शोक प्रकट करते हुए उनकी उज्जवल कीर्ति व देश सेवा के व्रत का वणन किया। सनेही तथा श्री सुमित्रानदन पत जी की इसी अवसर पर लिखी गई कविता देखिए—

कैसा वज्रपात हाय भारत मही म हुआ,
परम प्रशस्त कीर्ति युग ध्वस्त हो गया।
फट गया भाग्य आज स्वत्व का स्वतन्त्रता का
जीवन का एक मात्र वही तो सहारा था
टूट गया भारत गगन का सितारा,
वृद्धा माता का लकुट और मुकुट हमारा।*

पत जी ने भी राष्ट्र के अमर सेनानी तिलक के प्रति श्रद्धांजलि समर्पित की—

तिलक! हा! भाल तिलक
छुडा दिया किस अकरुण कर ने यह शोभालकार
कर्म योग की टीका अविरल, कहाँ गया माँ की गोदी का
हाय! केसरी बाल
स्वगति में गगा सा अविचल देश की धूलि से भरा लाल।§

श्री श्यामनारायण पाडेय के 'हल्दीघाटी महाकाव्य मे युद्ध का आवेगपूर्ण वणन है। स्वतत्रता के अमर पुजारी महाराणा प्रताप ने मातभूमि की सेवा के लिए

---

* सनेही वज्रपात, तिलक निधन पर (कविता प्रताप) अगस्त १८२०

§ सुमित्रानदन पत—वीणा पृष्ठ ७०

अपने प्राणो की आहुति दे दी। प्रताप की एक आवाज ने जनता बलिदान करने की प्रेरणा दी—

उसके एक इशारे पर वीरो ने ल तलवारें
पवत पथ रग दिए रक्त से कर वारा पर वारें।
निकल रही जिसकी समाधि से स्वतत्रता की आगी
यही कही पर छिपा हुआ है वह स्वतत्र बरागी।*

पाडेय जी ने एक छोटा सा काव्य त्रेता के दो वीर' लिखा है जिसम लक्ष्मण मेघनाथ के युद्ध का वणन करते हुए लक्ष्मण के शौय का चित्रण किया है। 'हल्दी घाटी को पढकर जागनिक के आल्हा की याद आती है।

हिदी राष्ट्र भाषा क प्रति प्रम राष्ट्रीयता की भावना के प्रचार के साथ हिन्दी के प्रति प्रेम की भावना भारतेदु युग से ही वढने लगी थी। राज्य तथा कचहरी की भाषा पहले उदू व फारसी थी अब उसका स्थान धीरे धीरे हिदी लने लगी। यह परिवतन अकस्मात ही नही हुआ इसके लिए जनता को सतत सघष करना पडा और इस सघष ने आदोलन का रूप ले लिया जिसम द्विवेदी युग के अधिकाश कवियो ने भाग लिया। भारतेदु युग के समान यहा पर भी बहुत से हिदू हिदी हिदुस्तान का लक्ष्य लकर इस आदोलन को आगे वढाने मे सक्रिय रहे।

आचाय महावीर प्रसाद द्विवेदी हिदी के अनय महारथी और उन्नायको मे अग्रणी रहे। द्विवदी जी को हिदी भाषा और साहित्य से ही नही अपनी बसवाडी बोली से भी विशेष प्रेम था।† यहा के लेखको व कविया को विदेशी भाषा का प्रयोग करना उहें बहुत बुरा लगता था वे सारे देश म हिदी भाषा का प्रचार चाहते थ। द्विवेदी जी ने हिदी भाषा के प्रयोग तथा हिदी साहित्य के भडार की वद्धि के लिए प्रेरणाप्रद बहुत से लख व कविताए लिखी तथा भाषण दिए। मातभाषा को छोडकर अय भाषाओं म लिखने वालो को उहोन बहुत बुरा माना। नागरी की दुदशा के वणन म द्विवदी जी ने उसके गुणा पर भी प्रकाश डाला है—

नागरी तेरी यह दशा—
माता त्वदीय शुचि सस्कृत देवयानी
वर्णावली तव मनोहर रूपखानी

* श्री श्यामनारायण पाडेय—हल्दीघाटी (प्रथम) पष्ठ ५
† डा० उदयभानुसिंह—महावीरप्रसाद द्विवदी और उनका युग (प्रथम स) पृष्ठ ५७

अत्यन्त शुद्ध लिपि होती सदैव तेरी
अल्प प्रयास मह सिद्धि सबै घनेरी ।*

हिन्दी भाषा को कवि नहीं भूलता है तथा उसके राज्याश्रय मिलने की प्रार्थना करता है—

कछु प्रार्थना है हमारी सुनी ज
जगद्धात्रि आशे ! कृपाकोर कीजे
गुण ग्राम की आगरी नागरी है,
प्रजा की जु सम्मान सौभागरी है।
मिले तहि राजाश्रय क्षेमकारी
यही पूजियो एक आशा हमारी ।‡

नागरी भाषा एक असहाय नारी के रूप में मानो अपना प्रार्थना पत्र अधिकारियों के पास भेजने के लिए हिन्दी भाषा के प्रेमी तथा उद्धारक मालवीय जी से अनुरोध करता है—

मेरे प्रचार हित पत्र भये अनेका प हा ! अभाग्य वश सिद्ध भये न एका
न्यायालयादि मह हाय न सत्प्रदेश कामों कहीं अपनि दीन दशा महेश ।
ताते महान मदनमोहन मालवीय ! लीजो पठाय यह पत्रक मद द्वितीय
विनप्ति एक इतनी सुनियो मनीय होवे चिरायु यश नित्य बढ़े त्वदीय ।§

हिन्दी भाषा की दुर्दशा करने वाले तथा मातृभाषा के द्रोहियों की चर्चा करते हुए उनकी सृष्टि बंद करने के लिए भगवान से प्रार्थना भी की—

शुद्धा शुद्ध शब्द तक का है जिनको नहीं विचार,
लिखवाता है उनके कर मे नए नए अखबार ।

हिन्दी भाषा की सेवा करने वाले मातृभाषा प्रेमियों के प्रति आभार एवं प्रसन्नता भी व्यक्त की—

तोसों कहो कछु कवे ! मम और जोवो ।
हिन्दी दरिद्र हरि तासु कलंक धोवो ।

* महावीरप्रसाद द्विवेदी—नागरी (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १

‡ द्विवेदी काव्यमाला – पृष्ठ २२२

§ महावीरप्रसाद द्विवेदी—द्विवेदी काव्यमाला—पृष्ठ २४१ २६१

मिश्र बन्धुओं ने हिन्दी अपील सम्बन्धी रचनाओं द्वारा उन्नति व प्रचार करने की प्रेरणा दी—

> सब विधान मह नागरी हम सब मह हितकारि,
> स्वच्छ सरल सुन्दर सुनिर आनुरूप तन धारि।
> हिन्दी उन्नति साथ ही सब उन्नति हुव जाति
> ताते तन मन धन लगी हिन्दी उन्नति माहि।*

प० जगदेव प्रसाद उपाध्याय ने हिन्दी की ओर से अपील करते हुए कहा—

> यदि परम परमेश वन्द बहु सीस नवाऊ
> हिन्दी हित की कथा हिन्दी जान सुनाऊं।
> यदि समस्त भारत म एक प्रबल आनन्द उभारो
> तो नागरी प्रचार करन की रति अवगाहो। †

हिन्दी जगत के महाकवि श्री अयोध्यासिंह जी उपाध्याय ने भी हिन्दी भाषा के प्रति जनता में प्रेम उत्पन्न करने का सतत प्रयत्न किया। जातीय भाषा की उन्नति में ही देश की उन्नति है तथा हिन्दी भाषा के साहित्य की समृद्धि करने का महान काम किया तथा प्रेरणा दी। 'हरिऔध' जी की उद्बोधन तथा जातीय भाषा शीर्षक कविताओं में इसी प्रकार के उद्गारों की अभिव्यक्ति हुई—

> सज्जनो देखिए निज काम बनाना होगा
> जाति भाषा के लिए योग कमाना होगा
> सामने आके बड़े वीरों लों मान हिन्दी का बढ़ाना होगा।
> स्वर्ग और मुक्ति के झगड़ों से किनारे रहकर
> हिन्दी सेवा ही में सब जन्म बिताना होगा। ‡
> दूर हो सब विघ्न बाधा भाग हिन्दी का जगे।
> जाति भाषा के लिए राजसुख को राजगने।

---

* प० श्यामबिहारी—शुकदेव बिहारी मिश्र—हिन्दी अपील (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ५

† प० जगदेव उपाध्याय—हिन्दी की ओर से अपील—ना०प्र० पत्रिका—सन् १९०५—भाग १०

‡ हरिऔध—उद्बोधन—चाद—मार्च १९१६

हिन्दी साहित्य सम्मेलन पत्रिका तथा काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका आदि अनेकानेक पत्रिकाओं ने बहुत से प्रसिद्ध एवं अप्रसिद्ध कवियों की हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम प्रकट करने वाली कविताओं का प्रकाशन समय समय पर किया है। हिन्दी की वन्दना करते हुए देशभक्त कवियों ने अपनी राष्ट्रीय भावना का परिचय दिया। श्री रमेश गौरीशंकर शर्मा तथा रामाश्रय मिश्र जी की 'हिन्दी वन्दना' देखिए—

हे देवि होय चहुं दिशि प्रचार, हे देवि मिटे सब अंधकार।
हे देवि विदित हो सब माय, हे देवि राष्ट्रभाषा न अय।*

श्री गौरीशंकर शर्मा ने भी मातृभाषा की वंदना के कुछ गीत लिखे—

जय जयति जय मातृभाषा नागरी गुन आगरी
सुखकारिणी मनहारिणी सुठि विमल कीर्ति उजागरी।
उस राजभूतल मे हिन्दी प्रेम कैसे बढ रहा,
हिन्दू व हिन्दुस्तान पर जो आदि से मर रहा।
यह राष्ट्र भाषा सुखमयी निज बली अब फला रही
भारत के इस उद्यान मे कैसे सुमन फल ला रही।†

श्री हरिप्रसाद द्विवेदी की हिन्दी स्तव कविता में मातृभाषा की वंदना है—

जयति जय जननि भारती हिन्दी भाषा
मधुर मनोहर मूरति पुण्य प्रकासा।
शुभ राष्ट्रीय विचार प्रकट हिन्दी में कीज
याकौ पुण्य प्रचार देश भर मे करि दीज।

भारतवर्ष मे रहने वाले स्त्री-पुरुषों को देश की समृद्धि के लिए आगे बढकर हिन्दी को अपनाने के लिए कवि कहता है। भारतेन्दु युग के समान ही हिन्दी, हिन्दू हिन्दुस्तान का नारा द्विवेदी युग मे भी सुनाई देता है—

कर्तव्य मे यदि तुम सभी तत्पर रहोगे सदा
भर जाएगी द्रुत हिन्द हिन्दी हिन्दुओं मे सम्पदा।

---

* श्री रमेश—हिन्दी वन्दना—सम्मेलन पत्रिका भाग २ अंक ६ संवत् १९७१
† श्री गौरीशंकर शर्मा—मातृभाषा वंदना—चित्रमय जगत, अगस्त १९१९

तुम एक ही माता की गोद के सभी संतान हो,
भारतवासी एकभाषी हो कि तब कल्याण हो।*

श्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी की हिन्दी की जय कविता म भी यही स्वर है—

हम हिंदी क पुत्र हमारी हिन्दी माता,
हिंदू हिंदी हिन्द नाम को निरमहु माता।
हिन्दी के हित चिन्तन म नित चित्त देत हैं।
भूलि कबहुँ नहि उर्दू को हम नामहु लेत हैं।

श्री युवराज ने भी हिन्दी गान' कविता म और हिंदी, हिंदु हिंदुस्तान की बात कही—

हम हिंदू हैं देश हमारा प्यारा हिंदुस्तान,
इसी हेतु भाषा भी हिन्दी यह सिद्धान्त महान।
हिंदी प्रतिभावान हमारी हिन्दी प्रतिभावान। †

द्विवेदी युग के उत्तर काल के अन्य कुछ कवियों ने भी इस प्रकार की रचनाएं की। श्री रामचन्द्र शर्मा चतुर्वेदी 'विद्यार्थी' ने अपनी हिन्दी दीपक कविता मे हिंदी-हिंदू के विचार रखे—

अपना जो अस्तित्व विश्व में रखना चाहो
अपना जो उत्थान विश्व मे करना चाहो
हिंदी हिंदू ध्वनि विश्व म भरना चाहो
दास्य शृखला तोड स्वावलम्बन जो चाहो
शीघ्र करो ससार म अभेद्य हिंदू सगठन। §

श्री नाथूराम शकर शर्मा 'शकर' न भी 'फूट की फटकार' कविता मे उर्दू की निंदा करते हुए कहा है—

---

* जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी (सम्मेलन पत्रिका सवत १९७२)

† श्री युवराज—हिंदी गान—चित्रमय जगत, पूना, दिसम्बर सन १९१६

§ श्री रामचद्र शर्मा—राष्ट्रीय सदेश (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १४

आरज बधु नागरी भाषा भारत देश बखान,
कभी न कहते हिंदू भाई हिन्दी हिंदुस्तान ।
गाल उर्दू को छरते हैं । *

'वंदेमातरम्' राष्ट्रीय गीत की शैली पर ही हिन्दी भाषा व राष्ट्रभाषा की वंदना के कुछ गीत इस युग के कवियों ने लिखे जिसमे हमे उनके राष्ट्रप्रेम का परिचय मिलता है । श्रीकांत कुसुमाकर जी की 'हिंदी माता' कविता देखिए —

जय भारतवासिनी, जयति जय हिन्दी माता,
जय गुणगौरव खानि, हित की भाग्यविधाता ।
जय अमित कोटि मुख रंजिनी, इष्टदेव प्रिय नागरी
जय देश जाति यश रक्षिणी भाषा जगत उजागरी ।

श्री माधव शुक्ल ने 'मातृभाषा वंदना' गीत मे बंगला के वंदेमातरम् गीत की छाया दिखाई पडती है —

सरला मधुरां अतिशय रूचिरा समग कोमला मातरम्
परम शांति सुख रूपा गुणमणि लसित अनूपां
भुक्तिमुक्तिदा मातरम् । वंदे मातरम् ।
वेद शास्त्र कर कलशा दशमातृ प्रियभाषा
जननि भारतीम् मातरम ।

श्री भगवन्नारायण भार्गव बी ए ने व्रजभाषा मे हिंदी और उन्नति के लिए सबको प्रेरित किया —

अपनी अपनी भाषा के राष्ट्रीय बनावन लागे,
हम हत भाग्य हिन्द सुत हा हा ! अजहु नहिं सु जागे । †
हिन्दी-भासा-मातु के उत्कट प्रेमी सब,
सेवक हों साहित्य के राखें देशी गव ।

---

* नाथूराम शंकर —शंकर सरोज (तृतीय संस्करण) पृष्ठ ६०

§ श्रीकांत कुसुमाकर — हिन्दी माता (कविता) सम्मेलन पत्रिका अंक ४ संवत् १६७५

† श्री भगवन्नारायण बी ए —राष्ट्रीय तरंग—(प्रथमसंस्करण) पृष्ठ १३

श्री रूपनारायण पांडेय ने हिन्दी भाषा व साहित्य भंडार की वृद्धि से देशोन्नति होने की भावना व्यक्त की तथा हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद देने के उद्गार भी प्रकट किए—

भिन्न भिन्न भाषा नद लेकर हिन्दी रूप महापगा
बहती हुई सरस कर रखे जीवन्मृत भारत सारा।
भाषा बिना महत्व प्राप्त कर सकती कभी न कोई जाति
देशोन्नति का मूल प्रौढ़ साहित्य सदा होता सब भांति।
बिन राष्ट्र भाषा स्थापन में शांति देश में सुख समान
एक राष्ट्र भाषा रखो है देश जाति गौरव का मान।

श्री मुन्सिफ सिंह शाक्य ने नागरी दुर्दशा का वर्णन करते हुए दुःख प्रकट किया है—

घर घर अहो मारी फिरे धरता न कोई धीर है,
मान बिल्कुल है नहीं हिन्दी का हिन्दुस्तान में
मान 'हिंदी' होय होगा मान इंगलिस्तान में। ‡

बहुत से हिंदी प्रेमी कवि ऐसे भी थे जो उर्दू भाषा में अधिकार के साथ लिखते थे किन्तु उन्होंने भी हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम प्रकट किया तथा उर्दू का मजाक उड़ाया है। मुन्शी महाराज बहादुर बर्क ने अपनी हिंदी भाषा कविता में उर्दू मिश्रित भाषा में लिखा है —

हो इतना मर जमीने हिंद में परचार हिन्दी का
कि रायज हो यहाँ सिक्का सरे बाजार हिन्दी का
गुजारें जिन्दगानी लेके हम आधार हिंदी का
हमारे साजे हस्ती में शामिल तार हिन्दी का। †

बाबू बालमुकुन्द जी गुप्त ने उर्दू तथा उर्दू का उत्तर आदि अनेक कविताओं में उर्दू हिन्दी का पारस्परिक झगड़ा जो भारतेन्दु युग से चला आता था, आकर्षक शैली में लिखा। गुप्त जी की भाषा बड़ी सजीव, चलती तथा विनोदपूर्ण होती है। उर्दू को एक सुन्दर मुस्लिम अल्हड़, शोख लड़के का रूप दिया गया है और नागरी को सुशील शर्मीली और अदब वाली बताया गया है—

---

‡ श्री रूपनारायण पांडेय—पद्य पुष्पांजलि (प्रथम संस्करण) ६३, ८४

† हिन्दी चित्रमय जगत, पूना मई १६१४

यहा आई हो आँखे नीची करो,
मटकन चटकने से अब मत मरो ।

यहा पर भाझो को झनकाइए दुपट्टा का हरगिज न खिसकाइए ।

यहा तो अदब ही को सिर पर धरो
यह सरकार ने दी है जो नागरी ।
इस तुच्छ न समझो निरी घाघरी
समझ लो अदब की यह पोशाक है
यहा और इज्जत की पहचान है । ‡

प० गणेशलाल सारस्वत ने देवनागरी की बारी शीर्षक कविता म देव नागरी को गुण की आगरी बताया । श्री रामवचन द्विवेदी ने हिन्दी अष्टक' लिखकर हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप म सम्मानित करते हुए अपनी श्रद्धा प्रकट की—

हिन्दी वालो क लिय हिन्दी अहो सिर मौर है
अब तुल्य इसके हिन्द भाषा दूसरा नहीं और है ।
प्रिय बन्धुओ ! अज्ञानता तिमिर छाई हो जहा
राष्ट्रीय भाषा दीप लेकर ज्योति तुम कर दो वहा ।
बस बधु हिन्दी ज्योति स ही जगमगा यह जाएगा
तिमिर अघ इस देश का तब स्वय ही ढल जाएगा । *

हिन्दी सदेश कविता म भारत क नवयुवको को हिन्दी की पताका सारे देश मे फहराने का मत्र दिया—

मिल जुलकर भारत भर की भाषा हिन्दी बनवाओ
हिन्दी झडा हिन्द देश म पुत्रो ! अब फहराओ ।
लिखो पढो हिन्दी भाषा म हिन्दी गुण गाओ
माता का चरणामृत लेने पुत्रवरो ! धाओ धाओ ।

‡ बाबू बालमुकुन्द गुप्त—स्फुट । दूसरा सस्करण। पृष्ठ १७६
* रामवचन द्विवेदी—हिन्दी अष्टक । कविता । चित्रमय जगत मई १८२४

उपसंहार

भारतेन्दु युग की देशभक्ति संबंधी रचनाएं हिंदू इतिहास तथा प्राचीन गौरव एवं परम्परा की ओर अधिक संकेत करती है तथा गरीब जनता, श्रमिक व किसानों का उल्लेख मात्र ही किया है। किन्तु द्वितीय उत्थान में कवियों का ध्यान वर्तमान की ओर अधिक है जन मानस के कष्टों, यातनाओं से कवि विमुख नहीं हैं वरन इन्हें जनवादी एवं मानववादी भी कहा जा सकता है। जनता के दुख सुख हास-अश्रु और जय पराजय का उदघोष इसी युग के कवियों ने किया। अभी तक कवियों का आराध्य ईश्वर या राजा रहा था जनदेवता नहीं। इस युग का कवि प्रत्येक निश्चित विषय पर कविता नहीं लिखता वरन् अपने विषय को चुनने में स्वच्छन्द है। इसीलिए इस युग की कविताओं में अनेकरूपता तथा विविधता मिलती है।

इस युग के कवियों को मानवतावादी कहने से तात्पर्य उनकी उदार तथा व्यापक दृष्टि से है तथा इनमें हम न्याय तथा सत्य प्रेम की भावना का आधिक्य पाते हैं। इस समय के कवियों ने धार्मिक साम्प्रदायिकता राजनीतिक परतंत्रता सामाजिक दुर्दशा की भर्त्सना की। केवल वर्तमान दशा का दुखपूर्ण चित्र उपस्थित कर ही संतोष नहीं करते वरन पीडित देशवासियों के साथ सहानुभूति भी प्रदर्शित करते हैं तथा इन दुखों को दूर करने में उत्साह व बल संचार भी ओजपूर्ण भाषा में करते हैं ये कवि देश की समृद्धि के इच्छुक हैं। तथा इनमें आत्मविश्वास तथा दृढ़ता स्पष्टतः परिलक्षित होती है।

यह युग परिवर्तन का युग कहा जा सकता है। भाषा और भाव तथा शैली तीनों की दृष्टि से इसमें कुछ परिवर्तन तथा प्रयोग हुए। कवियों ने खड़ी बोली को नवीन भाषा की व्यंजना की शक्ति प्रदान की। शैली एवं व्यंजना का निखार इस युग के पश्चात् तृतीय उत्थान में हुआ। द्विवेदी युग ने भारतेन्दु युग के नवीन भावों व विचारों को विकसित कर काव्य का विषय बनाया तथा तृतीय उत्थान को प्रभावित किया।

इस युग के कवियों ने भारतीय संस्कृति के स्वर्ण अतीत का चित्रण किया। गौरवमय स्वर्णिम अतीत द्वारा अपने चरित्र निर्माण एवं राष्ट्र निर्माण करने की प्रेरणा इस युग के कवि तथा लेखक जनता को देते रहे। एक ओर सुख-समृद्धि का चरमसीमा को पहुँचा हुआ हमारा अतीत था दूसरी ओर पतनोन्मुख दीन हीन वर्तमान भारत। वर्तमान की हीनावस्था में गौरव और वैभव सुख और ऐश्वर्य की चिन्ता में, अतीत का वह स्वर्णिम आदर्श प्रत्यक्ष नहीं हो जाता तब तक वही एक मात्र गौरव का आधार बना रहता है।

प्रकृति का परम्परागत चित्रण छोडकर इस युग के कवियो ने सच्चा प्रेम प्रकट किया। श्रीधर पाठक दोनो युग के सधिकाल के कवि हैं जिन्होने पहली बार ही तन्मयता से हिमालय एव काश्मीर के प्राकृतिक सौंदय व शोभा का प्रभावपूर्ण वर्णन किया है। रामचद्र शुक्ल ने भी ग्रामश्री का वर्णन करते हुए प्रकृति माता का सजीव चित्रण किया है। रामनरेश त्रिपाठी ने देश क विस्तृत भू भाग के सौंदर्य का वर्णन कर सच्चा देश प्रेम प्रदर्शित किया है। 'पथिक' तथा 'स्वप्न' मे श्रीधर पाठक की परम्परा को आगे ले चलते हुए श्री त्रिपाठी जी ने देश के विभिन्न प्राकृतिक स्थलो के सौंदय का वर्णन किया है।

विदेशी शासन की प्रशसा म कुछ रचनाए इस काल मे हुई अवश्य, परन्तु ये भारतेन्दु युग से चली आई परम्परा का पालन मात्र थी। द्विवेदी युग के अधिकाश कवियो ने यह देख लिया था कि स्वराज्य की प्राप्ति केवल याचना और भिक्षा-प्रार्थना के रूप मे नहीं हो सकती इसके लिए अपने बल और त्याग तथा बलिदान द्वारा जनमानस को उदबुद्ध करना चाहिए। इसलिए इस युग की देशभक्ति की कविता भारतेन्दु युग से अधिक उन्नत है। जनता मे एकता व सगठन की भावना भर कर मातृभूमि की उन्नति के लिए हसते हसते कष्टों को सहने की दृढ भावना इस युग म पनपी।

असहयोग और स्वदेशी आदोलनो ने भारतीयो के मन म इस विश्वास को दृढ कर दिया कि स्वराज्य प्राप्ति का मूल मत्र यही है। कांग्रेस की नीति तथा तिलक एव महात्मा गाधी आदि के सफल नेतृत्व में कवियो ने कष्टो के सहने तथा देश के लिए आत्म बलिदान करने की प्रेरणा जनमानस मे भरी। 'स्नेही' (त्रिशूल), नाथूराम शकर देवीप्रसाद पूर्ण, गुप्त भारतीय आत्मा तथा माधव शुक्ल आदि अन्य प्रसिद्ध एव नए कवियों ने अपने राष्ट्रीय गीतो द्वारा वर्तमान दुर्दशा का चित्रण कर उसे सुधारने का माग दिखाया। गांधी जी की अहिंसा की नीति, विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार तथा असहयोग आदोलन की त्रिवेणी म देश के नवयुवको को अवगाहन कराके इस युग के कवियो ने व्यग्य द्वारा समाज में प्रचलित अधविश्वास अनमेल विवाह दहेज प्रथा विदशी शासको की खुशामद करने वाले लोगों, अग्रेजी सभ्यता आदि के दोषों को बताकर आलोचना की तथा समाज म नई चेतना तथा सुधार लाने की प्रेरणा दी। इस युग मे पिछले युग की अपेक्षा समाज मे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ इसलिए कविगण पुराने विषयो पर ही अधिक लिखते रहे किन्तु कविया म राजनीतिक चेतना अधिक दृष्टिगोचर हुई। पीडित शोषित वग म किसान, मजदूर की करुण कहानी भी है तथा गरीब, भिखारी असहाय आदि के मार्मिक चित्रण भी

किए गए है। इसीलिए यह कहा जा सकता है कि इस युग के साहित्य को आर्थिक एवं राजनीतिक पहलुओं ने काफी प्रभावित किया। अंग्रेजों के दमन, अमानुषिक अत्याचार (जलियांवाला बाग) आदि ने भारतीय युवकों को निराश नहीं होने दिया वरन उनकी क्रांति की ज्वाला को प्रज्वलित ही किया। जेल और बेड़ियाँ सत्याग्रही के कृष्ण का मंदिर तथा हार बन गए तथा भारत मां की मुक्ति के लिए आत्मोत्सर्ग की भावना प्रबल होती गई। वीर सत्याग्रही अहिंसक नीति तथा अपनी नैतिक शक्ति व आत्मबल द्वारा विदेशी शासन की नींव को हिलाने लगा और स्वतन्त्रता को अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानकर तूफान की तरह आगे बढ़ने लगा। त्रिशूल, सनेही, माधव शुक्ल आदि अनेकों कवियों की वाणी ने क्रान्ति का शंखनाद किया और एक नया जीवन फूंककर हिन्दी काव्य साहित्य को सप्राण बनाया।

इस युग के कवि का दृष्टिकोण यद्यपि उदार था तथा हिन्दू और मुस्लिम सभी ने प्रारम्भिक स्वतन्त्रता आंदोलन मे एक साथ मिलकर अभियान किया तो भी इस समय की राष्ट्रीयता भारतेन्दु युग के समान ही, हिन्दू राष्ट्रीयता रही। द्वितीय उत्थान के कवियों में से अधिकांश 'हिन्दी हिन्दू, हिन्दुस्तान' के पक्षपाती थे। कुछ कवियों ने हिन्दू मुस्लिम प्रेम संबंधी कविताओं की रचना की तथा देश में रहने वाले विभिन्न धर्मावलम्बियों की एकता का नारा लगाया किन्तु यह भावना बहुत ही कम मिलती है।

भाषा के प्रति प्रेम भी इस युग के कवियों ने प्रदर्शित किया। सन् १८०० से उत्तर प्रदेश में कचहरी तथा राजकाज में नागरी का व्यवहार मान्य हुआ जिसके फलस्वरूप उर्दू की अपेक्षा हिन्दी का प्रचलन अधिक होने लगा। अनेकों पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन तथा काव्य संग्रह एवं खड़ी बोली के विविध साहित्यांगों के सृजन तथा मुद्रण ने हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार व विकास में लोगों का उत्साह बढ़ाया और एक विराट आंदोलन का रूप दे दिया। कई संस्थाओं का स्थापना हो गई तथा बंगदूत, सुधाकर, आर्य दर्पण भारतमित्र, लोकमित्र, भारतबंधु हिन्दी प्रदीप, ब्राह्मण आनंद कादम्बिनी शुभचिन्तक पीयूष प्रवाह, बालबोधिनी, भारतेन्दु, सारसुधानिधि, सरस्वती, इन्दु, मर्यादा प्रवाह, प्रभा नागरी प्रचारिणी पत्रिका आदि अनेकों पत्र-पत्रिकाओं ने हिन्दी साहित्य की ओर रुचि जाग्रत की। विशाल जन समुदाय की सारी उन्नति का मूल भाषा को माना गया तथा इसके प्रेम के लिए हिन्दी जगत में खूब आंदोलन चला तथा हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान की भावना का प्रश्रय मिलता रहा।

इस परिवर्तन के युग के सबसे महान युग प्रवर्तक तथा हिन्दी भाषा के नायक तथा प्रेमी आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी हैं। इन्होंने खड़ी बोली में रचना कर अपने

युग के अनेको कवियो को प्रेरणा दी तथा प्रोत्साहन देकर आगे बढाया। विभिन्न भाषाओ - मराठी अग्रेजी सस्कृत आदि के ग्रथो का हिंदी कायानुवाद कर उस समय गद्य तथा पद्य म माग दशक का काय किया। द्विवेदी जी की मौलिक रचनाओ का इतना महत्व नही हैं जितना उनके प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव का जिसके फलस्वरूप भाषा की नीव दृढ हुई तथा उसका रूप सवरता गया। जब काव्य भाषा ने ब्रजभाषा से खडी बोली का रूप लिया उस समय हिन्दी जगत म अस्थिरता और शिथिलता अधिक दिखाई द रही थी। द्विवेदी जी ने भाषा की शिथिलता दूर करके दृढता दी तथा लोगों को व्याकरण सम्मत, शुद्ध मुहावरदार भाषा लिखने की प्रेरणा दी। विभक्तियो तथा 'पराग्राफ पद्धति' का प्रचार द्विवेदी ने बडी लगन और परिश्रम से किया। बीसवीं सदी के प्रारभिक काल मे हिन्दी साहित्य का क्षेत्र व्यापक किया तथा 'सरस्वती' का सफल सपादन कर अमर स्थान प्राप्त कर लिया है। 1

की आशा दिलाई। किन्तु कांग्रेस विधान में स्वराज्य का अर्थ, पूर्ण स्वराज्य माना गया और लन्दन सम्मेलन में अपने प्रतिनिधि नहीं भेजने की घोषणा की। सन् १९३० से प्रति वर्ष २६ जनवरी को स्वाधीनता दिवस मनाया जाने लगा तथा स्वाधीनता की प्रतिज्ञाएं दुहराई गई। 'हम भारतीय भी अन्य राष्ट्रों की भांति अपना जन्म सिद्ध अधिकार मानते हैं कि हम स्वतन्त्र होकर रहें अपने परिश्रम का फल भोगें और हमें जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हों। अतः हमारा विश्वास है कि भारतवर्ष को अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद करके सम्पूर्ण स्वराज्य या स्वाधीनता प्राप्त कर लेनी चाहिए। §

सन् १९३२ में हरिजनों को हिन्दुओं से पृथक प्रतिनिधित्व देकर साम्प्रदायिक भावना को बढ़ाने का प्रयत्न ब्रिटिश प्रधान मंत्री द्वारा किया गया जिसके कारण महात्मा जी ने पूना में उपवास किया।

८ अगस्त १९४२ को बम्बई में एक ऐतिहासिक प्रस्ताव पास हुआ। ब्रिटिश सरकार से अपील की गई कि वह भारत को स्वतन्त्रता दे दे। 'करो या मरो' का मंत्र देकर गाँधी जी ने स्वतन्त्रता के संघर्ष में सर्वस्व बलिदान करने का आदेश किया। 'मरना जानने वालों ने ही जीने की कला सीखी है—आजादी डरपोकों के लिए नहीं जिनमें करने की हिम्मत है वही जिंदा रह सकते हैं' किन्तु अंग्रेजों ने इस पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया और ९ अगस्त को प्रातः ही नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। जनता में निराशा थी और क्षोभ था। ८-१० अगस्त को बम्बई-पूना आदि में कुछ दंगे हुए बाकी सब स्थानों पर अहिंसात्मक प्रदर्शन हुए। सरकार ने इन शांतिपूर्ण जुलूसों को तोड़ने के लिए लाठीचार्ज किया अश्रुगैस छोड़ी जिससे जनता का दबा हुआ क्रोध उग्र रूप धारण करने लगा। अब जनता में आजादी की भावना अधिक तीव्र थी और उसे प्राप्त करने के लिए 'करना या मरना' ही एक मात्र मार्ग दिखाई दिया। पुलिस चौकियां सरकारी दफ्तरों को नष्ट किया गया और लूटा गया रेल तार, खजानों आदि विदेशी शासन के अंगों को नष्ट करना प्रारंभ किया गया। बड़े बड़े शहरों में रियासतों में इसी प्रकार के ध्वंसात्मक कार्य हुए। बिहार तथा बलिया में सन ४२ के विप्लव ने नया ही स्वरूप दिखाया। बहुत से जिलों तहसीलों में जनता का शासन होने लगा। किन्तु पुलिस ने भी दमन करने में कोई कसर, नहीं उठा रखी। विद्यार्थियों स्त्रियों और नवयुवकों पर नृशंस अत्याचार किए गए। हजारों बच्चों को मार डाला गया तथा स्त्रियों के साथ पुलिस ने बलात्कार व

§ पट्टाभि सीतारामय्या—कांग्रेस का इतिहास (पहला खंड) पृष्ठ २८८

वइज्जती करन मे कमी नही की। मध्यप्रदेश, मलारा सयुक्तप्रान्त बिहार आदि स्थानों म मरकारी जुल्मा क रोमाचकारी दृश्य दखने म आए। इस आदोलन म मृत तथा घायल व्यक्तियो की सख्या लाखा म होगी। लाखा रुपया के सामूहिक जुर्माने भी देश की दरिद्र और पीडित जनता स लिए गए। इस आदोलन से ब्रिटिश साम्राज्यवादी आश्चय चकित हो गए और घातक स घातक अस्त्रों का प्रयोग करके भी जनता की दशभक्ति भावना को नही दबा सके।

इस आदोलन के पूव जापान हागकाग बर्मा जावा, मलाया थाइलड आदि के स्वतत्रता प्रेमी भारतीयो न टोकियो तथा बकाक मे सम्मेलन किए और आजाद हिन्द सघ की स्थापना की। इस सघ का उद्देश्य भारत को ब्रिटिश राज से मुक्त करना था। पहल तो जापान सरकार न पूरी सहयता देने का आश्वासन दिया किन्तु जापानियों ने आजाद हिंद सेना के कुछ पदाधिकारियों को गिरफ्तार किया किन्तु १९४३ मे सिंगापुर म पूर्वी एशिया के भारतीयो का सम्मेलन हुआ जिसम श्री रास-बिहारी बोस ने देशभक्त सुभाषचद्र बोस को आजाद हिंद सेना को नेतृत्व का भार सौंपा। इस सना मे महिला तथा बच्चा की भी एक सेना थी तथा इसम हर जातियों तथा धर्मों के व्यक्ति एक साथ मिलकर देश की स्वतत्रता के लिए लडन की तयारी कर रहे थे। जय हिन्द तथा 'दिल्ली चलो' के नारे से नई प्रेरणा व स्फूर्ति भरी जाती तथा दिल्ली के लालकिले मे ब्रिटिश साम्राज्य की कब्र पर विजय-परेड करना अतिम लक्ष्य बताया। एक अस्थायी सरकार की स्थापना भी की गई जिसमें नेताजी सुभाष बोस स्वय राष्ट्रपति सेनाध्यक्ष और परराष्ट्र मत्री बने। हर प्रदेश मे नए स्कूल खोले गए राष्ट्रीय बक तथा गजट क प्रकाशन का काय हुआ। इस सेना न बहुत से राष्ट्रीय गीतो की रचना द्वारा नागरिको म देश प्रेम की भावना भरने का काय किया। इसने बर्मा भारत की सीमा पर आक्रमण कर भारत म प्रवेश भी किया और आसाम को मुक्त कराने की कोशिश की किन्तु बाद म ब्रिटिश सना के आक्रमण ने उन्हें पीछे हटा दिया। अंग्रेजा ने आजाद हिंद फौज के कई भारतीय अधिकारियो पर मुकदमे चलाये और सजाए दी।

सन् १९४४ मे महात्मा गाधी तथा अन्य नता जेल से छोड गये। गाधी जी ने देश म राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की बात कही किन्तु सरकार न देश म मतभेद की बात पदा की - मुसलमान, हरिजन तथा राजाओ आदि की समस्या दिखाकर कांग्रेस स उन समाप्त करने के लिए कहा। महात्मा गाधी एव अन्य नताओं ने जिन्ना से बातचीतें की किन्तु मुस्लिम लीग हर समझौते पर अपनी माँग बढाती जाती थी इसलिए सफलता नहीं मिली। सन १९४५ म राजनतिक गतिरोध दूर करने के लिए

लार्ड वेवल ने एक योजना उपस्थित की किंतु जिन्ना के इस हठ ने कि केन्द्रीय सरकार के सब मुस्लिम सदस्यो का चुनाव लीग ही करेगी वेवल योजना अमल म नही आई। ब्रिटिश सरकार अब समझ रही थी कि वह भारत पर अधिक समय तक राज्य नहीं कर सकती।

भारत के स्वतन्त्रता आदोलन की अतिम झाकी सन् १९४६ के नौसैनिक सघर्ष के रूप म प्रकट हुई। सेना तथा पुलिस पर कडा अनुशासन रखा गया था तथा उन्हे किसी नेता स बात करने की मनाई थी। राष्ट्रीय पत्र पत्रिका भी नही पढने दी जाती थी। इसका कारण था कि यदि सनिको मे देशप्रेम की भावना लग गई तो वे 'विद्रोह' कर बैठेंगे। कही कही अपने भाई बहिनो पर गोली चलाते समय सैनिको के हृदय कापे भी और उन्होंने विरोध भी किया किन्तु वह व्यक्तिगत और एकाकी था। सन १९३० के लगभग पशावर के दगा के समय निहत्थी जनता पर गढवाल राइफल्स को गोली चलाने का आदेश दिया गया। सनिको ने गोली चलाने से साफ इन्कार कर दिया। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार अंग्रेज तथा भारतीय सनिको के व्यवहार मे पक्षपात करती थी। सन् १९४१ क जन-आदोलन तथा आजाद हिन्द फौज की गतिविधियो स बहुत से सनिक परिचित थे और उनम भी स्वाभिमान की भावना जाग्रत होने लगी फरवरी १९४६ म बम्बई के नौसेना कमाडर ने कुछ भारतीय सनिको को गाली दी और इस बहाने ११०० नौसनिको न हडताल कर दी। अपनी मागो म गोरे काले सैनिकों के भेदभाव को मिटाकर समान वेतन तथा सभी राजनैतिक कैदियों एव आजाद हिंद क कैदियो को रिहा करने तथा दूसर देशो को पराधीन बनाने के लिए भारतीय सैनिको का उपयोग न किया जाय आदि माग रखी। हडताल फैलती गई कई जहाजो पर ब्रिटिश झडा उतारकर तिरगा झडा फहराया। शहर म जुलूस निकलें तथा जनता ने भी सहानुभूति दिखाई। कराची कलकत्ता,जामनगर बम्बई आदि स्थानो पर हडताल हुई और गोरे फौजियो द्वारा गोली चलाई गई अन्त म श्री सरदार पटेल तथा अन्य नेताओ ने बीच म पडकर नौसनिको को शात किया। इस आदोलन ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर घातक प्रहार पहुचाया। अंग्रेजो ने जब यह देखा कि सब कुछ छिन जाने वाला है तो यहा जाते जाते फूट फलाकर भारत को कमजोर बनाने की चाल चली। सन १९४६ म वाइसराय ने राष्ट्रपति श्री नेहरू को अन्तर्कालीन सरकार सगठन करने को कहा। इसमें ५ सदस्य मुस्लिम लीग तथा ६ कांग्रेस के थे। बाद में विधान सभा सगठन की भावी योजना बनाई गई तथा देशी राज्यों आदि को समस्त प्रांतों को ३ समूहों में बाटा गया। मुस्लिम लीग न इसका भी विरोध किया। २० फरवरी १९४७ को ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की कि अंग्रेज १९४८ म भारत

छोड़ देंगे और शासन सत्ता भारत के हाथ मे आ जायगी लार्ड माउंटबेटन ने कुछ महीने बाद विधान सबधी नई योजना रखी जिसके अनुसार १६ अगस्त १९४७ से भारत को विभाजित कर भारतीय सघ और पाकिस्तान दो राज्यो मे बाट दिया गया। इसके अतिरिक्त भारत मे ६०० देशी राज्यो को स्वतन्त्र कर राज्य प्रब व स्वय चलाने की घोषणा की जिससे भारतीय सघ कमजोर हो जाए परन्तु समस्त रियासतें भारतीय सघ मे सम्मिलित हो गई ।

शताब्दियो की दासता की शृ खला भारतीयों के सतत सघर्ष और देशप्रेम व बलिदान द्वारा सन् १९४७ म टूटी और भारत की धरती और गगन फिर से स्वतन्त्र हो गए स्वतन्त्रता के पश्चात् देश की राजनीति ने नया रूप धारण किया तथा रचनात्मक एव नव निर्माण की ओर प्रवृत्ति बढ़ी।

वर्तमान युग की साहित्यिक प्रतिक्रिया

द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मक शैली का विरोध वर्तमान युग के प्रारभ होने के के कुछ वर्ष पूर्व ही होने लगा था। स्वानुभूति और हृदय के कोमल भावो की अभिव्यक्ति मुक्तक गीतो द्वारा की जाने लगी। धार्मिक कविता की उपासना तथा आत्म समर्पण की भावना का भी नए रूप मे विकास होने लगा। इस युग की कविता में दो प्रवृत्तिया स्पष्ट रूप मे दिखाई देती हैं – अन्तर्मुखी तथा बहिर्मुखी। अन्तर्मुखी प्रवृत्ति छायावाद और रहस्यवाद के रूप मे प्रकट हुई तथा बहिर्मुखी प्रवृत्ति मे राष्ट्रीय कविता द्वारा अभिव्यक्त हुई। छायावाद तथा रहस्यवाद के असत्य के व्यापक प्रचार से जनता म सच्चे कवियो की कलापूर्ण रचनाओ के प्रति भी अरुचि उत्पन्न हो गई जिसके फलस्वरूप उसका विरोध किया जाने लगा। जनता के दुख और हीनावस्था ने देशभक्त कवियो का हृदय व्यथित कर दिया। कांग्रेस के असहयोग आदोलन तथा अहिंसा व सत्य के प्रति श्रद्धा की भावना म देशभक्त कवियो ने योगदान दिया और स्वय अनेको कष्ट और यातनाए सही। श्री माखनलाल चतुर्वेदी भारतीय आत्मा' सुभद्राकुमारी चौहान, दिनकर नवीन आदि इस कोटि के कवि हैं।

राजनीतिक आदोलनों के कारण नगरो तथा ग्रामो मे बसने वाली अधिकाश जनता में चेतना आई और राजनीतिक एव आर्थिक परतत्रता के विरोध की भावना जागने लगी। अब सरकार से याचना और कृपा की आकाक्षा के स्थान पर कवियों ने देशवासियो को स्वतन्त्रता देवी के चरणो में उत्सर्ग व आत्म बलिदान करने की प्रेरणा भरी। पश्चिम के राजनीतिक आंदोलनों की गूज मे भारत भी पहुची जिसके फलस्वरूप किसान आन्दोलन मजदूर आन्दोलन अछूतोद्धार आदि तीव्र स्वर इस युग

के कवियों की वाणी में सुनाई दिया। वर्तमान युग में देशभक्ति पूर्ण कविता के साथ ही क्रान्तिवादी काव्य का सृजन हुआ। आज के युग की अशांति और असंतोषजनक स्थिति ने क्रान्तिवादी कविता को नई प्रेरणा दी है। ये कवि कुरीति, अंधविश्वास, आर्थिक अन्याय तथा रूढ़ि से मुक्त नई व्यवस्था का जन्म देखना चाहते हैं।

अब हम वर्तमान युग के प्रमुख देशभक्त कवियों की रचनाओं में राष्ट्रीय भावनाओं का स्वरूप देखेंगे —

स्वर्णिम अतीत तथा जन्मभूमि के प्रति देशप्रेम—राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की स्वर्णिम अतीत तथा देशानुराग सबंधी रचनाएं द्विवेदी युग में बहुत प्रकाशित हुई। गुप्त जी दोनों युगों के साहित्याकाश में अपना प्रकाश पुंज लिए हुए चमक रहे हैं इसलिए उनका उल्लेख वर्तमान युग में आवश्यक है। उन्होंने अनेकों पौराणिक तथा ऐतिहासिक आख्यानों के आधार पर गौरवपूर्ण अतीत तथा मातृभूमि वंदना विषयक सौंदर्यपूर्ण रचनाओं का सृजन किया। यहां केवल एक उद्धरण दिया जाता है

> तेरे प्यारे बच्चे हम सब बन्धन में बहु बार पड़े
> जननी, तेरे लिए भला हम किससे कब न अड़े ?
> भाई भाई लड़ भले ही टूट सका कब नाता
> जय जय भारत माता। ‡

श्री सियारामशरण गुप्त ने भी प्राचीन वैभव के गीत गाए हैं तथा भारत की वंदना की है—

> पुण्यभूमि यह हमें सर्वदा है सुखकारी,
> माता के सम मातृभूमि है यही हमारी।
> हमको ही क्या सभी जगत को है यह प्यारी
> इतनी गुरुता और कहीं क्या गई निहारी
> यह वसुधा सर्वोत्कृष्ट है क्यों न कहें फिर हम नहीं
> जय जय भारतवासी कृती, जय जय जय भारत मही †

सियारामशरण गुप्त जी ने भी अपने अग्रज की भांति राष्ट्रीय कविताएं लिखी हैं जिनमें हमें भारत वंदना तथा देशप्रेम के उद्गार मिलते हैं—

---

‡ मैथिलीशरण गुप्त—मेरा देश

† सियारामशरण गुप्त—मौर्य विजय (प्रथम) पृष्ठ २५

देश, अरे मेरे देश
तेरी उच्चता दृढ है नगेश, अतल गभीरता मे सागर है
मन की पवित्रता मे गगा की लहर है
गौरव धनी है पुरातन तू, अरे मेरे चिरनिवेश।

एक हमारा ऊचा भडा, एक हमारा देश
इस भडे के नीचे निश्चित एक अमिट उद्देश्य
देखा जागृति के उपवन मे एक स्वतत्र प्रकाश
फला है सब ओर एक सा एक अतुल उल्लास। §

श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने 'पुष्प की अभिलाषा' कविता मे मातृभूमि के लिए बलिदान करते हुए अपने देशप्रेम का परिचय दिया है–

चाह नही सुर बाला के गहनों मे गूथा जाऊ
चाह नहीं प्रेमी माला मे बिध प्यारी को ललचाऊ।
मुझ तोड लेना वन-माली, उस पथ मे देना तुम फेंक
मातृभूमि पर शीश चढाने जिस पथ पर जावें वीर अनेक।

'भारतीय विद्यार्थी' कविता मे भारतवर्ष की वदना कवि ने इन शब्दों में की है–

भारतमाता अपने इन पुत्रो को पहले का-सा बल दे,
हे भारती ! दया कर क्षण मे सबकी दुर्बलता तू दल दे।
भारत की सच्ची आत्माए आगे बढें उन्हे क्यो भय हो,
भारतवासी मिलकर गावें–भारतवर्ष तुम्हारी जय हो।
यह सुनकर जगतीतल कह दे–भारतवर्ष तुम्हारी जय हो।

श्री गोपालशरणसिंह ने भी अतीत के गान के साथ भारत की विशालता के गीत गाए हैं–

हो तुम प्राची रश्मि माल, हे विश्व वद्य भारत विशाल !
हे गुणगण के गौरव गणेश, हे सुरपुर के वैभव अशेष,
हे सन्मिधु सचित विशेष, आचार्य जगत के आर्य देश।
तुम हो वसुधा के प्रेम जाल, हे विश्व वद्य भारत विशाल। *

§ सियारामशरण गुप्त—बापू—पृष्ठ २१
* गोपालशरण सिंह—कादम्बिनी, पृष्ठ ४७

श्री जयशंकर 'प्रसाद' ने भी कुछ गीत राष्ट्र-वन्दना व देशप्रेम विषयक हैं जिनमें सम्पूर्ण बाधाओं को तोड़ आगे बढ़ने का संदेश मिलता है—

हिमाद्री तुंग शृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो दृढ़ प्रतिज्ञ सो चलो
प्रशस्त पुण्य पथ है बढ़े चलो बढ़े चलो।

'प्रसाद' के एक अन्य गीत में भी देशप्रेम का भावात्मक तथा व्यापक रूप मिलता है—

अरुण यह मधुमय देश हमारा
जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा
सरस तामरस गर्भ विभा पर नाच रही तरु शिखा मनोहर।
छिटका जीवन हरियाली पर मंगल कुंकुम सारा
लघु सुर धनु से पंख पसारे, शीतल मलय समीर सहारे।

भारतवर्ष गीत में देश के लिए त्याग की भावना प्रदर्शित कर स्तुति की है—

हिमालय के आंगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार
उषा ने हंस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार।
जिए तो सदा इसी के लिए यही अभिमान रहे यह हर्ष
निछावर कर दें हम सर्वस्व हमारा प्यारा भारतवर्ष।

श्री उदयशंकर भट्ट ने कुछ गीतों में अतीत के प्रति प्रेम के चित्र मिलते हैं। कवि ने भारत के प्राचीन वैभव का सौंदर्यपूर्ण चित्रण किया है। तक्षशिला का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

आर्य जाति का उज्जवल भूतल, पंच नदों का सुन्दर देश
स्वर्ग विभूति भरा संस्कृति का मूर्तिमान भारत राकेश।
अधर सुधारस भाषित मुख छवि ऋषि जन जिस थल करते गान,
वैदिक गीतों का अतीत में जहां सभ्यता का उत्थान। ‡

राष्ट्रीय आत्मा तथा श्री रामदास गौड़ ने मातृभूमि वंदना सर्वथा सुन्दर गीतों की रचना की—

‡ श्री उदयशंकर भट्ट—तक्षशिला (प्रथम) पृष्ठ १४

जननी जन्मभूमि अभिवादन !
देवि ! कोटि कोटि बालक हम तेरी गोदी में पलते ।
पूर्ण स्वतन्त्र बनेंगे तुझको भी जय माला पहनावेंगे
तेरी विमल कीर्ति का झंडा देश देश में फहरावेंगे । †

श्री रामदास गौड़ ने राष्ट्र वंदना करते हुए लिखा है—

वंदे भारतवर्षमुदारम्
पावन आर्यभूमि मनभावन मरमावन सुख ममारम
हिमगिरि सेत मुकुट सिर भ्राजत सुर प्रसून बरसावन ।

राष्ट्रीय कवियों में लोक प्रिय कवि मोहनलाल द्विवेदी ने देश प्रेम तथा गांधीवाद संबंधी अनेक गीत लिखकर नवयुवकों में नई प्रेरणा और स्फूर्ति उत्पन्न की। 'विक्रमादित्य कविता' में स्वर्णिम अतीत का भव्य चित्र मिलता है—

वह था जीवन का स्वर्णकाल,
जब प्रात प्रथम था मुस्काया,
आलोक अलौकिक छाया था वरदान धरा ने पाया था,
विक्रमादित्य के व्याज स्वयं आदित्य तिमिर में था आया ।
यह विक्रम ही का विक्रम था पल में पदतल अखिल आया
उस विजय दिवस की स्मृति स्वरूप
प्रचलित विक्रम संवत अनूप । ‡

'सुना रहा भैरवी' शीर्षक कविता में कवि ने अतीत का स्मरण कर देश के सोने वालों को जगाने वाली भैरवी गाई है—

भूल गए क्या रामराज्य वह जहां सभी को सुख था अपना,
वे धनधान्यपूर्ण गृह अपने, आज बना भोजन भी सपना ।
भूल गऐ वृन्दावन मथुरा भूल गए क्या दिल्ली वासी
भूल गए उज्जैन अवन्ती, भूले सभी अयोध्या काशी ।
सुना रहा हूं तुम्हें भैरवी जागो मेरे सोने वाले ।

श्री वियोगी हरि ने भी राष्ट्र प्रेम से भरे सरस गीतों की रचना कर नई प्रेरणा दी। केसरिया बाना शीर्षक कविता में अतीत के स्मरण के साथ देश वंदना के भाव मिलते हैं—

---

† स्वतन्त्रता की पुकार (राष्ट्रीय काव्य संग्रह) (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ८
‡ श्री सोहनलाल द्विवेदी—सेवाग्राम (प्रथम) पृष्ठ १६९

देखा बुद्ध हुतात्माएं लड़ी बांस की छाया म
भस्माव वे भूल गई हैं अपना और पराया म ।
दिल्ली का यह अमिट कलक, मारवाड का मोतिमयक
रण नादक अनिम अक
हे वीर प्रसविनी नमस्कार हे निधन व धन नमस्कार
हे सौम्य कराली नमस्कार 'जौहर प्रनवाली नमस्कार । *

श्री परमेश्वर द्विरेफ न भी भारत वदना करते हुए कहा है—

ज ज प्यारे देश हमारे, तीन लोक म सबसे न्यारे
हिमगिरि मुकुट मनोहर धारे, जै ज सुभग सुवेश ।
मातृभूमि सौभाग्य बढ़ाओ, मटो सकल कलेश । ‡

श्री गगानारायण द्विवेदी ने स्वदेश प्रेम सबधी कई काव्य ग्रथों का सकलन किया तथा स्वय भी सरल व सरस रचनाए की हैं 'राष्ट्रगीतावली' म समकालीन राष्ट्रीय रचनाए सग्रहीत हैं । उनकी एक कविता है—

आय जनों का गौरव धन था कवि गण का मृदु मजुल मन था
शरणागत जन का जीवन था, श्री निवास स्वातन्त्र्य सदन था ।
हे मेरे प्रिय हिदुस्तान । †

महाकवि निराला की राष्ट्रभक्ति पूर्ण कविताओं म नया काव्य सौष्ठव और भावुकता का समावेश है । निराला जी की भारत स्तुति कविता म प्राकृतिक सुषमा के साथ भारत माता के मानवीय रूप की अचना भी हुई है जिसके पदतल की पूजा सागर का जल लका के शतदल से करता है तथा गगा जिसका कठहार है—

भारती जय विजय करे, कनक शस्य कमल धरे ।।
लका पदतल शतदल गर्जितोर्मि सागर जल
धोता शुचि चरण युगल स्तव कर बहु अथ भरे
तरु तृण वन-लता वसन अचल म खचित सुमन
गगा ज्योतिजल-कण धवल हार गले । §

---

* वियोगी हरि केसरिया बाना माधुरी-अगस्त १६३०

‡ परमेश्वर द्विरेफ गीत सरस्वती अक्टूबर १८१०

† गगानारायण द्विवेदी राष्ट्र गीतावली (प्रथम सस्करण, सवत् १६६५) पृष्ठ १

§ सूयकान्त त्रिपाठी निराला—गीतिका (प्रथम) पृष्ठ ७१

श्री सुमित्रानदन पत ने भी भारत माता की वदना म प्रकृति एव ग्राम्य जीवन से उपकरण लिए हैं—

भारत माता ग्रामवासिनी ।
खेतो म फला है श्यामल, धूल भरा मला सा आचल
गगा यमुना म आँसू जल, मिट्टी की प्रतिमा उदासिनी । †

ज्योति भारत गीत म पत ने भारत की वदना की है तथा हिमालय और गगा से गौरवान्वित भारत का जय गान किया है—

ज्योति भूमि जय भारत देश !
समाधिस्थ सौदय हिमालय, श्वेत शांति आत्मानुभूतिलय,
गगा यमुना जल ज्योतिमय, हसता यहाँ अशेष ।
फूटे जहा ज्योति क निझर, ज्ञान भक्ति गीता वशी-स्वर
पूर्ण काम जिस चेतन रज पर लोटे हस लोकेश ।

दिनकर' राष्ट्रीय कवियो म अग्रणी हैं जिन्होने गौरवपूर्ण अतीत की सजीव व्यजना करने वाल मूक खडहरो और महापुरुषो का स्मरण किया है—

भावुक मन का राग न पाया सज आए पलको म सावन,
नालदा वशाली क ढहा पर बरसे पुतली के घन
दिल्ली की गौरव समाधि पर आखो ने आँसू बरसाए,
सिकता म साए अतीत के ज्योति वीर स्मृति में उग आए । *

कवि पौराणिक तथा एतिहासिक कमठ वीर पुरुषो का स्मरण करते हुए हिमालय से पूछता—

तू रोक युधिष्ठिर को न यहा जाने दे उनको स्वग धीर,
पर फिरा हमे गाडीव गदा लौटा दे अजुन भीम वीर ।
तू पूछ अवध म राम कहा ? वृदा बोलो घनश्याम कहा ?
ओ मगध ! कहा मेरे अशोक, वह चद्रगुप्त बलधाम कहा ?

गगा के तटों पर गौतम के उपदेश गूजे हैं और गगा की धाराओ मे समुद्रगुप्त के रक्तरजित असिप्रक्षालन का स्मरण किया गया है—

घूम रहा पलको के भीतर स्वप्नो सा गत विभव विराट
आता है क्या याद ? मगध का सुरसरि, वह अशोक सम्राट ।

† सुमित्रानदन पत—ग्राम्या पृष्ठ १२
* दिनकर—रेणुका (प्रथम) पृष्ठ

तुझे याद है । चढ़े पदो पर कितने जय सुमनो के हार
कितनी बार समुद्रगुप्त ने धोई है तुझम तलवार । †

बालकृष्ण शर्मा नवीन क्रांति समर के सनिको म से एक हैं जिहोने राष्ट्र भक्ति विषयक अनेको गीता की रचना की है । अतीत के स्मरण म कवि का मन कम ही रमा हैं आधुनिक युग के चित्र ही कवि ने अधिक खीचे हैं । हिदुस्तान हमारा हैं गीत म राष्ट्र गौरव का स्वर सुनाई देता है—

भारतवष हमारा है यह हिदुस्तान हमारा है ।
कोटि कोटि कठो से निकली आज यही स्वर धारा है ।
है आसन्न भूति अति उज्जवल है अतीत गौरवशाली ।
औ छिटकी है वतमान पर बलि के शोणित की लाली ।
नव उषा सी विहस रही है विजय हमारी मतवाली ।
हम मानव को मुक्त करेंगे यही विधान हमारा है ।

श्री श्यामनारायण पाडेय न हल्दीघाटी लिखकर भारत के प्राचीन गौरव चित्तौड तथा वीर राणाप्रताप की स्मति म बडे ही सरस और प्रभावपूण पद लिखे है—

यज्ञ अनल सा धधक रहा था वह स्वतत्र अधिकारी
रोम रोम स निकल रही थी चमक चिनगारी ।
जग वभव उत्सग किया भारत का वीर कहाकर
माता मुख-लाली प्रताप न रख ली लहू बहाकर । *

चित्तौड तथा हल्दी घाटी के गौरव और रक्षा के सबध म कवि कहता है—

यही दग राणाप्रताप की स्वतत्रता का अवलम्बन
इसी भूमिकण का दशन है शत शत मन्दिर का दशन
वीर रक्त से तू पवित्र है तू मेरे बल का साधन
बोल बोल तू एक बार फिर कब देगा राधा सा धन । ‡

श्री सुधीन्द्र इस युग क क्रान्तिकारी कवि हैं जिहोने जौहर प्रलयवीणा आदि म देशभक्तिपूण सुन्दर गाना का प्रणयन किया है । मातभूमि की रक्षा के लिए आत्म बलिदान की भावना लिए हुए कवि कहता है—

---

† निकर-रेणुका (प्रथम) पृष्ठ २५
* श्री श्यामनारायण पाडेय हल्दीघाटी (प्रथम) पृष्ठ २५
‡ वही पृष्ठ २-५

मर जाए जो, मातभूमि को, हाने दे पददलित नही,
विचलित हों न विघ्न बाधा से, प्रनीमनो स चलित नही।
मातभूमि ! तू विदा मुझे दे मैं लय हो जाऊ तुझ में
जिसकी पुण्य रेणु से उपजा देश हमारा वज्र बना
उसके कण कण का रक्षण है पुण्य पुनीत धम अपना। §

भारत वदना करते हुए कवि कहता है—

उठ उठ मेरे वदनीय ! अभिनदनीय भारत महान,
थे कृष्ण राम थे बुद्ध वीर महिमान्वित जिसमे धरा धाम
वह विक्रम प्रियदर्शी अशोक थे जो जीवन में पुण्य काम।

श्री रसिकेन्द्र न राष्ट्र वदना विषयक गीत म इसी प्रकार के उदात्त भावो का चित्रण किया है—

वदे पूज्य राष्ट्र रग रगी
आन बान मान अभिमान शान रत हिंदुस्तान तरगी।
महामाय है जगतीतल म चालीस कोटि पुत्र अचल म
बढा चढा है धन जन बल मे, उथल पुथल मचती हलचल मे।
शक्तिमयी सुखदा कमला सी कातिमयी कमनीय कला सी
वीर विभूति भर विमला सी रिपुदल हित सबला प्रबला सी
मातृभूमि की मूर्ति विराजी धर दस भुज असि नगी। ‡

श्री गोपालसिंह नेपाली आधुनिक युग के सरस गीतो के सजनकर्ता हैं जिनके विशालभारत' गीत म भारतभूमि की वदना व महिमा का सुदर वणन हुआ है—

उत्तर मे हैं धवल हिमाचल, निझर चचल
गगा का जल यमुना का जल
भारतवासी-जहा कोटिजन जिनका जीवन
जिनका यौवन, जिनका तन मन सब न्यौछावर
स्वतत्रता पर
वदन करते हैं वृद्ध बाल भारत अखड भारत विशाल।

---

§ डा सुधीन्द्र जौहर (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १६
‡ श्री रसिकेन्द्र राष्ट्रगीत-सुधा नवम्बर १८३८

पुण्यभूमि यह, मातृभूमि यह पितृभूमि है
अमर भूमि है, समर भूमि है। §

श्री रामकुमार वर्मा की चित्तौड़ की चिता प्रारम्भिक रचनाओं में प्रमुख है जिसमे कवि राजपूताने के गौरव व अतीत का चित्रण करते हुए कहता है—

हाय गौरव गर्वित चित्तौड़, हो गया दिव्य क्रांति से हीन,
हुए थे कैसे पुरुष प्रवीन, बने थे जो जग के सिरमौर।
कभी थे राजपूत अति न्यून किन्तु था प्रिय स्वदेश अभिमान
नारियो ने भी ली असि तान चन्द्राय रण में आत्मप्रसून। *

प्रकृति प्रेम वर्तमान युग के कवियो में प्रकृति के प्रति अगाध प्रेम मिलता है द्वितीय युग के अनेक प्राकृतिक चित्रो से इनमे अधिक सौम्य है। प्रकृति में नैतिक उपदेशो के ढूंढने की प्रवृत्ति इस युग में नही मिलती। प्रकृति के प्रति कवियो के सकेत बड़े भावपूर्ण रोचक और मनोरम हैं। प्रकृति चित्रण में नए नए प्रयोग हुए हैं तथा मानवीकरण व प्रतीकात्मक शैली जो छायावाद की विशेषता है इस युग के कवियो ने अधिक अपनाई।

श्री मैथिलीशरण गुप्त जी ने प्रकृति का मानवीय व्यापारों से युक्त व साकाक्ष वर्णन भी किया है तथा कही कही शुद्ध चित्रण भी किया है। सिद्धराज में प्रकृति का सौंदर्य इस प्रकार वर्णित है—

सन्ध्या हो रही है नील नभ में शरद के,
शुभ्र घन तुल्य हरे वन में शिविर के
स्वर्ण के कलश पर अस्तगत भानु का
अरुण प्रकाश पड़ झलक रहा है यो।

साकेत में प्रकृति किसी उद्देश्य से चित्रित की गई है—

अरुण सन्ध्या को आगे ठेल, देखने को कुछ नूतन खेल।
सजे विधु की बेंदी से भाल यामिनी आ पहुंची तत्काल।
मूंदे अनन्त ने नयन धार वह झांकी
शशि विकस गया निश्चित हंसी हंस बाकी
द्विज चहक उठ हो गया नया उजियाला
हाटक पर पहने दीख पड़ी गिरिमाला।

§ गोपाल सिंह नेपाली—विशाल भारत साधना जनवरी ११४३
* रामकुमार वर्मा चित्तौड़ की चिता (प्रथम) पृष्ठ १२

ठाकुर गोपालशरणसिंह न भी प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया है किन्तु इसमे शुद्ध चित्रण नही वरन् मोद्देश्य वणन ही है—

प्रभात सोन का ससार
उषा छिप गई वनस्थली मे देकर यह उपहार
लघु लघु कलिया भी प्रभात मे होती है साकार
प्रात समीरण कर देता है जन जीवन सचार । *

वर्षा ऋतु के वणन द्वारा कवि ने सुखद ससार की कामना की है—

आ जाय करुणामय यहा ऐसी बसत बहार
होकर मुदित फूले फले सुख से सकल ससार
मिट जाय नाश कुहिर तथा सब भीत शीत बहार
हो जाय निमल स्वच्छ अब सबक हृदय का सार ।

श्री श्यामनारायण पाडेय न भी प्रकृति का उद्दीपन रूप म चित्रण किया। हल्दीघाटी म हम प्रकृति का उग्र रूप देखते है—

यह कड कड कड कडक उठी यह भीमनाद स तडक उठी
भीषण सहार की आग प्रबल बरी सेना म भडक उठी ।
डग डग डग डग रण के डक, मारु के साथ भयद बाजे । *

गुरुभक्तसिंह भक्त ने सूक्ष्म प्रकृति निरीक्षण द्वारा नूरजहा मे झील, रात व प्रभात क सौंदय का सुन्दर वणन किया है जिसका उल्लेख द्विवदी युग मे किया जा चुका है । गुरुभक्तसिंह ने वग की शस्य श्यामला भूमि की शोभा तथा काश्मीर की सुषमा का वणन किया है ।

पत प्रकृति के अनन्य उपासक है तथा उसके विभिन्न उपकरणो पर मनोरम कविताए कवि की कल्पना का रग पाकर हृदय का आह्लादित करती हैं। पत जी ने बादल, छाया कुसुमावली निर्झर, सरिता मधुप तितली, लहर आदि का सरस वणन किया है । पल्लव मे गिरिमालाओ तथा झील का वणन देखिए—

पावस ऋतु थी पवत प्रदेश, पल पल परिवर्तित प्रकृति-वेष
मखलाकार पवत अपार, अपने सहस्र दृग सुमन फाड ।

---

§ ठाकुर गोपालशरणसिंह-कादम्बिनी (प्रथम) पृष्ठ ३७
* श्यामनारायण पाडेय-हल्दीघाटी (प्रथम) पृष्ठ ११५

अवलोक रहा है बार बार, नीचे जल में निज महाकार,
जिसके चरणों में पला ताल, दर्पण सा फैला है विशाल। *

प्रसाद जी की प्रतिभा सर्वतोमुखी रही है। प्रसाद ने कवि हृदय पाया इसी लिए हम उनके नाटकों, कथाओं आदि में भी काव्य का आनंद मिलता है। प्रसाद जी प्रकृति के अनन्य प्रेमी और उपासक रहे हैं उनके लिए प्रकृति सजीव रही है। उन्होंने प्रकृति में सदैव चेतना का अनुभव किया तथा अपनी भावनाओं का प्रतिस्पन्दन अनुभव किया। इसीलिए उनके काव्य में शुद्ध प्रकृति चित्रण बहुत कम प्राप्त है। प्रारंभिक कविताओं में यथातथ्य प्रकृति चित्रण अवश्य प्राप्त होता है बाद में मानव की करुणा की विकल रागिनी तथा उसका रूप और विषाद तथा अनंत शक्ति के अनंत सौंदर्य की झलक मिलती है।

कामायनी में प्रकृति का विकराल रूप भी कई स्थलों पर आकर्षक लगता है—

उधर गरजती सिंधु लहरियां कुटिल काल के जालों सी,
चली आ रही फेन उगलती, फन फैलाए व्यालों सी।
धसती धारा धधकती ज्वाला ज्वालामुखियों के निश्वास,
और संकुचित क्रमशः उसके अवयव का होता था ह्रास॥
नीचे जलधर दौड़ रहे थे, सुंदर धनु माला पहिने।
कुंजर कलभ सदृश इठलाते चमकाते चपला के गहने॥

प्रसाद ने देशप्रेम का भी परिचय दिया कवि देश की शस्य श्यामला भूमि पर मुग्ध होता है। प्रसाद ने प्रफुल्लित होकर अपने देश की प्रशंसा की है—

अरुण यह मधुमय देश हमारा
सरस तामरस गर्भ विभा पर नाच रही तरु शिखा मनोहर,
छिटका जीवन हरियाली पर मंगल कुंकुम सारा।

प्रसाद' ने उषा को पानी भरने वाली नागरी का रूप प्रदान किया है—

बीती विभावरी जाग री!
अम्बर पनघट में डुबो रही तारा घट ऊषा नागरी।
खगकुल कुल कुल सा बोल रहा किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भर लाई मधु मुकुल नवल रस गागरी॥ †

---

* सुमित्रानंदन पंत-पल्लव (प्रथम) पृष्ठ ८

† जयशंकर प्रसाद—लहर—पृष्ठ १६

श्री सूयकात त्रिपाठी 'निराला' छायावाद के कवियों मे अपना अपूव व्यक्तित्व रखते हैं । प्रकृति के मानवीकरण कर उसम प्राण प्रतिष्ठा की। निराला दाशनिक कवि हैं किन्तु उनम राष्ट्रभक्ति का स्वर भी मिलता। भारत वदना मे लका के शतदल से सागर द्वारा भारत का पद प्रक्षालन कराया गया—

भारती जय विजय करे ! कनक शस्य कमल धरे !
लका पतदल शतदल, गर्जितोमि सागर जल
धोति शुचि चरण युगल।
मुकुट शुभ्र हिम तुषार, प्राण प्रणव ओकार
ध्वनित दिशाए उदार शतमुख शतमुख रे ! *

महादेवी वर्मा ने प्रकृति को आलम्बन मान अपने उर की पीडा का चित्रण किया है। प्रकृति में परोक्ष सत्ता के दशन महादेवी ने किए हैं प्रकृति की स्वतत्र कोइ सत्ता नही वह कवि के अतमन का ही एक प्रतिबिम्ब है।

माखनलाल चतुर्वेदी भारतीय आत्मा मूलत राष्ट्रीयकवि हैं। प्रकृति का चित्रण भी राष्ट्रप्रेम की भावना से आप्लावित है। पुष्प की अभिलाषा म कवि के मातृभूमि प्रेम का परिचय मिलता है—

चाह नही है सुरबाला के गहनो म गूथा जाऊ !
मुझे तोड लेना वनमाली, उस पथ पर दना तुम फेंक,
मातभूमि पर शीश चढाने जिस पथ जावें वीर अनक।

कवि की आत्मा आराध्य के प्राणों पर लहराने वाली नमदा है—

जिस दिन रत्नाकर की लहर उनके चरण भिगोने आए
जिस दिन शल शिखरियाँ उनको रजत मुकुट पहनाने आवें
लोग कहे मैं चढ न सकूगी बोझीली प्रण करती हूँ सखी
मैं नमदा बनी उनके प्राणो पर नित्य लहराती हू सखी।

दिनकर न प्रकृति के वणन मे ग्रामश्री के लुभावने चित्र खींचे हैं तथा कही कही सध्या, चादनी रात तथा पुष्पो के सरस वणन भी किए हैं—गावों म सध्या का चित्रण दखिए—

स्वर्णांचला अहा ! खेतो म उतरी सध्या श्याम परी
रोमथन करती गाए आ रही रौंधती घास हरी।

* निराला—गीतिका (प्रथम) पृष्ठ ७१

प्रकृति के अधिक चित्र रेणुका और रसवंती म ही मिलत हैं। 'कलातीथ' म चादनी रात का वणन करते हुए कवि कहता है—

> पूणचन्द्र चु बित निजन वन विस्तत शल प्रात उवर थ
> मसृण हरित पूर्वा सज्जित पथ व य कुसुम द्रुम इधर उधर थे
> पहन शुक्र या वण विभूषण दिशा सु दरी रूप लहर स
> मुक्त कु तला मिला रही थी अवनी को ऊच अम्बर स।

शरद ऋतु म खिलने वाल अनको पुष्पो व वृक्षो का छोडकर कवि बबूल और बेर की भीनी सुगध का वणन करते हैं—

> है बिछी हुई दूर तक दूब हरी हरियाली ओढ लता खडी
> कासो के हिलते श्वत फूल फूली छतरी ताने बबूल
> अब लजवती भीनी है मजरी बर भी रस भीनी है।
> कोयल न कीर तो बोले है कुररी मना रस घोल हैं।

शाभाशाली जन्मभूमि के प्रति कवि कहता है—

> हे जन्मभूमि शतबार धन्य तुझ सा न सिमरिया घाट अन्य
> तेरे खेतो की छवि महान, अनियत्रित आ उर म अजान
> भावुकता बन लहराती है फिर उमड गीत बन जाती है।

छायावादी कवियो ने प्रकृति का कोमल और सु दर चित्र खीचा है और प्रगतिवादियो ने सुन्दर और असु दर आकषक तथा विकषक दोनो प्रकार के ही चित्र उपस्थित किए हैं। प्रकृति म मानवीकरण की प्रवृत्ति अधिक रही है और शुद्ध प्रेम की अभिव्यक्ति कम ही हुई है।

विदेशी शासन की निन्दा वतमान युग में भारतीय जन मानस की राजनीतिक चेतना तथा जागति परिवर्द्धित होती गई। अपन देश के गौरव तथा समृद्धि को मिटाने वाली विदेशी सरकार क प्रति रोष और घणा क मूल म जनता क देशप्रेम की भावना का परिचय मिलता है। गांधी जी के नतत्व ने तथा राष्ट्रीय काग्रेस के प्रभाव ने स्वराज्य क आदोलन को हिंसात्मक होने स बहुत हद तक बचाया और विदेशी शासन को दूर करने क लिए सविनय अवज्ञा तथा असहयोग के साधन अपनाए। द्वितीय महायुद्ध क पश्चात जब विदेशी शासकों ने भारतीयों को पूण स्वतत्रता देने म हिचकिचाहट प्रस्तुत कर इसे स्थगित किया तथा देश के नेताओ को कारावास म यात नाए दीं तो जनता म इसकी उग्र प्रतिक्रिया हुई। सन् ४२ का स्वाधीनता सग्राम का

आदोलन विराट जन शक्ति द्वारा राष्ट्र को स्वतत्र करने का परिचायक बना। 'भारत छाडो तथा करो या मरो' के मत्र ने विदशी शासन के सिंहासन को हिला दिया।

स्वाधीनता सग्राम म अनेक कवियो ने सक्रिय सहयोग दिया। इसी कारण उनकी अभिव्यक्ति मे सचाई और तीव्रता मिलता है इस 'भारतीय आत्मा' की प्रवाहपूर्ण ओर रचनाओ मे अग्रेजो के नृशसतापूर्ण अत्याचारो तथा कठोर नीति के प्रति विद्वेष मिलता है। 'कदी और कोकिला' कविता मे सत्याग्रह आदोलन के समय कारावास सस्मरण मिलते हैं जिसका उल्लेख द्विवेदी युग मे भी किया गया है–

क्या ? दब न सकती जजीरो का गहना ?
हथकडियां क्यो ? यह ब्रिटिश राज का गहना,
कोल्हू का चरक चू ?–जीवन की तान,
गिटिटी पर लिखे अगुलियों ने क्या गान !
मैं मोट खीचता लगा पेट पर जूआ
खाली करता हू ब्रिटिश अकड का कुआ ‡

ब्रिटिश शासन द्वारा समय समय पर बनाए जाने वाले कानून तथा उस बहाने जो दमन और अत्याचार भारतीयों पर किए गए हैं उसका उल्लेख भी कवि की वेदनाजन्य कविता म मिलता है–

मैं 'मुह बन्दी का हार हिए'
मत लिखा कठिन कंकण धारे
भारत रक्षा' के शूलो की
पाँवो मे बडी सनकारे !
हथियार न लो की हथकडियाँ
रौलट का हिय मे घाव लिए
डायर से अपने लाल कटा
कहती थी आचल लाल किए †

इस कविता मे स्वाधीनता सग्राम की महत्वपूर्ण घटनाओ का उल्लेख है जिसके फलस्वरूप भारतीयो ने स्वतत्रता प्राप्ति के लिए त्याग और बलिदान किया।

---

‡ माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा — हिमकिरीटिनी' (प्रथम स) पृष्ठ १७

दिनकर ने केवल भारत की दासता को ही नहीं विश्व भर की शान्ति को मिटाने का हुंकार भरी तथा क्रूर शासकों को नीरो तथा जार कहकर उन्हें सावधान होने की चेतावनी दी–

> दुनिया के नीरो सावधान ! दुनिया के पापी जार ! सावधान !
> जाग जिस दिन हुंकार उठे पद-दलित काल-सर्पों के फन !
> हा-हा-गान §

जातीयता के उद्गार — छायावादी युग में हिन्दू तथा आर्यावर्त के उद्गारों की अभिव्यक्ति कम ही हुई है। द्विवेदीयुग के कवियों में यह भावना प्रबल थी और इसी कारण उन साहित्यकारों की रचनाओं में जातीयता के भाव मिलते भी हैं जो दोनों युगों में रहकर अपना स्थान बनाए हुए हैं। तृतीय उत्थान में कवियों का दृष्टिकोण व्यापक होता गया तथा समस्त राष्ट्र व देश के गौरव की ओर ध्यान दिया जाने लगा। कुछ क्रान्तिकारी कवियों ने तो जाति धर्म को छोड़कर समस्त मानवता तथा विश्व के कल्याण व सुख समृद्धि की कामना करते हुए निर्दयी शोषकों व पीड़कों की भर्त्सना की है तथा एक नए समाज, एवं नए संसार के निर्माण की कामना की है।

इस युग में वीर पुरुषों तथा देशप्रेमी शूरों की प्रशंसा में कुछ जातीयता की भावना अभिव्यक्त हुई है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की भारत भारती तथा अन्य रचनाओं में हिन्दू गौरव व अन्य जातीयता के सुन्दर पद मिलते हैं। जिनका उल्लेख द्विवेदी युग में किया जा चुका है। यहाँ पुनः विस्तृत विवेचन न कर केवल एक दो उदाहरण दिए जा रहे हैं –

> जो हम कभी फूले फले थे राम राज्य वसन्त में
> हा ! देखनी हमको पड़ी औरंगजेबी अन्त में
> रहते यवन थे रक्त रंजित तीक्ष्ण असि ताने खड़े
> चोटी नहीं तो हाय ! हमको शीश कटवाने पड़े।*
> चित्तौर चम्पक ही रहा यद्यपि यवन अलि हो गए
> धर्मार्थ हल्दी घाट में कितने सुभट बलि हो गए।
> दौरात्म्य यवनों का यहाँ जब बढ़ गया अत्यन्त ही
> सम्भले न, उनका भी हुआ क्रम अन्त में फिर अन्त ही
> था द्वार जो निज नाश का औरंगजेब बना गया।

---

§ दिनकर—हुंकार (दशम) पृष्ठ ७५

* मैथिलीशरण गुप्त-भारत भारती — (बीसवाँ संस्करण)। पृष्ठ ७९, ८०

गुप्त ने कुछ कुशल प्रशासकों की प्रशंसा भी की है किन्तु आर्य जाति तथा हिन्दू जाति के गौरव को ऊंचा उठाने के लिए भारतीयों को नई प्रेरणा दी है

हतभाग्य हिन्दू जाति ! तेरा पूर्व दर्शन है कहाँ ?
वह शील शुद्धाचार, वैभव देख अब क्या है यहाँ ?
हम हिन्दुओं के सामने आदर्श जैसे प्राप्त हैं
संसार में किस जाति को, किस ठौर वैसे प्राप्त हैं ? *

श्री माधव शुक्ल ने यद्यपि द्विवेदी युग में साहित्य रचना की किन्तु वर्तमान युग में भी उनके गीतों का प्रकाशन एवं संकलन हुआ है। राष्ट्रीय कवियों में माधव शुक्ल का महत्वपूर्ण स्थान है तथा उनकी रचनाओं में जातीयता के स्पष्ट उद्गार भी मिलते हैं जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। अंग्रेजों के अत्याचारों तथा नए नए कानूनों के कारण कवि को जर्जरित हिंदू गढ के नष्ट हो जाने का डर है--

एतने हमें शासक रौलट बिल तोय लगावत भारी,
जाते हैं जरजरित हिंदूगढ नासन की तयारी। †

श्री सोहनलाल द्विवेदी यद्यपि गांधीवादी तथा राष्ट्रीय कवियों में अग्रणी हैं किन्तु उनकी रचनाओं में भारतीय प्राचीन गौरव तथा हिन्दू वीरों के यशोगान के प्रेरणाप्रद चित्र मिलते हैं। 'राणाप्रताप के प्रति' कविता में कवि कहते हैं--

जागो प्रताप मदवालों के मतवाले सेना, सजा रहे
जागो प्रताप हल्दी घाटी में बरी भेरी बजा रहे। §

'तुलसीदास' कविता में मुगल महीपों के बादलों के नभ में छाकर हिंदूकुल के जलयान को अंधकार में डाल दिया--

जब मुगल महीपों के बादल छाये जीवन नभ में अपार,
दासता पराजय गृह विग्रह से गहराया तम का प्रसार।
हिन्दुकुल का जब महापोत था इस जग जलनिधि में अधीर,
तुम बने अचल आकाशदीप दिखलाया प्रतिपल सुगमतीर ‡

---

* मैथिलीशरण गुप्त भारत भारती (बीसवाँ संस्करण) पृष्ठ १५५
† माधव शुक्ल -- भारत गीतांजलि -- (पंचम सं १८२५) पृष्ठ ५१
§ सोहनलाल द्विवेदी --भैरवी (तृतीय संस्करण) पृष्ठ ३६
‡ वही पृष्ठ ४७

भैरवी रामगुण की गाई, जाग जिसमें बुन और मूढ़
तुम जातिरथी, तुम राष्ट्ररथी, नव प्रगति देख गतिमति विमूढ़।

राष्ट्रकवि दिनकर ने भी अतीत के स्मरण में वीर हिन्दू महापुरुषों का उल्लेख किया है—

तू पूछ अवध से राम कहाँ वृन्दा, बोलो घनश्याम कहाँ।
ओ मगध कहाँ मेरे अशोक वह चन्द्रगुप्त बलधाम कहाँ ?

'दिल्ली' कविता में कवि ने दिल्ली को नारी रूप दिया तथा परकीया के रूप में चित्रित करते हुए भर्त्सना करते हैं—

अपने ही पति की समाधि पर कुलटे ! तू छवि में इतराती
परदेशी संग गलबाँही दे मन में है फूली नहीं समाती । *

यहाँ परदेशी से तात्पर्य विदेशी शासकों से है। कवि को दिल्ली के खंडहर पुराने दिन याद दिलाते हैं और दिल्ली के प्रति कवि के हृदय में वेदना मिलती है—

दिल्ली तेरे रूप रंग पर कैसे हृदय फँसेगा ?
बाट जोहती खंडहर में हम कंगालों की रानी।

इस युग में कवियों की भावना उदार ही अधिक रही, हिंदू मुसलमानों के प्रति जातीय वैमनस्य को दूर कर उदार राष्ट्रीयता की भावना अधिक रही है इसलिए इस समय के अधिकांश कवियों में भारतेन्दु एवं द्विवेदी युग की सी हिन्दू जातीय भावना का अभाव मिलता है। राष्ट्रीय एवं क्रान्तिवादी कवियों ने किसी जाति विशेष के प्रति नहीं वरन् संसार के शोषकों और निर्दयी शासकों को अपना मार्ग बदलकर प्रेम और करुणा दिखाने का स्वर सुनाया। श्यामनारायण पाण्डेय, सुभद्राकुमारी चौहान, दिनकर, नवीन आदि कवियों ने भारत के गौरवगान तथा वीर पुरुषों की प्रशस्ति कर परोक्ष रूप से हिंदुत्व की महानता प्रदर्शित की है किन्तु उनका लक्ष्य केवल हिंदू जातीय उद्गार से परिपूर्ण कविता करना नहीं है।

वर्तमान दशा पर क्षोभ इस युग के कवियों ने वर्तमान समय की हीनावस्था, कष्ट और शोषण के करुणाजनक चित्र खींचने में तल्लीनता दिखाई है। उनकी भाषा में सौम्य है तथा भावों में व्यंग्य तथा मार्मिक अभिव्यक्ति है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की चर्चा द्विवेदी युग में भी की जा चुकी है—

---

* दिनकर—हुंकार (तृतीय संस्करण) पृष्ठ ६५ ६७

बेमौत अपने आप या ही हम अभागे मर रहे
हा ! प्लेग जसा रोग तिस पर चढ़ाइ कर रहे ।
उद्विग्न होकर अद्ध मृत सा छटपटाता देश है
सब आर क्रन्दन हो रहा हैं क्लेश को भी क्लेश है। †

आती विदेशो से यहा सब वस्तुए व्यवहार की
धन धाय जाता है यहा से, यह दशा व्यापार की ।
लेकर विदेनी टीन हम सानद चादी दे रहे,
देकर तथा सोना निरन्तर गिलट हम ले रहे । *

सुमित्रानदन पत वास्तव म प्रकृति के उपासक हैं। अपनी कोमल, मधुर और सुदर कल्पनाओ से प्रकृति के आकषक चित्रो का सृजन म कवि का मन अधिक रमा है। ग्राम्या तथा युगवाणी आदि म प्रकृति क साथ हा साथ कवि का ध्यान ससार म रहने वाले दीन दुखी प्राणियो की ओर भी गया। पत जी ने इस धरती की गोद म जीने वाले उपेक्षितो, पीडितो और शोषितो की पीडा के करुणापूण चित्र भी खीचे हैं। ग्राम्या में वृद्ध का चित्र दखिए-

खडा द्वार पर लाठी टेक वह जीवन का बूढा पजर,
चिमटी उसकी सिकुडी चमडी हिलत हडडी के ढाचे पर
उभरी ढीली नसें जाल सी, सूखी ठठरी से हैं लिपटी
अह आवा म नाच करती उजड गई जो सुख की खेती
बिना दवा दपन के गृहिनी, स्वग चली भाखें आनी भर
देख रेख के बिना दुधमु ही बिटिया दो दिन बाद गइ मर।

युगवाणी मे भी कृषक का वणन करत हुए कवि न उसकी हीन दशा का चित्र प्रस्तुत किया है—

कर जजर ऋण ग्रस्त स्वल्प पतृक सम्पत्ति भू धन,
निखिल दय दुर्भाग्य दुरित दुख का जो कारण।

कवि का ध्यान ग्राम के दो दुबल लडको की ओर भी जाता है-

नगे तन गन्दे, सावल, सहल छबीले,
मिट्टी के मटमल-पर फुर्तीले।

---

† मथिलीशरण गुप्त—भारत भारती (बीसवा सस्करण) पृष्ठ १०२
* वही पृष्ठ १०४ ५

अस्थि मास के इन जीवा का ही यह जग घर,
आत्मा का अधिवास न यह वह सूक्ष्म अनश्वर। ‡

पत की 'परिवतन' कविता म बडे ओजपूर्ण शब्दो म देश म फले, रोग, शोक की छाया चित्रण को मिलता है–

बजा लोहे के दन्त कठोर
नचाती हिंसा जिह्वा लोल
बहा नर शोणित मूसलाधार रुड मुडों की कर बौछार
प्रलय घन सा घिर भीमाकार गरजता है दिगन्त सहार
छेड खर शस्त्रो की झनकार,
महाभारत गाता ससार !

श्री गोपालशरणसिंह की कुछ कविताओ म वतमान के प्रति क्षोभ की भावनाए प्रकट हुई हैं–

क्या म दू सदेश !
बबरता पा रही विजय है काप रही मभ्यता सभय है,
क्या सचमुच आ रहा प्रलय, चिंतित हैं सब देश।
निष्ठुरता निदयता का नतन पापमयी पशुता का तजन
मानवता का करुण क्रन्दन है बढ रहे विशेष। §

श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द ने अपनी 'सम्पत्तिवाद' कविता म वतमान दुदशा का चित्रण स्पष्ट किया है

दो मुट्ठी पर जीवन भर प्राणो का रक्त सुखाया
वभव तेरे पद प्रहार पर भी श्रम का त्योहार मनाया।
प्राणों की बाजी पर वसुधा के आवरण कठिन तम चीरे
तेरा कोप भरा लाकर सोना चादी हीरे
अब तेरा पशु धम प्रबल हो उठता सयम को ठुकराकर,
बिकता रूप क्षुधित नारी का तेरे बाजारो म जाकर। †

---

‡ पत—युगवाणी (प्रथम) पृष्ठ ८७
§ गोपालशरणसिंह—सदेश— सुधा (अक माच १९४०)
† जगन्नाथप्रसाद मिलिंद—सम्पत्तिवाद (हस जुलाई १९३७)

निराला ने शोषित पीडित वग की दुद'गा का करुणापूण वणन किया है। भारतवष की प्राचीन शस्य श्यामला और धन धान्यपूण भूमि म आज मुटठी भर दाने के लिए प्राणी तरस रहे हैं—

दो टूक कलज के करता पछताता पथ पर आता
पेट पीठ दोना मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुटठी भर दान को, भूख मिटाने को
मुह फटी पुरानी झोली को फलाता।

इसी प्रकार निराला के हृदय म भारत की विधवा तथा श्रमिक वग की असहाय अवस्था देख टीस भर जाती हैं और कवि आतुर होकर कहता है—

वह इष्टदव के मदिर की पूजा सी
वह दीपशिखा सी शात भाव म लीन
वह टूटे तरु की सी छुटी लता सी दीन
दलित भारत का विधवा है।
वह तोडती पत्थर
दखा मैंने उसे इलाहाबाद क पथ पर
कोई न छायादार
पेड वह जिसक तल बठी हुई स्वीकार
क्षीण तन, भर बधा यौवन
गुरु हथौडा हाथ करता बार बार प्रहार। *

राष्ट्रीय कवि माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' के अधिकाश गीत उनके बन्दी जीवन की झाकी वाले हैं। राजनीतिक घटनाओ को लकर जो कविताए लिखी गई हैं उनमे देश की वतमान दशा क करुणापूण चित्र भी कहीं कहीं मिलत हैं—

घटनाओ की आग सुलाती आशाओ का करना
कारागारों म चक्की पिस रही देवनाओ स
नष्ट हुआ यौवन
जा रहे जग सहारक पीस
जगल हो क्यो नगर-ग्राम लख निर अस्थि क ढेर। ‡

---

* निराला—अनामिका (प्रथम) पृष्ठ ७६
‡ माखनलाल चतुर्वेदी—माता (प्रथम सस्करण) पृष्ठ २२

दिनकर ने इस समय की परिस्थिति का चित्र खींचते हुए उसके प्रति क्षोभ प्रकट किया है। इस देश में आर्थिक शोषण, अत्याचार और कष्टों के भार से जन मानस त्रस्त है। नन्हे शिशुओं को दूध के अभाव में मर जाना पड़ता है किन्तु कुछ लोग विलास में डूबे ही रहते हैं–

मुख में जीभ, शक्ति भुज में, जीवन में सुख का नाम नहीं है
वसन कहां ? सूखी रोटी भी मिलती दोनों शाम नहीं है §
वक्ष वक्ष में अबुध बालकों
की भूखी हड्डी रोती है
'दूध दूध !' की कदम कदम पर
सारी रात सदा रोता है।

'विपथगा' कविता में कवि रोष भरे स्वर में वर्तमान हीनावस्था का सुन्दर चित्रण किया है–

श्वानों को मिलता दूध वस्त्र, भूखे बालक अकुलाते हैं
मां की हड्डी से चिपक ठिठुर, जाड़ों की रात बिताते हैं,
युवती के लज्जा वसन बेच जब ब्याज चुकाये जाते हैं
मालिक जब तेल फुलेलों पर पानी सा द्रव्य बहाते है
पापी महलों का अहंकार देता मुझको तब आमंत्रण। †

कवि ने पूंजीपति और महाजनों के अत्याचार का वर्णन करते हुए दीन जनों की दशा का चित्र इस प्रकार खींचा है–

नीचे बिछी पृथ्वी तना ऊपर वितत भगवान का
पर इस भरे जग में गरीबों का हितू कोई नहीं
चढ़ती किसी के बूट पर पालिश किसी के खून की
जीवित मशालों की चिता है सभ्यता की गोद में।

श्री बालकृष्ण नवीन ने भी राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हो इस युग की करुणाजनक अवस्था का चित्रण हुए जुल्म और मुसीबतों से त्रस्त भारतीय किसान व स्त्री-पुरुषों का चित्रण किया है–

जिनके हाथों में हल बखर जिनके हाथों में घन हैं
जिनके हाथों में हंसिया है वे भूखे हैं निर्धन हैं।

---

§ दिनकर—हुंकार (तृतीय संस्करण) पृष्ठ २७
† वही पृष्ठ ८५

'नवीन' जी ने 'जूठे पत्ते' म समाज की इस जीणता और हीनावस्था का वणन इस प्रकार किया है—

लपक चाटते जूठ पत्ते जिम दिन मैंन देखा नर को
उस दिन सोचा क्यो न लगा दू आग आज इस दुनिया भर को।

बच्चन ने बगाल के अकाल का ममभेदी और करुणापूण चित्र खीचने का प्रयत्न किया है-

पड गया बगाल म काल, भरी कगालो स धरती
दीनता ले असम्य अवतार पेट खुला हाथ पसार
बग भूमि अब शस्य हीन है दीन क्षीण है चिर मलीन है।
मरघट-सा अब रूप बनाकर, अजगर सा अब मु ह फलाकर
खा लती अपनी सतान।*

भगवतीचरण वर्मा ने वतमान दशा का चित्र खीच कर दीनता, क्षुधा, महा मारी का वणन किया है-

य क्षुधा ग्रस्त विलबिला रहे मानो व मोरी के कीडे
वे निपट घिनौन महापतित बौने कुरूप टढे मढे।

भसा गाडी कविता म वर्मा जी ने युग के दमन शोषण और पीडन का प्रतीक भसा गाडी को मानकर जीवन के वषम्य का सुन्दर चित्रण किया हैं। नगरो मे सोने चादी के खेल हैं जहा दानवता का राज्य फला है —

जिनमे मानव की दानवता फलाये है निज राज पाट,
साहूकारा के पर्दे म है जहा चोर और गिरहकट,
है अभिशापा से भरा जहा पशुता का व्यापक ठाट-बाट।

लक्ष्मी के परम भक्त (उल्लू) का वणन करते हुए व्यापारी और साहूकारो द्वारा शोषण किस प्रकार होता है देखिए-

वह राज काज जो सधा हुआ है इन भूखे कगालों पर
इन साम्राज्यो की नाव पडी है तिल तिल मिटन वालो पर
ये व्यापारी ये जमींदार जो हैं लक्ष्मी के परम भक्त
वे निपट निरामिष सूदखोर पीते मनुष्य का उष्ण रक्त।

---

* बच्चन—बगाल का अकाल (प्रथम सस्करण)

सामाजिक सुधार तथा राजनीतिक सघष राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भारत भारती के भविष्यत खड म अनेको समाज सुधार सबधी बातो की चर्चा कर देश को उन्नत गौरवशाली बनाने की प्रेरणा दी है-

पुरुषत्व दिखाओ पुरुष हो बुद्धिबल स काम लो
तब तक न थक्कर तुम कभी अवकाश या विश्राम लो
जब तक की भारत पूव के पद पर न पुनासीन हो
फिर ज्ञान विज्ञान मे, जब तक न वह स्वाधीन हो।

गुप्त जी ने ब्राह्मण वश्य शूद्र, नेता सत शिक्षितो तथा नवयुवको आदि से समाज मे सुधार कर देश को फिर से समद्ध और आदश बनाने का सदेश दिया। उनके राजनीतिक सघष सबधी गीत कम ही मिलते है—कुछ ऐतिहासिक कथानको के आधार पर आवश्यक काव्य सजन किया गया है सत्याग्रह तथा अहिंसा का माग अपनाकर विजय प्राप्त करने की कामना भी कवि ने प्रकट की है-

लिखा रहे जगतीतल म सत्याग्रह साका
हाथो म हथियार न थे हा बस थी यही पताका।
रोक न सका इसे बढ़ने से लोहे का भी नाका
है बलिदान वही तो जिससे हत्यारा भी हहरे
निज विजय पताका फहरे।

राष्ट्रकवि माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' न अपने राजनीतिक जीवन जल यात्रा आदि के बडे हृदयग्राही और सुदर सस्मरण काव्य म प्रस्तुत किए हैं। कदी और कोकिल कविता म रात्रि के समय जेल की चारदीवारी म कवि को घायल की कूक सुनाई दती है-

वदी सोते हैं है घर घर श्वासो का
दिन के दुख का राना हैं निश्वासो का
अथवा स्वर है लोहे क दरवाजों का
बूटो का या सत्री की आवाजा का
किस दावानल की ज्वालाए हैं दीखा ? कोकिल बोलो तो †

कवि न हथकडिया को ब्रिटिश राज का गहना माना है और मोट खीचने के काय को ब्रिटिश अधिकारिया की अकड को मिटाने क समान बताया है-

§ मथिलीशरण गुप्त—भारत भारती (बीसवा सस्करण) पृष्ठ १५६
† माखनलाल चतुर्वेदी—हिमकिरीटिनी—(प्रथम सस्करण) पृष्ठ १५ १७

कवि ने अपने आपको आजादी का सनिक माना हैं तथा सत्याग्रह व हिंसक क्रान्ति के लिए हमेशा तत्परता दिखाई है–

हूँ राष्ट्रीय सभा का सनिक, छोटा सा अनुगामी हूँ
उसकी ध्वनि पर मर मिटने मे मैं खुद अपना स्वामी हू ।
बाकी एक उपाय बचा था जिसको की गाधी ने याद
शीघ्र अहिसक असहयोग से मातृभूमि होवे आजाद ।

'भारत के भावी विद्वान' शीपक कविता मातृभूमि का दुख दूर करने के लिये कवि ने पश्चिम को (विदेशी शासन को) सावधान किया है–

सूरज सावधान हो जाओ मातृभूमि तुम धर लो धीर
पश्चिम ! तू भी शीघ्र सभल ले नीति वदल बन जा गभीर
नीति वदल बन जा गभीर कमक्षेत्र में आते हैं अब
करने को जननी का त्राण कई करोड दुखो से व्याकुल,
भारत के भावी विद्वान । ‡

'विदा' शीपक कविता मे एक बहिन अपने भाई को स्वतत्रता सग्राम मे लाने के लिए अश्रुपूण नेत्रो से विदा करती है सुभद्राकुमारी चौहान कहती है—

तिलक, लाजपत, श्री गाँधी जी गिरफ्तार बहु बार हुए,
जेल गए जनता न पूजा, सकट मे अवतार हुए।
जेल ! हमारे मन मोहन के प्यारे पावन जन्मस्थान
तुझको सदा तीर्थ मानेगा कृष्ण भक्त यह हिंदुस्तान ।
सदियो सोई हुई वीरता जागी मैं भी वीर बनी,
जाओ भया विदा तुम्ह करती हू म गभीर बनी । §

सन् १६२१ में नागपुर म झडा-सत्याग्रह आदोलन राष्ट्रीय महासभा की ओर से अहिसा सग्राम के स्वयसेवको द्वारा प्रारम्भ हुआ जिसकी प्रतिध्वनि समस्त देश में व्याप्त हो गई । कानपुर के राष्ट्रप्रेमी अध्यापक श्री श्यामलाल न राष्ट्रीय झडे का गीत लिखा जो प्रत्येक नवयुवक के अधरो पर गुनगुनाया जाता था समस्त सग्राम में सत्याग्रह करते समय राष्ट्रीय झडा लेकर इस गीत को उत्साह के साथ गाया जाता था। यह गीत राष्ट्र गीत के समान समादृत था न जाने कितने नवयुवको ने ब्रिटिश शासन की लाठी और गोलिया सही—

---

‡ एक भारतीय आत्मा—हिमकिरीटिनी—पृष्ठ २५, ४२
§ सुभद्राकुमारी चौहान—मुकुल (ततीय) पृष्ठ ६४

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा !
झंडा ऊंचा रहे हमारा
इसकी शान न जाने पावे चाहे प्राण भले ही जावे
राष्ट्र वेदी पर बलि बलि जावे
एक साथ सब मिलकर गावें
झंडा ऊंचा रहे हमारा !

इस युग में राजनीतिक संघर्ष के साथ ही साथ सामाजिक सुधार संबंधी बातों पर भी कवियों का ध्यान रहा। अछूतोद्धार, विधवाविवाह आदि अनेक सुधारों द्वारा देश की उन्नति की कामना की जाती रही है। 'धेनुसेवक' ने इस प्रकार के कई गीत लिखे हैं–

मुसलमानों के जब मंदिरों पर वार होते हैं,
पुजारी जी तुम्हें तज युद्ध के उस पार होते हैं।
हमीं फिर जान से संग्राम को तैयार होते हैं,
हमीं से तब सुरक्षित पूर्ण ठाकुर द्वार होते हैं।
सुमदिता हिन्दुओं को अब हम भाई समझाने की
अछूतों की नदस्वा, बरन कठिनाई समझाने की।*

श्री देवीप्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर' ने भारतीय हिन्दू विधवा का करुणापूर्ण वर्णन किया है और विधवा विवाह कर इस दुख को दूर करने की प्रार्थना की है–

नाथ हिन्दू समाज का अंत ही क्या आने को है
आंसुओं में विधवाओं के शोक से बह जाने को है
प्रभु कुछ मति उसको करो न विधवा को कलपाओ
करें उनका विवाह फिर से न उनको कुमगों ठुकराओ।†

निराला ने प्रलय का चित्र दिखाते हुए श्यामा का नृत्य उपस्थित किया है–

कड़क कड़क मन मन मदुक अरर अरर तोप
घूम घूम है भीम रणस्थल गगन ज्वालामुखियाँ घार
आग उड़ाती दहक दहक क्या रही भू नभ में छार
करते तांडव हैं छाती पर घाती सौ सौ बार। ●

---

* सीताराम धेनुसेवक – अछूत आवाहन (चाँद अंक मई १९२७)
† देवीप्रसाद गुप्त कुसुमाकर – पतित हिन्दू विधवा (सुधा अंक जुलाई १९३२)
● निराला – गीतिका (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १०७

श्री शिवसिंह सरोज की राष्ट्रीय भावना संबंधी कुछ रचनाएं कानपुर के प्रसिद्ध दैनिक 'प्रताप', 'वीर अर्जुन', आदि में प्रकाशित हुई जिनमें राजनीतिक संघर्ष एवं बलिदान के सुंदर चित्र मिलते हैं --

आज महल सूने, कारा की कोठरियां में दीप जले
चलो भला ही हुआ, अमा में तम के और समीप ही जले
आज सुनहली ज्योति चुराकर लौह-सीखचे चमक उठे।

'अंगार लिए आता हूं,' शीर्षक कविता में कवि ने नई प्रेरणा और स्फूर्ति का स्वर सुनाया है --

जब चली जवानी एक बार, बदली दुनिया उस बार नई
जिन हाथों में है दौड़ गई बिजली जब नए जमाने की
परवाह रही उनको कब तक हथकड़ियों बंदी खानों की

मैं बनकर शंकर प्रलयंकर लहरों की हलचल पी लूंगा,
तुम मुझे न हलाहल दान करो मैं आज हलाहल पी लूंगा।
खटका कारा की कोठरियां तड़क उठी दीवारें
हाथ बढ़ाकर मांग रही है आज़ादी मीनारें
चलो जवानो आज देश पर भीषण संकट आया
एक मिनिट की देर तुम्हारी, है युग की बरबादी। †

सुमित्रानंदन पंत ने नागरिक श्रमिकों और कृषकों के दैन्य का चित्रण कर जनता के मन में क्रान्ति का बीज बोना चाहा है। युगवाणी में कवि ने युग के बौद्धिक विश्लेषणों विचारधाराओं तथा नई दृष्टियों को अपनी लेखनी द्वारा जनता तक पहुंचाया है। मार्क्स के प्रति कविता में कवि कहता है--

साक्षी है इतिहास आज होने को पुनः युगान्तर
श्रमिकों का शासन होगा अब उत्पादन यंत्रों पर।
वर्ग हीन सामाजिकता देगी सबको सम साधन
पूरित होंगे जन के भव जीवन के निखिल प्रयोजन।

---

† शिवसिंह सरोज -- रोला (काव्य संग्रह) प्रथम संस्करण -- पृष्ठ २५

* वही पृष्ठ २३

कवि का विश्वास है कि आज साम्राज्यवाद नहीं पनप सकेगा और मानव को सुख कर सतुष्ट करने वाला स्वर्ण-युग आएगा

अस्त आज साम्राज्यवाद धनपति वर्गों का शासन,
प्रस्तर युग की जीर्ण सभ्यता मरणासन्न समापन ।
साम्यवाद के साथ स्वर्ण युग करता मधुर पदार्पण
मुक्त निखिल मानवता करती मानव का अभिवादन ।

पत ने बापू के प्रति कविता म स्वाधीनता सघर्ष का चित्रण करते हुए कहा—

सहयोग सिखा शासित जन को शासन का दुर्वह हरा भार
होकर निरस्त्र सत्याग्रह स रोका मिथ्या का बल प्रहार
उर के चरख म कात सूक्ष्म युग युग का विषय जनित विषाद
गु जित कर दिया गगन जग का भर तुमने आत्मा का निनाद ।
रग रग खद्दर के सूत्रो म हर दिया यत्र कौशल प्रवाद । †

कवि की आस्था गाँधीवाद म है और सत्य अहिंसा के पाठ से मनुष्यत्व का आह्वान किया—

गाधीवाद जगत म आया ले मानवता का नव मान
सत्य अहिंसा स मनुजोचित नव सस्कृति करने निर्माण ।
गाधीवाद हमे देता जीवन पर अ तर्गत विश्वास
मानव की नि सीम शक्ति का मिलता उससे चिर आभास । ‡

श्री किरीट ने विजयाह्वान कविता म विजय देवी की आराधना कर असहयोग द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति की भावना प्रकट की है—

समय चक्र का फेर बुरा है हो जावे चाह जो आज
पर सशय का पात्र नहीं है भारत के भविष्य का साज ।
असहयोग क वसन पहनकर लगा एकता का चदन सार
सकल सदगुणो के आभूषण मदुतरतन पर विधि से धार *

---

† सुमित्रानदन पत — युगवाणी (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ३८
‡ सुमित्रानन्दन पत — पल्लविनी (तृतीय) पृष्ठ २५६
* श्री किरीट—विजयाह्वान (शारदा खड १ अक १ सवत १९८०)

श्री ललितकुमार सिंह नरवर ने शंखनाद करते हुए पापिनी पराजय को दूर भगाकर देश में शांति और सुख की कामना की है—

ओ विजय के उन्माद ! जाग !
पापिनी पराजय ! हार भाग।
कंप उठते धरातल बार बार दिग्गज भागें कर चीत्कार
अन्याय दासता, अनाचार परपीड़ा, डाका लूटमार
सब जल भुनकर हो छार छार, कुंदन बन चमके जय सुहाग
प्रलयंकर का सा हो महार नव रणचंडी का शुभ शृंगार
फिर शांति सृष्टि का हो सवार, गूंज नभ में नित प्रेम राग §

हरिकृष्ण प्रेमी ने राष्ट्रीय ध्वजा के मान के लिए सब कुछ त्याग करने की भावना प्रकट की है—

शीश कटे घर द्वार छिने उजड़े चाहे भारत सारा
लाठी चल गालियां बरस प्रलय मचे भर जावे कारा
झुके नहीं यह ध्वजा गगन से चमके बनकर शक्ति सितारा। †

स्वदेशी और अहिंसा संग्राम के आंदोलन ने भारतीय जनमानस में नया उत्साह भरा और बलिदान की भावना लेकर देश की मुक्ति के लिए युवक तैयार हुए—

जिये तो स्वदेशी बदन पर वसन हो
मरें भी अगर तो स्वदेशी कफन हो।
बनो कर्मयोगी न तुम कर्म छोड़ो
गुलामी की जंजीर चरखे से तोड़ो। *

श्री मंगलप्रसाद विश्वकर्मा ने अहिंसा संग्राम कविता में यही आदर्श रखा है—

हुई ललकार वीर हो उठो लो खोल जय तलवार
पटक दो दूर पाप की म्यान समझ लो स्वयं ब्रह्म अवतार।

---

§ ललितकुमार सिंह नरवर—शंखनाद माधुरी मार्च १९३२
† भानुकुमार जैन—विप्लव गान—क्रांति गीत (संग्रह) प्रथम संस्करण १९४०
* भवानीप्रसाद गुप्त-स्वतंत्रता की पुकार (संग्रह) सं संवत् १९८० पृ ५४ ७२,१०८

ताज हिंसा का लुट रहा है गांधी लिए गाता जय गान,
दुश्मन को उत्सुक हो रही, अहिंसा में महात्मा का भाल।
किया है पक्का इरादा स्वराज लेंगे स्वराज लेंगे
कदम न हटेंगे बढ़कर गुना गुनी से जान देंगे
उठा के चरखे का पाव भरा मरेंगे जला को हँसते हँसते
और मरते मरते यही रटेंगे-स्वराज्य लेंगे स्वराज्य लेंगे

श्री महेशचन्द्र प्रताप ने 'जलियाँवाला' बाग शीर्षक कविता में डायर के अत्याचार का वर्णन किया है§–

ऐसी है लगाई ठग देश है विकल सब
टीस बढ़ गई और दिन के हैं दाग में
मौत के निवाले हुए कस भाल भाल हाय
भून डाले डायर ने जलियाँवाले बाग में।

स्वदेशी और चरखे द्वारा देश में व्याप्त जागृति का स्वरूप भी कवि ने दिखाया है–

जनम स्वदेश में स्वदेश में ही पाल गए
अरुण मातृभूमि का स्वरूप यों बुनाएंगे।
ध्यान में स्वदेशी खान पान में स्वदेशीमन
प्रान में स्वदेशी है स्वदेशी गान गायेंगे।

राष्ट्रकवि दिनकर ने अपनी अनलवर्षी लेखनी से जो गीत लिखे हैं उनसे सोये हुए भारतीय युवकों के प्राणों को नई स्फूर्ति और उत्तेजना मिली। कवि ने विदेशी क्रूर और अत्याचारी शासक से अहिंसक संघर्ष करने के लिए जनमानस को प्रेरणा दी। उसकी हुंकार ने हिमालय में नया स्वर फूंका है–

कह दे शंकर से आज करें वे प्रलय नृत्य फिर एक बार,
सारे भारत में गूंज उठे 'हरहर बम' का महोच्चार!
ले अंगड़ाई उठ हिले धरा कर निज विराट स्वर में निनाद
तू शैलराट! हुंकार भरे फट जाय कुहा, भागे प्रमाद‡

§ श्री महेशचन्द्र प्रताप—स्वदेशी सतसई (प्रथम संस्करण १९३०) पृष्ठ १२
‡ दिनकर—हुंकार (तृतीय संस्करण) पृ० ७८

दिनकर की 'विपथगा' में कवि की वाणी का स्वर बहुत ही तीखा हो गया है जिससे उनके उत्कट राष्ट्र प्रेम का परिचय मिलता है तथा देश में व्याप्त पीड़ा, शोषण और दुख को दूर करने की बलवती भावना भी।

> डरपोक हुकूमत जुल्मों से लोहा जब नहीं बजाती है
> हिम्मतवाले कुछ कहते हैं तब जीभ तराशी जाती है
> चढ़कर जनून सी चलती हूं मृत्यु जय वीर कुमारों पर
> नीरो के जाते प्राण सूख, मेरे कठोर हुंकारों पर
> आतंक फैल जाता कानूनी, पार्लमेंट सरकारों पर
> 'नीरो के जाते प्राण सूख, मेरे कठोर हुंकारों पर
> कर अट्टहास इठलाती हूं जारों के हाहाकारों पर। *

कवि ने अपने देश के शासकों को ही नहीं किन्तु दुनिया के नीरो और जारों को चेतावनी दी है।

कवि ने मानव मात्र की मुक्ति और समस्त विश्व में शांति और सुख की कामना करता है।

> मेरा वक्ष कृशानु हुआ, ओ जुल्मी की तलवार! सजग,
> दुनिया के नीरों सावधान! दुनिया के पापी जार! सजग
> जाने किस दिन फुंकार उठे पद्दलित काल सर्पों के फन।

'वनफूलों की ओर' कविता में ऋणग्रस्त कृषकों के जीवन की करुणापूर्ण झांकी मिलती है—

> ऋण शोधन के लिए दूध घी बेच बेच धन जोड़ेंगे
> बूंद बूंद बेचेंगे अपने लिए कुछ नहीं छोड़ेंगे
> शिशु मचलेंगे दूध देख जननी उनको बहलाएगी
> मैं फाड़ूंगी हृदय लाज से आंख नहीं रो पाएगी।
> श्वानों को मिलता दूध वस्त्र, भूखे बालक अकुलाते हैं
> मां की हड्डी से चिपक ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं।

---

* दिनकर—हुंकार (तृतीय संस्करण) पृष्ठ ८६

'जवानियाँ' कविता म मानव जीवन का सपूण आज प्रकाश और क्रान्ति का चित्रण है । क्रान्ति के विराट रूप की कल्पना बहुत कुछ श्रीकृष्ण के विराट रूप के समान सी लगती है–

समस्त सूय लोक एक हाथ में लिए हुए
दबा एक पाव चन्द्र भाल पर दिए हुए
खगोल म धुआ बिखेरती प्रतप्त श्वास से
उछाल देवलोक को मही से तौलती हुई
मनुष्य के प्रताप का रहस्य खोलती हुई
विराट रूप विश्व को दिखा रही जवानियाँ । *

दिनकर की क्रान्तिवादी कविताओ म हम सशक्त चित्रण विराट कल्पना और नई स्फूर्ति का परिचय मिलता है । भारतीय जनमानस मे देशप्रेम तथा अन्याय और अत्याचार स सघष लेने म दिनकर जी की ओजमयी वाणी ने बहुत सहयोग दिया । विश्व के सामाजिक तथा राजनीतिक आन्दोलना की ओर भी कवि सजग रहा है और उसने हमेशा अपने ही राष्ट्र की कीर्ति और गौरव को बढाकर उससे प्रेम किया है । उसकी वाणी म ओज है और है हृदय म आत्मविश्वास उत्पन्न कराने वाली शक्ति । दिनकर की क्रान्तिवादी कविता मन को बिखरती नहीं वरन उसकी सारी शक्ति समेट कर सघष करने के लिए आगे बढाती है । उसमे उत्साह सघष और लक्ष्य तीनो की स्पष्ट अभिव्यक्ति है जो राष्ट्रीय काव्य का महत्वपूर्ण अग है । दिनकर के प्रगतिवाद ने भी मार्क्स का मुँहताज नहीं वरन दिल्ली का भक्त बनाने का काम किया है ।

'नवीन' ने भी महात्मा गाधी जी के नेतृत्व म सचालित अहिंसा सग्राम के वीरों को प्रेरणा देने वाल अनेको गीतों की सष्टि की । कवि ऐसी तान सुनाना चाहता है कि ससार म क्रान्ति और उथल पुथल मच जाए–

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल पुथल मच जाए
एक हिलोर इधर से आए एक हिलोर उधर स आए
प्राणो के लाले पड जाए, त्राहि त्राहि रव नभ म छाए ।
नियम उपनियमो के य बधन टूक टूक हो जाय
विश्वम्भरी की पोषक वीणा के सब तार मुक्त हो जाए । †

* दिनकर—सामधेनी
† नवीन—कुकुम (प्रथम सस्करण) पृष्ठ ११

नाश नाश हा महानाश की प्रलयकारी आंखें खुल जाय।

स्वतन्त्रता संग्राम में प्राणोत्सर्ग करने वाले नवयुवकों को नई स्फूर्ति और प्रेरणा देने वाले गीत देखिए–

> चढ़ चल चढ़ चल थक मत रे, बलि पथ के सुन्दर जीव
> उच्च कठोर शिखर के ऊपर है मंदिर की नींव
> बड़े बड़े ये शिलाखंड मग रोके पड़े अचेत
> उन्हें लांघ यदि जाना है तुझे मरण के हेतु
> ऊपर अगम शिखर के ऊपर मचा मृत्यु का रास।

नवीन का प्रसिद्ध गीत गणेशशंकर विद्यार्थी की विदाई का है जिसमें जेल जीवन के सुन्दर संस्मरण हैं–

> ताला कुंजी लालटेन जंगला कड़ी ये सब हैं ठीक
> खींच चुके हैं नौकरशाही अपने सर्वनाश की लीक।
> 'चक्कर' से रोटी आवेगी, डब्बू भर आवेगी दाल
> तू अफसर बना है पापी नदवद्य का जीवन काल।
> तेरे चक्की के तो गेहूं पिसते हैं–पिस जान दो।
> चक्की पिसवाने वालों को मिट्टी में मिल जाने दो।

कवि ने कारावास से छूटे हुए सैनिकों का स्वागत करते हुए लिखा है–

> मां ने किया पुकार बढ़ा तू चला हुआ कुरबान।
> हमने देखा तुझे टहलते सीखचों के दरम्यान
> हाथों में थी मूंज कभी बैठी चक्की पर गात।
> कंबल बिछा ओढ़ कंबल दिन बिता दिए मदमाते।
> बहुत दिनों के बिछुड़े प्यारे अंतर हिय से सट जा।
> आज रिहाई हुई दौड़ मां मोहन गले लिपट जा। †

नवीन ने अपनी ओजमयी वाणी से हुंकार की है और इस देश से विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने का संकल्प करते हुए विप्लव की भैरव रागिनी सुनाई है–

> जीवन जंजीर पड़ी खन खन करती है मादक स्वर में
> बरसों की साधिन है तोड़ोगे क्या तुम अपने इस कर से!

† नवीन—कैदी का स्वागत, विशाल भारत, दिसम्बर १९३७

अदर आग छिपी है, इस भड़क उठने दो एक बार अब
ज्वालामुखी शांत है इस धड़क उठने दो एक बार अब,
दहल जाय दिल, पर लड़साय, कट जाय कलेजा उनका
सर चक्कर खाने लग जाय टूटे बंधन नागक गण का।

कवि की दृष्टी शोषित वर्गों की ओर भी जाती है तथा समाज का दयनीय जीणता भूख और गरीबी की भावपूर्ण अभिव्यक्ति द्वारा विद्रोह की चिंगारी भी दिखाई पड़ती है–

जिनके हाथों म हल बक्खर जिनके हाथों म घन है
जिनके हाथों म हँसिया है वे भूख हैं निधन हैं !

'जूठे पत्ते' म उपयुक्त भावों की व्यंजना कितनी स्पष्ट हुई है–

ओ भिखमगे अरे पतित तू ओ मजलूम अरे चिर दोहित
तू अखड भण्डार शक्ति का जाग अरे निद्रा-सम्मोहित
प्राणों को तड़पानेवाली हुंकारों से जल-थल भर दे
अनाचार के आडम्बरों मे अपना ज्वलित पलीता धर दे। §

गोपालशरणसिंह नेपाली ने स्वतत्रता सग्राम के अहिंसावादी सैनिकों द्वारा राष्ट्र के लिए की गई बलिदान और त्याग की भावना का चित्रण किया है

है अपूर्व यह युद्ध हमारा हिंसा की न लड़ाई है।
नगी छाती की तोपों के ऊपर विकट चढ़ाई है।
तलवारों की धार मोड़ने गदन आगे आई है। *
हृदय रहे आधार हृदय का पत्थर भी दिलदार रहे
खिसक पड़े बेड़िया बधन की लगा नेह का तार रहे
सेवा का व्रत लेकर विचरू जग के कोने कोने म।
मैं न रहू न सही पर मेरा भारत गुलजार रहे।

नेपाली ने राष्ट्रीय कविताओ म नवयुवकों को नई स्फूर्ति और बल मिला। उनकी प्रभावपूर्ण शैली ने स्वतत्रता के पुजारियों म आत्म त्याग और बलिदान की की भावना भरी–

---

§ नवीन—जूठे पत्ते (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १२
* गोपालशरणसिंह नेपाली—उमग (प्रथम संस्करण) पृष्ठ ८१,१०६

सुन सुन ये दीवान किसके आह्वानका शोर चले
मचल मचल गलहार पहनकर किस महफिल की ओर चले
चढ़ टिकटी पर चूम रस्सियां मतवाले उधर चले
जिधर हमारे लाल लाडिले विहस विहस कर बिखर चले †
मा की थाली भरने को य बन रुधिरा की बूद चल

श्री बालेश्वर गुरु ने क्रान्ति गीत द्वारा अन्यायी विदेशी शासक को चेतावनी दी और गुलामी को मिटा देने की हुंकार भरी—

पाडित आहुति चढा चुके अब जल्लादा का बारी है।
नृप सम्भले साम्राज्य सजग हो, जगी क्रांति की चिन्गारी।
जिस सत्ता को अपने ही शोषित से हमने बडा किया।
नीव रखी अपनी लाशो पर दीवारा को खडा किया।
आज उन्ही के सब एहसाना का ऋण उसन बबाक किया।
क्या न व्योम का हृदय चीरता आजादी का गान उठे।
क्या न गुलामी को उर म मिटने का अरमान उठे। *

श्री चिरजीलाल एकाकी ने भी विद्रोह की वशी फूक कर गुलामी को मिटाने का सकल्प किया—

आज नभ स क्रांति बाली
उमडते प्रतिकार पिघल जल उठ अरमान कुचल।
जब शहीदो की गरजती बढ चुकी उन्मत्त टोली।
उठ अभाग वन न वशी फूक दे विद्रोह की वशी,
तोड द जजीर उलझी खून की मच जाय होली §

सोहनलाल द्विवेदी हिन्दी साहित्य के राष्ट्रीय काव्य के लोकप्रिय कवि हैं—महात्मा गाधी के प्रभाव स उनकी देशप्रेम सबधी रचनाओ मे भारतीय स्वतत्रता सग्राम की ध्वनि सुनाई पडती है। समाज म व्याप्त दुख, शोषण और करुणा का भी भावपूर्ण चित्रण द्विवेदी जी की रचनाओं म मिलता। भैरवी म भारत के ग्रामों और दुखी किसाना के चित्र मिलते ह—

† गोपालशरणसिंह नेपाली—उमग (प्रथम सस्करण) १०४
* बालेश्वर गुरु—क्रान्ति गीत सुधा मई १९४०
§ श्री चिरजीलाल एकाकी—वशी सुधा अक्तूबर १९३९

हड्डी हड्डी पसली पसली निकली जिसकी एक एक
पढ़ लो मानव किस दानव ने य तरहस्या के लिए लहा
पी गया रक्त खा गया मांस रे कौन स्वाय के दावा म।
है अपना हिंदुस्तान कहाँ, वह बसा हमारे गाँवों म। *

देश की दासता श्रृंखला को तोड़ने के लिए कवि ने आह्वान किया है–

फिर क्या दुर्बल भुजा हमारी, कभी कभी लोह लड़ियाँ ?
अंगड़ाई भर ले स्वदेश, टूटे पल म कड़िया कड़िया
कूच ढोल बाज रणभेरी जननी की जय जय बोल
चल करोड़ों की सेना डगमग डग मग धरणी डोल

दांडी यात्रा म अहिंसा संग्राम के लिए तत्पर स्त्री-पुरुषों ने महात्मा गांधी
आदेश पर आत्म बलिदान की तैयारी की–

नवयुग का नव आरंभ हुआ कुछ नए नमक के टुकड़ों पर
आजादी का इतिहास लिखा दांडी के कंकड़ पत्थरों पर

कवि ने भैरवी सुनाकर सुप्त नवयुवकों को जगाने का प्रयत्न किया–

जननी की जंजीरें बजती जगा रहे हैं कड़ियों के छाले
सुना रहे हैं तुम्हें भैरवी जागो मेरे सोने वालों। †

द्विवेदी जी ने अपनी प्रवाहपूर्ण ओजमयी शैली म अभियान गीत लिखे जिन्हें
गाकर नवयुवकों की टोलियाँ और कष्ट और पीड़ा भूलकर आगे बढ़ती जाती है–

हम मातृभूमि के सैनिक हैं आजादी के मतवाले हैं
बलिवेदी पर हँस हँस करके निज शीश चढ़ाने वाले हैं।
संतान शूरवीर की हैं हम दास नहीं कहलाएंगे
या तो स्वतंत्र हो जाएंगे या रण म मर मिट जाएंगे। §

दूसरे प्रयाण गीत म भी नई स्फूर्ति देने वाला निनाद सुनाई देता है–

---

* सोहनलाल द्विवेदी—भैरवी (तृतीय संस्करण) पृष्ठ १५ ६७
† वही पृष्ठ ११३
§ सोहनलाल द्विवेदी—सेवाग्राम (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १२६ १३२

अशेष रक्त तौल दो, स्वतंत्रता का मोल दो
कड़ी युगों की खोल दो
डरो नहीं, मरो कहीं
बढ़े चलो ! बढ़े चलो !

'विप्लव गीत' में कवि ने अपनी ओजमयी वाणी में हुंकार कर हृदय में देश-प्रेम की ज्वाला प्रज्ज्वलित की—

वज्रपात हो, बिजली कड़के थर थर काप सब जल थल
अतल, वितल पाताल रसातल, भूतल निखिल सृष्टि मंडल !
महाप्रलय हान दे निष्ठुर करने दे विनाश की तयारी !
सर्वनाश हो पराधीनता यो हो भारत की सारी !

इस युग के गाधीवाद के वैतालिक के रूप मे द्विवेदी जी ने देशप्रेम संबंधी रचनाएं की उनसे भारतीय जनमानस को सघर्ष करने के लिये बल मिला है—

फूंको शख ध्वजाए फहरे
चलें कोटि सेना घन घहरें
मचे प्रलय ! बढ़ो अभय ! जय जय जय !
बनो प्रभजन आंधी बनकर
चढ़ो दुर्ग पर गाधी बनकर
वीर हृदय ! धीर हृदय ! जय जय जय ! *

भारत को स्वाधीन करने के लिए नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने सिंगापुर में जाकर आजाद हिंद फौज की स्थापना की । इस सेना ने भारत में नई जागृति और आंदोलन सा चला दिया तथा ब्रिटिश शासन को समाप्त करने की प्रेरणा दी । आजाद हिंद फौज के प्रसिद्ध अभियान गीत भारत में बडे लोकप्रिय रहे एक गीत देखिए

कदम कदम बढ़ाए जा खुशी के गीत गाए जा
यह जिन्दगी है कौम की, तू कौम प लुटाए जा
तू शेरे हिन्द आगे बढ़, तू मरने से कभी न डर
चला दिल्ली पुकार के कौमी निशा सम्भाल के
लाल किले में गाड़ के फहराए जा फहराए जा । †

---

* सोहनलाल द्विवेदी—सेवाग्राम (प्रथम संस्करण) पृष्ठ २३१
† नरेन्द्र—प्रभातफेरी (प्रथम) पृष्ठ २८

नरेन्द्र ने भी समाज में दीन हीन निष्प्राण कंकालों पर इतने बड़े साम्राज्य का भार देखकर आश्चर्य प्रकट किया है—

मुझे आश्चर्य महान, क्षुधित जर्जर निष्प्राण।
न जाने कैसे हैं ये स्तम्भ खड़ा है जिन पर जग का भार।
सम्भाले हैं जिसको कंगाल सिहरते हिलते से कंकाल।
देखता हूँ विस्तृत साम्राज्य और यह भूखा कंकाल।

नरेन्द्र ने स्वाधीनता संग्राम में बंदी को जगाकर गुलामी की जंजीरों को तोड़ देने का संदेश दिया—

आओ हृथकड़ियाँ तड़काद्रूं, जागो रे नत सिर बन्दी।
उन निर्जीव शून्य श्वासों में आज फूंक दूं नवजीवन
भर दूं उनमें तूफानों का अगणित भूचालों का कंपन।
निर्बल! तुम्हारे बल तुम में है ज्यों तम में जग ज्योति लीन है
उठो सूर्य से चीर तिमिर को उठो उठो नतशिर बंदी। *

सुधीन्द्र भी हिन्दी राष्ट्रीय काव्य जगत में नया प्रकाश लेकर आए। इनकी वाणी में ओज है और धमनियों में रक्त का संचार करने वाली राष्ट्र की मुक्ति के लिए प्रेरणा शक्ति भी है। जौहर में हम उनके स्वतन्त्रता प्रेम का परिचय मिलता है—

है स्वतन्त्र कण कण के आगे स्वर्ण महल नीरस निस्सार।
स्वतन्त्रता के चरण चरण पर आमरण स्वर्गिक सुख बलिहार।
चारों और करुण गान था यहाँ छिड़ा था मंगल गीत। ‡

'प्रलयवीणा' में सुधीन्द्र ने अनलवर्षी भाषा द्वारा क्रान्तिकारी भावनाओं की अभिव्यक्ति की—

मैं आज प्रलय की वीणा पर गाने बैठा हूं अनल गान
इन प्राणहीन कंकालों में कर आज प्रतिष्ठित पुण्य प्राण
हत स्नेह दृगों में जगादीप, दीपित कर दूंगा रुद्ध गान। †
मेरे गीतों जल उठो आज प्राणों में भरकर प्रखर आग
संस्कृति के भावी मस्तक पर खिल उठे तिलक सा स्वर्ण राग।

---

* नरेन्द्र प्रभातफेरी (प्रथम संस्करण) पृष्ठ १६८

‡ सुधीन्द्र प्रलयवीणा (प्रथम) पृष्ठ २०

† वही पृष्ठ ३१ ३७

'जलियावाला बाग' को कवि ने धधक उठने के लिए कहा—

> शहीदों की हड्डी के खड बनेंगे उठ उठ वज्र प्रचड
> लहू के उनके छींटे लाल बनेंगे अग्नि स्फुलिंग कराल।
> भस्म हो जिसमे पाशव शक्ति
> खिलेंगे मानवता के फूल
> भडक उठ जलियावाले बाग!
> धधक उठ जलिया वाले बाग!!

वीर पुरुषों तथा नेताओं की स्तुति व वदना राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति देश के नायकों तथा वीर पुरुषों के त्याग, बलिदान एव माग दशन के रूप म होती है। अपने राष्ट्र को प्रेम करने वाले व्यक्ति राष्ट्रनायकों की वदना करके नया उत्साह और बल पाते हैं।

राष्ट्रकवि मथिलीशरण गुप्त ने अनको पौराणिक तथा ऐतिहासिक आख्यानो म देश के अतीतकाल के गौरव स्तभो के शौय का वणन कर उनकी स्तुति की—

> वे सूय वशी चन्द्रव शी वीर थे कस बली
> जो थ अकेले ही मचाते शत्रु-दल म खलबली
> होते न यदि व चक्रवर्ती भूप दिग्विजयी यहा
> होते भला फिर अश्वमध कि रायसूय कहा कहा। ‡

राणाप्रताप के शौय शिवाजी की वीरता और राजपूतो के पराक्रम का प्रभावपूण वणन हम गुप्त जी की रचनाओ म मिलता है साथ ही राम के आदश चरित्र तथा बापू के त्याग तथा अहिसा का चित्रण भी अनेको स्थलो पर मिलता है। गुप्त जी ने गाधी युग की समस्त चितनधारा को काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी। भारत भारती म राष्ट्रीय गौरव की झाकी मिलती है तथा साकेत म रामराज्य की व्यवस्था दिखाई गई है। द्वापर म क्रान्तिकारी सुधारकों की वाणी कृष्ण तथा बलराम के मुख से सुनाई देती है।

सियारामशरण गुप्त ने बापू के विशुद्ध त्यागमय जीवन ने मानव के कल्याण की भावना प्रकट की—

> जान लिया तुमने विशुद्धान्तकरण स
> सत्ताधारियो के प्रहरण से नाश नही जीवन का

---

‡ मथिलीशरण गुप्त भारत भारती (तीसवा सस्करण) पृष्ठ ४८

बीज उसम चिरतन का हिसा के उपद्रव से,
सभव नही विनाश नर का ।
हाथ म तुम्हारे प्रेम मत्रपूत, शोभित अमल पून
देखकर नूतन अभय म, आशा बधी विश्व हृदय म
लोकगुरु लोक का अज्ञानमय पु जीभूत दूर हो
पवित्रता हो सप्रभूत, जीवन सुचिर हो
मानव का तुमम द्विजन्म फिर हो । ‡

श्यामनारायण पाडेय ने हल्दीघाटी म राणाप्रताप और भाला के शौर्य का वणन कर स्वतत्रता के पुजारी की वदना की है जिसका उल्लेख द्विवेदी युग म किया जा चुका है ।

यश अनल सा धधक रहा, वह स्वतत्र अधिकारी ।
रोम रोम से निकल रही थी, चमक चमक चिगारी ।
भरा हुआ था उर प्रताप का गौरव की चाहो से ।
फूक दिया अपना शरीर तक दुखिया की आहो स । *

माखनलाल चतुर्वेदी ने भारत क भावी विद्वान' कविता म राष्ट्र के नायको तथा देशभक्तो का स्मरण किया—

आज कई वीर के रहते हुआ न उन्नत हिन्दुस्तान
जिनको बाल (तिलक) समझकर माता दूध पिलाती सुधासमान
जिनको पाल (विपिनचन्द्र) हुई है जगती-तल म यह आनदनिधान
जिनको लाल लाल वह उसने भुला दिया सुख दुख का ध्यान
जाना उन्हे राष्ट्र की सम्पद भारत के भावी विद्वान ।

सुभद्राकुमारी चौहान न भारतीय विप्लव की उल्का झासी की रानी लक्ष्मी बाई की जीवन गाथा को बडी सजीव और प्रभावपूर्ण शली म अभिव्यक्ति किया ।

पत न 'बापू के प्रति' गीत म महात्मा गाधी क प्रति अपने उद्गार प्रकट किए हैं —

---

‡ सियारामशरण गुप्त बापू (प्रथम सस्करण) पृष्ठ १२
† श्यामनारायण पांडेय हल्दीघाटी (प्रथम) पृष्ठ १

तुम मांसहीन, तुम रक्त हीन
हे अस्थि शेष ! तुम अस्थि हीन
तुम शुद्ध बुद्ध आत्मा केवल
हे चिर पुराण हे चिर नवीन
सत्य अहिंसा से आलोकित होगा मानव का मन
अमर प्रेम का मधुर स्वर्ग बन जावेगा जग जीवन ?
नव संस्कृति के दूत ! देवताओं का करने कार्य
आत्मा के उद्धार के लिए आए तुम अनिवार्य ।

दिनकर ने अतीत के आदर्श पुरुषों की स्तुति तथा शौर्य वर्णन द्वारा आदर्श की उपासना की है। भीष्म के अतुल पराक्रम और विराट व्यक्तित्व का सजीव चित्रण कवि ने भीष्मोचित ओज और गरिमा के साथ किया—

शरों की नोक पर लेटे हुए गजराज-जैसे
थके टूटे गरुड़ से सत्रस्त पन्नगराज-जैसे
मरण पर वीर-जीवन का अगम बल भार डाले
दबाये काल को सापास सत्ता को सभाले
जिया प्रज्वलित अगारे सा मैं आजीवन जग में
रुधिर नहीं था, आग पिघलकर बहती थी रग रग में ＊

सामधेनी' में अशोक जब कलिंग युद्ध से दुखी होकर आत्मग्लानि से तिल-मिला उठते हैं तब संसार में दया और प्रेम की भावना बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील हो जाते हैं—

शत्रु हो कोई नहीं हो आत्मवत् संसार
पुत्र सा पशु पक्षियों को भी सकूं कर प्यार।
हो नहीं मुझको किसी पर रोष
धर्म का गूंजे जगत में घोष !
बुद्ध की जय ! धर्म की जय ! संघ का जयगान,
आ बसें मुझमें तथागत मारजित् भगवान। §

＊ दिनकर—कुरुक्षेत्र (प्रथम) पृष्ठ ३८-५१
§ दिनकर—सामधेनी (प्रथम) पृष्ठ ३५

कवि ने 'बापू' कविता में महात्मा गाँधी के त्यागमय आदर्श जीवन का चित्रण किया है—

> संसार पूजता जिन्हें तिलक, रोली, फूलों के हारों से
> मैं उन्हें पूजता आया हूँ बापू ! अब तक अंगारों से !
> तू सहज शांति का दूत, मनुज के सहज प्रेम का अधिकारी
> दृग में उड़ेल कर सहज शील, देखती तुझे दुनिया सारी
> बापू ! तू मर्त्य अमर्त्य स्वर्ग, पृथ्वी भू नभ का महासेतु
> तेरा विराट यह रूप कल्पना पट पर नहीं समाता है।

'जनता और जवाहर' कविता में नवयुवकों के प्राण जवाहरलाल नेहरू के लिए कवि ने ये उद्गार प्रकट किए हैं—

> है कौन दर्पशाली ऐसा तुम हुक्म करो वह झुके नहीं
> न्योछावर इच्छाएं उमंग आशा अरमान जवाहर पर।
> सौ सौ जानों से कोटि-कोटि जन हैं कुरबान जवाहर पर।
> नाजा है हिंदुस्तान एशिया को अभिमान जवाहर पर।
> करुणा की छाया किये रहें पल पल भगवान जवाहर पर।

सोहनलाल द्विवेदी ने देश के अनेक वीरों की प्रशस्ति गीत लिखकर भारतीय जनमानस को नई प्रेरणा और उत्साह दिया। द्विवेदी जी की सुप्रसिद्ध कविता 'युगावतार गांधी' में राष्ट्रपिता बापू के विराट व्यक्तित्व की झाँकी प्रस्तुत की गई है—

> युग परिवर्तक युग संस्थापक, युग संचालक हे युगाधार !
> युग निर्माता युग मूर्ति ! तुम्हें युग युग तक युग का नमस्कार
> हे युग द्रष्टा हे युग स्रष्टा, पढ़ते कैसा यह मोक्ष मंत्र ?
> इस राज तंत्र के खंडहर में उगता अभिनव भारत स्वतंत्र। †

बापू के प्रति कविता में भी कवि ने गांधी को जनता के हृदय का प्राण बताया है—

> जनता के हृदय प्राण !
> तुमसे ही राष्ट्र की धमनियों में—
> जीवन है प्रवाहमान !

---

† सोहनलाल द्विवेदी—सेवाग्राम (प्रथम) पृष्ठ ४२१

हे दधीचि !
अस्थियों को आज नाश करो मत करुणानिधान
य ही वज्र के समान, ध्वस्त करेंगी महर्षि !
पाप ताप असुरों की शक्ति सभी
होगी देव तिरोधान ! ‡

'राणाप्रताप के प्रति' कविता म अमर सेनानी प्रताप की स्मृति मे कवि कहता है—

जागो प्रताप, मदवालो क मतवाले सेना सजा रहे
जागो प्रताप हल्दी घाटी स बरी भेरी बजा रहे !
मेरे प्रताप तुम फूट पडो, मेरे आसू की धारा से,
मेरे प्रताप तुम गू ज उठो मेरी सतप्त पुकारा से।

पं० मदनमोहन मालवीय के त्याग और साधना का लक्ष्य कर कवि उनके प्रति श्रद्धा प्रकट करता है—

तुम्हें स्नेह की मूर्ति कहू या नवजीवन की स्फूर्ति कहू,
या अपने निधन भारत की निधि की अनुपम मूर्ति कहू ?
जिया, पिता पुत्रों को अपना प्यार लुटाते तुम सौ वर्ष
जियो राष्ट्र की स्वतन्त्रता के आते आते तुम सौ वर्ष *

तरुण तपस्वी म जवाहरलाल नेहरू क प्रति कवि कहता है--

बोल उठी गगा की लहरें, यह है वह नरनाहर
जिसकी जग म विमल ज्योति जननी का लाल जवाहर।
ओ भारत के तरुण तपस्वी ! तुम प्रतिपल जन-जन मे
स्वतन्त्रता की ज्वाला बनकर धधक उठो मन मन म।§

सुभाषचन्द्र बोस के काँग्रेस अध्यक्ष बनने के अवसर पर द्विवेदी जी ने भाव प्रकट किए--

चमको राष्ट्र गगन मण्डल म चूम चरण सिंधु तरग
मेरे वीर सुभाषचन्द्र ! सौभाग्य चन्द्र बन जा मेरे !

---

‡ सोहनलाल द्विवेदी—प्रभाती (प्रथम) पृष्ठ १७
§ सोहनलाल द्विवेदी—सेवाग्राम—(प्रथम) पृष्ठ ३६

इसी प्रकार महादेव देसाई की मृत्यु पर कवि ने ये उद्‌गार प्रकट किए—

बापू को तज चरण पथ में
चढ़कर अमर मृत्यु के रथ में,
मिला निमंत्रण कहाँ चल पड़े
चल रिक्त कर गान्‍ देश की भूला सुधि स्वर्ण की ?
स्वतंत्रता की ज्वाला बनकर
उर उर में धधको भाई।

सुधीन्द्र ने 'बापू' कविता में महात्मा गांधी की वंदना की है—

बापू तुम हो मानव ? अथवा प्रभु हो विमल विभूत
चक्रवेतु भारत के रथ के सूत्रधार स्वर्गदूत।
तुम्हारे उर से बहती विश्वप्रेम धारा अनिरुद्ध
परमहंस ओ ! ओ चरम तपस्वी ! शांत ! अश्रांत ! प्रबुद्ध ! *

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति प्रेम राष्ट्रभाषा के अनन्य उपासक तथा पुजारी राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने देश में एक भाषा होने के सिद्धान्त पर जोर दिया तथा हिन्दी को उसका पद देकर सुशोभित करना चाहा—

है राष्ट्रभाषा भी अभी तक देश में कोई नहीं
हम निज विचार जना सकें जिससे परस्पर सब कहीं
इस योग्य हिन्दी है तदपि अब तक न निज पद पा सकी
भाषा बिना भावकता अब तक न हममें आ सकी। ‡

श्री रामसेवक त्रिपाठी ने परिचय शीर्षक कविता में अपने आपको 'हिन्दी हिन्दू और हिन्द' का पुजारी बताया है—

एक क्षुद्र बिन्दु हूँ विराट विश्वास वारिधि का
वारिधि कुल की कृपा का एक कन हूँ।
स्वामी जो अनंत हनुमत उनका हूँ दास
हिन्दी हिन्दू हिन्द का अकिंचन पुजारी हूँ। §

---

* सुधीन्द्र—प्रलय वीणा (प्रथम) पृष्ठ ८६,८७

‡ मैथिलीशरण गुप्त—भारत भारती (बीसवां संस्करण) पृष्ठ १७५

§ रामसेवक त्रिपाठी—परिचय (माधुरी फरवरी १९३२)

द्विवेदीयुग के कवि जो वतमान युग मे भी कुछ समय रहे हिन्दी भाषा के आदोलन को आगे चलाते ही रहे। श्री रामचरित उपाध्याय, जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी आदि ने भाषा प्रेम सबधी कुछ उद्गार प्रकट किए। वतमान युग मे तो हिन्दी को राष्ट्रभाषा माना जा चुका था और कवियो की सारी शक्ति इसे समृद्धिपूर्ण तथा सुन्दर बनाने की ओर ही अधिक रही है। अब प्रचार और विज्ञापन की ओर साहित्यकार का ध्यान कम जाने लगा तथा हिन्दी भाषा के भडार की अभिवृद्धि करने म तत्परता दिखाई दी। कुछ उद्धरण दिए जाते हैं जिनसे हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम प्रकट होता है—

जय जय हिन्दी जय जय हिन्द जय जय हिन्दू जय गोविन्द,
महामत्र इसका है नाम दुख दलन इसका है काम। §

श्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ने ब्रजभाषा म हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम प्रकट करते हुए ब्रजभाषा का प्रयोग किया—

बानी हिन्दी भाषन की महारानी
है भारत की भाषा निश्चय, हिन्दी हिंदुस्तानी
जगन्नाथ हिन्दी भाषा के, हैं सेवक अभिमानी।
अपनी भाषा है भली भलो आपुनो देस,
जो कुछ अपुनो है भलो यही राष्ट्र सन्देस।
देसन मे भारत भलो हिन्दी भाषन माहि
जातिन म हिन्दू भलो और भलो कुछ नाहि।

श्री माधव शुक्ल ने राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्त करने वाली अनेक रचनाए की। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति भी उन्नत भावनाए प्रकट हुई हैं।

इस पद म हाली के मजाक म हिन्दी का विरोध करने वाला पर व्यग्य किया है—

होना म भया हिन्द भग पीकर मतवाला
ब्याही हिन्दी नारि छोडकर घर दे बाहर से ताला
उर्दू बीवी सग निकाह हित चला गधी चढ़ लाला
लिए इगलिश सहबाला। †

---

§ जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी—राष्ट्रीय कविता विनोद (प्रथम सस्करण)—पृष्ठ ७, २७
† माधव शुक्ल—भारत गीतांजली (पचम सस्करण) पृष्ठ २६

एक हम हैं जिन्हें बाँटे सी चुभ हिन्दी गरीब
गम सा ही हिन्द बच्चो के य रहती गम है
जान हिन्दी हैं ओ हिन्दुस्तान मरा अंग है।

श्री रामवचन द्विवेदी न भी हिन्दी भाषा का सम्मान देत हुए उसका समस्त भारत म प्रचार करन को कहा-

मिलजुल कर क भारत भर की भाषा हिन्दी बनवाओ
हिन्दी झंडा हिन्द देश म ए पुत्रो ! अब फहराओ !
लिखो पढो हिन्दी भाषा म हिन्दी का ही गुण गाओ।
हिन्दी का सदेश जाकर घर घर में जा सुनाएगें
देवनागरी म लिखन का सबको पाठ पढ़ाएग। *

'मातमदिर कविता म सुभद्राकुमारी चौहान न हिन्दी भाषा की महत्ता बताई है—

जिसको तुतला-तुतला कर के शुरु किया था पहला बार
जिस प्यारी भाषा म हमको प्राप्त हुआ है मा का प्यार।
उस हिन्दू जन की गरीबोनी हिन्दी, प्यारी हिन्दी का,
प्यारे भारतवर्ष-कृष्ण की उस प्यारी कालिन्दी का *
तू होगी आधार, देश की पालमेंट बन जाने म।

हिन्दी अष्टक म श्री रामवचन द्विवेदी ने हिन्दी भाषा का महत्ता बताई है-

हिन्द वासी के लिए हिन्दी अहो सिरमौर है
अब तुल्य इसके हिन्द भाषा दूसरी नहिं और है
प्रिय बधुओं ! अज्ञानता तिमिर छाई हो जहा
राष्ट्रीय भाषा दीप लेकर ज्योति तुम करदो वहा
बस बधु हिन्दी ज्योति से ही जगमगा वह जाएगा
तिमिर अध इस देश के तब स्वय ही ढल जाएगा। §

श्री कमलाप्रसाद कौशल न हिन्दी उत्थान कविता म प्राचीन काल के विभिन्न कवियों का उल्लेख करते हुए हिन्दी भाषा तथा साहित्य की प्रशसा की है-

---

* रामवचन द्विवेदी—हिन्दी सदश (चित्रमय जगत अगस्त १८२४)

क्यों भ्रमता है रे पागलजन !
नदनवन यह नही स्वग का यह तो र हि दी का उपवन
तुलसी के सु दर सु दर दल प्रेम प्रभा प्रकटाते प्रतिपल
पदमाकर के पदम खिले हैं वारो जन उन पर तन मन धन
देव देवनरु शोभा यारी मधुमय लाल गुलाब विहारी ‡

श्री सोहनलाल द्विवेदी ने हिंदी भाषा के महान साहित्यको कवियो तथा लेखकों के स्वागत तथा पुण्य स्मति मे अनेकों कविताए की—प्रेमचद के लिए कवि ने कहा है–

मद हो गई ज्योति, आज अपने हिन्दी के आगन की
अस्त हो गया प्रेमचद, सिमटी उजियाली जीवन की
सींची हिन्दी की फुलवारी कुन्ज राष्ट्र के मधुवन का *

सूरदास की जयन्ति के अवसर पर 'स्वागत-गान' कविता म कवि का भाषा के प्रति प्रेम इस प्रकार प्रकट हुआ—

मगलमय हो घडी आज, यह मगलपव बने आशा
उठे मातभाषा का मदिर, फूले मन की अभिलाषा
रहे अलकृत रत्नाभरणा घर सस्कृति सुभग बिंदी
कोटि कोटि कठो म गूजे मधुर मातृभाषा हिन्दी।

अभिनदन कविता म कवि न हिंदी भाषा के कवियो के प्रति सुन्दर भाव प्रकट किए हैं—

तुम जननी के श्र गार हार !
तुम हिंदी के श्र गार हार !
ले लघु लघु शब्दो की गागर तुम भरते अर्थों का सागर
गुधि शिल्पी, कलाकार, नागर
वीणा वाणी के मधुर तार, तुम जननी के श्रृ गार हार।
खुला हिंदी मदिर का द्वार
हुआ है नव अद्भूत श्र गार
आ रहे पत्र पुष्प ले भक्त
चढाते हैं सुन्दर उपहार। †

---

‡ सुभद्राकुमारी चौहान—मुकुल (तृतीय) पृष्ठ ८०
* चित्रमय जगत—मई १६२४
† सोहनलाल द्विवेदी—प्रभाती (प्रथम) पृष्ठ ५७, ६२ ६८

उपसंहार

द्विवेदी युग के अंतिम वर्षों में भाषा, शैली, भावना तथा प्रक्रिया आदि सभी में सुधार और परिवर्तन प्रारंभ हो गया था। द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मक शैली धार्मिक उपासना, नीति उपदेश तथा सीधी सादी उक्तियों से इस युग के कवि संतुष्ट नहीं रहे। छायावाद तथा रहस्यवाद ने भाषा तथा भावों के परिष्कार में सहायता अवश्य पहुंचाई किंतु धीरे धीरे यह जीवन से दूर होने लगी। अतः इसका विरोध हुआ और कवि बाद में जनता के दुख, निराशा और पीड़ा के साथ देश की मुक्ति के गीत गाने लगे। देशभक्त कवियों ने राष्ट्रीय कांग्रेस के स्वदेशी, असहयोग समाज सुधार सभी आंदोलनों का स्वागत कर सहयोग दिया तथा जनमानस उद्वेलित कर नई प्रेरणा और उत्साह देने वाले राष्ट्रीय गीतों की रचना की। माखनलाल चतुर्वेदी सुभद्राकुमारी चौहान नवीन दिनकर सुधीन्द्र आदि इस क्षेत्र में प्रमुख हैं।

सन् १९२१ के पश्चात हमारे राजनीतिक जीवन में भी बड़ा संघर्ष असफल ताएं तथा निराशा व्याप्त रही। सामाजिक धार्मिक तथा आर्थिक क्षेत्र में भी अविश्वास और परिवर्तन की भावना फैलती गई। भारतीय जनता द्वारा विदेशी शासकों के प्रति रोष कई रूप में प्रकट हुआ। असहयोग तथा सत्याग्रह आंदोलनों में ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा जनता को कई प्रकार की अमानवीय यातनाओं का शिकार होना पड़ा किन्तु कांग्रेस के सबल नेतृत्व तथा महात्मा गांधी के मार्ग दर्शन द्वारा स्वतंत्रता युद्ध चलता ही गया जिसका प्रतिबिम्ब वर्तमान युग के साहित्य में दिखाई देता है। इसी राष्ट्रीयता की भावना को लेकर हमारा राष्ट्रीय साहित्य लिखा गया। इस युग की भावना में दो पक्ष प्रबल हैं—एक तो कांग्रेस की नीति को मानकर चलने वाले अहिंसावादी दूसरे तत्काल परिवर्तन चाहने वाले हिंसावादी क्रांतिकारी। पहली भावना के कवियों ने सत्याग्रह संग्राम में हंसते हंसते मर मिटने वाले वीर पुरुषों के देशप्रेम का चित्रण किया जिससे जनता को प्रेरणा और बल मिला है। देश को सुखी और समृद्धिपूर्ण बनाने तथा भारतमाता की पराधीनता की शृंखलाओं को तोड़कर उसे मुक्त कर जागरण के गीत भी इन्होंने गाए। देश के गौरवपूर्ण अतीत का स्वर्णिम झांकी दिखाकर भारत माता तथा जन्मभूमि के प्रति श्रद्धा के भाव उत्पन्न करने वाले गान गाए। देश के प्राकृतिक सौन्दर्य वन श्री और शस्य श्यामला धरती का चित्रण कर उसके प्रति अनुराग उत्पन्न करने का प्रयास भी किया गया। इस पक्ष के कवियों में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान प्रसाद निराला पंत और सोहनलाल द्विवेदी आदि प्रमुख हैं। दूसरे पक्ष में अंग्रेजों के अत्याचार, फांसी तथा अन्य कष्टों का रोमांचकारी वर्णन करने वाले गीतों

की रचना हुई। समाज की दुर्दशा, बेकारी, भुखमरी, अकाल तथा नैतिक दुर्बलताओं में जर्जरित मानव प्राणी की भावना का इस पक्ष के कवियों ने प्रतिनिधित्व किया। समाज के कर्णधारों, विदेशी शासकों तथा अत्याचारियों को चेतावनी दी कि अब सोया इंसान जाग चुका है और उनके ये षड्यन्त्र नहीं चल सकेंगे। धर्म की आड़ लेकर जो पतन और शोषण समाज में व्याप्त है उस भगवान और उसके भक्त को भी कवियों ने ललकारा है। राजनीतिक आंदोलनों के प्रभाव विशेषकर सन १९४२ की क्रांति, आजाद हिंद फौज तथा अंग्रेजों के विरुद्ध भारत छोड़ो आदि आन्दोलनों ने क्रान्तिकारी कविता का क्षेत्र बहुत व्यापक बना दिया। इन कवियों में दिनकर, नवीन, भगवतीचरण वर्मा, सुधीन्द्र, नरेन्द्र प्रमुख हैं तथा कुछ रचनाएं पहले पक्ष के कवियों ने भी इसी आधार पर लिखना प्रारंभ की।

प्रगतिवादी तथा यथार्थवादी साहित्य में राष्ट्रीय भावना के अनेक पक्षों का चित्रण हुआ। रूसीक्रांति लाल, झंडे तथा हंसिया हथौड़े की दुहाई देने वाले प्रगतिवादी काव्य की चर्चा इस प्रबंध में नहीं की गई है। यह तो इसका एक रूप है। इस वाद के अनेक कवियों ने भारतीय पृष्ठभूमि को लेकर यहां के दुख पीड़न तथा शोषण के चित्र उपस्थित किए हैं। क्रान्तिवादी कवियों ने इस जीर्ण शीर्ण समाज को नष्ट कर नया रूप देने की हुंकार की। वह वर्गभेद मिटा कर नई व्यवस्था और नई सभ्यता को जन्म देना चाहते हैं। साहित्य के सत्यम् शिवम्, सुन्दरम् को मानव के जीवन में उतरते देखना चाहते हैं। गांधी जी के सत्य अहिंसा का सामंजस्य क्रान्तिवादियों के साम्यवाद से करने वालों में पंत अग्रणी दिखाई देते हैं। क्रान्तिवादी कवियों में समझौते की भावना कम विद्रोह तथा परिवर्तन की भावना अधिक मिलती है। नवीन और दिनकर की हुंकार और क्रान्तिकारी गर्जना ने रूढ़ि, परम्परा और अंध विश्वास को चुनौती देकर नया मार्ग अपनाना सिखाया है।

क्रान्तिकारी कवियों की दो श्रेणियां हैं एक श्रेणी में वे कवि आते हैं जो भारतवर्ष के दुख, कष्ट और पीड़न को लेकर यहां के त्रस्त दुखी और भूखे मानव का उद्धार करना चाहते हैं। दूसरी में वे जो विश्व को लेकर अपनी व्यापक और उदार भावना द्वारा एक नए समाज की रचना करना चाहते हैं जिसमें शोषणहीन सुखी और स्वस्थ मानव की सृष्टि हो। वह समाज में रूढ़ि और अंध विश्वास का अन्त कर राजनीतिक अत्याचार और दमन को दूर करना चाहते हैं।

क्रान्तिवादी कवियों ने अपनी कविता के पात्रों में किसान और मजदूरों का चित्रण खूब किया है। गुप्त दिनकर, नवीन तथा सोहनलाल द्विवेदी ने गरीबी में तड़पने

वाल कमनिष्ठ किसानो की दुदशा का मार्मिक चित्रण किया है जिसके कठिन परिश्रम के बल पर आज के समाज की विलासता टिकी हुई है। इन कवियो ने उनके शोषण पीडन के विरुद्ध आवाज उठाई है और साम्राज्यवादियो को अपनी नीति बदलने की चेतावनी दी है। भिखारी, विधवा तथा दूध दूध चिल्लाते वाले नन्हे बच्चो की पुकार का करुणापूर्ण चित्रण कर इन कवियो ने समाज को झकझोरना चाहा है और दुनिया के नीरो तथा जारो की भत्सना की है। दिनकर और नवीन ने अपनी क्रान्तिकारी लेखनी से युग का प्रतिनिधित्व करने वाली राष्ट्रीय कविताओ द्वारा समाज तथा देश की दुदशा का चित्रण कर उसके प्रति विद्रोह का स्वर ऊचा करने की प्रेरणा दी है। नाश और प्रलय का आह्वान कर जीण शीण बधनो को दूर करने का सकल्प हम इनकी वाणी म मिलता है।

भारतीय स्वाधीनता सग्राम के राजनीतिक पक्ष का चित्रण भी माखनलाल चतुर्वेदी सुभद्राकुमारी चौहान, नवीन, सोहनलाल द्विवेदी आदि अनेको कवियो म मिलता है। स्वदेशी आंदोलन सत्याग्रह अहिंसक प्रतिरोध, जलयात्रा तथा युवको तथा महिलाओ के अपूव साहस और बलिदान आदि की झाकी इन कवियो ने सुन्दर ढग से दिखाई। इन कवियो की वाणी म ओज, शक्ति और प्रेरणा का आधिक्य है तथा आत्म विश्वास और उत्साह का स्रोत उमडता हुआ दिखाई देता है। जनता की आशा तथा निराशापूर्ण स्थिति का वणन करते हुए कवियो ने उत्साह म आकर स्वतन्त्रता सग्राम म भाग लिया और इसप्रकार कवियो की वाणी म सच्चाई है तथा हृदय को प्रभा वित करने वाली अनुभूति भी है जिसम प्रेरणा पाकर हजारो लोगो म राष्ट्र भक्ति की भावना जाग्रत हुई।

राष्ट्रीय भावना के अन्य अगो म अपने नेताओ तथा महापुरुषो के यशोगान तथा स्तुति की भावना महत्वपूर्ण है। इस युग के अधिकाश कवियो ने कही अतीत काल के वीर पुरुषो के शौय पराक्रम तथा स्वातन्त्र्य भावना और देशप्रेम की भावना का वर्णन कर जनता म नया उत्साह और प्रेरणा भरी है और कही वतमान काल के वीर सेनानी सत्याग्रही व अन्य कमनिष्ठ नेताओ के त्याग, बलिदान तथा राष्ट्रप्रेम का चित्रण कर उनकी वन्दना की है। भगतसिंह तिलक दयानंद गाधी नेहरु, सुभाष आदि अनेक राष्ट्र के नेताओ के प्रति श्रद्धाजलिया प्रस्तुत कर उनके जीवन का अनु करण करने की उदात्त भावना प्रकट की गई है। इस युग का कुछ साहित्य सामायिक है जिसका केवल ऐतिहासिक मूल्य ही रहेगा।

जातीयता के उद्गार इस युग के कविता में बहुत कम अभिव्यक्त हुए हिंदी हिंदू हिन्दुस्तान का नारा द्विवेदी युग मे ही अधिक रहा। मथिलीशरण गुप्त सियाा

रामशरण गुप्त, रामचरित उपाध्याय माधव शुक्ल आदि कुछ ऐसे कवि जो दोनो युगों मे काव्य रचनाए करते रहे—अवश्य इस प्रकार की भावनाए प्रकट करते रहे किन्तु अन्य कवियों ने अपना दृष्टिकोण उदार रखा। काग्रेस की नीति के अनुसार हिन्दू मुस्लिम एकता को बढाने का प्रयत्न किया गया और साम्प्रदायिक भावना को दूर रखने का प्रयास भी हुआ। इसलिए तृतीय उत्थान मे जाति-पाति तथा विभिन्न धर्मावलम्बियों के भेद भाव की उपेक्षा कर समस्त भारतीयों के दुख और कष्ट का वर्णन अधिक मिलता है। दूसरे इस युग में देशप्रेम की भावना तीव्रतम रही और अधिकांश कवियों का लक्ष्य स्वतन्त्रता प्राप्ति तथा समाज मे सुख एव व्यवस्था की कामना की ओर अधिक रही जिसके कारण हिन्दू जातीयता एव साम्प्रदायिक उद्गारो की उपेक्षा ही होती रही।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति प्रेम प्रकट करने वाले उद्गार भी इस युग के कवियो मे बहुत कम मिलते हैं। इसका कारण सभवत यही है कि सन् १६२५ के पश्चात् हिन्दी भाषा अधिकाश लोगो द्वारा राष्ट्रभाषा मानी जाने लगी, उसके प्रचार या आन्दोलन का कार्य द्विवेदी युग में काफी हो चुका था। अब केवल उस समृद्ध तथा परिष्कृत कर उसके भडार की अभिवृद्धि करने का काम ही महत्वपूर्ण था। पत प्रसाद निराला आदि अन्य कवियो ने हिन्दी भाषा को सरस, सुन्दर बनाकर उसे सशक्त और भावपूर्ण बनाने म महत्वपूर्ण कार्य किया किन्तु उसके प्रचार के लिए कोई आन्दोलन की आवश्यकता अनुभव नही की। गुप्त, रामचरित उपाध्याय माधव शुक्ल मोहनलाल द्विवेदी आदि कुछ कवियो न नागरी राष्ट्रभाषा हिन्दी के महत्व पर अवश्य कुछ रचनाए की। इस युग के कवियो ने हिन्दी के शब्द भडार की खूब वृद्धि की तथा अग्रेजी उर्दू व अन्य प्रान्तीय भाषाओं के नए नए शब्दों को प्रचलित कर भावो की अभिव्यक्ति को तीव्र किया।

कला पक्ष इस युग के कवियो को स्वच्छन्दतावाद ने प्रभावित किया जिसका प्रभाव काव्य की प्रक्रिया पर पडा। भाषा छन्द, वृत्त, तुक, शैली आदि सभी क्षेत्रों म नए प्रयोग किए गए तथा भावो को सशक्त बनाने का प्रयत्न किया गया। वर्तमान युग म महाकाव्यों की अपेक्षा मुक्तक गीतों की रचनाए अधिक हुई इसलिए उसम वृत्त तथा छन्द सबधी प्रयोग करने की प्रवृत्ति कवियो मे बढ़ी। गीतों म लय और तुक को आधार मानकर छन्दो की विविधता को अधिक महत्व दिया गया। सच्ची भावना तथा प्रवाह से अनुरूप छन्दों म ही सुन्दर कविता का सृजन सभव है। निराला इस प्रकार के छन्द लिखने म अग्रणी रहे। छन्दो के अतिरिक्त प्रतीकात्मक शैली तथा सगीतात्मकता

की ओर कवियों का ध्यान अधिक गया। माखनलाल चतुर्वेदी, पंत, निराला, सोहनलाल द्विवेदी आदि अनेक कवियों ने नये तथा उपयुक्त प्रतीकों द्वारा सुन्दर काव्य का सृजन किया। प्रतीकों का प्रयोग केवल भाषा सौन्दर्य की वृद्धि के लिए नहीं वरन् भावना की तीव्रता के लिए किया गया है। नवीन, दिनकर, सुधीन्द्र तथा सोहनलाल द्विवेदी आदि की राष्ट्रीय कविताओं में प्रवाह लय तथा हृदय को प्रभावित करने वाली शक्ति है। चाहे मानव के दुख और उल्लास के चित्र हों, चाहे राष्ट्र की वन्दना के हों अथवा हथकड़ियों की झनझनाहट में प्रफुल्लित वीर सेनानी के उत्साह का वर्णन हो सभी हमें स्फूर्ति और प्रेरणा देने वाले हैं। पंत के परिवर्तन दिनकर की त्रिपथगा 'जवानी' नवीन की 'प्रलयंकारी' कविता तथा सुधीन्द्र के प्रलय गीत और सोहनलाल द्विवेदी के अनेक अभियान गीतों में धमनियों में रक्तसंचार करने की शक्ति है उनकी रोमांचकारी शैली हमें बरबस झकझोर कर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। इन कविताओं का शब्द चयन प्रवाह और पद विन्यास बड़ा ही उपयुक्त है। कुछ कवियों ने शब्दों को तोड़ा मरोड़ा अवश्य है, लोक भाषा के निकट आने का प्रयास किया है तथा उर्दू के शब्दों का प्रयोग भी किया है पर अधिकांश कवियों ने संस्कृत पदावली का ही प्रयोग किया है। कवियों का लक्ष्य द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मक शैली की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप काव्य रचना रहा इसलिए छन्द भाषा तथा शैली में स्वतन्त्रता अपनाई गई है। कवियों ने मुक्तक शैली अपनाकर गेय छन्दों का प्रयोग अधिकतर किया है। कुछ छायावादी कवियों को छोड़कर (जैसे माखनलाल चतुर्वेदी, प्रसाद आदि) शेष अधिकांश कवियों की राष्ट्रीय रचनाओं में अभिधामूलक अभिव्यक्ति है क्योंकि उनका उद्देश्य जनसाधारण में स्फूर्ति भरना था।

परिशिष्ट

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी काव्य मे विकासोन्मुख राष्ट्रीय प्रवृत्ति

स्वतन्त्रता के पूर्व राष्ट्रीय काव्य में जनव्यापी विद्रोह, अकुलाहट और विदेशी सत्ता को उखाड फेंकने का अदम्य उत्साह परिलक्षित होता था। स्वतन्त्रता मिलने पर सम्पूर्ण भारतीय जीवन में एक नया मोड आया आनन्द, उल्लास और सतोष की भावना उमडी। देश के लम्बे इतिहास में ऐसी घटना कई शताब्दियो के बाद घटी भारत के कवि तथा साहित्यकार की अन्तरात्मा जो युग युग से कुण्ठित और अपमानित रही थी, वह अब मुक्त हुई और नई चेतना प्राप्त करने लगी। जनता का आत्म विश्वास जागा और उसके रगो में नए खून का सचार होने लगा। विश्व बन्धुत्व और विश्व कल्याण की अमूर्त भावनाए जो पहले स्वप्न मात्र थीं उन्हे साकार करने का अवसर मिला। भारत के जनमानस ने बिना किसी अहकार और मिथ्याभिमान के अपनी स्वतन्त्रता को समस्त एशिया ही नहीं ससार की मुक्ति का प्रतीक माना। धीरे धीरे विश्व मैत्री की नीति अधिक स्पष्ट और व्यापक होती गई जिसका प्रभाव काव्य पर स्पष्ट दिखाई देता है। श्री दिनकर, पन्त, सुमन आदि अनेक कवियो ने स्वतन्त्रता के बाद अन्तर्राष्ट्रीय और सास्कृतिक कविताओ की रचना की।

इस उल्लास और उत्साह के साथ समाज के बहुत बडे वर्ग में असन्तोष और निराशा भी आई। यद्यपि भारतीय इतिहास मे पन्द्रह अगस्त १९४७ का दिन बडा महत्वपूर्ण रहेगा, वह दिन सच्चे अर्थो मे एक युग की समाप्ति और एक नये युग के प्रारम्भ का सूचक है, परन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहास में यह तारीख न स्मरणीय है और न महत्वपूर्ण ही।† हमारी स्वतन्त्रता को अब २३ वर्ष हो चुके हैं इस अवधि में देश ने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अपने विकास और ख्याति की लम्बी मजिल पार की हैं और विश्व मे भारत का नैतिक सम्मान भी बहुत बढ गया है। सभी हमारे पचशील, तटस्थ नीति और शान्ति सन्देश का आदर करते हैं किन्तु हमारा साहित्यिक विकास इतना प्रगतिशील नहा रहा है। स्वाधीनता के बाद में हिन्दी साहित्य मे किसी नई बलशाली प्रवृत्ति का जन्म नहीं हुआ जिससे स्वाधीनता का सीधा सम्बन्ध जुड सके।

स्वतन्त्रता के वरदान के साथ देश के विभाजन की समस्या अभिशाप के रूप में सामने आई। परतत्र राष्ट्र के उपचेतन की चिर सचित विकृतिया अनायास उभर आई और समस्त देश का वातावरण पाशव शक्तियो के अट्टहास से गूज उठा। यह

† शिवदानसिंह चौहान - साहित्य की समस्याए पृ० १३१

भारतीय जनमानस की घोर विषमता के लिए थे किन्तु भारतीय साहित्य में इनका प्रभाव बहुत कम ही मिलता है। साम्प्रदायिकता और मानव के बर्बरतम पशुता के कार्यों की अभिव्यक्ति का साहित्य परिमाण में अधिक नहीं रचा गया। कुछ कथा साहित्य, उपन्यास और कविताओं में भारत विभाजन की प्रतिध्वनि मिलती है किन्तु हिन्दी के अधिकांश समर्थ कलाकार और कवियों का मुख्य मगम्य ही है।

भारत के विभाजन और उसकी अनुवर्ती विभीषिका द्वारा नरसंहार की पूर्णाहुति राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के बलिदान से हुई। गांधी जी का यह बलिदान देश के सांस्कृतिक व राजनीतिक इतिहास की एक गंभीर घटना थी। बहुत से बड़े और छोटे कवियों ने बापू के निधन पर स्फुट कविताएँ लिखी जिनमें मथिलीशरण गुप्त, दिनकर, सुमन, बच्चन आदि हैं। आधुनिक विश्व के इतिहास में गांधी से अधिक न तो कोई महाकाव्योचित चरित्र नायक ही उदित हुआ है और न उनके बलिदान से अधिक महाकाव्योचित घटना ही घटी है। परन्तु अधिकांश कविताएँ उनकी गरिमा के उपयुक्त नहीं बन सकीं केवल एक-दो महाकाव्य लिखे जा सके हैं। गांधी के महानिर्वाण से प्रेरित काव्य में इसीलिए अपेक्षित उदात्त रस का संचार नहीं हो सका क्योंकि उसका घाव अभी तक हरा है और आज के कवि के लिए जिसने उसे प्रत्यक्ष रूप से सहा है अभी वह संस्कार नहीं बना पाया। गांधी महाकाव्य कदाचित कुछ समय बाद ही लिखा जा सकेगा जबकि गांधी के जीवन मरण से सम्बन्ध हमारी युगानुभूति प्रकृत अनुभूति न रहकर संस्कार बन जाएगी।

स्वतंत्रता के कुछ वर्ष पूर्व छायावादोत्तर काल के पश्चात् अरविंद तथा गांधी दर्शन से प्रभावित राष्ट्र चेतना में मार्क्स दर्शन से प्रभावित वर्ग चेतना ने अपना रूप प्रकट किया। दोनों धाराओं ने मनुष्य जीवन की आवश्यकताओं के भिन्न भिन्न पक्षों पर एकांगी बल देकर विपरीत दिशाओं में विकास किया। प्रगतिवादी, प्रयोगवादी और पुराने छायावादी साहित्यकार अपने अपने गुटों में सृजन कर रहे थे और उनका पारस्परिक मत विभेद इतना उग्र रहा कि स्वाधीनता प्राप्ति की घटना और उसके बाद के ये लम्बे वर्ष उनकी रचना में तीव्रता, गहराई और लोकप्रियता नहीं ला सके है। कुछ लेखकों ने सामयिक रचनाएं की हैं किन्तु उनका कोई साहित्यिक मूल्य नहीं है। स्वाधीनता प्राप्ति के पूर्व सामाजिक जीवन को किसी नये अधिक मानवीय आधार पर सगठित करने के बारे में जो विचार मंथन चल रहा था रामराज्य की जो सुखद कल्पना की जा रही थी, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उसकी कोई विशद समन्वित कल्पना साहित्य में नहीं दी जा सकी। प्रगतिवादियों ने एक तरह से यह कहा जा सकता है कि यह माना ही नहीं कि देश स्वतंत्र हो गया है और इसलिए

उनके सामने कोई नई समस्या उठी ही नहीं । गुलामी के विरुद्ध अपनी आवाज उठाते समय वे पहले पूंजीपति बाद म अंग्रेजो और फिर कांग्रेसियों का नाम लेने लगे ।

स्वतंत्रता के बाद औद्योगिक विकास का काय देश मे बढा । औद्योगिक विकास ने मध्यवग को जन्म दिया और मध्यवग म भी बुद्धिजीवी संवेदनशील कवि थे जिन्होने नवीन शिक्षा और ज्ञान के द्वारा प्रकृति और समाज को देखने की अंतर्दृष्टि दी, उसने धीरे धीरे संपूर्ण समाज मे निमम आर्थिक संबंधो की स्थापना कर दी और मध्यवग के भी भीतर बढते हुए श्रम विभाजन के कारण अनेक स्तर बन गये जिनमे कवि की स्थिति सबसे अधिक दयनीय रही । उसकी भावुकता का सारा रस सूख गया । वह विरोध भी करता है किन्तु इसके विरोध का उच्च मध्यवग तथा उसकी सामाजिक व्यवस्था के प्रति सारा असंतोष और युत्सुभाव अन्त म इस प्रस्ताव पर समाप्त हुआ कि उस संरक्षण प्राप्त हो । किन्तु यहा उसकी आशा पूरी नहीं होती है । अज्ञेय ने इस अवस्था को 'नदी के द्वीप' प्रतीक से व्यक्त किया है जिसम कवि का व्यक्ति मध्यवर्गीय भूखंड से निर्मित किन्तु विलग उस द्वीप के समान है जिसे जन जीवन की धारा निरंतर डुबोती है उखाडता है और फिर फिर थोडी देर के लिए स्थापित करती चल रही है ।

गंभीर समझी जाने वाली वस्तुओ और मान्यताओ के प्रति हल्का ढंग और हल्की समझी जाने वाली चीजो और बातों के प्रति गंभीर रुख ये दोनो यथार्थवाद के दो पहलू हैं । प्रयोगवाद म भी ये दोनों बातें मिलती हैं । 'अज्ञेय' की कविता का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

> अल्ला रे अल्ला
> होता न मनुष्य, होता करमकल्ला
> रूखे कम जीवन से उलझता न पल्ला
> चाहता न नाम कुछ
> मागता न दाम कुछ
> करता न काम कुछ बैठता निठल्ला
> अल्ला रे अल्ला ।

नरेश मेहता की कविता में यांत्रिक युग म मानव व्यक्ति के विघटन के संकेत मिलते हैं—

> जिन्दगी
> दो उंगलियो म दबी
> सस्ती सिगरेट के जलते टुकडे की तरह

जिसे कुछ लमहो मे पीकर
गली मे फेंक दूगा
ऐसा युग आया
कि सजा सजाया सपना जो टके सेर बेचो
तो भी कोई न ग्राहक
आगों वेदना निग्रह के ग्राहक बन लो।

इस युग मे कवियो ने समाजिक अवस्था पर कटु व्यग्य भी लिखे हैं जिनम इनका असतोष कुठा और विरोध व्यक्त हुआ है। सर्वेश्वरदयाल सक्सना की कविता पोस्टर और आदमी' बडी मार्मिक है—

पोस्टर जो दूसरे की बात कहत हैं
जिनके हृदय नही है पर प्यार का सदेश देते हैं
जो एक आकार हैं महज आकार
जिसकी कोई सीमा नही, जिनके भाव दूसरे के हैं
वे आज के युग के आदमी से अधिक बडे सत्य हैं।

नरेन्द्र शर्मा के *अग्नि शस्य काव्य सग्रह मे वतमान युग की समस्याओ की* ओर सकेत मिलता है—

जब भावी से महायुद्ध की खबर लगी है आने
फिर लोभी को मनोगगन मे गृद्ध लगे मडराने।
सोच रहा है नफाखोर कब गोली गोला छूटें
कब जीता को धोखा दें और मरो को लूटें
कब लालच की चीलें भूपर गोल बाध टूटें।

'नवीन' ने भी मानवतावादी दृष्टिकोण दिखाया है—

लपक चाटते जूठे पत्ते
जिस दिन मैंने देखा नर को
उस दिन सोचा क्यों न लगा दू
आग आज इस दुनिया भर को।

श्री कलाश वाजपयी ने मनुष्यों को मांस वृक्ष की सज्ञा दी है—

मैं इन सस्ते और एयाश लोगों के बीच
जो सिर्फ चबाते हैं और
कचडे की तरह बिखर जाते हैं
रहते रहते चिपक जाते हैं

रहते रहते सोचता हू—
क्या पडी थी ईश्वर को
जो बैठे बिठाये-मास के वृक्ष उगाए।

गजानन मुक्तिबोध की अधेरे म' ब्रह्मराक्षस' आदि कविता बडी सशक्त हैं। 'अधेरे मे कवि कहता है—

कवेलरी !
काले काले घोडो पर खाकी मिलिट्री ड्रेस
चेहरे का आधा भाग सिंदूरी गेरूआ
आधा भाग कोलतारी भैरव
आबदार
चेहरे वे मेरे जान बूझे से लगते
उनके चित्र समाचार पत्र मे छपे थ
उनम कई प्रकाण्ड आलोचक विचारक जगमगात कवि
मत्री भी, उद्योगपति और विद्वान
यहा तक कि शहर का हत्यारा कुख्यात
दोमा जी उस्ताद, बनना है बलवन। हाय हाय !!
भीतर का राक्षसी स्वार्थ अब
साफ उभर आया है
दिये हुए उद्देश्य यहा निखर आए हैं
यह शोभायात्रा है किसी मृतदल की।

रघुवीर सहाय ने अकाल का मार्मिक चित्र खींचा है—

फूट कर चलत फिरते छेद
भूमि की पर्त गई है सूख
कटोरे के पैंदे में भात
गोद म लेकर बैठा बाप
सामने आकर खडे हो गए
प्रतिष्ठित पडित राजाराम
यही दुर्भिक्ष वही अनुदान
विधायक वही वही जनसभा

मचिव वही वही पुलिस कप्तान
दया से दब रहे हैं हृदय,
मुक्ति के दिन भी ऐसी भूल।
रह गया कुछ कम ईसपमीन।

भवानी प्रसाद मिश्र न भी अ तर की गहराइयां तक उतर कर अपनी वेदना भरी कुठा का चित्रण किया है—

एक वक्त आता है जब
अपि यक्त नही होते हम
अपन चहरे स
हमारे शरीर की नकित आत्मा की चमक
खा जाती है यानि वह सब की हो जाती है

मौत के नाखून म कवि रहता है—

मल स भरे हुए काले नाखून चुभो दिए हैं
तुमने मेरे गले मे
और मैं उस चुभन का दद
उतना महसूस नही करता
जितना सोचता हू नाखूना क कालेपन को
मौत साफ सुथरी चाहिए
वसी नही जसी आती दिखती है।

उदयशकर भट्ट ने भी यथाथ और कल्पना चित्रण किया है—

स्वतत्रता मिली मिला नवान मान है
दगा फरेब, स्वाथ से न मुक्त हो सके
घृणा कपट प्रपच कल विलुल हो सके
अभी न घूस का बाजार बन्द हो सका
अभी न और चोर द्वार बद हो सका।

धमवीर भारती म भी सामाजिक चेतना और यथाथ की कटु अनुभूति मिलती है—

हर घर म सिफ चिराग नहीं चूल्हे सुलग
लेकिन फिर भी जाने एसा सुनसान अधेरा
रह रह कर धुधुआता है।
घर घर म मचता हगामा।

इस प्रकार का कवि वग वह है जो अभीष्ट सस्कारो के अभाव में परम्परा से पोषित आस्तिक मूल्यो को अपने ढग से ग्रहण करता है। यह एक बौद्धिक विकृति है जो आज के जीवन मे अपेक्षित नही है । आज का बुद्धिजीवी व्यक्ति आशावान नही है ईश्वर में उसकी आस्था नहीं दिखाई देती है। वह अपने वतमान से सतुष्ट नही है और क्षुब्ध रहता है। उसकी सामाजिक चेतना इतनी विकसित नही हुई है जिससे वह राष्ट्र के सामूहिक विकास और उसके कायक्रमो से प्रेरणा ग्रहण कर सके। वह अपने आपको अकेला पाता है और केवल आधुनिक अतिवादो द्वारा घोषित बुद्धि उसके पास रहती है। वह अपने कु ठित मन नास्तिक और अविश्वासी बुद्धि के साथ कविता लिखता है। यह काव्य प्रवृत्ति आज के जीवन मे अस्वाभाविक नही है किन्तु फिर भी सत्य और ग्राह्य नही है क्योंकि यह नास्ति पर आधारित है।

चीन और पाकिस्तान का आक्रमण

स्वतत्रता के बाद पहली बार चीन के आक्रमण के समय जनता जाग्रत हुई और एकता के स्वर म बोल उठी। देश की अखडता के लिए हिन्दी काव्य जगत मे नए स्वर सुनाई दिए।

सीमा सग्राम महाकाव्य म जगमोहन अवस्थी ने लिखा—

> स्वणदान या रक्तदान देने वाला की जय है
> राष्ट्र एकता और तिरगे की ऐतिहासिक जय है
> ललनाओ की कन्याओ, नवयुवको की जय है।

श्री रामकुमार चतुर्वेदी ने 'चीन को चेतावनी' देते हुए कहा है—

> हो रहा शक्ति मद मे शत्रु रक्त पिपासु
> कौन है केवल यहाँ पर न्याय का जिज्ञासु।
> सधि की बात न छेडो ओ कलाधर कृष्ण
> गोपियो का दल नहीं यह कौरवो का झुड,
> बासुरी फेको उठाओ पाचजन्य महान।
> जाग भारतवष के साए हुए अभिमान।

बालकवि बैरागी ने भी 'गोरा रे बादल रे' कविता मे चुनौती दी—

> नेफा से पेकिंग तक धरती अरि मुण्डों से पाट दो
> खडा चीर दो खीरे जसा गाजर जसा काट दो
> हर बरी की छाती पर तुम अमर तिरगा गाड दो
> पेकिंग को नाखून गडाकर कागज जसे फाड दो।

बाल स्वरूप राही ने भी आजादी पर मर मिटने वाला का नारा बुलंद किया—

माथो की भेंट चढ़ाएगे, फिर मा ने हमे पुकारा है,
आजाद रहो या मर जाओ, अब यही हमारा नारा है।

गोपालसिंह नेपाली की 'चालीस करोड़ो को हिमालय ने पुकारा' कविता म यही स्वर है—

आजाद रहा देश तो फिर उम्र बडी है।
मंदिर भी है गिरजा भी है मस्जिद भी खडी है
सग्राम बिना जिन्दगी आँसू की लडी है
तलवार उठा लो तो बदल जाय नजारा
चालीस करोड को हिमालय ने पुकारा।

चीन क आक्रमण से जनमानस मे कुछ निराशा और लजहीनता की भावना आई और देश की बिखरी हुई शक्ति को पुन सगठित करके विदेशी शत्रु से जूझने का सकल्प मन मे उठा। सन १९६५ म पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया और काश्मीर तथा पजाब को युद्ध की आग मे बरबस खीचा। इस बार देश के वीर सैनिको में अटूट साहस था और राष्ट्र का सचालन लाल बहादुर शास्त्री क सबल हाथो में था। 'जय जवान जय किसान' के नारे ने देश के किसानो और सैनिको को साहस से काय करने का आह्वान किया। हिन्दी काव्य म इस आक्रमण के खिलाफ कई कवियो ने जनमानस को जाग्रत किया। दिनकर ने लिखा—

हथियारो नही मर्दों के गीत गाओ,
अरे गाओ अगर स्वर समर्थ है,
क्योकि मर्द नही तो हथियार लूले हैं
मर्दानगी नही तो लोहा व्यर्थ है।

डा० रामकुमार वर्मा ने लिखा है—

जय जय ! जवान तुम बढे शत्रु के शिविरो को क्षण म उखाड
छाती दुश्मन की दहल उठी, जब सुनी तुम्हारी दहाड।

शांति स्वरूप कुसुम न लालबहादुर शास्त्री जी क सबध मे कहा कि—

साधना अनन्य है, देवतुल्य धन्य है
पाक बल प्रवाह से, चीन की निगाह से
देश को बचा दिया, राष्ट्र को बचा दिया।

कच्छ संधि से क्षुब्ध है
पाकिस्तानी शत्रु रहा, उसे संधि करना व्यर्थ है।
सागर चाहे टकराए किन्तु पर्वत होगा न चलायमान,
वह सारा पाकिस्तान उठे क्या तुम विचलित होगे जवान।
जब शत्रु बन गया है भिक्षुक दे दो तुम उसको युद्धदान।

भारतभूषण ने देश के पुकार की आवाज उठाई—

जाग तुझे देश ने पुकारा वीर वेष ने पुकारा !!
सीमा की आग भले ही खेतों तक आए।
तुलसी की आग भले ही सेना तक जाए
पर अखंड रखती है क्षितिजों की रेखाएं
आंचल का मूल्य भले होठों में बिक जाए।

भरतव्यास ने भी चीन की विशेषता पर व्यंग्य किया—

चीन नहीं है नाम तुम्हारा, नाम पराई धरती छीन,
भूल न शब्दों की समता, तुम हो चीन तो हम प्राचीन
सतों के सदा यहां तो मीरा के हैं धरोहर भी।
मीरा के हैं गीत यहां तो पद्मिनियों के जौहर भी।

रामावतार त्यागी ने भी हमलावरों का अहसान माना और एका के जुटे रहने का आह्वान किया—

बड़ा अहसान है उन हमलावरों का
हमें जो आज सोते से जगाया है
हमारे देश ने अपने सपूतों के
पसीने को लहू को आजमाया है।
जुलूसों और नारों से प्रदर्शन और प्रचारों से
न कोई देश जीता है।
सभाएं बन्द, चल खेत में या कारखाने में
कुदाली को रहो थामे, तुम्हारा ही हिमालय है।

डा० शिवमंगलसिंह सुमन ने चलो सिपाही चना म प्रेरणा भरे स्वर में कहा—

मां के लाडला दूध की कीमत अदा करो,
सिर पर केसरिया कफन बांध झूमा चलो।
चामुण्डा के मुंडों की माल अधूरी है
काली के कर का खप्पर अब भी रीता है
जो हारा हुमस रा वरण मौन को करता है
वह राष्ट्र अमर हो जाता युग युग जीता है।

इन युद्धों के बाद देश म सामाजिक प्रगति, गणतंत्र दिवस के गौरव शहीदों की स्मृति तिरंगे की आन पर कवियों का ध्यान आकर्षित हुआ। इस प्रकार राष्ट्रीय भावना का स्वर अब उतना प्रखर नहीं रहा जितना संघर्ष के युग म था।

किन्तु ये रचनाएं बहुत मौसमी रहीं और लोगों के मन को प्रभावित करने की बजाय कष्टकारक अधिक रहीं। वह कवि जिसने स्वयं जिन परिस्थिति को नहीं अनुभव किया या जिया वह कैसे अनुभूति से प्रेरित होकर बड़े उपदेश दे सकता है। कुछ गीत जो दिनकर माखनलाल चतुर्वेदी नवीन आदि ने लिखे वह प्रेरणाप्रद और सशक्त हैं।

इसके अतिरिक्त दो और काव्य के रूप राष्ट्रीय साहित्य के अन्तगत दिखाई देते है जिनका उल्लेख डा० नगेन्द्र ने अपने एक लेख म किया है। † पहला भारत की सफल अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति—नीति दूसरा विनोबा भावे का समाज सुधार और भूदान आंदोलन। यद्यपि ये विषय इस देश के लिए नये नहीं हैं युगों युगों से हम अहिंसा, शान्ति समाज कल्याण और विश्व बंधुत्व की भावना को बढाने का प्रयत्न करते रहे हैं फिर भी स्वतंत्रता के पश्चात् इस प्रकार की बहुत सी कविताएं दिनकर नवीन, सियारामशरण गुप्त आदि ने की हैं।

दिनकर की 'अहिंसा और शान्ति' कविता देखिए

मैं भी सोचता हूं जगत से कैसे उठे जिघांसा, *
किस प्रकार फैले पृथ्वी पर करुणा प्रेम अहिंसा।
जियें मनुज किस भांति परस्पर होकर भाई भाई,
कैसे रुकें प्रवाह क्रोध का कैसे रुकें लड़ाई।
पृथ्वी पर हो साम्राज्य स्नेह का जीवन स्निग्ध सरल हो,
मनुज प्रकृति से विदा सदा को दाहक द्वेष गरल हो,

---

† भारतीय साहित्य मुंशी अभिनन्दन ग्रन्थ (१९४७) लेख—स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी साहित्य) पृ० ३१२.

* दिनकर चक्रवाल (१९५६) पृ० १२५

भूदान कविता म भी कवि न भूदान को गांधी की चोटी से उतरने वाली वाली गगा कहा है—

गाधी की चाटी से गगा आगे उतर रही है
अधकार फट गया विनोबा म धर कर आकार।
अपने को ही नही देख, टुक ध्यान इधर भी देना,
भूमिहीन कृपका की कितनी बडी खडी है सेना।
कृष्ण दूत बनकर आया है सधि करो सम्राट
मच जायगी प्रलय, कहो वामन हो पडा विराट।

सुमित्रानद पत न भी 'शाति क्रांति कविता म शाति की कामना की हैं —

शान्ति चाहिए शाति ! रजत अवकाश चाहिए
मानव को मानस वह महत प्रकाश चाहिए,
आत्मा वह हा, अब वस्त्र आवास चाहिए
देही भी वह आज मुख्यत देही वह क्षण
मनोविलासी आत्मा बनना है उसको।

'नेहरू युग' कविता म भी राष्ट्र नता के यश और शाति सदेश का गान गाया है—

शाति क्षेत्र होता दिग विस्तत
सभव भू पर सहस्थिति निश्चित
देखो, बढना मानवता का रथ
धीरोद्धत—
पचशील का ले ध्रुव सबल।
रक्तहीन नव लोक क्रान्ति हो।
दूर भ्राति हो वि व शाति हो।

'सीता' प्रबन्ध काव्य म भी डा० चद्रप्रकाश वर्मा ने गाधी जी के सत्य और अहिंसा के सिद्धात का निरूपण किया—

हम स्नेह से शासित रख सकते हैं अखिल भुवन को
क्या अक्षत से झुका न सकते हम तक्षक न फण को।

वनवास काल में सीता कहती है—

जग मे अशान्ति का मूल अह आराधन
जब तक न विनय का भक्ति प्रीति का साधन।

लेकर मानव, सत्पथ पर प्रगति करेगा,
तब तक अधम पूजेगा, धम डरेगा ।

अब राष्ट्रीय साहित्य ने सांस्कृतिक रूप धारण कर लिया है । राष्ट्रीय तत्व अब अलग अपना अस्तित्व कायम न रख बहुत कुछ सांस्कृतिक तत्वों में साथ घुलमिल गए हैं । स्वतंत्रता के पहले भी इसका कुछ प्रभाव काव्य पर पडा किन्तु अब परतंत्र देश की अवरुद्ध हुकार का स्थान आत्म विश्वास के गान ने ले लिया है राजनीतिक संघर्ष का स्थान अहिंसा ने ले लिया तथा सद्व, असहयोग प्रतिरोध, आदि के बदल आस्तिक मूल्य बढ गए हैं । स्वतंत्रता के पूर्व जो साहित्य की तीन प्रमुख प्रवृत्तियां सामने आई --

(१) ओज और उत्साह से प्रेरित राष्ट्रीय प्रवृत्ति
(२) सत्य चिन्तन से अनुप्राणित सांस्कृतिक प्रवत्ति
(३) सौम्य भावना से स्फूर्त छायावादी प्रवत्ति

और अब ये सब मिलकर एकाकार हो गई और राष्ट्रीय सांस्कृतिक प्रवृत्ति बन गई हैं । ये सब भावनाए काव्य म अभिव्यक्त होती रही हैं । डा० शिवमंगल सिंह सुमन के 'विश्वास बढता ही गया' काव्य संग्रह म कवि का विश्वास प्रखर दिखाई पडता है—

मैं बढ़ा ही जा रहा हूँ, पर तुम्हे भूला नहीं हूँ
चाहता हू ध्वस कर देना विषमता की कहानी
हो सुलभ सबको जगत मे वस्त्र भोजन, अन्न-पानी ।

शहीदों के प्रति हार्दिक सम्मान और श्रद्धा व्यक्त करने मे श्री बच्चन, अचल, गिरजाकुमार माथुर, मुकुल, दिनेश, श्रीकृष्ण सरल सुमन आदि ने भावपूर्ण गीतों की रचना की—

देश प्रेम के मतवालो उनको भूल न जाना ।
महा प्रलय की अग्निसाध लेकर जो जग म आए । —अचल

रघुवीर शरण मित्र ने 'शहीदों की याद म कहा—

सावधान मानवता के दुश्मन मैं सजग जवान हू,
मैं सुभाष का खून हू चंद्रशेखर की जलती ज्वाला हूँ
मातृभूमि के लिए युद्ध म मैं अनमोल उजाला हू
द्वार खुला पर पहरे की तलवार नहीं सोने वाली
बलिवेदी पर चढ़ने वाला मैं शोणित का गान हू ।

बच्चन ने बापू की स्मृति मे कहा—

कर रहा हू आज मैं आजाद हिन्दुस्तान का आह्वान
है भरा एक दिल मे आज बापू के लिए सम्मान।
हैं छिड़े हर एक दर पर क्रातिवीरो के अमर आख्यान।
गूजता हर एक कण मे आज वदेमातरम का गान।

श्री कृष्ण सरल ने भगतसिंह और चद्रशेखर आजाद के वीरतापूर्ण बलिदान का वर्णन किया—

आजाद प्रेरणा स्रोत अमर हर पीढी को
धरती को आजादी प्राणो से प्यारी हो
यौवन अगारो से अपना शृगार करे
हर फूल वज्र हर कली कराल कटारी हो।

आनन्द मिश्र ने गणतत्र दिवस पर हर्ष व्यक्त किया—

छब्बीस जनवरी ! क्या हो वदन तेरा।
तेरी पूजा म कौन गीत मैं गाऊ
आजाद पवन खेतो म घूम रहा है।
यह सब तेरे स्वागत का साज सजा है।

नरेश मेहता ने भी आशा भरे स्वर म सबकी मगलकामना की—

नए आलोक के जन देवता का पथ मगल हो।
गई सब डूब शोषण आधियो की विषभरी छाहे
घिरी आकाश म वे प्रलय सी इन्सान की बाहें।

कविवर पत ने राष्ट्रीय ध्वज की वदना हेतु एकता का आह्वान किया—

गगन चुम्बी विजयी तिरगा ध्वज
इन्द्र चापमत है !
कोटि-कोटि हम श्रमजीवी सत सभ्रम मयुत है।
सर्व एक मन एक ध्येय रत सवश्रेय व्रत है
जन भारत है ! जागृत भारत ह !

द्वारिका प्रसाद सक्सेना गणतत्र अमर है का स्वर फूका—

भारतीय गनतन्त्र अमर है यहां गीत अब गाना है
नए शौर्य बल विक्रम से शत्रु हृदय दहलाना है।
दस्यु आततायी हठधर्मी, घुसपैठिए, छाताधारी
मानव पीड़क हिंसक पापी इनको मजा चखाना है।

राष्ट्र के निर्माण हरे भरे खेत खुशहाली और श्रम एवं उल्लास के गीत भी कवियों ने गाकर अपनी राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति की है। बच्चन ने श्रम की महत्ता इस प्रकार प्रकट की—

अंतर से या कि दिगंतर से आई पुकार
मैंने अपने पांवों से पर्वत कुचल दिए
तन पर फूटी श्रम की धारा का सुख पाता हूं
जन श्रम जय पसीने का गुणगान करते हुए।

बाल कवि बैरागी ने भी श्रम का गीत गाया—

गांव गांव और धूप छांव में झांकी नव निर्माण की
राजनीति का तीरथ बन गई धरती हिन्दुस्तान की
दुनिया के हर कोने में है चर्चा मेरे गुमान की
बोल रही दसों दिशाएं जय गांधी भगवान की
मेरा मन कहता है बदल रहा है हिन्दुस्तान।

आनन्द मिश्र ने भी पसीने का महत्व बताया—

धरा के भाल पर जगमग जड़ा हो वह नगीना हूं
पसीना हूं मुझे मंदिर में नया मधुवन खिलाना है।
भागीरथ हूं मुझे भू पर नई गंगा बुलाना है।

मधुराज मुकुल ने भी नवनिर्माण करने का आह्वान किया—

कोटि कोटि भुज उठो नया निर्माण रचाएं आज हम
श्रम से अर्जित पुण्य उठो यह धरा सजाएं आज हम।
आजादी के प्रगति चरण को मिला नया आह्वान है
पानी के आंसू धार मचला जीवन गान है।

गमगम उबरा जीवन जिसका, वह मेरी है भारतमाता
पद धान का यौवन जिसका वह मेरी है भारतमाता।

मेघा के आंचल मे जिसकी, वज्र शक्ति है बधी दिनरात,
हल के फल जहा पृथ्वी का, सुखमय वपण करें दिनरात।

जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द ने बलिपथ के गीत लिखे—

मैं भारत हू मैं भारत हू।
मेरे वन, मेरी सरिताए मेरा हिमगिरि मेरा अम्बर
क्षुधारोग दारिद्रय अग्नि मे फिर भी मैं जलता अविरत हू।

पत ने भी भारत की वदना चिदम्बरा म की है—

ज्योति भूमि जय भारत देश
ज्योति चरण धर जहा सभ्यता उतरी तेजो मेष
समाधिस्थ सौन्दय हिमालय, श्वेत शान्ति आत्मानुभूतिलय
गगा यमुना जल ज्योतिमय हसता जहा अशेष।

दिनकर ने भी भारत की महिमा गाई है—

भारत एक भाव है जिसको पाकर मनुष्य जगता है
भारत एक जलज है जिस पर जल का न दाग लगता है।

सोहनलाल द्विवदी ने भी आजादी को अमर बनाने के लिए कहा—

इस स्वतत्रता की अमर ज्योति की ज्वाला मद न हो
प्राणो का स्नेह चढाने की यह धारा बद न हो।
है अभी अभी कल से उजियाली छाई आँगन म
है अभी अभी कल से खुशियाली आई तन मन म।

श्री मयक ने भी निमाण की शहनाई बजाई—

बज रही निर्माण की शहनाइया,
खेत म श्रम कर रहा किमान है
पूजा उसका आज हर अभिमान है।

पत जी के काव्य में नया मोड आया है और उन्होने सास्कृतिक पुनरुद्धार की आवश्यकता पर बल दिया है। सास्कृतिक सफलता की स्थिरता के लिए आतरिक साधना को लक्ष्य बनाना आवश्यक है इसलिए भौतिकवाद में अध्यात्म का समन्वय

कवि को अपेक्षित है। कवि की कल्याण कामना आज के मनुष्य की अवाछनीय मनोवृत्ति, घृणा द्वेष अत्याचार निराशा से क्षुब्ध है। कवि मनुष्य के भविष्य म अधिकाधिक आशावादी हो गया है। 'अतिमा' सग्रह की सदेश' शीर्षक कविता म कवि ने कहा है—

> या भौतिक मूल्या की वेदी पर बलि देकर
> मानव मूल्यो की तुम धरती पर नया स्वग
> रचन को व्याकुल हो यत्रो के चक्रा म
> मानव का हृदय कुचल लोहे का टापा से
> महत जगत जीवन की इच्छा ही प्रभु का पथ
> स्वण सजन चक्रो पर बढता प्रभुता का रथ।
> अणु उद्जन की प्रलयकार छाया म प्रतिक्षण,
> निभय नव निर्माण करो हे जीवन चेतन !

स्वर्गीय माखनलाल चतुर्वेदी तथा बालकृष्ण शर्मा नवीन राष्ट्रीय कविता लिखने वाला म प्रमुख रहे हैं। चतुर्वेदी जी की हिमकिरीटनी और 'माता नामक काव्य कृतिया स्वतत्रता के बाद प्रकाशित हुई हैं जिनम स्वदेश प्रेम सबधी रचनाओ का बाहुल्य है—

> कविते ! क्या जाना अपना पथ दान गत खो खो कर पाना है
> सम्मानों से बचा जाना है अपमानो को अपनाना है
> यह पथ कबीर क साहब का इस पर मीरा थी दीवानी।
> आओ भूमो के रथ बरी मानव की कविता कल्याणी।

एक नई कविता म भी कवि का विश्वास और उदात्त कामना मुखरित हुई है—

> दीवाली है आज बहुत काम की
> शोभा बिखर पडी है गाधी ग्राम की
> प्रतिभा क जोरा प्रभुता है परेशान
> व अगुलिया थी जिनका या यह चमत्कार
> लो करो उन्ही को प्यार मरा सा नमस्कार।

भारत भूषण अग्रवाल की कविताओ म सामाजिक यथार्थ और रोमानी भावना मिलता है—

किस सम्मोहन से आज प्राण मेरे
कर उठते हैं गुन गुन
किस सुख का मधु संकेत लिए
री बौराया है यह फागुन ।

गिरिजाकुमार माथुर न नये उपमानों को लेकर कुछ उदात्त भाव वाले गीत लिखे हैं । 'धूप के धान', नाश और निर्माण आदि काव्य कृतियों मे शिल्प संबंधी तथा भाव सम्बन्धी नए प्रयोग किए हैं । 'नई भारती' कविता म कवि कहता है—

एशिया के कमल पर तुम भारती सी
पूर्व के जन जागरण की आरती
इस सदी के साथ केसर चरण धरकर
आ गई तुम भूमि स्वर्ग संवारती सी
किन्तु नहीं मिट सका कभी न भविष्य मनुज का
अणु का नाश नाचने वाले महामनुज का
अणु की अग्नि गरज म भी यह ध्वनि उठती है
मनु की धरती अजर अमर है
जयति मृत्यु करते भविष्य की
जय हो जीवन क भविष्य की ।

कवि जीवन के प्रति आशावान है और भविष्य को संवारने की प्रेरणा देता है—

लक्ष्मी की मूर्ति नई
मिट्टी से निर्मित हो
खेतो से मिलें रत्न श्रम सुवर्ण पूजित हो
भय विनाश कष्ट मिटें
धरती पर बजे-नये जीवन की बांसुरी ।

उदयशंकर भट्ट का दृष्टिकोण भी मानवतावादी रहा है और उन्होंने भी नए जीवन, नए समाज की कल्पना की है—

जहां एक ही जाति होगी धरा पर
जहां एक ही नर पाति होगी धरा पर
जहां सब म प्राण अनुरक्ति होगी
वहां प्रेम होगा वहीं शक्ति होगी

प्रलय म तिमिर म न तूफान म भी,
कदम ये रूके हैं न रूक पायगें ही।

दवराज न्निेश ने भी बहुत सी व्यग्यपूण और प्रभावशाली कविताए लिखी हैं। दश प्रेम की कविताआ म मा की लारी बहुत हा जोशीली और मार्मिक हैं हैं जिसमे राणा प्रताप, शिवा जी कृष्ण आदि के शौय की याद न्लिाई गई है जो चीन से भारत पर आक्रमण करने की आशका से जाग उठत हैं।

इस प्रकार हम दखते है कि स्वतत्रता क पश्चात् राष्ट्रीय जागरण आया। ह्न्दी का आधुनिक साहित्य इसी युग की उपज हैं राष्ट्रीय जागरण ही आधुनिक युग म भारतीय सास्कृतिक नव निमाण की अन्त प्रेरणा बना है। राष्ट्रीय साहित्य अ तर्राष्ट्रीय साहित्य बनता जा रहा है। अनक कवि जनमानस के सामाजिक जागरण और नवोत्थान की दिशा म यत्नशील हैं। आज के साहित्यकार पर बहुत बडा दायित्व है उसके सम्मुख दो प्रमुख समस्याए हैं—† उस ऐसी परिस्थितिया पदा करनी हैं जिनमे राष्ट्रीय कला और साहित्य अकुठित रूप स विकसित हो समाज का सास्कृतिक जीवन इस प्रकार का बने जो कला सजन मे प्रेरक बने बाधक नही। दूसरे विश्व की कला और विज्ञान की विरासत से जो कुछ ग्रहण किया जा सके उसे लेकर एसा साहित्य सजन किया जाय जिससे जनता की सास्कृतिक आवश्यकताआ की पूर्ति हो सके और विश्व की जनता के आगे हमार राष्ट्रीय जीवन का सही सही प्रतिनिधित्व हो सके और एक दूसरे को अधिक समय लान मे याग दे सके। ऐसी कृतिया ही विश्वजनीन महत्ता प्राप्त करती हैं।

यह काय राजनीतिज्ञ नहीं कर सकते। कलाकार का आत्म विश्वास के साथ आगे बढकर देश की स्वाधीनता को स्थायी रूप प्रदान करने के लिए जनमानस को उद्बुद्ध करना होगा। उस निष्ठा आशा और दृढ विश्वास के साथ स्वाधीनता के सरक्षण म बाधक तत्वा कुठा और गहन विषाद क जीवन स दूर करना होगा। साहित्य और कलाआ का क्षेत्र समाज और व्यक्ति की भावनाओ के परिष्कार और उन्नयन का है। राष्ट्रीय साहित्य की यह नई धारा अब धीरे धीरे बन रही है और आशा है कि साहित्यकार पुन राष्ट्रीय और सास्कृतिक विकास की ओर उन्मुख होगे। काव्य क शिल्प विधा और अभिव्यजना म स्थिरता आएगी और वह जनमानस के अधिक निकट आएगा। यह बडी प्रसन्नता की बात है कि अब कवियो ने राष्ट्रीयता

† शिवदान सिंह चौहान—साहित्य की समस्याए पृ० ३१

से उपर उठाकर अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाना प्रारम्भ कर दिया है और उनके काव्य म करूणा, नम्रता और कष्ट महन करके राष्ट का समृद्धि करने की भावना जाग्रत होनी जा रही है।

नई कविता का यह भ्रम अब समाप्त होना चाहिए कि वह लोक विवृति, पराजय, भद्दा यौन आकर्पण, अनास्था और कुठा की नकारात्मक कविता बनी रहेगी। अब कविता म सबल आस्था, गहरी अनुभूति साम्य पूजा और स्वस्थ प्रेम क नए चित्र भी आ रहे हैं। राष्ट्र की एकता और प्रेम का स्वर भी गूजना है और पीडन, टीस के साथ साथ उत्साह साहस और शक्ति का अनुभव भी हो रहा है।

ग्रन्थानुक्रमणिका

	नाम पुस्तक	लेखक
१	अकबर की राज्य व्यवस्था	शेषमणि त्रिपाठी
२	अगस्त क्रान्ति और प्रतिक्रान्ति	मन्मथनाथ गुप्त
३	अठारह सौ सत्तावन का भारतीय स्वातन्त्र्य समर	विनायक दा सावरकर
४	अर्थ शास्त्र	कौटिल्य
५	अंधकार प्राचीन भारत अनुवाद रामचन्द्र शर्मा	श्री काशीप्रसाद जायसवाल
६	अनुराग रत्न	श्री नाथूराम शकर शर्मा
७	आउट लाइन आफ एशिएट इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेशन १९३७	डा० आर सी मजुमदार
८	आजादी के दीवाने	श्री राम मनोहर
९	आदि भारत	प्रो० अर्जुन कश्यप चौबे
१०	आधुनिक काव्य धारा	डा० केसरी नारायण शुक्ल
११	आधुनिक हिन्दी सा० का इतिहास	प० कृपाशकर शुक्ल
१२	आधुनिक काव्य धारा सांस्कृतिक स्रोत	डा० केसरी नारायण शुक्ल
१३	आधुनिक वीर काव्य	श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी
१४	आधुनिक हिन्दी साहित्य	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
१५	आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
१६	आधुनिक साहित्य	श्री नन्ददुलारे वाजपेयी सा म प्रयाग
१७	आधुनिक हिन्दी साहित्य का विवेचन	श्री कृष्णलाल
१८	आर्य सभ्यता का मूलाधार	प्रो० बल्देव उपाध्याय

१९ आय सस्कृति का उत्कष अपकष	महादेव शास्त्री दिवेकर
२० इण्डियन कल्चर थ्रू एजेज	एम एल विद्यार्थी
२१ इण्डिया इन ट्रान्जीशन	ग्रेहमपोल
२२ इण्डिया थ्रू एजेज	श्री एफ ए स्टील
२३ इण्डियन नेशनेलिस्ट	श्री ए एन गिलक्राइस्ट
२४ इण्डियन नेशनल इवोल्यूशन	श्री ए सी मजुमदार
२५ इण्डियन नेशनल्जिम	श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त
२६ इनफ्लूऍस आफ मुस्लिम आन इण्डियन कल्चर	डा ताराचन्द
२७ उत्तरी भारत की सत परम्परा	श्री परशुराम चतुर्वेदी
२८ ऋग्वदिक कल्चर	श्री ए सी दास
२९ ऋग्वदिक कल्चर आफ प्री हिस्टोरिक टाइम्स	स्वामी शकरानन्द
३० कबीर (ततीय सस्करण)	डा हजारीप्रसाद द्विवेदी
३१ काग्री नागरी	श्री सूदन
३२ क्रान्तियुग के सस्मरण	श्री मन्मथनाथ गुप्त
३३ क्रान्ति और सयुक्त मोचा	स्वामी सहजानन्द सरस्वती
३४ क्रिएटिव इण्डिया	श्री बी के सरकार
३५ काग्रेस का इतिहास	श्री पट्टाभि सीतारामय्या अनुवादक हरिभाऊ उपाध्याय
३६ गुप्त साम्राज्य का इतिहास	डा वासुदेवशरण अग्रवाल
३७ गारा बादल की कहानी	श्री जटमल
३८ गोस्वामी तुलसीदास	आचाय प रामचन्द्र शुक्ल
३९ गान्धी जी की आधी	श्री चतुरसेन शास्त्री
४० छत्र प्रकाश	श्री गोरेलाल कवि
४१ छत्र प्रकाश	श्री श्यामसुन्दर दास
४३ जातीय कविता	नारायणदत्त सहगल एड सस लाहोर
४४ जाग्रत भारत	श्री माधव शुक्ल
४५ जीवन सगीत	श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिद
४६ डिस्कवरी आफ इण्डिया	प जवाहरलाल नेहरू
४७ डेमोक्रेसी एण्ड इटस राइवल्स १८४३	मीलायड

४८	तुलसीदास	श्री चन्द्रबली पाण्डेय
४९	तुलसीदास और उनकी कविता भाग २	प० रामनरेश त्रिपाठी
५०	तिलक गाथा	श्री प० झावरमल्ल शर्मा
५१	दिनकर	श्री शिवबालक राम
५२	दी इण्डियन रिबेलियन इटस कौज एण्ड इवेंटस इन ए सीरीज आफ लेटरस	डा० अलैंदन डफ
५३	दी एज आफ इम्पीरियल यूनिटी	श्री के० एम० मुन्शी
५४	दी एवेकनिंग आफ एशिया १९१९	श्री एच० एम० हिंडमन
५५	दी प्यूपिल आफ इण्डिया १९१५	श्री हबट रिसले
५६	दी फण्डामटल यूनिटी आफ इण्डिया	श्री राधाकुमुद मुकर्जी
५७	दी यूनिटी आफ इण्डिया	प० नहरू
५८	दी हिस्टोरीकल इवोल्यूशन आफ माडन नेशनलिज्म	श्री जे० एच० कालटन
५९	दी हिस्ट्री आफ इण्डिया	श्री ई० बी० ववेल
६०	दी हिस्ट्री आफ फ्रीडम एण्ड अदर एजेज	लाड एम्पटन
६१	धम और जातीयता	श्री अरविन्द घोष
६२	धम का स्रोत	श्री गगाप्रसाद उपाध्याय
६३	निस्सहाय हिन्दू	श्री राधाकृष्णदास
६४	नेशनलिज्म	श्री रवीन्द्रनाथ टगोर
६५	नेशनलिज्म इन हिंदू कल्चर १९२१-	श्री आर० के० मुकर्जी
६६	परमार रानी	श्री श्यामसुन्दर दास
६७	प्रगति और परम्परा	डा० रामविलास वमा
६८	प्रताप लहरी	श्री प्रतापनारायण मिश्र
६९	प्रतापसिंह विरदावली (हस्तलिखित)	श्री पद्माकर
७०	पृथ्वी पुत्र	श्री वासुदेवशरण अग्रवाल

७१ प्राचीन भारत हिन्दूकाल	श्री राजबली पाण्डेय
७२ प्राचीन भारत शासन पद्धति	श्री अनन्त रूपाशिव अल्टेकर
७३ प्राचीन भारत का इतिहास	श्री रमाशकर त्रिपाठी
७४ प्राचीन साहित्य	श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर
७५ प्रेमघन सर्वस्व	श्री बद्रीनारायण चौधरी
७६ पद्य पुष्पाञ्जलि	श्री रूपनारायण पाडेय
७७ प्रभात फेरी	श्री नरेन्द्र
७८ प्रलय वीणा	श्री सुधीन्द्र
७९ भारत का प्राचीन इतिहास भाग १–२	डा० सत्यकेतु विद्यालकार
८० भारतवर्ष का सास्कृतिक इतिहास	,, ,,
८१ भारत का सास्कृतिक इतिहास १९५२	श्री हरिदत्त विद्यालकार
८२ भारत की प्राचीन सस्कृति	डा० रामजी उपाध्याय
८३ भारत की मौलिक एकता	प्रो० शिवदत्त ज्ञानी
८४ भारत के देशीराज्य	श्री सुख सम्पति राय भण्डारी
८५ भारतवर्ष स्वातन्त्र्य सग्राम इतिहास	,, ,, ,,
८६ भारत-गीत	श्री श्रीधर पाठक
८७ भारतेन्दु ग्रन्थावली (दूसरा खड)	श्री भारतेन्दु
८८ भारत मे अग्रेजी अत्याचार	श्री रामशरण विद्यार्थी
८९ भारत मे अग्रेजी राज्य के २०० वर्ष	श्री केशवकुमार ठाकुर
९० भारत के अग्रजी राज्य-तीन भाग	श्री सुन्दरलाल
९१ भारत मे इस्लाम	श्री आचार्य चतुरसेन शास्त्री
९२ भारत मे शस्त्र क्रान्ति चेष्टा का रोमाचकारी इतिहास	श्री मन्मथ नाथ गुप्त
९३ भारतेन्दु युग	श्री रामविलास शर्मा
९४ भारतेन्दु के विचारधारा	श्री लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
९५ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	श्री श्यामसुन्दर दास
९६ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	श्री लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

९७	भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास	श्री बी० एन० लूनिया
९८	भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण	डा० भगवत् शरण उपाध्याय
९९	भारतीय संस्कृति	प्रो० नित्यानन्द शास्त्री
१००	भारतीय संस्कृति और अहिंसा	श्री धर्मानन्द कोसम्बी
१०१	भारतीय संस्कृति का इतिहास	श्री रामचन्द्र सिंह
१०२	भारतीय संस्कृति और उसका स्वरूप भाग १–२	श्री डा० सत्यकेतु विद्यालंकार
१०३	भारतीय संस्कृति की रूपरेखा	श्री प्रो० बल्देव उपाध्याय
१०४	भारतीय संस्कृति की रूपरेखा	श्री प्रो० रामधन शर्मा
१०५	भूषण	श्री विश्वनाथ मिश्र
१०६	भूषण ग्रन्थावली	श्री भूषण
१०७	भूषण विमर्श (सं० १९९५)	श्री भागीरथ प्रसाद दीक्षित
१०८	भारत गीतांजलि	श्री माधव शुक्ल
१०९	भारतोद्धारिणी	श्री सुकवि
११०	राजपूताने का इतिहास १ २,३ ४	रा० ब० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
१११	राजनीति विज्ञान	सुखसम्पत्ति राय भण्डारी
११२	राधाकृष्ण ग्रन्थावली	श्री राधाकृष्णदास
११३	राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास	श्री मन्मथनाथ गुप्त
११४	राजस्थान इतिहास १ १	श्री चन्द
११५	राजस्थान पिंगल साहित्य	श्री मेनारिया
११६	राजस्थान लोकगीत १	श्री सूर्यकिरण
११७	राजस्थान मे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थ	श्री नाहटा
११८	राजस्थान मे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थ	श्री उदयसिंह
११९	राजस्थानी भाषा	श्री सुनीतिकुमार
१२०	राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा	श्री मेनारिया
१२१	राजस्थानी साहित्य का महत्व	श्री रामदेव
१२२	राष्ट्रीय आन्दोलन	श्री प्रभुदयाल

१२३	राष्ट्रकूटो का इतिहास	श्री विश्वेश्वर
१२४	राष्टीय कविता सिंधु	श्री पाठक
१२५	राष्ट्रीय गान	श्री विद्याभूषण
१२६	राष्ट्रीय झडा	श्री आनदराव
१२७	राष्टीय गीत	श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी
१२८	राष्ट्रीय गीतावली	श्री गगानारायण द्विवेदी
१२९	राष्ट्रीय राग	श्री विद्याभूषण विभु
१३०	राष्ट्रीय वीणा	सरस्वती पत्रिका भडार कलकत्ता
१३१	रासा भगवन्तसिंह भाग ५	श्री सदानन्द काशी ना० प्र० सभा
१३२	रीतिकाल की भूमिका और देव तथा उनके कवित्त	श्री नगेन्द्र
१३३	राष्ट्रीय तरग	श्री मगनारायण भागव बी० ए०
१३४	राष्टीय मत्र	श्री त्रिशूल
१३५	रत्नाकर सपूर्ण काव्य सग्रह	श्री काशी ना० प्र० सभा
१३६	राष्ट्रीय सिंहनाद	श्री विश्वामित्र कार्यालय
१३७	राष्ट्रीय तरग	श्री अनतकुमार जन
१३८	राष्टीय रत्नपचक	श्री एक भारतीय
१३९	राष्ट्रीय सदेश	श्री रामचन्द्र शर्मा
१४०	राष्ट्रीय कविता विनोद	श्री जगन्नाथ प्रसाद गुप्त
१४१	विचार वीथि	प० रामचन्द्र शुक्ल
१४२	वीर काव्य	डा० उदयनारायण तिवारी
१४३	वीर काव्य	श्री टीकमसिंह तोमर
१४४	वीरकाव्य सग्रह	श्री भागीरथ दीक्षित
१४५	वीर कुमार छत्रसाल	श्री भवरलाल
१४६	वीर गाथा खण्ड काव्य	श्री शिवदयाल जायसवाल
१४७	वीर गाथा	श्री चतुरसेन
१४८	वीर गाथा	श्री शिवदयाल
१४९	वीर चरितावली	श्री रामानद
१५०	वीर ज्योति	श्री लोकनाथ
१५१	वीर नारियां	श्री राममोहन
१५२	वीर पंचरत्न	श्री भगवानदीन

१८४	स्वतन्त्रता पर वीर बलिदान	श्री रघुनाथप्रसाद शुक्ल
१८५	स्वतन्त्रता की झंकार	श्री जीतमल लूणिया
१८६	स्वदेशी काव्य पुष्पांजलि	श्री गंगानारायण द्विवेदी
१८७	स्वदेश संगीत	श्री मैथिलीशरण गुप्त
१८८	स्वतन्त्रता की पुकार	श्री भवानीप्रसाद गुप्त
१८८	संस्कृति और साहित्य	श्री रामविलास शर्मा
१९०	हमारा राजस्थान	श्री पृथ्वीसिंह मेहता
१९१	हम्मीर रासो	श्री श्यामसुन्दर दास
१९२	हिन्दी काव्य में युगान्तर	श्री डा० सुधीन्द्र
१९२	हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्री ब्रजरत्नदास
१९३	हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्री पं० रामचन्द्र शुक्ल
१९४	हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	श्री रामकुमार वर्मा
१९५	हिन्दी साहित्य	डा० भोलानाथ
१९६	हिन्दुत्व	प्रो० रामदास गौड
१९७	हिन्दुत्व	श्री वी० डी० सावरकर
१९८	हिन्दु पद पादशाही १८२५	श्री वी० डी० सावरकर
१९९	हिन्दुस्तान की सभ्यता	डा० बेनीप्रसाद
२००	हिन्दुस्तान का उत्कर्ष	श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य
२०१	हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता १९३१	डा० बेनीप्रसाद
२०२	हिन्दू पोलिटी	श्री के० पी० जायसवाल
२०३	हिन्दू भारत का अन्त	श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य
२०४	हिन्दू-सभ्यता	श्री राधाकुमुद मुकर्जी
२०५	हिम्मत बहादुर विरदावली	श्री पद्माकर
२०६	हिस्ट्री आफ इण्डिया	डा० ईश्वरी प्रसाद
२०७	हिस्ट्री आफ म्यूटिनी	चार्ल्स बौल
२०८	हिस्ट्री आफ इण्डियन लिट्रेचर	विन्टर निटज